ग्रन्थाग्र - ६

।। श्रीमते जिनेन्द्राय नमः ।।

श्री जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रं (उपाङ्गम्)

(महोपाध्याय श्री पुण्यसागरकृतवृत्तिसहितम्)

मार्गदर्शक :

प० पू० शास्त्रसंशोधक, आचार्य भगवंत श्रीमुनिचन्द्रसूरीश्वराः

संशोधक संपादक :

मुनि पार्श्व रत्नसागर

आवृत्ति-१, सन् २०१८, वि. सं. २०७५

प्रकाशक :

श्री ॐकार सूरि जैन ज्ञान मन्दिर

सुभाष चौक, गोपीपुरा

सूरत-१

ग्रन्थाग्र - ६

।। श्रीमते जिनेन्द्राय नमः।।

श्री जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रं (उपाङ्गम्)

(महोपाध्याय श्री पुण्यसागरकृतवृत्तिसहितम्)

भाग-२

मार्गदर्शक :

प० पू० शास्त्रसंशोधक, आचार्य भगवंत श्रीमुनिचन्द्रसूरीश्वराः

संशोधक संपादक :

मुनि पार्श्व रत्नसागर

आवृत्ति-१, सन् २०१८, वि. सं. २०७५

प्रकाशक :

श्री ॐकार सूरि जैन ज्ञान मन्दिर

सुभाष चौक, गोपीपुरा

सुरत-१

श्री जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रं

आवृत्ति-१ (प्रथम) वि. सं. २०७५

भाग : १-२

प्रति : ५००

मूल्य : १५००/- (सेट का)

प्राप्ति स्थान :

१. **श्री ॐकार सूरि जैन ज्ञान मन्दिर**

सुभाष चौक, गोपीपुरा, सुरत-१

२. **विजयभद्र चैरिटेबल ट्रस्ट**

भीलडीयाजी तीर्थ, हाइवे रोड

भीलडीयाजी, जिला : बनासकांठा, गुजरात

३. **श्री वावपथक जैन बाड़ी**

दशापोरवाड़ सोसाइटी, पालड़ी, चार रास्ता, अहमदाबाद

कम्पोजिंग, सेटिंग एवं प्रिंटिंग :

इन्द्रा कमर्शियल कॉरपोरेशन

प्रवीन - इन्द्रा जूनिवाल

कोलकाता-७०० ००१

मो. : ९८३१४ ८९९६६, ९७४८७ ३४७४६

आगामी प्रकाशन :

श्री युक्ति प्रबोध नाटकम् (महोपाध्याय मेघवि. गणि)

(हिन्दी अनुवाद सहित)

श्रुत लाभार्थी

इस ग्रंथ का सम्पूर्ण लाभ

प. पू. पंन्यास प्रवर श्री वैराग्य रत्न सागरजी म. सा.

प. पू. मुनि श्री मोक्षरत्न सागरजी म. सा. एवं

प. पू. मुनि श्री पार्श्व रत्नसागरजी म. सा. के

संवत् २०७५

के

श्री चूलै जैन संघ-चेन्नई के चातुर्मास के

उपलक्ष में पू. गुरुभगवंतो की प्रेरणा से

श्री चुलै जैन संघ ने अपने ज्ञान द्रव्य में से लिया है

श्रुत भक्ति की भूरि-भूरि

अनुमोदना

प्रकाशकीय

पू. आ. म. श्री यशोविजयसूरीश्वरजी म. सा. एवं पू. आ. म. श्री मुनिचन्द्रसूरी म. सा. के मार्गदर्शन अनुसार आ. ॐकारसूरि ज्ञान मन्दिर ग्रंथावली में आज तक शताधिक ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं।

श्री जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति उपांग ग्रंथ की खरतरगच्छीय महोपाध्याय पुण्यसागरजी विरचित एवं अद्यावधि अप्रकट टीका का संपादन **मुनि श्री पार्श्वरत्नसागरजी म. सा.** ने किया है।

ऐसे दुर्लभ आगम ग्रंथ को प्रकाशित करके हमें बड़ा हर्ष हो रहा है। इस ग्रंथ का प्रकाशन लाभ श्री चुलै जैन संघ, चेन्नई के श्रीसंघ ने अपने ज्ञान द्रव्य में से लिया है।

इस ग्रंथ के लाभार्थी की श्रुत भक्ति की भूरि-भूरि अनुमोदना करते हैं।

इस उपांग आगम ग्रंथ का अधिकारी श्रमणवर्ग अध्ययन करके आत्मकल्याण करे—यही प्रार्थना है।

ग्रंथ पुष्पांजलि

मालव भूषण, तप सम्राट, प. पू. आ. भ.
श्री नवरत्न सागरसूरीश्वरजी म. सा.
की

पुण्य स्मृति

में समर्पण

हे सूरीश्वर! हे गुरुदेव!

एक तीव्र आघात देकर अचानक आप हम सबको
बीच मझधार में निराधार छोड़कर चले गए,
और तो आपको क्या दे सकता हूँ
बस इस बालक की यह
छोटी-सी भेंट
स्वीकार
करें

—पार्श्व रत्नसागर

ग्रंथ संपादन की शुभ घड़ी पर.....

आगम साहित्य को संपादन करने की कड़ी में प. पू. आ. भ. श्री मुनिचन्द्र सूरीश्वरजी म. सा. ने जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र की महोपाध्याय पुण्यसागरजी म. सा. द्वारा रची गई और अभी तक अप्रकाशित ऐसी हस्तलिखित प्रति की नकल मुझे भेजी और इस ग्रंथ की प्रतिलिपि तैयार करने की सूचना दी। प्रतिलिपि तैयार होने के बाद उसे छपाने के लिए प्रेस में भेजा गया एवं छोटे-छोटे सूत्रों के साथ वृत्ति को जोड़कर ग्रंथ को व्यवस्थित प्रारूप में सेट किया गया है। जैन विश्व भारती लाडनूं प्रकाशित उवंगसुत्ताणि की टिप्पन का भी इसमें हमने जगह-जगह पर समावेश किया है। ग्रंथ की प्रस्तावना में मंगल श्लोकों में पू. उपाध्यायजी ने लिखा है कि वर्तमान में (अर्थात् उनके समय में) पू. श्री मलयगिरि महाराज के द्वारा की गई जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति की वृत्ति नहीं मिलने से हमने यह नई वृत्ति तैयार की है। विशेष तौर पर आगम शास्त्र के अवगाहन के इच्छुक वाचक वर्ग में यह वृत्ति भी काफी उपयोगी बनेगी, ऐसी हमें श्रद्धा है। लगभग ९०० पृष्ठों में, २ भाग में इस ग्रंथ को तैयार किया गया है जो कि लगभग १५००० श्लोक प्रमाण हैं।

जहाँ कहीं पर भी संशोधन या प्रेस दोष से त्रुटि नजर आए, वहाँ अभ्यासु वर्ग स्वमति से उसे संशोधित करके पढ़े, ऐसी विनम्र विनती है। उनके उपकारों को भी जरा याद कर लें जिन्होंने इस ग्रंथ को प्रकट करने में तन-मन-धन से सहायता की है।

- प. पू. मालव भूषण आ. म. श्री नवरत्न सागरसूरिजी म. सा. की अनुपम कृपा मुझ पर सदा रही है।
- प. पू. शास्त्र संशोधक आचार्य भगवंत श्री मुनिचंद्र सूरीश्वरजी म. सा., जिन्होंने यह कार्य मुझे सौंपकर विशेष उपकृत किया।
- प. पू. उपाध्याय प्रवर श्री वैराग्य रत्नसागरजी म. सा., जिन्होंने इस कार्य के प्रारूप में मुझे हर समय सभी प्रकार की अनुकूलता प्रदान की।

श्री चूलै जैन संघ के ट्रस्टीवर्यश्रीयो-

जिन्होंने इस ग्रंथ के प्रकाशन हेतु संघ के ज्ञान द्रव्य से संपूर्ण लाभ लेकर हमारा काफी भार हल्का किया एवं श्रुतभक्ति की।

इन्द्रा कमर्शियल कॉरपोरेशन की श्रीमती इन्द्रा जूनिवाल

जिन्होंने हर समय, जैसे भी मुझे सेटिंग-कम्पोजिंग आदि की जरूरत पड़ी, दिन-रात मेहनत करके इस ग्रंथ की छपाई कर इसे सुन्दर स्वरूप प्रदान किया।

और अन्त में सभी नामी-अनामी सहायकों–

जिन्होंने कभी भी जिस प्रकार की आवश्यकता पड़ी, उस प्रकार से यथायोग्य अपना योगदान दिया।

और इस ग्रंथ के पाठक वर्ग का भी मैं आभार मानूँगा–

क्योंकि उनकी वजह से ही हमें नये-नये ग्रंथ संपादन करने की प्रेरणा सतत् मिलती रहती है। विशेष प्रकार से इस ग्रंथ के संपादन के दौरान किसी प्रकार की त्रुटि या विरूद्ध प्ररुपणा हो गई हो तो त्रिविध-त्रिविध मिच्छामि दुक्कड़म्।

पौष बदी ५, संवत् २०७२
पू. आ. भ. श्री नवरत्न सागरसूरी मा. सा. का
स्वर्गारोहण दिन
टिन्डीवनम् (तमिलनाडु)

पार्श्व रत्नसागर

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
६.	वक्षस्कार-४	सूत्र-१-२७७	४१५-६०८
७.	वक्षस्कार-५	सूत्र-१-७४	६०९-६८४
८.	वक्षस्कार-६	सूत्र-१-२६	६८५-६९७
९.	वक्षस्कार-७	सूत्र-१-२१४	६९८-८९१
१०.	अथ प्रशस्तिः		८९२-८९५

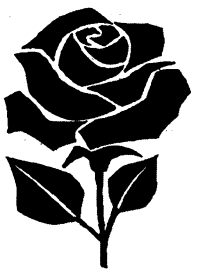

अथ चतुर्थ वक्षस्कारः

इत्युक्तं भरत क्षेत्रस्वरूपं सम्प्रति क्रमप्राप्तं क्षुल्लहिमवदादिवक्तव्यतां पिपृच्छिषुरिदमाह-

अथ क्षुल्लहिमवद्गिरेरवसरः-

(१) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ चुल्लहिमवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते? गोयमा! हेमवयस्स वासस्स दाहिणेणं, भरहस्स वासस्स उत्तरेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे चुल्लहिमवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते, [1]पाईणपडीणायए उदीण-दाहिणवित्थिण्णे, दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे, पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे, पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे, एगं जोअणसयं उड्ढं उच्चत्तेणं पणवीसं जोअणाइं उव्वेहेणं, एगं जोअणसहस्सं बावण्णं च जोअणाइं दुवालस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खंभेणं ति, तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं पंच जोअणसहस्साइं तिण्णि अ पण्णासे जोअणसए पण्णरस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स अद्धभागं च आयामेणं। तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडिणायया जाव पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा, चउव्वीसं जोअणसहस्साइं णव य बत्तीसे जोअणसए अद्धभागं च किंचिविसेसूणा आयामेणं पण्णत्ता। तीसे धणुपट्ठे दाहिणेणं पणवीसं जोअणसहस्साइं दोण्णि अ तीसे जोअणसए चत्तारि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेणं रुअगसंठाणसंठिए सव्वकणगामए अच्छे सण्हे [2]तहेव जाव पडिरूवे, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसंडेहिं संपरिक्खित्ते दुण्हवि पमाणं वण्णगोत्ति[3]।।१।।

---

१. ० पडियायते-अब । एवमग्रेऽपि । २. द्र.१/८।। ३. द्र.१/१०-१४ ।।

'कहि णं भंते' इत्यादि क्व णमिति वाक्यालङ्कारे भदन्त! **'जम्बूद्वीपे द्वीपे चुल्ल हिमवंते'** त्ति क्षुद्रो लघुर्महाहिमवद्वर्षधरापेक्षया यो हिमवान् हिमवानिति नाम्ना **'वासहरपव्वए'** त्ति वर्षयोर्मध्यव्यवस्थित: सन् वर्षे क्षेत्रे धरति सीमाकारित्वेन निजपार्श्वद्वयेऽपि य: स वर्षधर:]स चासौ पर्वत: **'प्रज्ञप्तो'**? भगवानाह-**'गौतम'**! **'हैमवतस्य वर्षस्य दक्षिणतो भरतस्य वर्षस्योत्तरत: पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमत: पश्चिमलवणसमुद्रस्य पूर्वत: एत्थ णं'** ति अत्रान्तरे **'जम्बूद्वीपे द्वीपे क्षुल्लहिमवानिति नाम्ना वर्षधरपर्वत: प्रज्ञप्त:'** स च कथं भूत इत्याह **'पाईणे'** त्यादि, **प्राचीनप्रतीचीनायत: 'उत्तरदक्षिणविस्तीर्णो द्विधा लवणसमुद्रं स्पृष्ट:' 'पूर्वया कोट्या पौरस्त्यं लवणसमुद्रं स्पृष्ट:' 'पश्चिमया कोट्या पश्चिमलवणसमुद्रं स्पृष्ट:' 'एगं जोयण सय'**मित्यादि, **'एकं'** योजनशत**'मुर्ध्वमुच्चैस्त्वेन पञ्चविंशतियोजनान्युद्वेधेन'** भूम्यन्तर्गतविभागेन, **'एकं योजनसहस्रं द्विपञ्चाशतं च योजनानि तथा एकोन विंशति भागीकृतस्य योजनस्य द्वादशभागान्'** कला इत्यर्थ:, **'विष्कम्भतो'** विस्तारतो यदुक्तं **'दस सय बावन्नहिया बारसय कलाओ १०५२,१२/१९ हिमवते'** इति स्थापना चेयं, **'तस्स बाहा'** इत्यादि तस्य क्षुल्लहिमवतो बाहा च दक्षिणोत्तरायता **'पूर्वत:पश्चिमतश्चक्रं'** चक्रीभूता बाहु:। **'पुरत्थिम पच्चत्थिमेणं'** ति पूर्वपश्चिमेन पूर्वस्यां पश्चिमायां चेत्यर्थ:**'पंचजोयण- सहस्साइं'** इत्यादि पञ्च योजन सहस्राणि **'त्रीणि च योजनशतानि पञ्चाशदधिकानि पञ्चदश चैकोनविंशतिभागान् योजनस्यार्द्धभागं'** ५३५०-१५/१९। **'तस्स जीवा उत्तरेण'** मित्यादि. कण्ठयमेतामेव प्रमाणत: प्राह **'चउवीस'**मित्यादि, **'चतुर्विंशतियोजनसहस्राणि नव च योजनशतानि द्वात्रिंशदधिकानि अर्द्धभागं'** च कलार्द्धमित्यर्थ: **'किञ्चिद्विशेषोनाऽऽयामत: प्रज्ञप्ता'**। स्थापना चेयं२४९३२,१/२,१९, **'तीसे धणुपट्ठे'** इत्यादि, तस्या धनु:पृष्टं दक्षिणत: पञ्चविंशतियोजनसहस्राणि द्वे च योजनशते

त्रिंशदधिके चतुरश्चैकोनविंशति भागान् योजनस्य परिक्षेपेण २५२३०,४/१९ **'रुयगसंठाणसंठिए'** इत्यादि क्षुल्लहिमवद्वर्णकस्तदनु पद्मवरवेदिका-वनखण्डवर्णकस्ततो हिमवदुपरिवर्त्तिनसमभूभागवर्णकश्च प्राग्वदेव द्रष्टव्यः।।१।।

(२) चुल्लहिमवन्तस्स वासहरपव्वयस्स उवरिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा [१]जाव बहवे वाणमंतरा देवा य देवीओ अ आसयंति जाव विहरंति।।२।।

(३) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए इत्थ णं इक्के महं पउमद्दहे णामं दहे पण्णत्ते पाईणपडिणायए उदीण दाहिणवित्थिण्णे इक्कं जोअणसहस्सं आयामेणं, पंच जोअणसयाइं विक्खंभेण, दस जोअणाइं उव्वेहेणं, अच्छे सण्हे रययामयकूले जाव पासाईए जाव पडिरूवेत्ति से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, वेइआवणसंडवण्णओ [२]भाणिअव्वोति।।३।।

(४) तस्स णं पउमद्दहस्स चउद्दिसिं चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता, वण्णावासो भाणिअव्वोति[३]।।४।।

(५) तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं पुरओ पत्तेअं २ तोरणा पण्णता, ते णं तोरणा णाणामणिमया[४]।।५।।

'तस्स णं बहुसमे' त्यादि तस्य क्षुल्लहिमवत्सम्बन्धिनो बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्य **बहुमध्यदेशभागे 'एत्थ णं'** त्ति अत्र स्थाने पद्महृदो नाम्ना ह्रदः प्रज्ञप्तः स च प्राचीन-प्रतीचीनायत उत्तरदक्षिणविस्तीर्णः **'एगं जोयण सहस्स'** मित्यादि, एकं योजनसहस्रमायामतः

१.द्र.१/१३।। २.द्र.१/१०-१३।। ३. द्र.४/२६।। ४. द्र.४/२७ ।।

पञ्चयोजनशतानि विष्कम्भतो दश योजनान्युद्वेधेनोण्डत्वेनेत्यर्थः, उक्तं च - **"गिरि उवरि सवेइदहा गिरिउच्चत्ताओ दस गुणा दीहा। दीहत्त अद्धरूंदा सव्वे दस जोयणुव्वेहा।।"** इति **'अच्छे'** इत्यादि प्राग्वत् नवरं **'रययामयकूले'** त्ति रूप्यमयकूलः **'से णं एगाए पउमवरवेइयाए'** इत आरभ्य **'तेणं तोरणा णाणामणिमया'** इत्यन्तं सुगमम्।।२-५।।

(६) तस्स णं पउमद्दहस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थं महं एगे पउमे पण्णत्ते, जोअणं आयाम-विक्खंभेणं, अद्धजोअणं बाहल्लेणं, दस जोअणाइं उव्वेहेणं, दो कोसे ऊसिए जलंताओ साइरेगाइं दसजोअणाइं सव्वग्गेणं पण्णत्ता। से णं एगाए जगईए सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते जम्बुद्दीवजगइप्पमाणा गवक्खकडएवि तह चेव पमाणेणंति[१]।।६।।

'तस्स णं पउमद्दहस्से' त्यादि तस्य पद्मह्रदस्य **बहुमध्यदेशभागेऽत्र महदेकं पद्मं प्रज्ञप्तं तच्च योजनमायामविष्कम्भाभ्यामर्द्धयोजनं बाहल्यतो दशयोजनान्युद्वेधतो 'दो कोसे जुसिए जलंताओ'** त्ति द्वौ कोशौ उच्छ्रितं जलन्तादुक्तं च**"तदुवरि कोसदुगुच्चं दहवित्थरपणसय सवित्थारं बाहल्लि वित्थरद्धे कमलदेवि ण मूल्लिलं।।"** इति **'साइरेगाइं दस जोयणा'** इति सातिरेकाणि दशयोजनानि' **'सव्वग्गेणं'** त्ति सर्वाग्रेण सर्व स्वकीयोच्चत्वेन **प्रज्ञप्तं 'से ण'** मित्यादि तत्पद्ममेकया **जगत्या सर्वतः समंतात्सम्परि क्षिप्त**मियं च जगती कियत्प्रमाणेत्याह-**'जंबुद्दीव जगइप्पमाणा'** इति व्यक्तं **'गवक्खकडए वि तह चेव'** त्ति गवाक्षकटकोऽपि प्रागुक्तस्वरूपस्तथैव जम्बूद्वीपजगतीगतगवाक्ष-कटकवद्विज्ञेय इत्यर्थः।।६।।

(७) तस्स णं पउमस्स अयमेआरूवे वण्णावासे पं०, तं०–वइरामया मूला, रिट्ठामए कंदे, वेरुलिआमए णाले, वेरुलिआमया बाहिरपत्ता, जम्बूणयामया अब्भिंतरपत्ता,

१. पमाणेणं सातिरेगाइं दसजोआणाइं सव्वंग्गेण पण्णत्ते-अकखत्रिव।।

तवणिज्जमया केसरा, णाणामणिमया पोक्खरत्थिभाया[1]कणगामई कण्णिगा, सा णं अद्धजोयणं आयाम-विक्खंभेणं, कोसं बाहल्लेणं, सव्वकणगामई अच्छा।।७।।

'तस्स णं पउमस्से' त्यादि , तस्य पद्मस्यायामेतद्रूपो वर्णावासो वर्णकनिवेसो वर्णकव्यासो वर्णकविस्तरः प्रज्ञप्तस्तद्यथा **'वइरामया मूला'** इत्यादि वज्रमयानि मूलानि मूलं कन्दादधस्तनो भूमध्यगतो भागो जटासमूह इत्यर्थः, **'रिष्टरत्नमयः कन्दः'** कन्दो मूल-नालयो र्मध्यवर्त्ती स्तबक विशेषः, **'वैडूर्यमयं नालं'** नालं नाम यस्योपरिजलोपरिवर्त्तिपद्मभागः प्रतिष्ठितः, **'वैडूर्यमयानि बाह्यपत्राणि जाम्बूनदमयानीषद्रक्तसुवर्णमयानि आभ्यंतरपत्राणि तपनीय मीषद्ररक्तं कनकं तन्मयानि केसराणि नानामणिमया[2]पुष्करस्थिभकाः कनकमयी कर्णिकाः सा चार्द्ध योजनामायामविष्कम्भतः, क्रोशं बाहल्येन सर्वात्मना कनकमयीअच्छे'** त्यादि प्राग्वत् ।।७।।

(८) तीसे णं कण्णिआए उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए आलिंग०[3]।।८।।

'तीसे ण' मित्यादि, तस्याः **'कर्णिकायाः उप्पिं'** ति उपरि **'बहुसमरमणीयो भूमिभागः प्रज्ञप्तः,'** तस्य वर्णकः प्राग्वत्तावद्वाच्यो यावन्मणीनां स्पर्शः।।८।।

(९) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं एगे भवणे पं० कोसं आयामेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं, देसूणगं कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं, अणेगखंभसयसण्णिविट्ठे पासाईए दरिसणिज्जे।।९।।

'तस्य बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्य बहुमध्यदेशभागेऽत्र महदेकं भवनं प्रज्ञप्तं,' तच्च कथंभूतमित्याह **'कोस'** मित्यादि, **क्रोशमायामतः 'क्रोशार्द्धं विष्कम्भतः किञ्चिन्न्यूनं क्रोशमुर्ध्वमुच्चैस्त्वेन** चत्वारिंशदधिकचतुर्दशशत' १४४० धनुरुच्चमित्यर्थः,

---

१. °भागाः -शावृ. प. ०भूया-जीवा-३। ६४३।°भया-V।। २. पुष्करास्थिभागाः-शावृ.।। ३. द्र.१/१३ ।।

'अणेगखंभसयसंनिविट्ठे' इत्यादि व्यक्तम्।।९।।

(१०) तस्स णं भवणस्स तिदिसिं तओ दारा पं०, ते णं दारा पंचधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं विक्खंभेणं,तावतिअं चेव पवेसेणं, सेआवरकण-गथूभिआ [1]जाव वणमालाओ णेअव्वाओ।।१०।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य **'भवनस्य त्रिदिशि'** तिसृषु एकैकस्यां दिशि एकैकद्वारभावेन पश्चिमदिशिद्वाराभावात् **'त्रीणि द्वाराणि प्रज्ञप्तानि तानि द्वाराणि पञ्चधनु:शतान्यूर्ध्वमुच्चै -स्त्वेन अर्द्धतृतीयानि धनु:शतानि विष्कम्भत:'** **'तावइयं** चेव' त्ति तावदेवार्द्धतृतीयान्येव धनु:शतानीति भाव: **'प्रवेशेन,'** **'सेता वरकणगे'** इत्यादि द्वारवर्णक: प्राग्वत् तावज्ज्ञेयो **'यावद्वनमालावक्तव्यतापरिसमाप्ति:।।१०।।**

(११) तस्स णं भवणस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहा–णामए आलिंग०।।११।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य **'भवनस्यान्तर्बहुसमरमणीयो भूमिभाग: प्रज्ञप्त:।'** **'से जहा नामए आलिंगे'** त्यादि पूर्ववत् ।।११।।

(१२) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं [2]महई एगा मणिपेढिआ पं०, सा णं मणिपेढिआ पंचधणुसयाइं आयाम-विक्खंभेणं अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं बाहल्लेणं, सव्वमणिमई अच्छा।।१२।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य **'बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्य मध्यदेशभागेऽत्र महत्येका मणीपीठिका प्रज्ञप्ता सा'** च **'मणिपीठिका पञ्चधनु: शतान्यायामविष्कम्भाभ्यामर्द्धतृतीयानि धनु:शतानि बाहल्येन'** **'सव्वमणिमयी'** इत्यादि

---

१. द्र.जीवा. ३/२९९-३०६।। २. महं एगा-V।।

प्राग्वत्।।१२।।

अथास्या मणिपीठिकाया उपरि एकं शयनीयमस्तीत्याह -

(१३) तीसे णं मणिपेढिआए उप्पिं एत्थ णं महं एगे सयणिज्जे पण्णत्ते सयणिज्ज - वण्णओ भाणिअव्वो।।१३।।

'तीसे ण' मित्यादि, अत्र च शयनीयवर्णको यथा विजयदेवशयनीयाधिकारे उक्तस्तथा वाच्य इत्याह **'सयणिज्जवण्णओ भाणियव्वो'** त्ति उक्तं च **"पच्छिमदिसिवि णं धणुपणसउच्च ड्ढाइजसय पिहुपवेसं। दारतिगं इह भवणे मज्जे दहदेवि सयणिज्जं"**।। इति।।१३।।

(१४) से णं पउमे अण्णेणं अट्ठसएणं पउमाणं तदद्धुच्चत्तप्पमाणमित्ताणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, ते णं पउमा अद्धजोअणं आयाम-विक्खंभेणं, कोसं बाहल्लेणं, [१]दसजोअणाइं उव्वेहेणं, कोसं ऊसिया जलंताओ, साइरेगाइं दसजोअणाइं उच्चत्तेणं।।१४।।

(१५) तेसि णं पउमाणं अयमेआरूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा-वइरामया मूला [२]जाव कणगामई कण्णिआ, सा णं कण्णिआ कोसं आयामेणं, अद्धकोसं बाहल्लेणं सव्वकणगामई अच्छा इति।।१५।।

(१६) तीसे णं [३]कण्णिआए उप्पिं बहुसमरमणिज्जे [४]जाव मणीहिं उवसोभिए।।१६।।

'से णं पउमे' इत्यादि, तत्पद्मं **'मूलकमलमन्येन पद्मानामष्टेनाधिकशतेन तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणमात्रेण'** मूलपद्मप्रमाणार्द्धोच्चत्वादिप्रमाणेनेत्यर्थः, **'सर्वतः'** सर्वासु दिक्षु

---

१. पूर्वप्रकरणे ४/६ "दसजोयणाइं सव्वग्गेणं पण्णत्ते" इति पाठोस्ति! जीवाजीवाभिगमे (३/६५३) ऽपि नीलवद् द्रह प्रकरणे सव्वग्गेणं इति पाठो लभ्यते। वृत्तावपि (पत्र२७९) तथैव व्याख्यातोऽस्ति। अत्रापि सव्वग्गेणं इति पाठो युक्तः प्रतिभाति। इति V पृ. ४७० टि. पू. ।। २. द्र.४/७।। ३. कण्णियाए-अकखत्रिवस नास्ति।। ४. द्र.१/१३।।

समन्ताद्विदिक्षु **'सम्परिक्षिप्तं'** प्रवेष्टितमथैषां तदर्द्धोच्चत्वादिप्रमाणमेव भावयति **'ते णं पउमा'** इत्यादि तानि पद्मान्य **'र्द्धयोजनमायाम-विष्कम्भाभ्यां क्रोशं बाहल्येन दश योजनान्युद्वेधेन क्रोशमुच्छ्रितानि जलान्तात् सातिरेकाणि दशयोजनान्युच्चत्वेन' 'ते णं पउमा'** इत्यादि सर्वं व्यक्तम्, एतत्पद्मगतभवनेषु मूलकमलाधिष्ठातृदेव्याभरणादीनि तिष्ठन्ति, उक्तं च -

'तं मूलकमलमद्धप्पमाण कमलाणमडहियसएणं परिखित्तं तब्भवणेसुं भूसणाई णि देवीणं।।१।।' इति ।।१४-१६।।

(१७) तस्स णं पउमस्स अवरुत्तरेणं उत्तरेणं उत्तरपुरत्थिमेणं एत्थ णं सिरीए देवीए चउण्हं सामाणिअसाहस्सीणं चत्तारि पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।।१७।।

'तस्स णं पउमस्स अवरूत्तरेण'मित्यादि, तस्स मूलपद्मस्यापरोत्तरस्यां वायव्यकोणे **'उत्तरेणं'** त्ति उत्तरस्यां दिशि **'उत्तरपुरत्थिमेणं'** ति ईशानकोणे एतासु तिसृषु दिक्षु समुदितासु **'श्रीदेव्याश्चतुर्णां सामानिकसहस्राणां चत्वारि पद्मसहस्राणि प्रज्ञप्तानि'** अत्रोत्तरत्र च सहस्रशब्दस्य दीर्घत्वं स्त्रीत्वं च प्राकृतत्वात्, उक्तं च **'वायव्वाइसु तिसु दिसु सामन्नसुराण चउसहस पउमा'** इति ।।१७।।

(१८) तस्स णं पउमस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं सिरीए देवीए चउण्हं महत्तरिआणं चत्तारि पउमा पं०।।१८।।

'तस्स णं पउमस्स' त्ति प्राग्वत् **'पुरत्थिमेणं'** ति पूर्वस्यां दिशि **'श्रीदेव्याश्चतसृणां महत्तरिकाणां चत्वारि पद्मानि प्रज्ञप्तानि'** यदुक्तं-**'मूलपउमाओ पुव्विं महयरियाणं चउण्ह चउ पउमाइं'**ति ।।१८।।

(१९) तस्स णं पउमस्स दाहिणपुरत्थिमेणं सिरीए देवीए अब्भिंतरिआए परिसाए

अट्ठण्हं देवसाहस्सीणं अट्ठ पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ दाहिणेणं मज्झिमपरिसाए दसण्हं देवसाहस्सीणं दस पउमसाहसीओ पण्णत्ताओ, दाहिणपच्चत्थिमेणं बाहिरिआए परिसाए बारसण्हं देवसाहस्सीणं बारस पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, पच्चत्थिमेणं सत्तण्हं अणिआहिवईणं सत्त पउमा[1] पण्णत्ता।।१९।।

'दाहिणपुरत्थिमेण' ति दक्षिणपूर्वस्यामाग्नेय्याम्'**त्राभ्यन्तरपर्षदोऽष्टानां देव-सहस्राणमष्टौ पद्मसहस्राणि प्रज्ञप्तानि' 'दाहिणेणं'** ति दक्षिणस्यां **'मध्यपर्षदो दशानां देवसहस्राणां दशपद्मसहस्राणि प्रज्ञप्तानि' 'दाहिणपच्चत्थिमेणं'** ति दक्षिणपश्चिमायां नैऋत्यां **'बाह्यपर्षदो द्वादशदेवसहस्राणां द्वादशपद्मसहस्राणि प्रज्ञप्तानि'** उक्तं च-**" अट्ठदसबारसहसा अग्गेयाइसु तिपरिसाण"** इति **'पच्चत्थिमेणं'** ति पश्चिमदिशि **'सप्तानामनीकाधिपतीनां सप्तपद्मानि,** यदुक्तं-**" अवराइ सत्त पउमा अणियाहिवईण सत्तण्हं इय बीय परिक्खेवो"** इति अयमेतावान् द्वितीयः पद्मपरिक्षेपः,।।१९।। सम्प्रति तृतीयमाह-

(२०) तस्स णं पउमस्स चउद्दिसिं सव्वओ समंता, इत्थ णं सिरीए देवीए सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं सोलस पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।।२०।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य पद्मस्य मूलारविन्दस्य **'चतुर्दिश्यत्र श्रीदेव्याः'** सम्बन्धिनां **'षोडशानामात्मरक्षकदेवसहस्राणां षोडशसहस्राण्येकैकायां'** दिशि प्रत्येकं कमलसहस्रचतुष्टयस्य सद्भावादयं तृतीय परिक्षेपः उक्तं च **"तइए चउसु वि दिसासु देवीणं चउ चउ सहस्स पउमा सोलसहस्सायरक्खाणां"**।।२०।। इति

मूलपद्मपरिवेषत्रयमुक्त्वा पुनस्तस्यैव परिवेषत्रयमाह-

१.पउमसाहस्सीया पण्णत्ताओ-अखत्रि।।

(२१) से णं तिहिं पउमपरिक्खेवेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, तं०–अब्भिंतरकेणं, मज्झिमएणं, बाहिरएणं, अब्भिंतरए पउमपरिक्खेवे बत्तीसं पउमसयसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, मज्झिमए पउमपरिक्खेवे चत्तालीसं पउमसयसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, बाहिरए पउमपरिक्खेवे अडयालीसं पउमसयसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, एवामेव सपुव्वावरेणं तिहिं पउमपरिक्खेवेहिं एगा पउमकोडी वीसं च पउमसयसाहस्सीओ भवंतीति अक्खायं ।।२१।।

'से णं पउमे' इत्यादि, तन्मूलपद्मं **'त्रिभि:परिक्षेपै: सर्वत:'** सर्वासु दिक्षु **'समन्ताद्दिदिक्षु परिक्षिप्तं तद्यथा-आभ्यन्तरेण'** परिक्षेपेण, **मध्यमकेन** मध्यवर्त्तिना परिक्षेपेण, बाह्येन बहिर्वर्त्तिना परिक्षेपेण, तत्र कस्मिन् परिक्षेपे कियन्ति पद्मान्येतन्निरूपयति **'अब्भिंतरए'** इत्यादि आभ्यंतरे **'पद्मपरिक्षेपे द्वात्रिंशत्पद्मलक्षा:' 'मध्यमे पद्मवलये चत्वारिंशत्कमललक्षा: बहिर्वर्त्तिनि वलयेऽष्टचत्वारिंशत्पद्मलक्षा:,'** एतद्वलयत्रयगतपद्म वृन्दमाभियोगिकदेवोपभोग्यं, तत्र कमलसङ्ख्यामाह- **'एवामेव सपुव्वावरेणं'** ति इत्थमेव सह पूर्वं यस्य येन वा तत्सपूर्वं सपूर्वं च तदपरं च सपूर्वापरं तेन सपूर्वापरेण पूर्वापरसमुदायेनेत्यर्थ **'त्रिभि: पद्मपरिक्षेपैरेकापद्मकोटिविंशतिर्लक्षा: पञ्चाशत्सहस्राणि शतं च विंशत्यधिकमिति** परिमाणं दृष्टव्यमेतच्च सुज्ञानमिति स्वयं भावनीयं सर्वाग्रसंख्यास्थापना चेयं १२०५०१२० ननु पद्मानि पद्मिन्या: पुष्परूपाणि भवन्ति मूलकन्दश्च पद्मिन्या एव भवतो न तु पद्मस्य तत्कथमत्र पद्मस्यैव मूलकन्दावुक्तौ? अत्रोच्यते यानि पद्मान्यत्रोक्तानि तानि न वनस्पतिकायरूपाणि किंतु पृथ्वीविकाररूपाणि पद्माकारा वृक्षा एव यथा जम्बूवृक्षादयस्ततो वृक्षधर्मत्वादमीषां पद्मानां मूलकन्दौ न विरुद्धाविति वृद्धा:। इति।।२१।।

श्रीदेव्या: पद्मस्वरूपं निरूप्याथ पद्महृदस्यनामनिमित्तं ज्ञातुकाम: पृच्छन्नाह-

(२२) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–पउमद्दहे २?, गोअमा ! पउमद्दहे णं तत्थ २ देसे तहिं २ बहवे उप्पलाइं जाव [१]सयसहस्सपत्ताइं पउमद्दहप्पभाइं[२] पउमद्दहवण्णाभाइं [३]सिरी अ इत्थ देवी महिड्ढीआ जाव पलिओवमट्ठिईआ परिवसइ, से एणट्ठेणं [४]जाव अदुत्तरं च णं गोअमा! पउमद्दहस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते, ण कयाइ णासि न० ।।२२।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि, अथ केनार्थेन **'भदन्त! एवमुच्यते? [५]पद्मह्रदः पद्मह्रद'** इति प्रभुराहः-**'गौतम! पद्मह्रदेण'** मिति प्राग्वत् **'तत्र तत्र देशे तस्य तस्य देशस्य तत्र तत्र प्रदेशे' 'बहवे'** त्ति **'बहुन्युत्पलानि यावत् शतसहस्रपत्राणि यावत्करणात् पद्मानि शतपत्राणि सौगन्धिकानी'** त्यादि पदपरिग्रहः **'पद्मह्रदप्रभाणि पद्मह्रदवर्णाभानि' 'सिरिय एत्थ देवी'** ति श्रीश्चात्र देवी **'महर्द्धिका यावत्करणात् महजुत्तिया'** इत्यादि पदवृन्दं ग्राह्यं **'पलिउवमट्ठितीय'** त्ति पल्योपमायुष्का **'परिवसति' 'एएणट्ठेण'** मित्यादि प्राग्वत्, इयं च देवी भवनपतिनिकायसम्भूता न व्यन्तरनिकायोद्भवा पल्योपमस्थितिकत्वात् व्यन्तरदेवीनामुत्कर्षतोऽपि पल्योपमार्द्धमेवायुरिति, एवं ह्री प्रमुखा अपि देव्यो भवनपति-निकायसम्भवा परिगृहीताश्चाभ्यूह्याः।।२२।।

पद्मह्रदस्य हि पूर्वापरोत्तराभिमुखं सतोरणं निर्गतनदीकं द्वारत्रयमस्ति तत्र प्राचीनद्वारेण का नदी निर्गता कथं कुत्र यातीत्याह-

(२३) तस्स णं पउमद्दहस्स पुरत्थिमिल्लेणं तोरणेणं गंगा महाणई पवूढा समाणी पुरत्थाभिमुही पञ्च जोअणसयाइं पव्वएणं गंता गंगावत्तणकूडे आवत्ता समाणी पंच तेवीसे जोअणसए तिण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स दाहिणाभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवत्तएणं मुत्तावलिहारसंठिएणं साइरेगजोअणसइएणं पवाएणं पवडइ।

---

१. सय°V नास्ति।। २. °भाइं पउमद्दह्यगाराइं पउमद्दहवण्णाइं पउम° V।। "जीवा (३/६५९) नीलवद् द्रह वर्णनं विशेषणचटुष्टयी विद्यते।" इति V पृ. ४७१ टी. ९।। ३.सिरि यत्थ-V ।। ४. द्र. १/२४।। ५. पद्मदह-इति शांति-वृत्तौ।।

'पउमद्दहस्से' त्यादि तस्य पद्मह्रदस्य' **'पुरत्थिमिल्लेणं तोरणेणं'** ति पूर्वदिक्स्थेन तोरणेनार्थात्तोरणयुक्तपूर्वद्वारेण गङ्गानाम्नी महानदी प्रत्यूढा निर्गता सती **'पुरत्थाभिमुही'** ति पूर्वाभिमुखी पञ्चयोजनशतानि **'पव्वएणं गता'** इति पर्वतस्योपरि गत्वा **गङ्गावर्त्तनकूटे आवृत्ता सती पञ्चयोजनशतानि त्रयोविंशत्यधिकानि तिस्रश्च कला दक्षिणाभिमुखी पर्वतस्यैवोपरि गत्वा 'महता घडमुहपवत्तिएणं'** ति घटमुखादि च पञ्चविंशतिक्रोशपृथुलजिह्मिकात मकरमुखप्रणालात् प्रवृत्तिर्यस्य तथा तेन घटमुखप्रवृत्तिकेन घटमुखप्रवर्त्तितेन वा मुक्तावलीनां मुक्ताफलसरीणां यो हारस्तद्वत्संस्थितो यः स तथा तेन **'मुक्तावलीहारसंस्थितेन सातिरेकेण योजनशतिकेन'** साधिकयोजनशतप्रमाणेन **'पपातेन'** पर्वतात्पततत्पयःप्रवाहरूपेण **'प्रपतति'**।।२३।।

(२४) गंगा महाणई जओ पवडइ, इत्थ णं महं एगा जिब्भिया पण्णत्ता, सा णं जिब्भिआ अद्धजोअणं आयामेणं, छ सकोसाइं जोअणाइं विक्खंभेणं, अद्धकोसं बाहल्लेणं, मगरमुहविउट्टसंठाणसंठिया सव्ववइरामई अच्छा सण्हा।।२४।।

'गङ्गामहानदी च यतः प्रपतति' 'एत्थ णं महं एगा' इत्यादि अत्र महत्येका **'जिह्विका प्रज्ञप्ता सा जिह्विका अर्द्धयोजनमायामतः षट् योजनानि सक्रोशानि विष्कम्भतो विस्तारतोऽर्द्धक्रोशं बाहल्येन'** जडत्वेन किंभूता जिह्विका **'मयरमुहविउट्टसंठाणसंठिय'** त्ति विवृत्तमकरमुखसंस्थानसंस्थिता प्रसारितमकरमुखाकारप्रणालसदृशीत्यर्थः **सव्ववइरामया** ति सर्वात्मना वज्रमयी **अच्छा सण्हा** इत्यादि प्राग्वत्।।२४।।

(२५) गंगा महाणई जत्थ पवडइ, एत्थ णं महं एगे गंगप्पवायकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते, सट्ठिं जोअणाइं आयामविक्खंभेणं, णउअं जोअणसयं किंचिविसेसाहिअं परिक्खेवेणं, दस जोअणाइं उव्वेहेणं, अच्छे सण्हे रययामयकूले [1]समतीरे [2]वइरामयपासाणे

१. समतीरे-V नास्ति।। २. "क्षे. स. वृत्तौ तु वज्रमयपार्श्वमित्युक्तम्, तदनुसारेण सुत्रपाठस्तु 'वइरामयपासे' त्ति द्रष्टव्यम्" ह्रीवृ.।।

वइरतले सुवण्णसुब्भरययामयवालुआए वेरुलिअमणिफालिअपडलपच्चोअडे सुहोआरे सुहोत्तारे णाणामणितित्थसुबद्धे [१]वट्टे अणुपुव्वसुजायवप्पगंभीरसीअलजले संछण्णपत्तभिसमुणाले बहुउप्पल-कुमुअणलिण-सुभग-सोगंधिअ-पोंडरीअ-महापोंड रीअ-सयपत्त-सहस्सपत्त-[२]सयसहस्सपत्त-पप्फुल्लकेसरोवचिए [३]छप्पयमहुयरपरिभुज्ज माणकमले अच्छविमलपत्थसलिलपुण्णे पडिहत्थभमन्तमच्छ-कच्छभ-अणेगसउणगण मिहुणपविअरिय-सद्दुन्नइअमहुरसरणाइए पासाईए० से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसण्डेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, वेइआ-वणसंडगाणं पमाणं वण्णओ [४]भाणिअव्वो।।२५।।

'गंगा णं महानई' इत्यादि गङ्गानाम्नी महानदी **'यत्र प्रपतति, अत्र महदेकं गङ्गाप्रपातकुण्डं नाम्ना कुण्डं प्रज्ञप्तं'** गङ्गाप्रपातनोपलक्षितं कुण्डं गङ्गाप्रपातकुण्डं तच्च कथंभूत **'सट्ठिं जोयणाइं'** ति **'षष्ठियोजनान्यायाम विष्कम्भत:'** **'णवुयं जोयण सयं'** ति नवत्याधिकयोजनशतं **'किञ्चिद्विशेषोनं[५] परिक्षेपेण'** परिधिना **'दशयोजनान्युद्वेधेन'**-उण्डत्वेन उक्तं च **'बृहत्क्षेत्रसमासे-"आयामो विक्खंभो सट्ठिं कुंडस्स जोयणा हुंति। नउअसयं किंचूणं परिही दसजोयणोगाहो'।।**]१/२१८ इति पुन: कीदृशं कुण्डं? **'अच्छे सण्हे रययामयकूले'** त्ति पूर्ववत् **'वइरामय पासाणे'** त्ति वज्रमयपाषाणं **'सुहोत्तारे'** त्ति सुखेनावतारो जलमध्ये प्रवेशो यत्र तत्सुखावतारं **'सुउत्तारे'** त्ति सुष्टु सुखेनोत्तारो जलमध्याद्बहिर्विनिर्गमनं यत्र तत्तथा **'नानामणितित्थबद्धे'** त्ति नानामणिभिर्बद्धं तीर्थमवतारस्थानं यस्य तत्तथा क्तान्तस्यपरनिपात: प्राकृतत्वात् **'वइरतले'** त्ति वज्रमयतलं' **'सुवण्णसुब्भरययमणिवालुयाए'** त्ति व्यक्तं नवरं सुब्भं रूप्यविशेष: **'वेरूलिये'** त्यादि **'वैडूर्यमणिमयानि स्फाटिकपटलमयानि च प्रत्यवतटानि'** तटसमीपे वर्त्तिनोऽभ्युन्नतप्रदेशा

१. वट्टे समतीर अणु.V।। २. °सयसहस्सपत्त° V नास्ति।। ३. छप्पय - महुयरपरिभुज्जमाणकमले-V नास्ति ।। ४. द्र.१/१०-१३।। ५. विशेषार्थं शांति वृत्ति द्रष्टव्या।।

यत्र तत्तथा, **'वट्टे'** त्ति वृत्तं **'समतीरे'** त्ति समं गर्त्तादिवैषम्यवर्जितं तीरं यस्य तत्तथा, **'अणुपुव्वे'** त्यादि, आनुपूर्व्येण क्रमेण **'सुजातो वप्रः'** केदारो जलस्थानं तत्र **'गंभीर'**मलब्धस्ताघं **'शीतलं'** यत्र तत्तथा **'संछन्नानि'** जलेनान्तरितानि **'पत्र-बिस-मृणालानि'** यत्र तत्तथा इह बिसादिसाहचर्यात्पत्राणि पद्मिनीपत्राणि ज्ञेयानि बिसानि-कन्दाः मृणालानि-पद्मनालाः, **'बहुभिरुत्पलादीनां प्रफुल्लानां विकसितानां केसरैरुपचितं यत्तत्तथा,'** **'अच्छेन'** स्वरूपतः स्फटिकवच्छुद्धेन **'विमलेना'**ऽऽगन्तुकमलविकलेन **'पथ्येन'** हितेन **'सलिलेन पूर्णं'** यत्तत्तथा **'परिहत्थ'** त्ति दक्षा **'भ्रमन्तो मत्स्याश्च कच्छापाश्च'** यत्र तत्तथा, **'अनेकेषां शकुनगणमिथुनानां प्रविचरितं'** विचरणं यत्र तत्तथा, ततः प्राक्पदेन कर्मधारयः **'शब्दोन्नतिक'**मुन्नतशब्दकं **'मधुरस्वरं'** च **'नादितं'** लपितं यत्र तत्तथा, इहनादितं पक्षिसम्बन्धिः ज्ञेयं **'से णं एगाए'** इत्यादि तद्गङ्गाप्रपातकुण्डमेकया **'पद्मवरवेदिकया एकेन च वनखण्डेन सर्वतः समन्तात् सम्परिक्षिप्तं वेदिका-वनखण्डप्रमाणं वनखण्डश्च भणितव्यः।।२५।।**

(२६) तस्स णं गंगप्पवायकुंडस्स तिदिसिं तओ तिसोवाणपडिरूवगा पं०, तंजहा–पुरत्थिमेणं, दाहिणेणं, पच्चत्थिमेणं, तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तं जहा–वइरामया णेम्मा, रिट्ठामया पइट्ठाणा, वेरुलिआमया खंभा, सुवण्णरुप्पमया फलया, लोहियक्खमईओ सूईओ, वयरामया संधी णाणामणिमया आलंबणा आलंबणबाहाओत्ति।।२६।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य **गङ्गाप्रपातकुण्डस्य त्रिदिशि त्रीणि सोपानप्रतिरूपकाणि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-पूर्वस्यां दक्षिणस्यां पश्चिमायां च, तेषां त्रिसेपानप्रतिरूपकाणामयमेतद्रूपो वर्णावासः प्रज्ञप्तस्तद्यथा 'वइरामया नेम्मा'** इत्यादि प्राग्वद्व्याख्येयं।।२६।।

(२७) तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं पुरओ पत्तेअं पत्तेअं तोरणे पण्णत्ते, ते णं तोरणा णाणामणिमया णाणामणिमएसु खंभेसु उवणिविट्ठसंनिविट्ठा विविहमुत्तंतरोवइआ विविहतारारूवोवचिआ ईहामिअ-उसह-तुरग-णर-मगर-विहग-वालग-किण्णर-रुरु-सरभचमर-कुंजर-वणलय-पउमलयभत्तिचित्ता खंभुग्गयवइरवेइआपरिगया-भिरामा विज्जाहरजमलजुअलजंतजुत्ताविव अच्चीसहस्समालणीआ रूवगसहस्स-कलिआ भिसमाणा भिब्भिसमाणा चक्खुल्लोअणलेसा सुहफासा सस्सिरीअरूवा [१]घंटावलिचलिअमहुरमणहरसरा पासादीआ।।२७।।

(२८) तेसि णं तोरणाणं उवरिं बहवे अट्ठट्ठमंगलगा पं०, तं०—सोत्थिय सिरिवच्छ जाव पडिरूवा।।२८।।

(२९) तेसि णं तोरणाणं उवरिं बहवे किण्हचामरज्झया जाव सुक्किल्लचामरज्झया अच्छा सण्हा रुप्पपट्टा वइरामयदण्डा जलयामलगंधिआ सुरम्मा पासाईया ४।।२९।।

(३०) तेसि णं तोरणाणं उप्पिं बहवे छत्ताइच्छत्ता पडागाइपडागा घंटाजुअला चामरजुअला उप्पलहत्थगा पउमहत्थगा [२]जाव सयसहस्सपत्तहत्थगा सव्वरयणामया अच्छा [३]जाव पडिरूवा।।३०।।

'तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं पुरओ पत्तेयं तोरणे पन्नत्ते ते णं तोरणा' 'इत्यादि तोरणवर्णकसूत्रं तदनु तोरणोपर्यष्टमङ्गलादि सूत्राणि च पूर्ववत् व्याख्येयानि।।२७-३०।।

(३१) तस्स णं गंगप्पवायकुंडस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं एगे गंगादीवे णामं दीवे पण्णत्ते, अट्ठ जोअणाइं आयामविक्खंभेणं, साइरेगाइं पणवीसं जोअणाइं परिक्खेवेणं,

---

१. घंटा सरा-V नास्ति।। २. द्र.१/१०।। ३. द्र.१/८।।

दो कोसे ऊसिए जलंताओ, सव्ववइरामए अच्छे सण्हे, से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ सम्मंता संपरिक्खित्ते वण्णओ भाणिअव्वो[1]।।३१।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य गङ्गाकुण्डस्य बहुमध्यदेशभागे **'एत्थणं'** त्ति **'अत्रैको महान् गङ्गाद्वीप'** इति **'नाम्ना द्वीपः प्रज्ञप्तः'** स **'चाष्टौ योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां सातिरेकाणि पञ्चविंशति योजनानि परिक्षेपेण'** परिधिना **'द्वौ क्रोशावुच्छ्रितो'** जलान्ताज्जलोपरितनभागात् **'सव्व वइरामए'** इत्यादि पूर्ववत्, **'से णं एगाए'** इत्यादि।।३१।।

(३२) गंगादीवस्स णं दीवस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते।।३२।।

'गंगा दीवस्सणं उप्पिं' इत्यादि सूत्रद्वयमपि कण्ठयम्।।३२।।

(३३) तस्स णं बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं गंगाए देवीए एगे भवणे पण्णत्ते, कोसं आयामेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं, देसूणगं च कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं, अणेगखंभसयसण्णिविट्ठे पासादगए [2]जाव बहुमज्झदेसभाए मणिपेढियाए सयणिज्जे।।३३।।

'तस्स णं बहुमज्झदेसभाए एत्थणं महं एगे गंगादेवीभवणे पण्णत्ते' इत्यादि यावत् **'सयणिज्जए'** एतदन्तं व्यक्तम्।। ३३।। अथ गङ्गाद्वीपनामनिमित्तं बुभुत्सुः पृच्छति।।

(३४) से केणट्ठेणं जाव सासए णामधेज्जे पण्णत्ते?।।३४।।

'से केणट्ठेणं जाव सासए णामधेज्जे पण्णत्ते' इह यावत्करणात् **'से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ गंगादीवे नाम दीवे? गो० गंगादीवे दीवे तत्थ तत्थ देसे तहिं तहिं बहुइं उप्पलाइं जाव गंगादीवप्पभाइं गंगा एत्थ देवी जाव परिवसति से तेणट्ठेणं जाव अदुत्तरं**

---

१. द्र.१/१०-१३।। २. द्र. ४/९-१३।।

च ण' मित्यादि द्रष्टव्यम्।।३४।।

(३५) तस्स णं गंगप्पवायकुंडस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेणं गंगामहाणई पवूढा समाणी उत्तरद्धभरहवासं एज्जेमाणी २ सत्तहिं सलिलासहस्सेहिं [1]आउरेमाणी २ अहे खण्डप्पवायगुहाए वेअड्ढपव्वयं दालइत्ता दाहिणड्ढभरहवासं एज्जेमाणी २ दाहिणड्ढभरहवासस्स बहुमज्झदेसभागं गंता पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी चोद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जगइं दालइत्ता पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ।।३५।।

'तस्स णं' मित्यादि, तस्य **'गङ्गाप्रपातकुण्डस्य दाक्षिणात्येन तोरणेन गङ्गा महानदी प्रव्यूढा सती उत्तरार्द्धभरतं वर्षं' 'एज्जेमाणी'** त्ति इयिती-गच्छन्ती **'सप्तभि सलिलासहस्रै'**- र्नदीसहस्रैरापूर्यमाणा २**'अहे खंडगप्पवायगुहाए'** त्ति पूर्वस्यां खण्डप्रपातगुहाया अधो **वैताढ्यपर्वतं 'दलइत्त'** त्ति दारयित्वा भित्वा **'दक्षिणार्द्धभरतवर्षं गच्छन्ती २ दक्षिणार्द्धभरतवर्षस्य बहुमध्य देशभागं गत्वा पूर्वाभिमुखी आवृत्ता'**- व्याधुटिता **'सती चउदसहिं'** ति समुद्रसमीपे चतुर्दशभि: **'सलिलासहस्रै: समग्रा'**-सहिता **'अहे जगइं'** त्ति अधो **'जगतीं भित्त्वा' पुरत्थिमेणं'** त्ति पूर्वदिशा **'लवणसमुद्रं' 'समुप्पेति'** समुपसर्पति-संप्राप्नोति।।३५।।

(३६) गंगा णं महाणई पवहे छ स्सकोसाइं जोअणाइं विक्खंभेणं, अद्धकोसं उव्वेहेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ परिवड्ढमाणी २ मुहे [2]बासट्ठिं जोअणाइं, अद्धजोअणं च विक्खंभेणं, सकोसं जोअणं उव्वेहेणं, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहिं वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता, वेइआवणसंडवण्णओ भाणिअव्वो[3]।।३६।।

पद्मह्रदात्तोरणेन निर्गमलक्षण: सम्भाव्य इति, **'अर्द्धक्रोशमुद्वेधत:**-उण्डत्वेन

१. आपूरे °V। आऊरे° प आउर° अ।। २. बावट्ठि-V।। ३. द्र.१/१०-१३।।

'ततोऽनन्तरं मात्रया' स्तोकं २ **'परिवर्द्धमाना'** २ **'मुखे'** समुद्रप्रवेशे **'द्वाषष्टियोजनानि क्रोशद्वयं च विष्कम्भेन सक्रोशयोजनमुद्वेधेन'**-उण्डत्वेन, इयं **'चोभयोः पार्श्वयो द्वाभ्यां पद्मवरवेदिकाभ्यां द्वाभ्यां च वनखण्डाभ्यां संपरिक्षिप्ता वेदिकावनखण्डवर्णकोऽत्र भणितव्यः।।३६।।**

(३७) एवं सिंधूएवि णेअव्वं [1]जाव तस्स णं पउमद्दहस्स पच्चत्थिमिल्लेणं तोरणेणं सिंधुआवत्तणकूडे दाहिणाभिमुही, सिंधुप्पवायकुंडं, सिंधुद्दीवो, अट्ठो सो चेव जाव अहेतिमिसगुहाए वेअड्ढपव्वयं दालइत्ता पच्चत्थिमाभिमुही आवत्ता समाणी चोद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं अहे जगइं पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं जाव समप्पेइ, सेसं तं चेवत्ति।।३७।।

'एवं सिंधूए वि णेयव्वं' एवं गङ्गानदीव सिन्धोरपि वक्तव्यता वक्तव्या, विशेषं तु सूत्र कृदेवाह **'जाव तस्स ण'** मित्यादि सूत्रं स्पष्टं, भावनात्वेवमियं सिन्धुमहानदी तस्य **'पद्महृदस्य पश्चिमेन तोरणेन निर्गत्य'** पश्चिमाभिमुखी त्रयोविंशत्यधिकानि पञ्चयोजनशतानि तिस्रश्च कलाः पर्वतोपरि गत्वा ततः **'सिन्ध्वावर्त्तन' कूटे** आवृत्ता सती **'दक्षिणाभिमुखी'** पर्वतेन गत्वा जिह्विकया **'सिन्धुप्रपातकुण्डे'** निपतति तन् मध्ये च **'सिन्धुद्वीपो'**ऽस्योपरि च सिन्धुदेवी निवासयोग्यं भवनादि वाच्यं **'अट्ठो सो चेव'** त्ति, **से 'केणट्ठेण'** मित्यादि प्रश्नार्थः प्राग्वदेव, केवलमत्र सिन्धुनाम्नाभिलापः कार्यः **'जाव अहे'** इत्यादि सूत्रं व्यक्तं नवरमिह यावत्करणात् **'तस्स णं सिंधुप्पवायकुंडस्स दाहिणल्लेणं तोरणेणं सिंधु महानदी पवूढा समाणी उत्तरद्धभरहवासं एज्जेमाणी २ सत्तहिं सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी'** इति द्रष्टव्यं **'सेसं तं चेव'** त्ति शेषमुक्तव्यतिरिक्तं जिह्विकाकुण्डद्वीपभवनप्रमाणादि सूत्रं यद्गङ्गाधिकारे उक्तं तदेवात्र वक्तव्यमित्यर्थः।।३७।।

१. द्र.४/२३-३३।। 'अत्र 'णवरं इति पदमपेक्षितमासीत्, किन्तु न जाने केन कारणेन तस्य स्थाने 'जाव पदस्य प्रयोगो जातः।" इति V पृ. ४७४ टी. ६।।

(३८) तस्स णं पउमद्दहस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं रोहिअंसा महाणई पवूढा समाणी दोण्णि छावत्तरे जोअणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोअणस्स उत्तराभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवत्तिएणं मुत्तावलिहारसंठिएणं साइरेगजोअणसइएणं पवाएणं पवडइ। मगरमुहविउट्टसंठाणसंठिया सव्ववइरामई अच्छा।।३८।।

'तस्स णं पउमद्दहस्से' त्यादि तस्य पद्मह्रदस्योत्तरद्वारतोरणेन रोहितांशा महानदी **प्रव्यूढा सती' 'द्वे योजन शते षट्सप्तत्यधिके षट्'** च कलाः **'उत्तराभिमुखी पर्वतेन गत्वा' 'महया'** इत्यादि प्रागुक्तं तथैव यावत्प्रपतति ।।३८।।

(३९) रोहिअंसा णामं [१]महाणई जओ पवडइ, एत्थ णं महं एगा जिब्भिआ पण्णत्ता सा णं जिब्भिआ जोअणं आयामेणं, अद्धतेरसजोअणाइं विक्खंभेणं, कोसं बाहल्लेणं।।३९।।

'रोहियंसा ण' मित्यादि **'रोहितांशामहानदी यतः प्रपतति तत्र महत्येका जिह्विका प्रज्ञप्ता' 'सा णं जिब्भिया'** इति सा जिव्हिका **'योजनमेकमायमतः अद्धतेरसजोयणाइं'** ति 'सार्द्धानि' द्वादश योजनानि **'विष्कम्भतः क्रोशं बाहल्येन'**-जड्डुत्वेन **'मगरमुहे'** त्यादि प्राग्वत्।।३९।।

(४०) रोहिअंसा महाणई जहिं पवडइ, एत्थ णं महं एगे रोहिअंसापवायकुण्डे णाम कुण्डे पण्णत्ते, सवीसं जोअणसयं आयाम-विक्खंभेणं तिण्णि असीए जोअणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं, दसजोअणाइं उव्वहेणं, अच्छे कुंडवण्णओ [२]जाव तोरणा।।४०।।

'रोहियंसा ण' मित्यादि रोहितांशा महानदी **'यत्र प्रपतति' 'इत्थ णं'** ति **'अत्रमहदेक**

१.णामं-V नास्ति।णं-अकखबस।। २. द्र. ४/२५-३०।।

रोहितांशाप्रपातकुण्ड नाम्ना कुण्डं प्रज्ञप्त'मेतदेव प्रमाणतो निरूपयति '**सवीसंजोयणसयं**' ति विंशत्युत्तरं योजनशतमायामविष्कम्भत: '**तिन्नि असीए जोयणसए**' त्ति त्रीणि योजनशतान्यशीत्यधिकानि '**किञ्चिद्विशेषोनानि परिक्षेपतो दशयोजनान्युद्वेधेन**' '**अच्छे कुण्डवण्णओ जाव तोरणे**' इति '**अच्छे सण्हे**' इत्यादिना प्रागुक्त: कुण्डवर्णकोऽत्र वाच्यो यावत्तोरणवक्तव्यतापरिसमाप्ति:।।४०।।

(४१) तस्स णं रोहिअंसप्पवायकुंडस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं एगो रोहिअंसगेणामं दीवे पण्णत्ते, सोलस जोअणाइं आयाम-विक्खंभेणं, साइरेगाइं पण्णासं जोयणाइं परिक्खेवेणं, दो कोसे ऊसिए जलंताओ, सव्वरयणामए अच्छे सण्हे सेसं तं चेव [1]जाव भवणं अट्ठो अ भाणिअव्वोति।।४१।।

'**तस्स ण**' मित्यादि तस्य **रोहितांशाप्रपातकुण्डस्य बहुमध्येदेशभागेऽत्रैको महान् रोहितांशाद्वीपो नाम द्वीप: प्रज्ञप्त:** स च षोडशयोजनान्यायाम-विष्कम्भत: सातिरेकाणि पञ्चाशतयोजनानि परिक्षेपेण द्वौ क्रोशावुच्छ्रितो जलान्तात् '**सव्व रयणामए अच्छे**' इति प्राग्वत् 'सेसं तं चेव जा व भवणं अट्ठो य भाणियव्वो' त्ति शेषं द्वीपपरिवेष्टकी वेदिकादि **अत्रादि** तथैव वाच्यं यावद्भवनम्, अर्थश्च रोहितांशाद्वीपनाम निबन्धनभूतोऽत्रत्योत्पलादीना-मेतद्वर्णत्वेन रोहितांशायाश्च देव्या अत्र निवासेन निर्वचनीय:।।४१।।

(४२) तस्स णं रोहिअंसप्पवायकुंडस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं रोहिअंसा महाणई पवूढा समाणी हेमवयं वासं एज्जेमाणी २ चउद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ सद्दावइवट्टवेअड्ढपव्वयं अद्धजोअणेणं असंपत्ता समाणी पच्चत्थाभिमुही आवत्ता समाणी हेमवयं वासं दुहा विभयमाणी २ अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जगइं दालइत्ता पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ।।४२।।

१. द्र. ४/३१-३४।।

(४३) रोहिअंसा णं पवहे अद्धतेरसजोअणाइं विक्खंभेणं कोसं उव्वेहेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ परिवड्ढमाणी २ मुहमूले पणवीसं जोअणसयं विक्खंभेणं, अड्ढाइज्जाइं जोअणाइं उव्वेहेणं, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता।।४३।।

तस्स ण 'मित्यादि, तस्य रोहितांशाप्रपातकुण्डस्य उत्तराहेण तोरणेन रोहितांशामहानदी व्यूढा सती हैमवतवर्षं गच्छन्ती चतुर्दशभिः सलिलासहस्रैरापूर्यमाणा **सद्दावइवट्टवेयड्ढ-पव्वयं'ति** वृत्तवैताढ्य पर्वतमर्द्धयोजनेनासम्प्राप्ता सती पश्चिमाभिमुखी आवृता-वलिता सती हेमवन्तं क्षेत्रं द्विधा विभजमाना २ अष्टाविंशत्या सलिलासहस्रैः समग्रा अधो जगतीं विभिद्य पश्चिमदिशालवणसमुद्रं सम्प्राप्नोति **'रोहियंसाणं पवहे'** इत्यादि रोहितांशा णमिति वाक्यालंकारे प्रवाह आदौ सार्द्धं द्वादशयोजनानि विस्तारतः क्रोशमुण्डत्वेन तदनुमात्रया २ स्तोकं स्तोकं परिवर्द्धमाना २ मूखमूले समुद्रप्रवेशरूपे पञ्चविंशत्यधिकं योजनशतं विस्तारतोऽर्द्धतृतीयानि योजनानि दशक्रोशानीत्यर्थः उद्वेधेन-उण्डत्वेन **'उभओ पासिंमि'**त्यादि सुबोधम्।।४३।।

अथ क्षुल्लहिमवति कूटसंख्या प्रश्नयन्नाह

(४४) चुल्लहिमवंते णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पं०?, गोयमा! इक्कारस कूडा पं०, तं०–सिद्धाययणकूडे १, चुल्लहिमवंतकूडे २, भरहकूडे ३, इलादेवीकूडे ४, गंगादेवीकूडे ५, सिरिकूडे ६, रोहिअंसकूडे ७, [1]सिंधुदेवीकूडे ८, सुरादेवीकूडे ९, हेमवयकूडे १०, वेसमणकूडे ११।।४४।।

'चुल्ल हिमवंते ण' मित्यादि, प्रश्नवाक्यं स्पष्टमुत्तरं तु भगवानाह-**गौतम!** लघुहिमवद्वर्षधरे **एकादशकूटानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-सिद्धायतन कूटं १ क्षुल्लहिमवत्कूटं**

१.°देवी° V नास्ति।।

२ भरतकूटं ३ इलादेवी कूटं ४ गङ्गाकूटं ५ श्रीकूटं ६ रोहितांशा कूटं ७ सिन्धुकूटं ८ सुरादेवीकूटं ९ हैमवत कूटं १० वैश्रवण कूटं ११।।४४।।

अथ सिद्धायतनकूटस्य दिग्निर्णयाद्यवगमाय प्रश्नयन्नाह -

(४५) कहि णं भंते! चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पं० ?, गोअमा! पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, चुल्लहिमवंतकूडस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते, पंच जोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, मूले पंच जोअणसयाइं विक्खंभेणं, मज्झे तिण्णि अ पण्णत्तरे जोअणसए विक्खंभेणं, उप्पिं अड्ढाइज्जे जोअणसए विक्खंभेणं, मूले एगं जोअणसहस्सं पंच य एगासीए जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं मज्झे एगं जोअणसहस्सं एगं च छलसीअं जोअणसयं किंचिविसेसूणं परिक्खेवेणं, उप्पिं सत्तएक्काणउए जोअणए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं, मूले वित्थिण्णे, मज्झे संखित्ते, उप्पिं तणुए, गोपुच्छसंठाणसंठिए सव्वरयणामए अच्छे से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते।।४५।।

(४६) सिद्धाययणस्स कूडस्स णं उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते [१]जाव।।४६।।

(४७) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं एगे सिद्धाययणे पण्णत्ते,पण्णासं जोअणाइं आयामेणं, पणवीसं जोअणाइं विक्खंभेणं, छत्तीसं जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं [२]जाव जिणपडिमावण्णओ भाणिअव्वो[३]।।४७।।

'कहि णं भंते' इत्यादि प्रश्नसूत्रं व्यक्तं निर्वचनं तु स्वाम्याह-गौतम! 'पुरत्थिमे' त्यादि

---

१. द्र.१/३६।। २. द्र.१/३०-४०।। ३.णेयव्वो-V।।

पूर्वलवणाब्धेः पश्चिमतः क्षुल्लहिमवत् कूटस्य पूर्वतोऽत्र सिद्धायतनकूटं नाम्ना कूट प्रज्ञप्तं तच्च पञ्चयोजनशतान्युर्ध्वमुच्चैस्त्वेन मूले पञ्चयोजनशतानि विष्कम्भेन मध्ये त्रीणियोजनशतानि पञ्चसप्तत्यधिकानि उपर्यर्द्धतृतीयानि योजनशतानि विष्कम्भेन मूले एकं योजनसहस्रं पञ्चयोजन शतान्येकाशीत्यधिकानि किञ्चिद्विशेषाधिकानि परिक्षेपेण मध्ये एकं योजनसहस्रमेकं च योजनशतं षडशीत्यधिकं किञ्चिद्विशेषोनं परिक्षेपतः उपरि सप्तयोजनशतानि एकनवत्यधिकानि किंञ्चिद्विशेषोनानि परिक्षेपेण, अत एव **मूले विस्तीर्ण**मित्यादि प्राग्वत् **'सिद्धाययण कूडस्य उप्पि'** मित्यादि सिद्धायतनकूटस्योपरि **बहुसमरमणीयो भूमिभागो** यावत्करणाद्भूभिभागवर्णको दृश्यस्तस्य **बहुसमरमणीयस्य बहुमध्यदेशभागेऽत्रैकं महत्सिद्धायतनं प्रज्ञप्तं तच्च पञ्चाशतं योजनान्यायामतः पञ्चविंशति योजनानि विष्कम्भतः षट्त्रिंशद्योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन 'जाव जिणपडिमा वण्णओ नेयव्वो'** त्ति अत्र यावत् करणात् **'अणेगखंभसयसंनिविट्ठे'** इत्यादि सर्वोऽपि सिद्धायतनवर्णकाधिकारो जिनप्रतिमावर्णकपर्यन्तो नेतव्यः प्रागुक्तसूत्रात्प्रापणीय इति।।४५-४७।।

द्वितीयकूट दिग्निर्णयाद्यर्थं प्रश्नयन्नाह-

(४८) कहि णं भंते! चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए चुल्लहिमवंतकूडे नामं कूडे पण्णत्ते?, गो०! भरहकूडस्स पुरत्थिमेणं, सिद्धाययणकूडस्स पच्चत्थिमेणं, एत्थ णं चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए चुल्लहिमवंतकूडे णामं कूडे पण्णत्ते? एवं जो चेव सिद्धाययणकूडस्स उच्चत्त-विक्खंभ-परिक्खेवो।।४८।।

'कहि ण' मित्यादि स्पष्टं **'भरह कूडस्सेत्यादि'** भरतकूटस्य पूर्वस्यां सिद्धायतन कूटस्य प्रागुक्तस्य **पश्चिमायामत्र क्षुल्लहिमवति वर्षधरपर्वते क्षुल्लहिमवतकूटनामं कूटं प्रज्ञप्तं,** अत्र प्रमाणादि सिद्धायतनकूटेनातिदिशति। **'एवं जो चेवे'** त्यादि एवं यदेव

सिद्धायतनकूटस्योच्चत्वविष्कम्भपरिक्षेपं तदेवास्यापि ज्ञेय मित्यर्थः, ।।४८।।

(४९) [1]जाव बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं एगे पासायवडेंसए पण्णत्ते, बासट्ठिं जोअणाइं अद्धजोअणं च उच्चत्तेणं, इक्कतीसं जोअणाइं कोसं च विक्खंभेणं, अब्भुग्गयमूसिअ-पहसिए विव विविहमणि-रयणभत्तिचित्ते वाउद्धुअविजयवेजयंतीपडागच्छत्ताइच्छत्तकलिए तुंगे गगणतलमभिलंघ-माणसिहरे जालंतररयणपंजरुम्मीलिएव्व मणिरयणथूमिआए विअसिअसयव-त्तपुंडरीअतिलयरयणद्धचंदचित्ते णाणामणिमयदामालंकिए अंतो बहिं च [2]सण्हवइरतवणिज्जरुइलवालुगापत्थडे सुहफासे सस्सिरीअरूवे पासाईए जाव पडिरूवे ।।४९।।

'जाव बहुसमे' त्यादि यावत्करणात् पदं **'जोयण सयाइं'** इत्यादि पाठस्तावद्वक्तव्यो यावत् **'तस्सणं चुल्लहिमवंत कूडस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे तस्स णं बहुसमरमणिज्जभूमिभागस्स बहुमज्झ देसभाए'** इति **'एत्थ णं महं एगे पासायवडिंसगे'** त्ति अत्र महानेकः प्रासादावतंसकः प्रज्ञप्तः, स च कथंभूत इत्याह **'बासट्ठिं जोयणाइं'** मित्यादि **'द्वाषष्टिं योजनान्यर्द्धयोजनं चायामविष्कम्भेन,' 'एकत्रिंशद् योजनानि क्रोशं चोर्ध्वमुच्चैस्त्वेन'** मध्यमक्षेत्रसमासवृत्योस्तु **"पणवीसं कोससयं समचउरंस वित्थडा दुगुणमुच्चा पासाया कूडेसुं पणसय उच्चेसु सेसेसु"** पञ्चशतोच्चेषु शेषकूटेषु पञ्चविंशत्यधिकक्रोशशतं समचतुरस्रतया विस्तीर्णाः सार्द्धद्विशतक्रोशोच्चाः प्रासादाः सन्तीति दृश्यते **'अब्भुग्गयमूसिए'** इत्यादि प्राग्व्याख्यतमपि पाठशुद्ध्यर्थं भूयः किञ्चिद्व्याख्यायतेऽभ्युद्गतोच्छ्रितोऽत्युन्नत इत्यर्थः **'प्रहसित इवा'** दभ्रशुभ्रप्रभाप्राग्भारभासुरतया प्रकर्षेण हसित इव, विभक्तिलोपो मकारागमश्च

१. द्र. ४/४५-४६।। २. साहे-V ।।

प्राकृतशैलीप्रभवः, अथवाऽभ्युद्गता सर्वतो विनिर्गता-उत्सृता सर्वतः प्रसृता या प्रभा तया सित इव बद्ध इव यः स तथा **'विविधमणिरत्नभक्तिचित्रः, वातोद्धुतविजयवैजयन्तीपताकाछ -त्रातिछत्रकलित'** इति स्पष्टं नवरं विजयवैजयन्त्यो विजयसूचका ध्वजाः पताकास्तु च तदितरा इति **'तुङ्ग'** उच्चः, अत एव **'गगनतलाभिलङ्घ्यच्छिखरः जालंतर-रयणपंजरुम्मिलिए व्व'** जालान्तरेषु जालकमध्येषु शोभा निमित्तं रत्नानि यत्र स तथा पञ्जरादुन्मीलित इव बहिष्कृत इव यः स तथा, नूतनच्छायत्वादित्यर्थः, विभक्तिलोपः प्राकृतत्वात् **'मणिरयणथूभियाए'** त्ति, मणिरत्नमयस्तूपिकाकः, **'वियसिए'** त्यादि विकसितानि **'शतपत्राणि पुण्डरिकाणि'** द्वारादौ प्रतिकृतित्वेन स्थितानि **'तिलकरत्नानि'** भित्त्यादिषु पुण्ड्र विशेषा **'अर्द्धचन्दाः'** सोपानविशेषाश्चन्दनमया आलेख्यविशेषा वा तै **'श्चित्र'**-आश्चर्यकारी यः स तथा, **'नानामणिमयदामालङ्कृतोऽन्तर्बहिश्च श्लक्ष्णो'** मसृणो **'वज्रतपनीययो रूचिरा'** या **'वालुका'** तस्याः **'प्रस्तटः'** प्रतरो यस्मिन् स तथा **'सुखस्पर्शः सश्रीकरूप'** इति व्यक्तं **'पासाए जाव पडिरूवे'** इह यावत्करणात् **'दरिसणिज्जे अभिरूवे'** इति, एषां पदानां व्याख्या प्राग्वत्।।४९।।

(५०) तस्स णं पासायवडेंसगस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पं० [1]जाव सीहासणं सपरिवारं ।।५०।।

'तस्स ण' मित्यादि **तस्य प्रासादावतंसकस्यान्तर्बहुसमरमणीयो भूमिभागः प्रज्ञप्त** इत्यादि सर्वं तावद्वाच्यं **यावत्सिंहासनं सपरिवारम्**।।५०।।

अथास्य नामप्रवृत्तिनिदानं पृच्छयन्नाह-

(५१) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ चुल्लहिमवंतकूडे २? गो०! चुल्लहिमवंते णामं देवे महिड्ढीए [2]जाव परिवसइ ।।५१।।

---

१. द्र.१/४३-४४।। जीवा. ३/३०८-३१३।। २. द्र.१/२४।।

'से केणट्ठेणं भंते' इत्यादि प्रश्नसूत्रं व्यक्तमुत्तरं स्वाम्याह -**गौतम! क्षुल्लहिमवत् कूटे क्षुल्लहिमवन्नामा देवो यावन्महर्द्धिकः परिवसति,** यावत्पदान् महाद्युतिकादिविशेषणोपादानं कार्यं तत एतद्योगादसौ क्षुल्लहिमवानिति व्यपदिश्यते इत्याद्यं परं च सूत्रं **'से तेणट्ठेण'** मित्याद्यत्र ज्ञेयम् ।।५१।। अथास्यदेवराजस्य राजधानीस्थानं पिपृच्छिषुराह -

(५२) कहि णं भंते! चुल्लहिमवंतगिरिकुमारस्स देवस्स चुल्लहिमवंता णामं रायहाणी पं०?, गो०! चुल्लहिमवंतकूडस्स दक्खिणेणं तिरियमसंखेज्जे दीवसमुद्दे वीईवइत्ता अण्णं जम्बुद्दीवं २ दक्खिणेणं बारस जोअणसहस्साइं ओगाहित्ता, एत्थ णं [1]चुल्लहिमवंतस्स गिरिकुमारस्स देवस्स चुल्लहिमवंता णामं रायहाणी पं०, बारस जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं, एवं विजयरायहाणीसरिसा [2]भाणिअव्वा ।।५२।।

'कहि णं भंते क्षुल्लहिमवंतगिरिकुमारस्से' त्यादि सूत्रं स्पष्टं, अस्याश्च वर्णकोऽतिमहियानतोऽतिदेशमाह-**'एवं विजय राजहाणी सरिसा भाणियव्व'** त्ति यथा हि **'जीवाभिगमे'** विजयदेवराजस्य राजधानी भणिता तत्सदृशीयमपि भणितव्येत्यर्थः।।५२।।

(५३) एवं अवसेसाणवि कूडाणं वत्तव्वया णेअव्वा, आयाम विक्खंभ परिक्खेव-पासायदेवयाओ सीहासणपरिवारो अट्ठो अ देवाण य देवीण य रायहाणीओ [3]णेअव्वाओ, चउसु देवा चुल्लहिमवंत १ भरह २ हेमवय ३ वेसमणकूडेसु ४, सेसेसु देवयाओ।।५३।।

'एवं अवसेसाण वि कूडाण णेयव्वा वत्तव्वया' इति एवं क्षुल्लहिमवत्कूट-वदवशिष्टानामपि कूटानां वक्तव्यता ज्ञेया। सा च किमाश्रयेत्याह- **'आयमे'** त्यादि, आयामविष्कम्भ परिक्षेप-प्रासाददेवतास्तथा **'सीहासणपरिवारो'** त्ति सिंहासनं तत्परिवारश्च

१. चुल्लहिमवंत गिरिकुमारस्स-।। °वंत कुडस्स-अकखत्रिबस।। २ द्र. जीवा.३/३५१-५६५।। ३. द्र.४/४७-५१।।

'अट्ठो' त्ति, अर्थस्तत्तन्नामप्रवृत्तिहेतुभूतस्तथा देवानां देवीनां च राजधान्यश्च नेतव्याः, एतदाश्रिता वक्तव्यता वक्तव्येत्यर्थः।।

अथ कतिषु कूटेषु देवाः कतिषु च देव्यो वसन्तीत्याह-**'चउसु देवा'** चतुर्षु कूटेषु देवाः परिवसन्ति किं नामकेष्वित्याह–**'चुल्ल हिमवंते'** त्यादि **क्षुल्लहिमवद् १ भरत २ हैमवत ३ वैश्रवण ४ कूटेषु 'सेसेसु देवायउ'** त्ति शेषेषूक्तव्यतिरिक्तेषु कूटेषु देव्यो ज्ञेयाः।।५३।।

अथ क्षुल्लहिमवानित्यभिधानप्रवृत्तिः किंनिबन्धनेति प्रश्नयितुमाह-

(५४) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए? २, गो०! महाहिमवंतवासहरपव्वयं पणिहाय आयामुच्चत्तुव्वेहविक्खंभपरिक्खेवं पडुच्च ईसिं खुड्डतराए चेव [१]हस्सतराए चेव णीअतराए चेव चुल्लहिमवंते अ इत्थ देवे महिड्ढीए [२]जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से एएणट्ठेणं गो०! एवं वुच्चइ–चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए २, अदुत्तरं च णं गो०! चुल्लहिमवंतस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते जं ण कयाइ णासि०।।५४।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि प्रश्नवाक्यं सुबोधं निर्वचनसूत्रं तु-**गौतम! महाहिमवंतं वर्षधरपर्वतं प्रणिधायाश्रित्यायामोच्चत्वोद्वेध विष्कम्भपरिक्षेपं प्रतीत्य प्रश्रितः** पर्वतः **'इसिं खुड्डतराए चेव'** त्ति ईषत्क्षुद्रतर एव लघुतरएवायामापेक्षया **'णीयतराए चेव'** त्ति निचतर एव **'उच्चत्तो'** द्वेधापेक्षया **'हस्सतराए चेव'** त्ति ह्रस्वतर एव विष्कम्भपरिक्षेपापेक्षया **'खुड्डतराए चेवे'** त्यादिषु दीर्घत्वं कप्रत्ययश्चार्षत्वाच्चैव शब्दश्चावधारणार्थः, **'चुल्लहिमवंते य इत्थ'** त्ति क्षुल्ल हिमवांश्चात्र देवो महर्द्धिको यावत्पल्योपमस्थितिकः पविसति' **'से एएणट्ठेण'** मित्यादि कण्ठयं **'अदुत्तर च णं गोयमा'** इत्यत्र सूत्रस्य संक्षिप्तत्वात्

१. ह्रस्स° V।। २. द्र.१/२४।।

'चुल्लहिमवंत वासहरपव्वयस्स सासए नामधेज्जे' इत्यादि, अनुक्तमपि प्राक्तनसूत्रमध्येतव्यम्, एवमन्यत्रापि ज्ञेयम्।।

अथ हिमवद्वर्षवक्तव्यतां प्रश्नयन्नाह–

(५५) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे हेमवए णामं वासे पं० ?, गो० ! महाहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं, चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे हेमवए णामं वासे पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीण-दाहिणवित्थिण्णे पलिअंकसंठाणसंठिए, दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे, पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे, पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लिं लवणसमुद्दं पुट्ठे, दोण्णि य जोअणसहस्साइं एगं च पंचुत्तरं जोअणसयं पंच य एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खंभेणं, तस्स बाहा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं छज्जोअणसहस्साइं सत्त य पणवण्णे जोअणसए तिण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणं, तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया दुहओ लवणसमुद्दं पुट्ठा–पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा, पच्चत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठा सत्ततीसं जोअणसहस्साइं छच्च चउवत्तरे जोअणसए सोलस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स किंचिविसेसूणे आयामेणं, तस्स [१]धणुं दाहिणेणं अट्ठतीसं जोअणसहस्साइं सत्त य चत्ताले जोअणसए दस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेणं।।५५।।

'कहिणं भंते' इत्यादि क्व भदन्त! **जम्बूद्वीपे द्वीपे हेमवन्तं नामवर्षं क्षेत्रं प्रज्ञप्तं? गौतम! महाहिमवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां क्षुल्लहिमवन्तो वर्षधरादुत्तरस्यां पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमायां पश्चिमलवणाब्धेः पूर्वस्यामत्र जम्बूद्वीपे द्वीपे हेमवन्तं**

१.धणुं (धणुपट्ठं?)- V।।

नामवर्षं प्रज्ञप्तं तच्च किंभूतमित्याह **'पाईणे'** त्यादि **पूर्वापरायातमुदग्दक्षिण विस्तीर्णं पर्यङ्कसंस्थानसंस्थितं द्विधालवणोदधिं स्पृष्टं** तदेवाह-**'पुरत्थिमिल्लाए'** इत्यादि स्फुटार्थं नवरं **'कोडीए'** त्ति कोट्या-अग्रभागेन विष्कम्भादितस्तत्कीदृशमित्याह-**'दोण्णि य'** इत्यादि **द्वे योजनसहस्रे एकं च पंचोत्तरं योजनशतं पञ्च चैकोनविंशतिभागान् योजनस्य विष्कम्भत:** स्थापना-२१०५-५/१९ **'का तस्य बाहे'** त्यादि तस्य हैमवतक्षेत्रस्य बाहा **पूर्वपश्चिमत: षट्योजनसहस्राणि सप्तयोजनशतानि पञ्च पञ्चाशदधिकानि तिस्रश्च कला आयामेन 'तस्स जीवे'** त्यादि तस्य हैमवतस्य जीवा उत्तरस्यां साच किंभूता **प्राचीनप्रतीचीनायता द्विधा लवणसमुद्रं स्पृष्टा 'पच्चत्थिमं जाव पुट्ठा'** इह यावत् करणात् **'पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवण समुद्दं पुट्ठा पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणं समुद्दं पुट्ठा इति दृश्यं। सत्तत्तीस'** मित्यादि **सप्तत्रिंशतं योजनसहस्राणि षट्च योजनशतानि चतु: सप्तशतानि चतु:सप्तत्यधिकानि षोडश च कला: किञ्चिद्विशेषोनाऽयामेन** ३७६७४/१६/१९ कला **'तस्य धणु'** मित्यादि तस्य हैमवतस्य **धनुर्दक्षिणस्यां** वर्त्तमानमष्टत्रिंशतं **योजनसहस्राणि सप्त च योजनशतानि चत्वारिंशदधिकानि दश च कला: परिक्षेपत:** ३८७४०, १०/१९।।५५।। अस्यैव च क्षेत्रस्य स्वरूपं प्रष्टुकामाह -

(५६) हेमवयस्स णं भंते! वासस्स केरिसए आयारभावपडोआरे पण्णत्ते?, गो०! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, एरवय तइअसमाणुभावो [1]णेअव्वोत्ति।।५६।।

'हेमवयस्स ण' मित्यादि हैमवतस्य वर्षस्य कीदृशक आकारभावप्रत्यवतार: स्वरूपविशेषसम्भव: प्रज्ञप्त:? भगवानाह - गोतम! **'बहुसमे'** त्यादि प्राग्वत्, **'एरवयतइय समाणुभावो णेयव्वो'** त्ति ऐरावतक्षेत्रसत्कसुषमदुष्षमालक्षणतृतीयाकरकानुभाववदत्रत्य

१. द्र. २/५६।।

मनुष्याणामप्यनुभावो नेतव्य इत्यर्थः, ऐरावतग्रहणं भरतस्योपलक्षणार्थं यथा हि भरतैरावतयोस्तृती -यारकमनुष्या एक गव्यूतोच्चत्वादिभावास्तथा, अत्रत्या अपि ज्ञेया इत्यर्थः, युदक्तं " **गाउयमुच्चा पलिउवमाउणे वज्जरिसहसंघयणा। हेमवएरन्नवए अहमिंदनरा मिहुणवासी चउसट्ठी पिट्ठिकरंडयाण मणुयाण तेसिमाहारो भत्तस्स चउत्थस्स उउणसीइदिणाणुपालणया**" क्वचित् '**एवं तइयसमाणुभावो णेयव्वो**' त्ति पाठः स च व्यक्त एव।।५६।।

अथैतत्क्षेत्रान्तवर्त्तिवृत्तवैताढ्यवक्तव्यतां पृच्छन्नाह-

(५७) कहि णं भंते ! हेमवए वासे [१]सद्दावई णामं वट्टे वेअड्ढपव्वए पण्णत्ते ?, गोअमा ! रोहिआए महाणईए पच्चत्थिमेणं, रोहिअंसाए महाणईए पुरत्थिमेणं, हेमवयवासस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं सद्दावई णामं वट्टवेअड्ढपव्वए पण्णत्ते, एगं जोअणसहस्सं उड्ढं उच्चत्तेणं, अड्ढाइज्जाइं जोअणसयाइं उव्वेहेणं, सव्वत्थसमे पल्लगसंठाणसंठिए एगं जोअणसहस्सं आयाम-विक्खंभेणं, तिण्णि जोअणसहस्साइं एगं च बावट्ठं जोअणसयं किंचिविसेसाहिअं परिक्खेवेणं पण्णत्ते, सव्वरयणामए अच्छे से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, वेइआ-वणसंडवण्णओ [२]भाणिअव्वो।।५७।।

'**कहिण**' मित्यादि प्रश्नसूत्रं स्पष्टमुत्तरं भगवानाह-**गौतम! रोहिताया महानद्या**

१. "प्रस्तुत सूत्रे हेमवत-हरिवर्ष-रम्यक-हैरण्यवतसूत्रेषु वृत्तवैताढ्यपर्वतानां देवानां च स्थानाङ्कृतः भिन्ना परम्परा विद्यते, दृष्टव्यं निम्नवार्तियन्त्रम्-

हैमवत-	वृत्तवैताढ्य देव	सद्दावाई सद्दावाई	जंबू. ४/५७	सद्दावाई साती	ठाणं ४/३०७
हरिवर्ष-	वृत्तवैताढ्य देव	वियडावई अरूणे	जंबू. ४/८४	गंधीवाती अरूणे	ठाणं ४/३०७
रम्यक-	वृत्तवैताढ्य देव	गंधावई पउमे	जंबू. ४/२६४	मालवंतपरिताने पउमे	ठाणं ४/३०७
हैरण्यवत-	वृत्तवैताढ्य देव	मालवंतपरियाए पभासे	जंबू. ४/२७०	वियडावानी पभासे	ठाणं ४/३०७

२. द्र. २/१०-१३।।

वक्ष्यमाणस्वरूपाया: **पश्चिमत: रोहितांशाया महानद्या: पूर्वत: हिमवतवर्षस्य बहुमध्यदेशभागेऽत्र शब्दापाति नामा वृत्तवैताढ्यपर्वत: प्रज्ञप्त: स चैकं योजनसहस्रमुर्ध्वमुच्चैस्त्वेनार्द्धतृतीयानि योजनशतानि उद्वेधेन** भूम्यवगाहत्वेन **'सव्वत्थ समे'** त्ति सर्वत्र मूले मध्ये उपरि च समस्तुल्यप्रमाणोऽत एव **पल्यंकसंस्थान संस्थित:**, इह पल्यङ्को वंशदल निर्मापितो लाटदेशप्रसिद्धो धान्याधारविशेष:, **'एगं जोयण सहस्स'** मित्यादि, **एकं योजनसहस्रमायामविष्कम्भाभ्यां त्रीणियोजनसहस्राणि एकं च योजनशतं द्वाषष्टं** द्वाषष्टि योजनाधिकं **किञ्चिद्विवेशेषाधिकं परिक्षेपेण** परिरयेण **'सव्वरयणामए'** त्ति सर्वात्मना रत्नमय: **'अच्छे'** इति अत्रैकपदोपादानादन्यान्यपि पदानि ग्राह्याणि **'से णं एगाए'** इत्यादि स्पष्टं ननु कस्मादयं वृत्तवैताढ्य इति प्रसिद्ध: ? उच्यते, स्वावासक्षेत्रस्य द्वेऽर्द्धे करोतीति वैताढ्य: पृषोदरादित्वादिष्टरूपसिद्धि:, तथा चायमपि हैमवतक्षेत्रस्य बहुमध्यदेशभागवर्त्तित्वात् द्वेऽर्धे करोतीति वैताढ्योऽयं च वृत्ताकारो न भरतैरावतविजयवैताढ्यवत् पूर्वापरायातस्तेन वृत्तवैताढ्य इत्युच्यते एवमन्येऽपि ये वृत्तवैताढ्या अग्रे वक्ष्यन्ते तेऽप्येतत्समा एव ज्ञेया:, उक्तं च -" **हैमवएरण्णवए हरिवासे रम्मए य रयणमया सद्दावइ वियडावइ गंधावइ मालवंतक्खा चउ वट्टवियड्ढा साइअरुणपउमप्पभा ससुरवासा मूलुवरिपिहुत्तेन तह उच्चत्ते जोयण सहस्सं** " इति।।५७।।

(५८) सद्दावइस्स णं वट्टवेअड्ढपव्वयस्स उवरिं बहुससरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते।।५८।।

(५९) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं एगे पासायवडेंसए पण्णत्ते–बावट्ठिं जोअणाइं अड्ढजोयणं च उड्ढं उच्चत्तेणं इक्कतीसं जोअणाइं कोसं च आयाम-विक्खंभेणं [1]जाव सीहासणं सपरिवारं।।५९।।

---

१. द्र. ४/४८-४९।।

बहुसमरमणीये भूमिभागेऽत्रैको महान् प्रसादावतंसकः स च द्वाषष्टि योजनान्यर्द्ध योजनं चोच्चत्वेनैकत्रिंशतं योजनानि क्रोशं चायामविष्कम्भाभ्यां **'जाव सीहासणं सपरिवारं'** इह यावत्करणादेत्तद्वर्णकादि तावद्वाच्यं यावत्सिंहासनं सपरिवारम्।।५८-५९।।

अथ शद्वापातिनामप्रवृत्तिनिमित्तं प्रश्नयितुमाह -

(६०) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ सद्दावई वट्टवेयड्ढपव्वए?, २, गोअमा! सद्दावइवट्टवेअड्ढपव्वए णं खुड्डिखुड्डिआसु वासीसु जाव [1]बिलपंतिआसु बहवे उप्पलाइं पउमाइं सद्दावइप्पभाइं सद्दावइ आगाराइं सद्दावइवण्णाइ सद्दावतिवण्णाभाइं सद्दावई अ इत्थ देवे महिड्ढीए जाव [2]महाणुभावे पलिओवमठिईए परिवसइति, सेणं तत्थ चउण्हं सामाणिअसाहस्सीणं जाव परिवसइ रायहाणी मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं अण्णंमि जम्बूद्दीवे दीवे०।

'से केणट्ठेण' मित्यादि प्रश्नवाक्यं व्यक्तं भगवानाह-**गौतम! शद्वापातिवृत्तवैताढ्य 'खुड्डा खुड्डीयासु'** इति क्षुद्रक्षुद्रिकासु **वापीषु** दीर्घत्वं प्राकृतत्वात् **'यावद्विलपङ्क्तिषु बहून्युत्पलादीनि शद्वापातिप्रभाणि' -'शद्वापातिवर्णानिशद्वापातिवर्णाभानि'** तथा **'सद्दावइत्थ देवे'** इत्यादि सर्वं **'जाव परिवसइ'** एतदन्तं प्राग्वद्विविच्य वाच्यं **'से तेणट्ठेणं'** इत्यादि पूर्ववत् **'रायहाणी वि नेयव्वा'** 'इत्यादि शद्वापाति देवस्य राजधानी नेतव्या मेरो र्दक्षिणस्यामन्यस्मिन् जम्बूद्वीपे द्वीपे। ।।६०।।

अथ हैमवतक्षेत्रस्य नामान्वर्थं जिज्ञासुः पृच्छति-

(६१) से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ हेमवए वासे २?, गोअमा ! चुलहिमवंतमहाहिमवंतेहिं वासहरपव्वएहिं दुहओ [3]समवगूढे णिच्चं हेमं [4]दलइ, णिच्चं हेमं दलइत्ता णिच्चं

---

१. द्र. ३/ २८६।। २. भागे - V ।। ३. समुवगूढे - V ।। ४. दलयइ - V ।।

हेमं पगासई हेमवए अ इत्थ देवे महिड्ढीए जाव पलिओवमट्ठिईए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोअमा ! एवं वुच्चइ हेमवए वासे हेमवए वासे ।।६१।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि, अथ केनार्थेन **'भदन्त एवमुच्यते, हैमवतं वर्षं'** २ स्वम्याह- **'गौतम'**! **'क्षुल्लहिमन्महाहिमवद्भ्यां वर्षधरपर्वताभ्यां'** **'दुहओ'** त्ति द्वयोः पार्श्वयो र्दक्षिणोत्तररूपयोः समवगूढं **'समुवगूढं'** वा स्पृष्टं कृतसीमापर्यन्तमित्यर्थः, ततश्च हिमवतो-र्मध्ये भवं हैमवतमित्येका व्युत्पत्तिः, अथवा **'नित्य हेमं दलयति'** इत्यादि नित्यं हेम सुवर्णं ददाति तद्वासिजनेभ्य आसनप्रदानादितया प्रयच्छति तथा नित्यं हेम मुञ्चति, एतत्पदं क्वचिन्न दृश्यते तथा **'नित्यं हेम प्रकाशयति'** तथाहि-बहवस्तत्र युगलधार्मिकाणां मनुष्याणामुपवेशन-शयनादिरूपोपभोगयोग्याः कनकमयाः शिलापट्टकाः सन्ति पश्यन्ति च ते युगलधार्मिकास्तत्र तत्र प्रदेशे मनोहारिणो हेममयान्निवेशान्आसनानि तनो हेमप्रभूतं प्रशस्यं नित्ययोगितास्यास्तीति हेमवत्, हेमवदेव हैमवतमिति प्रज्ञादेराकृतिगणतया **"प्रज्ञादिभ्य"** इति स्वार्थे अणप्रत्ययः, यदि वा **'हैमवतोऽत्र देवो यावत्पल्योपमस्थितिकः परिवसति तेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते'** व्यपदिशते **'हैमवतं वर्षं २'** इति।।६१।।

अथ महाहिमवद्वर्षधरगिरिवक्तव्यतां पृच्छन्नाह-

(६२) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ महाहिमवंते णामं वासहरपव्वए पं० ?, गो० ! हरिवासस्स दाहिणेणं, हेमवयस्स वासस्स उत्तरेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाहिमवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीण-दाहिणवित्थिण्णे पलियंक - संठाणसंठिए दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे, पुरत्थिमिल्लाए कोडीए जाव पुट्ठे, पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे, दो जोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, पण्णासं जोअणाइं उव्वेहेणं, चत्तारि जोअणसहस्साइं दोण्णि अ दसुत्तरे जोअणसए दस य

एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खंभेणं, तस्स बाहा पुरत्थिम पच्चत्थिमेणं णव जोअणसहस्साइं दोण्णि अ छावत्तरे जोअणसए णव य एगूणवीसइभाए जोअणस्स अद्धभागं च आयामेणं, तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा, पच्चत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठा, तेवण्णं जोअणसहस्साइं नव य एगतीसे जोअणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोअणस्स किंचिविसेसाहिए आयामेणं तस्स धणुं दाहिणेणं सत्तावण्णं जोअणसहस्साइं दोण्णिं अ तेणउए जोअणसए दस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेणं, रुअगसंठाणसंठिए सव्वरयणामए अच्छे उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसडेहिं संपरिक्खित्ते।।६२।।

(६३) महाहिमवंतस्स णं वासहरपव्वयस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, जाव णाणविहपंचवण्णेहिं मणीहि अ तणेहि अ उवसोभिए [१]जाव आसयंति सयंति य।।६३।।

'कहि णं भंते' इत्यादि यावत् 'पच्चत्थिमिल्लाए कोडिए पच्चत्थिमिल्लं लवण समुद्दं पुट्ठे' एतदन्तं सूत्रं निगदसिद्धं महाहिमवन्तं परिमाणतः प्राह 'दो जोयण सयाइ' मित्यादि द्वेयोजनशते 'ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन पञ्चाशतं' च 'योजनान्युद्वेधेन चत्वारि योजनसहस्राणि द्वे' च 'दशोत्तरे योजनशते दशकला विष्कम्भतः' 'तस्स बाहे' त्यादि तस्य महाहिमवतो बाहा 'पूर्वापरतः नवयोजनसहस्राणि द्वे च षट्सप्तत्यधिके योजनशते नव' च कला 'अर्द्धं' च 'कलामायामतः' ९२७६-९-१/२/१९ 'तस्स जीवे' त्यादि तस्य महाहिमवतो जीवा 'उत्तरेण' मित्यादिसुबोधं नवरं 'तेवण्णं' त्ति 'त्रिपञ्चाशतं योजनसहस्राणि नव य योजनशतान्येकत्रिंशदधिकानि षट् च कलाः

१. द्र.जीवा. ३/२७७-२९७।।

किञ्चिद्विशेषाधिका आयामतः' ५३९३१ ७/१९ **'तस्स धणु'** मित्यादि तस्य महाहिमवतो धनुःपृष्टं **'दक्षिणस्यां सप्तपञ्चाशतं योजनसहस्राणि द्वे च त्रिनवत्यधिकयोजनशते दश च कलाः परिक्षेपेण'** ५७२९३ १०/१९। **'रुयग संठाण संठिए'** इत्यादि **'जाव आसयंति'** इत्यन्तं कण्ठ्यम्।।६२-६३।।

(६४) महाहिमवंतस्स णं बहुमज्झदेसभाए, [1]एत्थ णं एगे महापउमद्दहे णामं दहे पण्णत्ते, दो जोअणसहस्साइं आयामेणं, एगं जोअणसहस्सं विक्खंभेणं, दस जोअणाइं उव्वेहेणं, अच्छे [2]रययामयकूले एवं आयाम विक्खंभविहूणा जा चेव पउमद्दहस्स वत्तव्वया सा चेव [3]णेअव्वा, पउमप्पमाणं दो जोअणाइं अट्ठो जाव महापउमद्दहवण्णाभाइं महापउमद्दहे २ हिरी अ इत्थ देवी मडिड्ढीया जाव पलिओवमट्ठिइया परिवसइ, से एएणट्ठेणं गोअमा! एवं वुच्चइ, अदुत्तरं च णं गोअमा! महापउमद्दहस्स सासए णामधिज्जे पं० जं ण कयाइ णासी३।।६४।।

'तस्स ण' मित्यादि महाहिमवदुपरिवर्त्तमानबहुसमरमणियभूमिभागस्य बहुमध्ये देशभागे **'एत्थ ण'** मित्यादि अत्र ण मित्यलङ्कारे **'एको महापद्मद्रह'** इति **'नाम्ना हदः प्रज्ञप्तः'** स च **'द्वे योजनसहस्रे आयामेन'** दैर्घ्यत **'एकं योजनसहस्रं विष्कम्भेन' 'पृथुलत्वेन दशयोजनान्युद्वेधेन'**-उण्डत्वेन **'अच्छे रययामय कूले'** इति प्राग्वत्, **'एव'** मित्यादि एवमुक्तनीत्याऽऽयाम-विष्कम्भविहायैव पद्महदस्यापि नेतव्या **'पउमप्पमाणं दो जोयण'** इति हदान्तवर्त्तिदेवीनिवासयोग्यं पद्मं तु द्वे योजने आयामविष्कम्भतः अत्रानुक्तमपि किञ्चिदुच्यते योजनं बाहल्यतो दशयोजनान्युद्वेधेन द्वौ क्रोशौ जलान्तादुच्चं,पद्ममध्यगता कर्णिका चैकयोजनविस्तारा, अर्द्धयोजनोच्चा, एतदुपरि भवनं त्वर्द्धक्रोशपृथुलमेकक्रोश दीर्घं चत्वारिंशदधिकचतुर्दशशतधनुरुच्चमेतद्मध्यस्थमणिपीठिकोपरि ह्रीदेवीयोग्यं शयनीयं वाच्यं

१. णं महंएगे-कखत्रिस।। २. रयणामय°अखत्रिव।। ३. द्र.४/३-२२।।

मूलपद्मं च प्राग्वदेव तावत्तथाविधपद्मवलयैः परिक्षिप्तमित्यादि ज्ञेयं **'अट्ठो जाव महापउमदहवण्णाभाइं'** ति अर्थो महापद्मद्रहनाम निबन्धनभूतो द्रष्टव्यः, **'से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ महापउमहे २'** इति तदनु यावत्करणात् **'गोयमा महापउमद्दहे तत्थ २ देसे बहुइं उप्पलाइं जाव महापउमदहप्पभाइं'** इत्यादि निर्वचनं वक्तव्यं तथा **'हिरी यत्थ देवी'** ति ह्रीश्चात्र देवी **'यावत्पल्योपमस्थितिका परिवसति'** **'से तेणट्ठेण'** मित्यादि सुगमं तेन कारणेन महापद्म द्रह इति व्यपदिश्यते**'ऽथवा शाश्वतं नामेदं महापद्मद्रहस्येति'** भावना।।६४।।

(६५) तस्स णं महापउमद्दहस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेणं रोहिआ महाणई पवूढा समाणी सोलस पंचुत्तरे जोअणसए पंच य एगूणवीसइभाए जोअणस्स दाहिणाभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवित्तिएणं मुत्तावलिहारसंठिएणं साइरेगदोजोअणसइएणं पवाएणं पवडइ।।६५।।

(६६) रोहिआ णं महाणई जओ पवडइ, एत्थ णं महं एगा जिब्भिया पं०, सा णं जिब्भिआ जोअणं आयामेणं, अद्धतेरसजोअणाइं विक्खंभेणं, कोसं बाहल्लेणं, मगरमुहविउट्टसंठाणसंठिआ सव्ववइरामई अच्छा।।६६।।

(६७) रोहिआ णं महाणई जहिं पवडइ, एत्थ णं महं एगे रोहिअप्पवायकुंडे णामं कुंडे पं०, सवीसं जोअणसयं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते तिण्णि असीए जोअणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं, दस जोअणाइं उव्वेहेणं, अच्छे सण्हे सो चेव वण्णओ, वइरतले वट्टे समतीरे [१]जाव तोरणा।।६७।।

'तस्स महापउमद्दहस्से' त्यादि तस्य महापद्मद्रहस्य **दक्षिणात्येन तोरणेन रोहिता नाम्नी महानदी प्रव्यूढा सती षोडशपञ्चोत्तराणि योजनशतानि पञ्च कला**

१. द्र.४/२५-३०।।

दक्षिणाभिमुखी पर्वतेन गत्वा **'महया घडमुहे'** त्यादि पूर्ववन्नवरं **'साइरेग जोयण दुसइएणं'** ति सातिरेकयोजनशतद्वयप्रमाणेन **'सा णं जिब्भिये'** त्यादि प्राग्वत् **'रोहियण'** मित्यादि रोहिता महानदी यत्र प्रपतति, अत्रैकं महद्रोहिताप्रपातकुण्डं नाम्ना कुण्डमेत्तच्च **'सवीस'** मित्यादि **'विंशत्यधिकं योजनशतमायाम-विष्कम्भतस्त्रीण्यशीत्यधिकानि योजनशतानि किञ्चिद्विशेषोनानि परिक्षेपेण'** परिधिना **'दशयोजनान्युद्वेधेन'**उण्डत्वेन **'अच्छे सण्हे'** इत्यादि प्राग्वत् यावत्तोरणवक्तव्यतापरिसमाप्तिः।।६६-६७।।

(६८) तस्स णं रोहिअप्पवायकुंडस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं एगे रोहिअदीवे णामं दीवे पण्णत्ते, सोलस जोअणाइं आयाम-विक्खंभेणं, साइरेगाइं पण्णासं जोअणाइं परिक्खेवेणं, दो कोसे ऊसिए जलंताओ, सव्ववइरामए अच्छे से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते।।६८।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य रोहिताप्रपातकुण्डस्य **'बहुमध्यदेशभागेऽत्र महानेको रोहित- द्वीपो नाम्ना द्वीपः'** स च **'सोलसे'** त्यादि षोडश **'योजनान्यायाम-विष्कम्भाभ्यां साधिकानि पञ्चाशतं योजनानि परिक्षेपेण द्वौ क्रोशावुच्छ्रितो'** जलान्तात् **'सव्व वइरामए अच्छे से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेण'** मिति प्राग्वद्व्याख्येयम्।।६८।।

(६९) रोहिअदीवस्स णं दीवस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते।।६९।।

(७०) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे भवणे पण्णत्ते, कोसं आयामेणं सेसं तं चेव पमाणं च अट्ठो अ [१]भाणिअव्वो।।७०।।

'रोहिय दीवस्सणं उप्पि' मित्यादि सुबोधं नवरमस्योपरिस्थितं भवनं क्रोशमायामेन **'सेसं तं चेव पमाणं'** ति शेषं विष्कम्भादि प्रमाणं तदेव

---

१. द्र. ४/३३-३४।।

यद्गङ्गाद्वीपोपरिस्थितगङ्गादेवीभवनस्योक्तं, तथास्यापि वाच्यमित्यर्थः, **'अट्ठो य भाणियव्वो'** त्ति रोहितद्वीपनामप्रवृत्तिहेतुभूतोऽर्थो भणितव्यः स चैवमर्थतः एतद् द्वीपगतपद्मादीनि रोहितवर्णानि रोहिता चात्र देवी वसति तेन रोहितद्वीप इति नामप्रवृत्ति र्यदिवा शाश्वतं नामधेयमस्येदमिति।।७०।।

(७१) तस्स णं रोहिअप्पवायकुंडस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेणं रोहिआ महाणई पवूढा समाणी हेमवयं वासं एज्जेमाणी २ सद्दावइं वट्टवेअड्ढपव्वयं अद्धजोअणेणं असंपत्ता पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी हेमवयं वासं दुहा विभयमाणी २ अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जगइं दालइत्ता पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ।।७१।।

'तस्स णं रोहियाप्पवाय कुंडस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेण' मित्यादि प्रकटार्थं नवरं **'अट्ठावीसाए'** इत्यादि अष्टाविंशत्या **'नदी सहस्रैः समग्रा अधो जगतीं दारयित्वा पूर्वदिशा लवणाब्धिं समुपैति'।।७१।।**

(७२) रोहिआ णं जहा रोहिअंसा तहा पवहे अ मुहे अ भाणिअव्वा इति जाव संपरिक्खित्ता।।७२।।

'रोहिया णं जहा रोहियंसा तहा पवहे य मुहे य भाणियव्वा' इति स्पष्टं नवरं प्रागुक्तरोहितांशावद्रोहितापि प्रवहे आदौ सार्द्धत्रयोदशयोजनविस्तारा क्रोशोण्डा तदनु वर्द्धमाना ३ समुद्रप्रवेशे पञ्चविंशत्युत्तरयोजनशतविस्तारा दशक्रोशोण्डा चेति भावः **'जाव संपरिक्खित्ता'** इह यावत् करणात् **'उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहिं च वणसंडेहि'** मिति दृश्यम्।।७२।।

(७३) तस्स णं महापउमद्दहस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं हरिकंता महाणई पवूढा समाणी

सोलस पंचुत्तरे जोअणसए पंच एगूणवीसइभाए जोअणस्स उत्तराभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवत्तिएणं मुत्तावलिहारसंठिएणं साइरेगदुजोअणसइएणं पवाएणं पवडइ।।७३।।

'तस्स णं महापउमद्दहस्से' त्यादि तस्य महापद्मद्रहस्य **'उत्तराहेणं तोरणेन हरिकंता नाम्ना महानदी प्रत्यूढा सती षोडश पञ्चोत्तराणि योजन शतानि पञ्च कलाश्चोत्तराभिमुखी पर्वतेन गत्वा' 'महये'** त्यादि . प्राग्वदेव।।७३।।

(७४) हरिकंता महाणई जओ पवडइ, एत्थ णं महं एगा जिब्भिआ पं० दो जोयणाइं आयामेणं, पणवीसं जोअणाइं विक्खंभेणं, अद्धं जोअणं बाहल्लेणं, मगरमुहविउट्टसंठाणसंठिआ [१]सव्वरयणामई अच्छा।।७४।।

'हरिकंता णं महानदी' त्यादि हरिकान्ता महानदी प्राग्वत् ।।७४।।

(७५) हरिकंता णं महाणई जहिं पवडइ एत्थ णं महं एगे हरिकंतप्पवायकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते, दोण्णि च चत्ताले जोअणसए आयाम विक्खंभेण सत्तअउणट्ठे जोयणसए परिक्खेवेणं, अच्छे, एवं कुण्डवत्तव्वया सव्वा नेयव्वा [२]जाव तोरणा।।७५।।

'हरिकंता णं महानदी जहिं पवडति' इत्यादिना कुण्डमभिधाय हरिकान्ता प्रपातकुण्डं प्रमाणतो दर्शयति **'दोण्णि'** इत्यादि **'द्वे चत्वारिंशदधिके योजन शते आयामविष्कम्भाभ्यां सप्तयोजनशतान्येकोनषष्ट्यधिकानि परिक्षेपेण' 'अच्छे'** इत्यादि प्राग्वत् **'एवं कुंडे'** त्यादि एवं प्रागुक्त रीत्या कुण्डवक्तव्यता सर्वा ज्ञेया यावत्तोरणा इति तोरणवक्तव्यता परिसमाप्तिः।।७५।।

(७६) तस्स णं हरिकंतप्पवायकुण्डस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे हरिकंतदीवे

---

१. "अत्र 'सव्वरयणामई ।। २. द्र. ४/३३-३४।।

णामं दीवे पं० बत्तीसं जोअणाइं आयाम विक्खंभेणं, एगुत्तरं जोअणसयं परिक्खेवेणं, दो कोसे ऊसिए जलंताओ, सव्वरयणामए अच्छे । से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं जाव संपरिखित्ते, वण्णओ [1]भाणिअव्वोत्ति, पमाणं च सयणिज्जं च अट्ठो अ [2]भाणिअव्वो।।७६।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य हरिकान्ता प्रपात कुण्डस्य **'बहुमध्य देशभागे अत्र महानेको हरिकान्ताद्वीपः प्रज्ञप्तः'** स च **'द्वात्रिंशतं योजनान्यायाम विष्कम्भाभ्यामेकोत्तर योजनशतं परिक्षेपेण द्वौ क्रोशावुच्छ्रितो जलान्तात्' 'सव्वरयणामए'** इत्यादि प्राग्वत् **'भवणं सयणिज्जं च अट्ठो य भणियव्वो'** त्ति अस्य द्वीपस्योपरि हरिकान्तादेवीनिवासयोग्यभवनं तन्मध्ये च शयनीयं वाच्यमर्थश्च हरिकान्ताद्वीपनामप्रवृत्तिभूतो गङ्गाद्वीपानुसारेण वाच्यः।।७६।।

(७७) तस्स णं हरिकंतप्पवायकुण्डस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं जाव पवूढा समाणी हरिवस्सं[3] वासं एज्जेमाणी २ विअडावइ वट्टवेयड्ढं जोअणेणं असंपत्ता पच्चत्थाभिमुही आवत्ता समाणी हरिवासं दुहा विभयमाणी २ छप्पण्णाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जगइं दालइत्ता पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ।।७७।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य **हरिकान्ता प्रपात कुण्डस्यो'त्तर दिक्स्थेन तोरणेन'** हरिकान्ता महानदी **'प्रव्यूढा सती हरिवर्षं'** नाम्ना **'वर्षं गच्छन्ती' 'वियडावइवट्टवेयड्ढं पव्वयं'** ति विकटापाति वृत्तवैताढ्यपर्वतं **'योजनेनासम्प्राप्ता पश्मिाभिमुखी आवृत्ता सती हरिवर्षं'** क्षेत्रं **'द्विधा विभजमाना षट्पञ्चाशता सलिलासहस्रैः समग्रा अधो जगतीं विभिद्य पश्चिमदिशा लवणसमुद्रं प्रविशति'।।७७।।**

(७८) हरिकंता णं महाणई पवहे पणवीसं जोअणाइं विक्खम्भेणं, अद्धजोअणं

१. द्र. १/१०-१३।। २. द्र.४/३२-३४।। ३. °वासं-V।।

उव्वेहेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ परिवड्ढमाणी २ मुहमूले अड्ढाइज्जाइं जोअणसयाइं विक्खम्भेणं, पञ्च जोअणाइं उव्वेहेणं, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता।।७८।।

'हरिकंता ण' मित्यादि हरिकान्ता 'महानदीप्रवाहे पञ्चविंशति योजनानि विष्कम्भेनार्द्धयोजनमुद्वेधेन ततोऽनन्तरं मात्रया २ परिवर्द्धमाना २ मुखमूले समुद्रप्रवेशेऽर्द्ध-तृतीयानि योजनशतानि विष्कम्भत: पञ्चयोजनान्युद्वेधेनोभयो: पार्श्वयोर्द्वाभ्यां पद्मवरवेदिकाभ्यां वनखण्डाभ्यां परिक्षिप्ता।।७८।।

अथ महाहिमवति कूटसंख्या प्रश्नयन्नाह-

(७९) महाहिमवंते णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पं०? गो०! अट्ठ कूडा पं०, तं०–सिद्धायतणकूडे १, महाहिमवंतकूडे २, हेमवयकूडे ३, रोहिअकूडे ४, हिरिकूडे ५, हरिकंनकूडे ६, हरिवासकूडे ७, वेरुलिअकूडे ८, एवं चुल्लहिमवंतकूडाणं जा चेव वत्तव्वया सच्चेव [१]णेअव्वा।।७९।।

'महाहिमवंते णं भंते' इत्यादि सुगमं नवर'मष्ट कूटानि तद्यथा-सिद्धायतन कूटं १ महाहिमवत् कूटं २ हैमवत्कूट २ रोहिता कूटं ४ ह्री कूटं ५ हरिकान्ता कूटं ६ हरिवर्ष कूटं ७ वैडूर्यकूटतमिति,' 'एवं चुल्ले' त्यादि एवं क्षुल्लहिमवत्कूटानां या वक्तव्यता प्रमाणाद्यावेदिका सैवेहापि नेतव्या।।७९।।

(८०) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ महाहिमवंते वासहरपव्वए? २, गोअमा! महाहिमवंते णं वासहरपव्वए चुल्लहिमवंतं वासहरपव्वयं पणिहाय आयामुच्च-त्तुव्वेह-विक्खम्भ-परिक्खेवेणं महंततराए चेव दीहतराए चेव, महाहिमवंते अ इत्थ देवे महिड्ढीए

१.द्र.४/४५-५४।।

[1]जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ।।८०।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि महाहिमवन्नामप्रवृत्तिहेतुप्रश्नोत्तरसूत्रमुत्तानार्थं नवरं 'महंततरा एव' त्ति एकां च कलां विष्कम्भत:' 'तस्स बाहे' त्यादि तस्य हरिवर्षस्य बाहा पूर्वपश्चिम - तस्त्रयोदशयोजनसहस्राणि त्रीणि चैकषष्ठ्यधिकानि योजनशतानि महत्तर एवोच्चत्वाद्यपेक्षया 'दीहतरा एव' त्ति दीर्घतर एवायामापेक्षया।।८०।।

अथ हरिवर्षक्षेत्रवक्तप्यतावबोधाय प्रश्नमाह-

(८१) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे हरिवासे णामं वासे पं०?, गो०! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं, [2]महाहिमवंतवासहरपव्वयस्स उत्तरेणं पुरत्थिमलवण-समुद्दस्स पच्चत्थिमेणं ,पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ हरिवासे णामं वासे पण्णत्ते, एवं [3]जाव पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे, अट्ठ जोअणसहस्साइं चत्तारि अ एगवीसे जोअणसए एगं च एगूणवीसइभागं जोअणस्स विक्खम्भेणं, तस्स बाहा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं तेरस जोअणसहस्साइं तिण्णि अ एगसट्ठे जोअसणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोअणस्स अद्धभागं च आयामेणंति तस्स जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा, पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं जाव लवणसमुद्दं पुट्ठा तेवत्तरिं जोअणसहस्साइं णव य एगुत्तरे जोअणसए सत्तरस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स अद्धभागं च आयामेणं, तस्स धणुं (धणुपुट्ठं)दाहिणेणं चउरासीइं जोअणसहस्साइं सोलस जोअणाइं चत्तारि एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेणं।।८१।।

'कहिण' मित्यादि क्व 'भदन्त'! 'जम्बूद्वीपे द्वीपे हरिवर्षं नाम्ना वर्षं प्रज्ञप्तं'

---

१. द्र. १/२४।। २. °वंतस्स वास°V।। ३. द्र.४/१।।

भगवानाह-**'गौतम! निषधस्य वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणतो महाहिमद्वषर्धरस्योत्तरतः पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमतः पश्चिमलवणसमुद्रस्य पूर्वतः' 'एत्थ णं'** ति अत्रान्तरे **'जम्बूद्वीपे द्वीपे हरिवर्षं नाम्ना वर्षं प्रज्ञप्तं' 'एवं जाव'** त्ति इह यावत्करणात् **'पाईण-पडीणायते'** इत्यादि दृश्यं, हरिवर्षक्षेत्रं प्रमाणतः प्राह-**'अट्ठे'** त्यादि अष्टौ **'योजनसहस्राणि' चत्वारि 'चैकविंशत्यधिकानि योजनशतानि** एकां च कलां विष्कम्भतः ८४२१, १/१९ **तस्स बाहेत्यादि**, तस्स हरिवर्षस्य बाहा पूर्व-पश्चिमतस्त्रयोदशयोजनसहस्राणि त्रीणि च एकषष्ट्यधिकानि योजनशतानि **षट्कला अर्द्धकलां चायामेन'** १३३६१/६/[१]/२१९ कला, **'तस्से'** त्यादि तस्य हरिवर्ष क्षेत्रस्य **'जीवा उत्तरतः' 'पाईण'** त्यादि प्राग्वत् नवरं **'तेवत्तरिं'** ति त्रिसप्ततिं **'योजनसहस्राणि नव चैकोत्तराणि योजनशतानि सप्तदश कला अर्द्धकलां चायामतः** ७३९०१/ १७/[१]/२१९ कला, **'तस्से'** त्यादि तस्य हरिवर्षस्य **'धनुःपृष्टं दक्षिणस्यां चतुरशीतिं योजनसहस्राणि षोडश च योजनानि चतस्रश्च कलाः परिक्षेपतः** ८४०१६/४/१९॥८१॥

(८२) हरिवासस्स णं भंते! वासस्स केरिसए आगारभावपडोआरे पं० ?, गोअमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव मणीहिं तणेहि अ उवसोभिए एवं मणीणं तणाण य वण्णो गंधो फासो सद्दो [१]भाणिअव्वो ॥८२॥

(८३) हरिवासे णं वासे तत्थ २ देसे तहिं २ बहवे खुड्डा खुड्डिआओ एवं जो सुसमाए अणुभावो सो चेव अपरिसेसो [२]वत्तव्वोत्ति॥८३॥

हरिवर्षक्षेत्रसम्बन्ध्याकारभावप्रत्यवतारप्रश्न-निर्वचनसूत्रे प्रकटार्थे नवरं **'एवं जो सुसमाए अणुभावो सो चेव अपरिसेसो वत्तव्वो'** त्ति एवं प्रागुक्तप्रकारेण यः सुषमाया अवसर्प्पिणीसत्कद्वितीयारकस्यानुभावो भारतवर्षवर्णनावसरेऽभिहितः स एवापरिशेषः

१. द्र. जीवा. ३/२९९-२८५॥ २. द्र.२/५२-५३॥

सर्वोऽत्रापि वक्तव्यस्ततोऽत्रत्यमनुष्या द्विपल्यायुष्कादिभावा भवन्तीति यदुक्तं **"हरिवास रम्मएसुं आउपमाणं सरीर उस्सेहो पलिओवमाणि होंत्ति उ दोन्नि य कोसूसिया भणिया' ।।१।। 'छट्ठस्य च आहारो चउसट्ठि दिणाणुपालणा तेसिं पिट्ठकरंडाण सयं अट्ठावीसं मुणेयव्वं''**।।२।। इति, ।।८२-८३।।

अथैतत्क्षेत्रमध्यस्थितवृत्तवैताढ्यवक्तव्यतां पृच्छन्नाह-

(८४) कहिं णं भंते! हरिवासे वासे विअडावई णामं वट्टे वेअड्ढपव्वए पण्णत्ते?, गो०! हरीए महाणईए पच्चत्थिमेणं, हरिकंताए महाणईए पुरत्थिमेणं, हरिवासस्स २ बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं विअडावई णामं वट्टवेअड्ढपव्वए पण्णत्ते, एवं जो चेव सद्दावइस्स विक्खंभुच्चत्तुव्वेहपरिक्खेव-संठाण-वण्णावासो अ सो चेव विअडावइस्सवि [1]भाणिअव्वो णवरं अरुणो देवो पउमाइं जाव विअडावइवण्णाभाइं, अरुणे अ इत्थ देवे महिड्ढीए एवं जाव दाहिणेणं रायहाणी णेअव्वा।।८४।।

'कहिणमि' त्यादि क्व **'भदन्त! हरिवर्षे वर्षे विकटापाति नाम्ना वृत्तवैताढ्यपर्वत: प्रज्ञप्त:?** स्वाम्याह-**'गौतम! हरि'** नाम्न्या **'महानद्या: पश्चिमायां हरिकान्ताया महानद्या: पूर्वस्यां हरिवर्षस्य बहुमध्यदेशभागेऽत्र विकटापातिनाम-वृत्तवैताढ्यपर्वत: प्रज्ञप्त:, स्थानाङ्ग-क्षेत्रसमासादौ तु** हरिवर्षक्षेत्रमध्यदेशे गन्धापातिनाम्ना वृत्तवैताढ्य: प्रोक्तोऽस्ति तथाहि-**'स्थानाङ्गसूत्रं-जंबूमंदरपव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं हरिवासरम्मएसु वासेसु दो वट्टा वेयड्ढपव्वया पण्णत्ता तं बहुसम जाव गंधावई चेव मालवंत परियाए चेव'** इति तदत्र तत्त्वं केवलिनो बहुश्रुता वा विदन्तीति, **'एवं जो चेवे'** त्यादि एवं य एव शब्दापातिनो वृत्तवैताढ्यस्य **'विष्कम्भोच्चत्वोद्वेधपरिक्षेप-**

---

१. द्र.४/५७-६०।।

संस्थानवर्णकव्यासः प्राग्गदितः स एव विकटापातिनोऽपि भणितव्यःणवरं अरूणो देवो' इत्यादि सुगमं नवरमस्य **'राजधानी मंदराद्दक्षिणस्यामितो'** जम्बूद्वीपादसङ्ख्येयतमेऽन्यस्मिञ्जबूद्वीपे प्रागुक्तराजधानीवद्विज्ञेया।।८४।।

अथ हरिवर्षनाम प्रवृत्ति निदानं प्रश्नयितुमाह-

(८५) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-हरिवासे हरिवासे?, गोअमा! हरिवासे णं वासे मणुआ अरुणा अरुणोभासा सेआ णं [१]संखदलसण्णिकासा, हरिवासे अ इत्थ देवे महिद्धीए जाव पलिओवमट्ठिईए परिवसइ से तेणट्ठेणं गोअमा! एवं वुच्चइ।।८५।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि, अथ केनार्थेन **'भदन्त! हरिवर्षं'** २ स्वाम्याह-**'गौतम! हरिवर्षे वर्षे मनुजा अरूणा अरूणावभासास्तथा'** केचित् **'श्वेताः'** णमिति वाक्यालङ्कारे **'शङ्खतलसन्निकाशाः'** पाठान्तरे 'शङ्खदलसन्निकाशाः' अयं भावो हरिशब्देन सूर्यः शीतांशुश्च प्रोच्यते तत्र केचिन्मनुष्या हरिरिव सूर्य इवारूणाः केचित्पुन र्हरिरिव चन्द्र इव श्वेतास्ततस्तद्योगात्क्षेत्रं हरय इति व्यपदिश्यन्ते हरयश्च तद्वर्षं च हरिवर्षमथवा चन्द्रसूर्यतुल्यत्वेन हरय इव हरयो मनुष्यास्तदुपलक्षितं वर्षं **'हरिवर्षं हरिवासे य एत्थ देवे महिड्ढिए'** इत्यादिनो द्वितीयं नामप्रवृति निमित्तमवसेयम्। ।८५।।

सम्प्रति निषधवर्षधर-भूधरवक्तव्यतां प्रष्टुमाह-

(८६) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ णिसहे णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते? गोअमा! महाविदेहस्स वासस्स दक्खिणेणं, हरिवासस्स उत्तरेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे णिसहे णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीण-दाहिणवित्थिण्णे दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे

१. संखतल - V।।

पुरत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठे पच्चत्थिमलाए जाव पुट्ठे चत्तारि जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, चत्तारि गाउअसयाइं उव्वेहेणं, सोलस जोअणसहस्साइं अट्ठ य बायाले जोअणसए दोण्णि य एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खम्भेणं। तस्स बाहा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं वीसं जोअणसहस्साइं एगं च पण्णट्ठं जोअणसयं दुण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स अद्धभागं च आयामेणं। तस्स जीवा उत्तरेणं जाव चउणवइं जोअणसहस्साइं एगं छप्पण्णं जोअणसयं दुण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणंति तस्स धणुं दाहिणेणं एगं जोअणसयसहस्सं चउवीसं च जोअणसहस्साइं तिण्णि अ छायाले जोअणसए णव य एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेणंति रुअगसंठाणसंठिए सव्वतवणिज्जमए अच्छे, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसंडेहिं जाव संपरिक्खित्ते।।८६।।

'कहि णं भंते' इत्यादि क्वभदन्त! 'जम्बूद्वीपे द्वीपे निषधो नाम्ना वर्षधरपर्वतः प्रज्ञप्तः?' स्वाम्याह-'गौतम! महाविदेहस्य दक्षिणतो हरिवर्षस्योत्तरतः पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमायां पश्चिमलवणसमुद्रस्य पूर्वस्यां' 'एत्थणं' त्ति अत्रान्तरे 'जम्बूद्वीपे द्वीपे निषधो नाम्ना वर्षधरपर्वतः प्रज्ञप्तः' स च कथंभूत इत्याह 'पाईणे' त्यादि 'प्राचीन प्रतीचीनायतः उत्तरदक्षिण विस्तीर्णो द्विधा लवणसमुद्रं स्पृष्टः' 'पुरत्थिम जावे' त्यादि इह यावच्छद्वद्वयोपादानात् 'पुरत्थिम्मिल्लाए कोडीए पुरत्थिमलवणसमुद्दं पुट्ठे पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्रं पुट्ठे' इति दृष्टव्यं प्राग्व्याख्येयं च, 'चत्तारी' त्यादि स निषधगिरि 'श्चत्वारि योजनशतान्युर्ध्वमुच्चैस्त्वेन' 'चत्वारि गव्यूत शतान्युद्वेधेन षोडशयोजनसहस्राणि अष्टौ ' च 'द्विचत्वारिंशदधिकानि योजनशतानि द्वे च कले विष्कम्भतः' 'तस्स ण' मित्यादि तस्य निषधस्य 'बाहा पूर्वस्यामपरस्यां च विंशतिं योजनसहस्राणि एकं च योजनशतं पञ्चषष्ट्यधिकं द्वे च कलेऽर्धकलां

चायामतः २०१६५/२/१९ कले **'तस्से'** त्यादि तस्य निषधस्य **'जीवा उत्तरस्यां यावत्क'**रणात्पूर्वापरायतेत्यादि प्राग्वत्, **'चतुर्नवति योजनसहस्राणि एकं च योजनशतं षट्पञ्चाशदधिकं द्वे च कले आयामतः** ९४१५६, २ कले **'तस्ये'** त्यादि तस्य निषधस्य **'धनुःपृष्टं दक्षिणस्यामेकं योजनलक्षं चतुर्विंशतिं च योजनसहस्राणि त्रीणि च योजनशतानि षट्चत्वारिंशदधिकानि नव च कलाः परिक्षेपतः'** १२४३४६, ९ कलाः **'रूयगसंठाण-संठिए'** 'इत्यादि पूर्ववत् ।।८६।।

(८७) णिसहस्स णं वासहरपव्वयस्स उप्पि बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव आसयंति सयंति।।८७।।

'निसढस्स ण' मित्यादि निषधोपरितनसमभूभागवर्णनसूत्रं प्राग्वत् ।।८७।।

(८८) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं एगे [१]तिगिंछिद्दहे णामं दहे पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणवित्थिण्णे चत्तारि जोअणसहस्साइं आयामेणं, दो जोअणसहस्साइं विक्खम्भेणं, दस जोअणाइं उव्वेहेणं, अच्छे सण्हे रययामयकूले।।८८।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य निषधस्य **'बहुमध्य देशभागे'** **'अत्र महानेकस्तेकिच्छिदह'** इति **'नाम्नाः ह्रदः प्रज्ञप्तः'** स च **'पाईण उदीण'** त्ति पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात् **'पाईण पडीणायते उदीणदाहिणवित्थिण्णे'** इति ज्ञेयं प्राचीन-प्रतीचीनायतमुदग्दक्षिणविस्तीर्णं **'चत्तारी'** त्यादि चत्वारि योजन सहस्राण्यायामतो द्वे योजनसहस्रे विष्कम्भतो दश योजनान्युद्वेधेन **'अच्छे'** इत्यादि ह्रदवर्णकः प्राग्वत् ।।८८।।

(८९) तस्स णं तिगिंछिद्दहस्स चउद्दिसि चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पं०जाव

१.तिगिच्छिद्दहे-अब ।।

आयाम- विक्खम्भविहूणा [१]जा चेव महापउमद्दहस्स वत्तव्वया सा चेव तिगिंछिद्दहस्सवि वत्तव्वया तं चेव पउमद्दहप्पमाणं अट्ठो जाव तिगिंछिवण्णाइं, धिई अ इत्थ देवी पलिओवमट्ठिईआ परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ तिगिंछिद्दहे तिगिंछिद्दहे।।८९।।

'तस्स ण' मित्यादि **'तस्य तिगिच्छिहृदस्य चतुर्दिशि' 'चत्तारि** त्ति **सोवाण'** त्ति एकैकस्यां दिशि एकैकस्य भावात्, चत्वारि **'सोपान प्रतिरूपकाणि प्रज्ञप्तानि' 'एव'** मित्यादि, एवं **'यावदायाम-विष्कम्भविहीना यैव महापद्मद्रहस्य वक्तव्यता सैव तेकिच्छिद्रहस्यापि वक्तव्या' ' तं चेव पउमद्दहप्पमाणं'** ति पद्मद्रहयोः प्रमाणं तदेवेति, उद्वेधापेक्षया दशयोजनरूपं सम्भाव्यते नत्वायामाद्यपेक्षया यतोऽत्रत्य मूलपद्मं हि चतुर्योजनायाम-विस्तारं द्वियोजनबाहल्यं च द्रहस्य चायामादिमानं प्रागेव पार्थक्येनोक्तमिति क्वचित् **'तं चेव पउमप्पमाणं'** ति पाठस्तत्र पद्मप्रमाणं मूलपद्मपरिक्षेपत्रयपद्मसंख्याप्रमाणं तदेव यत्प्रागुक्तं न तु पद्मायामादिप्रमाणं **'अट्ठो'** इत्यादि **'से केणट्ठेण'**मित्यादिना तेकित्सिहृदस्य नामनिमित्तभूतोऽर्थः प्रष्टव्यस्तदनु यावत्करणात् **'गोयमा! तिगिच्छद्दहे बहुइं उप्पलाइं'** इत्यादि दृश्यम्, अयं भावस्तिगिच्छिहृदे मनोहारितिगिंच्छपरिकलितानि शतपत्रादीनि सन्ति तेनासौ तिगिंच्छीति विख्यातस्तिगिंच्छीति देश्योऽयं शब्दः पौष्यरजोवाची तथा **'धृतिश्चात्र देवी पल्योपमस्थितिका परिवसति' 'से तेणट्ठेण'** मिति प्राग्वद्विस्तरेण वाच्यम्।।८९।।

(९०) तस्स णं तिगिंछिद्दहस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेणं हरिमहाणई पवूढा समाणी सत्त जोअणसहस्साइं चत्तारि अ एकवीसे जोअणसए एगं च एगूणवीसइभागं जोअणस्स दाहिणाभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवित्तिएणं जाव साइरेगचउजोअणसइएणं

१. जच्चेव-V।।

पवाएणं पवडइ, एवं जा चेव हरिकंताए वत्तव्वया सा चेव हरीएवि [१]णेअव्वा जिब्भिआए कुंडस्स दीवस्स भवणस्स तं चेव पमाणं, अट्ठोऽवि भाणिअव्वो जाव अहे जगइं दालइत्ता छप्पण्णाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमं लवणसमुद्दं समप्पेइ तं चेव पवहे अ मुहमूले अ पमाणं उव्वेहो अ जो हरिकंताए जाव वणसंडसंपरिक्खित्ता।।९०।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य 'तेगिंच्छिहृदस्य दक्षिणेन तोरणेन हरिर्महानदी प्रव्यूढा सती सप्त योजनसहस्राणि चत्वारि चैकोनविंशत्यधिकानि योजनशतानि एकां च कलां दक्षिणाभिमुखी' 'पव्वएणं गंते' त्यादि प्राग्वत् 'यावत्सातिरेकचतुर्योजनशतप्रमाणेन प्रपातेन प्रपतति' 'एव' मित्यादि एवं 'यैव हरिकान्ताया वक्तव्यता सैव हरिनद्या अपि नेतव्या, जिह्विका कुण्डद्वीपभवनानां प्रमाणं तदेव' यद्धरिकान्तासत्क-जिह्विकादीनामुक्तमिति। 'अट्ठो वि भाणियव्वो' त्ति हरिद्विपाभिधाननिबन्धनभूतोऽर्थोऽपि यथौचित्यं भणितव्य: 'जाव अहे जगइं दलइत्ता' इह यावत्करणात् 'तस्सणं हरिप्पवायं कुण्डस्स दाहिणिल्लेणं तोरणेणं हरीमहानदी पवूढा समाणी हरिवासं पज्जेमाणी २ वियडावइवट्टवेयड्ढपव्वयं जोयणेणं असंपत्ता पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी हरिवासं दुहा विभयमाणी' इति दृश्यं 'छप्पन्नाए' इत्यादि षट्पञ्चाशत् 'सलिलासहस्रै: समग्रा पूर्वदिशा लवणसमुद्रं प्रविशति' 'तं चेव पंच हय' इति प्रकटार्थम्।।९०।।

(९१) तस्स णं तिगिंछिद्दहस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं सीओआ महाणई पवूढा समाणी सत्त जोअणसहस्साइं चत्तारि अ एगवीसे जोअणसए एगं च एगूणवीसइभागं जोअणस्स उत्तराभिमुही पव्वएणं गंता महया घडमुहपवित्तिएणं जाव साइरेगचउजोअणसइएणं पवाएणं पवडइ। सीओआ णं महाणई जओ पवडइ एत्थ णं

१. द्र. ४/७४-७८।।

महं एगा जिब्भिआ पण्णत्ता, चत्तारि जोअणाइं आयामेणं, पण्णासं जोअणाइं विक्खम्भेणं, जोअणं बाहल्लेणं, मगरमुहविउट्टसंठाणसंठिआ सव्ववइरामई अच्छा।।९१।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य 'तिंगिच्छिह्रदस्योत्तरेण तोरणेन शीतोदा महानदी प्रव्यूढा सती सप्तयोजनसहस्राणि चत्वारि चैकोनविंशत्यधिकानि योजनशतानि एकां च कलामुत्तराभिमुखी पर्वतेन गत्वा महता घटमुखप्रवृत्तेन यावत्सातिरेकचतुर्योजन-शतप्रमाणेन प्रपातेन प्रपतति। शीतोदामहानदी यतः प्रपतति, अत्र महत्येका जिह्विका प्रज्ञप्ता सा च चत्वारि योजनान्यायामेन पञ्चाशतं योजनानि विष्कम्भेन योजनं बाहल्येन' 'मगरमुहे' त्यादि प्राग्वत्।।९१।।

(९२) सीओआ णं महाणई जहिं पवडइ एत्थ णं महं एगे सीओअप्पवायकुण्डे णामं कुण्डे पण्णत्ते, चत्तारि असीए जोअणसए आयामविक्खंभेणं, पण्णरसअट्ठारे जोअणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं, अच्छे, एवं कुंडवत्तव्वया णेअव्वा [1]जाव तोरणा।।९२।।

'सिओदा ण' मित्यादि शीतोदा 'महानदी यत्र प्रपतति,' 'अत्र महदेकं शीतोदाप्रपात-कुण्डं नाम्ना कुण्डं प्रज्ञप्तं' तच्च 'चत्वारि योजनशतान्यशीत्यधिकान्यायाम-विष्कम्भाभ्यां पञ्चदशयोजनशतान्यष्टादशाधिकानि किञ्चिद्विशेषोनानि परिक्षेपतः एवं कुण्डवक्तव्यता ज्ञेया यावत्तोरणानि'।।९२।।

(९३) तस्स णं सीओअप्पवायकुण्डस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे सीओअदीवे णामं दीवे पण्णत्ते, चउसट्ठिं जोअणाइं आयामविक्खम्भेणं, दोण्णि बिउत्तरे जोअणसए,

---

१. द्र. ४/२५-३०।।

परिक्खेवेणं, दो कोसे ऊसिए जलंताओ, सव्ववइरामए अच्छे, सेसं तमेव वेइया-वणसंड-भूमिभाग-भवण- सयणिज्ज अट्ठो [1]भाणिअव्वो।।९३।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य **'शीतोदाप्रपातकुण्डस्य बहुमध्य देशभागेऽत्र महानेकः शीतोदाद्वीपो नाम्ना द्वीपः प्रज्ञप्तः'** स च **'चतुःषष्टि योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां द्वे द्वयुत्तरे योजनशते परिक्षेपेण द्वौ क्रोशावुच्छ्रितो जलन्तात्' 'सव्व वइरामए'** इत्यादि प्राग्वत् **'सेसं तमेव'** त्ति शेषमेवाह **'वेइगे'** त्यादि **'वेदिकावनखण्ड भूमिभाग-भवन शयनीयमर्थश्च भणितव्यः'** पूर्वानुसारेण वाच्य इत्यर्थः।।९३।।

(९४) तस्स णं सीओअप्पवायकुण्डस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं सीओआ महाणई पवूढा समाणी [2]देवकुरुं एज्जेमाणी २ चित्तविचित्तकूडे पव्वए निसढे देवकुरु-सूर-सुलस-विज्जुप्पभद्दहे अ दुहा विभयमाणी २ चउरासीए सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ भद्दसालवणं एज्जेमाणी २ मंदरं पव्वयं दोहिं जोअणेहिं असंपत्ता पच्चत्थिमाभिमुही आवत्ता समाणी अहे विज्जुप्पभं वक्खारपव्वयं दालइत्ता मन्दरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमेणं अवरविदेहं वासं दुहा विभयमाणी २ एगमेगाओ चक्कवट्टिविजयाओ अट्ठावीसाए २ सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ पंचहिं सलिलासयसहस्सेहिं[3] दुतीसाए अ सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जयंतस्स दारस्स जगइं दालइत्ता पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेति।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य **'शीतोदाप्रपातकुण्डस्योत्तरेण तोरणेन शीतोदामहानदी वक्षस्कारपर्वतं दारयित्वा मन्दरस्य'** मेरोः **'पश्चिमायामवरविदेहवर्षं'** पश्चिममहाविदेहक्षेत्रं **'द्विधा विभजमानाप्येकैकस्माच्चक्रवर्त्तिविजयात्प्रत्येकमष्टाविंशत्या सलिलासहस्रैरा-पूर्यमाणा पंचहिं सलिला सहस्सेहिं'** ति मूलत आरभ्य सर्व संख्यया पञ्चभिर्नदीलक्षै-

१. द्र.४/३१-३४।। २. देवकुरं-V। एवमग्रेऽपि।। ३.°सय° कत्रिप नास्ति ।।

'द्वात्रिंशता नदीसहस्रैश्च समग्रा' 'अहे जयंतस्स' त्ति पश्चिमदिग्वर्त्तिनो जयन्ताभिध**'द्वारस्याधो जगतीं विभिद्य पश्चिमदिशा लवणाब्धिं प्रविशति'।।९४।।**

(९५) सीओआ णं महाणई पवहे पण्णासं जोअणाइं विक्खम्भेणं जोअणं उव्वेहेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ परिवड्ढमाणी २ मुहमूले पञ्च जोअणसयाइं विक्खम्भेणं, दस जोअणाइं उव्वेहेणं, उभओपासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता।।९५।।

'सीतोदा ण' मित्यादि शीतोदा **'महानदी प्रवाहे पञ्चाशतं योजनानि विष्कम्भेन योजनमुद्वेधने तदनन्तरं मात्रया मात्रया परिवर्द्धमाना मुखमूलेऽब्धिप्रवेशे पञ्चयोजनशतानि विष्कम्भतो दशयोजनान्युद्धेधेन' 'उभओ पासि'** मित्यादि पूर्ववत्।।९५।।

अथ निषधे कूटसंख्याप्रश्नयितुमाह-

(९६) णिसढे णं भंते! वासहरपव्वए णं कति कूडा पण्णत्ता?, गोयमा! णव कूडा पण्णत्ता, तंजहा–सिद्धाययणकूडे १, णिसढकूडे २, हरिवासकूडे ३, पुव्वविदेहकूडे ४, हरिकूडे ५, धिईकूडे ६, सीओआकूडे ७, अवरविदेहकूडे ८, रुअगकूडे ९, जो चेव चुल्लहिमवंतकूडाणं उच्चत्त विक्खम्भ परिक्खेवो य पुव्ववण्णिओ रायहाणी अ सच्चेव इहंपि [१]णेअव्वा।।९६।।

'णिसहे ण'मित्यादि प्रश्नोत्तरसूत्रं स्पष्टं **'नवरं नवकूटानि'** नामतोऽमूनि **'तद्यथा-सिद्धायतन कूटं १ निषध कूटं २ हरिवर्षकूटं ३ पूर्वविदेह कूटं ४ हरिकूटं ५ धृतिकूटं ६ शीतोदा कूटं ७ अवरविदेहकूटं ८ रूचककूटं चेति ९ जो चेवैत्यादि'** यदेव

---

१. द्र. ४/४५-५३।।

'क्षुल्लहिमवत्कूटानामुच्चत्व-विष्कम्भ-परिक्षेपं पूर्ववर्णितं' सूत्रे पुस्त्वं प्राकृतत्वात्, तदेवैषामपि कूटानां वाच्यमित्यर्थः **'रायहाणी'** त्यादि राजधान्यपि तत्र कूटाधिपसत्का **'सैवेहापि नेतव्या।'** प्राग् यथोक्ता। तथैव ज्ञेयेत्यर्थः। ।९६।।

अथ निषधनामप्रवृत्तिहे तुबुभुत्सया प्रश्नमाह-

(९७) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ णिसहे वासहरपव्वए? २ गोअमा! णिसहे णं वासहरपव्वए बहवे कूडा णिसहसंठाणसंठिया, उसभसंठाणसंठिया, णिसहे अ इत्थ देवे महिड्ढीए जाव पलिओवमट्ठिई परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोअमा! एवं वुच्चइ णिसहे वासहरपव्वए २।।९७।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि प्रश्नसूत्रं कण्ठ्यमुत्तरं तु **'गौतम! निषधे वर्षधरपर्वते बहूनि कूटानि' 'निसहसंठाणसंठिय'** त्ति नितरां सहते स्कन्धे पृष्टे वा समारोपितं भारमिति निषधो वृषभः पृषोदरादित्वादिष्टरूपनिष्पत्तिस्तस्य यत्संस्थानमाकारस्तद्वत्संस्थितानि निषधसंस्थान-संस्थितानि अमुमेवार्थं पर्यायेण सूत्रकृदाह **'उसहसंठियं'** त्ति ऋषभसंस्थितानि ततो निषधाकारकूटयोगान्निषध इति व्यपदिश्यते यदिवा **'निसहे य एत्थ देवे'** इत्यादि व्यक्तं।।९७।।

वासं प्रति महाविदेहक्षेत्रवक्तव्यतां व्यञ्जकं प्रश्नमाह -

(९८) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे णामं वासे पण्णत्ते?, गोअमा! णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं, णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे णामं वासे पण्णत्ते, पाईण-पडीणायए उदीण-दाहिणवित्थिण्णे पलिअंकसंठाणसंठिए दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे, पुरत्थिम जाव पुट्ठे, पच्चत्थिमिल्लाए

कोडीए पच्चत्थिमिल्लं जाव पुट्ठे, तित्तीसं जोअणसहस्साइं छच्च चुलसीए जोअणसए चत्तारि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खम्भेणंति, तस्स बाहा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं तेत्तीसं जोअणसहस्साइं सत्त य सत्तसट्ठे जोअणसए सत्त य एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणंति तस्स जीवा बहुमज्झदेसभाए पाईण-पडीणायए दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा, एवं पुरत्थिमिल्लाए जाव पुट्ठा, एवं जोअणसहस्सं आयामेणंति। तस्स धणुं उमओ पासि उत्तर दाहिणेणं एवं जोअणसहस्सं अट्ठावण्णं च जोयणसहस्साइं एवं तेरसुत्तरं जोयणसयं सोलस एगूणवीसइभोगे जोयणस्स किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणंति।।९८।।

'कहि णं भंते' इत्यादि क्व भदन्त! **'जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहं नाम्ना वर्षं प्रज्ञप्तं?'** स्वाम्याह-**'गौतम! नीलवन्तस्य वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां निषधस्य वर्षधरपर्वतस्योत्तरस्यां पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमायां पश्चिमलवणसमुद्रस्य पूर्वस्यां' 'एत्थ णं'** ति अत्रान्तरे **'जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहमिति नाम्ना वर्षं प्रज्ञप्तं'** तच्च किंभूतं **'पाइणे'** त्यादि **'पूर्वापरायतमुत्तरदक्षिणविस्तीर्णं पर्यङ्कसंस्थानसंस्थितं द्विधा लवणसमुद्रं स्पृष्टं' 'पुरत्थि मिल्लाए'** इत्यादि प्राग्वत् महाविदेहमेव प्रमाणतो निरूपयति **'तेत्तीस'** मित्यादि **'त्रयस्त्रिंशतं योजनसहस्राणि षट्शतानि चतुरशीत्यधिकानि चतस्रश्च कला विष्कम्भेन'** ३३६८४, ४ कला **'तस्य बाहे'**त्यादि, तस्य महाविदेहस्य बाहा **'पूर्वपश्चिमयोस्त्रयस्त्रिंशतं योजनसहस्राणि सप्तशतानि च सप्तषष्ट्यधिकानि सप्त च कला आयामेन'** ३३७६७, ७कला। **'तस्स ण'** मित्यादि, तस्य महाविदेहस्य **'जीवा बहुमध्यदेशभागे' 'पाईणे'** त्यादि प्राग्वत् **'एगं जोयणसयसहस्सं आयामेणं'** ति सा जीवा एकं योजनलक्षं दैर्घ्येण, **'तस्स धणु'** इत्यादि तस्य महाविदेहस्य धनुःपृष्ट**'मुभयोः पार्श्वयोरुत्तरदक्षिणयोरेकं योजनलक्षमष्टपञ्चाशत्सहस्राणि एकं च योजनशतं**

त्रयोदशोत्तरं षोडशकलाः किञ्चिद्विशेषाधिकाः परिक्षेपेण' १५८११३, १६ कला।।९८।।

(९९) महाविदेहे णं वासे चउव्विहे चउप्पडोआरे पण्णत्ते, तंजहा–पुव्वविदेहे १, अवरविदेहे २, देवकुरा ३, उत्तरकुरा ४।।९९।।

'महाविदेहे ण' मित्यादि महाविदेहो णमिति अलङ्कारे **'वर्षं'** क्षेत्रं **'चतुर्विधत्वं चतुः प्रत्यवतारं प्रज्ञप्तं तद्यथा-पूर्वविदेह १ अपरविदेह २ देवकुरवः ३ उत्तरकुरवः ४'** कुरुशद्वस्याकारान्तता एकवचनान्तता चार्षत्वात् ।।९९।।

(१००) महाविदेहस्स णं भंते! वासस्स केरिसए आगारभावपडोआरे पण्णत्ते?, गोअमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते [1]जाव [2]कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव।।१००।।

'महाविदेहस्स णं भंते' इत्यादि महाविदेहस्य भदन्त! **'वर्षस्य कीदृश आकारभावप्रत्यवतारः प्रज्ञप्तः'** स्वाम्याह-**'गोयमा बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे'** इत्यादि सर्वं प्राग्वदेवावसेयम्।।१००।।

(१०१) महाविदेहे णं भंते! वासे मणुआणं केरिसए आयारभावपडोआरे पण्णत्ते?, तेसि णं मणुआणं छव्विहे संघयणे छव्विहे संठाणे पंचधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं पुव्वकोडीआउअं पालेंति, पालेत्ता अप्पेगइआ णिरयगामी जाव अप्पेगइआ सिज्झंति जाव अंतं करेंति।।१०१।।

'महाविदेहेण' मित्यादि महाविदेहेणमिति पूर्ववत् **'भदन्त! वर्षे मनुष्याणां कीदृश आकारभाव प्रत्यवतारः'** स्वरूपसम्भवः **'प्रज्ञप्तः?'** स्वाम्याह-**'गौतम! तेषां मनुजानां**

---

१. द्र. १/२१।। २. कत्ति° V।।

षड्विधं संहननं षड्विधं संस्थानं पंचधनु:शतानूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन ते मनुजा' इति गम्यं, **'जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तमुत्कर्षत: पूर्वकोटीमेकामायु:' 'पालयन्ति' 'पालयित्वा' 'तेष्वप्येकका' 'निरयगामिनो' 'यावदप्येकका: सिध्यन्ति।'।।१०१।।**

अथ महाविदेह नाम निबन्धनं पिपृच्छिषुराह-

(१०२) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–महाविदेहे वासे? २ गोअमा! महाविदेहे णं वासे भरहेरवय हेमवय-हेरण्णवय-हरिवास-रम्मगवासेहिंतो आयाम-विक्खम्भ-संठाण-परिणाहेणं वित्थिण्णतराए चेव विपुलतराए चेव महंततराए चेव सुप्पमाणतराए चेव महाविदेहा य इत्थ मणूसा परिवसंति, महाविदेहे अ इत्थ देवे महिड्ढीए जाव पलिओवमट्ठिईए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोअमा! एवं वुच्चइ–महाविदेदेहे वासे २, अदुत्तरं च णं गोअमा ! महाविदेहस्स वासस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते, जं णं कयाइ णासि ३।।१०२।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि प्रश्नसूत्रं व्यक्तं निर्वचनं तु स्वाम्याह-**'गौतम! महाविदेहं वर्षं भरतैरावतहैमवत-हैरण्यवत-हरिवर्ष-रम्यक्वर्षेभ्य:'** सूत्रे पञ्चम्यर्थेषष्ठी प्राकृतत्वात्, **'आयाम विक्खंभ संठाण परिणाहेणं'** ति आयामो दैर्घ्यं विष्कम्भो विस्तार: संस्थानमाकार: परिणाह: परिधिस्ततो द्वन्द्वस्तेन **'वित्थिण्णतरा एव चे'** त्यादि विस्तीर्णतर एव **'विपुलतर एव महत्तर एव सुप्रमाणतर एव'** ततश्च **'महान्'** अतिशयेन विकृष्टो गरीयान् भरतादिक्षेत्रापेक्षया **'देह:'** शरीरमाभोग इति यावत्, यस्य स तथा, अतो महाविदेह इति व्यपदिश्यते अथवा **'महाविदेहा य एत्थ माणूसा य परिवसंति'** त्ति महाप्रमाणविशिष्टदेहाश्चात्रमनुष्या: परिवसन्ति तत एतद्योगात् क्षेत्रमपि महाविदेह इति प्रोच्यते महाविदेहशब्दश्च स्वभावाद्बहुवचनान्त: क्वचिदेकवचनान्तोऽपि दृश्यते तदपि प्रमाणं

पूर्वमहर्षिभिस्तथाप्रयोगकरणाद् यदिवा **'महाविदेहे य एत्थ देवे'** इत्यादि सूत्रं निगदसिद्धम्।।१०२।।

अथ गन्धमादनगजदन्तगिरिवक्तव्यतां प्रष्टुमाह –

(१०३) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे गंधमायणे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?, गोअमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं, मंदरस्स पव्वयस्स उत्तर-पच्चत्थिमेणं, गंधिलावइस्स विजयस्स पुरत्थिमेणं,उत्तर कुराए पच्चत्थिमेणं, एत्थ णं महाविदेहे वासे गंधमायणे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए, पाईणपडीणवित्थिण्णे, तीसं जोअणसहस्साइं दुण्णि अ णउत्तरे जोअणसए छच्च य एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणं, णीलवंतवासहरपव्वयंतेणं चत्तारि जोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, चत्तारि गाउअसयाइं उव्वेहेणं, पञ्च जोअणसयाइं विक्खम्भेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ उस्सेहुव्वेहपरिवड्ढीए परिवड्ढमाणे २ विक्खंभपरिहाणीए परिहायमाणे २ मंदरपव्वयंतेणं पञ्च जोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, पञ्च गायअसयाइं उव्वेहेणं, अंगुलस्स असंखिज्जइभागं विक्खम्भेणं पण्णत्ते, गयदंतसंठाणसंठिए सव्वरयणामए अच्छे, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसंडेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते।।१०३।।

(१०४) गंधमायणस्स णं वक्खारपव्वयस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे [1]जाव आसयंति।।१०४।।

'कहिण' मित्यादि क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे गन्धमादनो नाम्ना वक्षस्कारपर्वत: प्रज्ञप्त:'** स च किंभूत? इत्याह - **'उत्तरदक्षिणायत: पूर्वापरविस्तीर्ण: त्रिंशतं योजन**

---

१. द्र.१/१३।।

सहस्राणि द्वे च योजनशते नवोत्तरे षट् च कला अर्द्धमायामतः' ३०२०९/ ६ कला, **'नीलवंते'** त्यादि नीलवद्वर्षधराद्रिसमीपे **'चत्वारि योजनशतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन चत्वारि गव्यूतशतान्युद्वेधेनः पञ्चयोजनशतानि विष्कम्भेन तदनन्तरं मात्रया मात्रया'** स्तोकं स्तोक **'मुत्सेधोद्वेध परिवृध्या परिवर्द्धमानः २ विष्कम्भपरिहान्या च परिहीयमानः २'** **'मंदरपव्वयं तेणं'** ति मेरूसमीपे **'पञ्चयोजनशतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन'** पञ्च गव्यूतशतान्युद्वेधेनाङ्गुलस्यासङ्ख्येयतमं भागं विष्कम्भेन गजदन्तसंस्थानसंस्थितः **'सव्वरयणामए'** त्ति सर्व्वात्मना रत्नमयः **'अच्छे'** इत्यादि प्राग्वत्।।१०४।।

अथात्र कूटसङ्ख्यां प्रश्नयितुमाह-

(१०५) गंधमायणे णं वक्खारपव्वए कति कूडा पण्णत्ता?, गो० ! सत्त कूडा पण्णत्ता तंजहा–सिद्धाययणकूडे १, गंधमायणकूडे २, गंधिलावईकूडे ३, उत्तरकूरुकुडे ४, फलिहकूडे ५, लोहियक्खकूडे ६, आणंदकूडे ७।।१०५।।

'गंधमायणे ण' मित्यादि व्यक्तं तन्नामानि चैवं **'सिद्धायतनकूटं १ गन्धमादनकूटं २ गन्धिलावती कूटं ३ उत्तरकुरु कूटं ४ स्फटिक कूटं ५ लोहिताक्षकूटं ६ आनन्दन कूटं ७ चेति।'।।१०५।।**

अथैतेषां दिग्विभागादि निर्णिनीषुः प्रश्नमाह-

(१०६) कहि णं भंते! गंधमायणे वक्खारपव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते, गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपच्चत्थिमेणं, गंधमायणकूडस्स दाहिण-पुरत्थिमेणं, एत्थ णं गंधमायणे वक्खारपव्वए सिद्धायतणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते। जं चेव चुल्लहिमवन्ते सिद्धाययणकूडस्स पमाणं तं चेव एएसिं सव्वेसिं [1]भाणिअव्वं, एवं चेव

१. द्र. १/३५-४६।।

विदिसाहिं तिण्णि कूडा भाणिअव्वा, चउत्थे ततिअस्स उत्तर-पच्चत्थिमेणं पंचमस्स दाहिणेणं। सेसा उ उत्तरदाहिणेणं फलिह लोहिअक्खेसु भोगंकर भोगवईओ [1]देवेयाओ, सेसेसु सरिसणामया देवा, छसुवि पायायवडेंसगा रायहाणीओ विदिसासु।

'कहिण'मित्यादिप्रश्नसूत्रं व्यक्तमुत्तरं स्वाम्याह-**'गोयमे'** त्यादि गौतम! **'मन्दरस्य पर्वतस्य' 'उत्तरपच्चत्थिमेणं'** ति वायव्यकोणे **'गन्धमादनकूटस्य' 'दाहिणपुरत्थिमेणं ति'** आग्नेयामित्यर्थः। **'अत्र गन्धमादने वक्षस्कारपर्वते सिद्धायतनकूटं नाम्ना कूटं प्रज्ञप्तं' 'जं चुल्ले'** त्यादि यत्क्षुल्लहिमवत् **'समबन्धिसिद्धायतनकूटस्य प्रमाणं'** प्राग्न्यगादि **'तदैवेतेषां सर्वेषां कूटानां भणितव्यं' 'एवं चेव विदिसाहिं तिन्नि कूडा भाणियव्वा'** इति एवमेव सिद्धायतनकूटवत् विदिक्षु त्रीणि कूटानि भणितव्यानि तथा **'चतुर्थमुत्तरकुरुकूटं तृतीय कूटस्योत्तरपश्चिमायां पञ्चमस्य स्फटिककूटस्य दक्षिणे' 'सेसा उत्तर दाहिणेणं'** ति शेषाणि त्रीणि कूटान्युत्तर-दक्षिणतः, उत्तरदक्षिणायतश्रेणिव्यवस्थितानीत्यर्थः इदमुक्तं भवति पञ्चमं चतुर्थस्योत्तरतः षष्ठस्य दक्षिणतः, षष्ठं पञ्चमस्योत्तरतः सप्तमस्य दक्षिणतः, सप्तमं षष्टस्योत्तरतः।।

अथ केषु कूटेषु देव्यः केषु च देवा इत्याह -**'फलिहे'** त्यादि **'स्फटिक लोहिताक्षयोः'** कूटयो**'र्भोगङ्करा भोगवत्यौ'** द्वे **'देवते'** स्वामिन्यौ इति गम्यम्, एते च दिक्कुमार्यौ ज्ञेये **'शेषेषु'** चतुर्षु कूटेषु कूट **'सदृग्नामानो देवाः'** स्वामितया वाच्याः **'छसु वि पासायवडिंसगा'** सिद्धायतनकूटे शाश्वतजिनभवनसद्भावात्तद्व्यातिरिक्तेषु षट्स्वपि कूटेषु प्रासादावतंसकाः प्राग्वद् वाच्याः **'रायहाणीओ विदिसासु'** त्ति राजधान्यः षण्णामपि कूटाधिपानामस्माज्जम्बूद्वीपादसंख्येयतमे जम्बूद्वीपे विदिक्षु वक्तव्याः।।१०६।।

---

१. दो देव° V।।

अथ गन्धमादनस्याभिधाननिमित्तं पृच्छन्नाह-

(१०७) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ गंधमायणे वक्खारपव्वए? २ गो०! गंधमायणस्स णं वक्खारपव्वयस्स गंधे से जहाणामए कोट्ठपुडाण वा जाव पीसिज्जमाणाण वा उक्किरिज्जमाणाण वा विकिरिज्जमाणाण वा परिभुज्जमाणाण वा जाव ओराला मणुण्णा जाव गंधा अभिणिस्सवंति, भवे एआरूवे?, णो इणट्ठे समट्ठे, गंधमायणस्स णं इत्तो इट्ठतराए चेव जाव गंधे पण्णत्ते। से एएणट्ठेणं गोअमा! एवं वुच्चइ गंधमायणे वक्खारपव्वए २। गंधमायणे अ इत्थ देवे महिड्ढीए परिवसइ, अदुत्तरं च णं सासए णामधिज्जे इति ।।१०७।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि प्रश्न वाक्यं स्पष्टमुत्तरं तु **'गोयमे'** त्यादि गौतम! **'गन्धमादनस्य वक्षस्कारपर्वतस्य गन्धः'** **'से जहानामए'** इत्यादि यथानाम गन्धा अभिनि:श्रवन्ति-उच्छलन्तीति सम्बन्धः **'कोट्ठपुडाण वा'** **'इह यावत्करणात्'** 'अगरपुडाण वा नगरपुडाण वा 'इत्यादि पदानि ग्राह्याणि प्राग्वद्व्याख्येयानि च। एषां च **'पिष्यमाणानामुत्कीर्यमाणानां विकीर्यमाणानां परिभुज्यमानानामे'**षामर्थः प्राग्वदेव ज्ञेयः **'भवेयारूवे सिया'** इत्यादि कण्ठ्यमिदमुक्तं भवति **'गन्धमादनगिरौ'** गन्धः कोष्टपुटादिभ्योऽप्यतिशोभनतरो **'मनोज्ञ'**तरस्तथा क्षेत्रस्वाभाव्यात्समंततो दिक्षु विदिक्षु **'प्रसरति'** ततो गन्धेन स्वयं माद्यतीव यदिवा मादयति-प्रमोदयति तन्निवासिदेवदेवीमनांसीति गन्धमादनः **"कृद्बहुलमिति"** वचनात्कर्त्तर्यनट् प्रत्ययः **"घञ्युपसर्गस्य चे"** त्यत्र बहुलाधिकारा दतिशयेनादिवत्, मकाराकारस्य दीर्घत्वं **'गंधमायणेऽत्थ देवे'** इत्यादि सुबोधम्।।१०७।।

अथ गन्धमादन माल्यवन्नाम गजदन्तशैलान्तवर्त्तमानोत्तरकुरूक्षेत्रव्यतिकरं पिपृच्छिषु रिदमाह-

(१०८) कहिं णं भंते! महाविदेहे वासे उत्तरकुरा णामं कुरा पं० ? गो० ! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं गंधमायणस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं,एत्थ णं उत्तरकुरा णामं कुरा पण्णत्ता, पाईणपडीणायया उदीणदाहिणवित्थिण्णा अद्धचंदसंठाणसंठिआ इक्कारस जोअणसहस्साइं अट्ठ य बायाले जोअणसए दोण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खम्भेणंति, तीसे जीवा उत्तरेणं पाईणपडीणायया दुहा वक्खारपव्वयं पुट्ठा, तंजहा-पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं वक्खारपव्वयं पुट्ठा, एवं पच्चत्थिमिल्लाए जाव पच्चत्थिमिल्लं वक्खारपव्वयं पुट्ठा, तेवण्णं जोअणसहस्साइं आयामेणंति, तीसे णं [1]धणुं दाहिणेणं सट्ठिं जोअणसहस्साइं चत्तारि अ अट्ठारसे जोअणसए दुवालस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेणं ।।१०८।।

'**कहि णं**' मित्यादि व्यक्तं नवरं '**उत्तर कुरु**' त्ति मेरोरुत्तरदिग्वर्त्तित्वात्, उत्तराश्च ताः कुरवश्चोत्तरकुरवः, '**मंदरस्से**' त्यादि मन्दरस्य मेरो'**रुत्तरस्यां नीलवतो वर्षधराद्रेर्दक्षिणस्यां गन्धमादनस्यवर्षधराद्रेः पूर्वस्यां माल्यवतः पश्चिमायामत्रोत्तरकुरव**' इति '**नाम्ना कुरवः**' '**प्रज्ञप्तास्ताश्च**' किं भूता इत्याह- '**पाईणे**' त्यादि '**प्राचीनप्रतीचीनायता उत्तरदक्षिणविस्तीर्णा अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थिताः**' '**एक्कार**' मेत्यादि '**एकादश योजनसहस्राण्यष्टयोजनशतानि द्विचत्वारिंशदधिकानि द्वे च कले विष्कम्भेन दक्षिणोत्तरविस्ताररूपेणेयमत्र**' भावना यतो मेरो र्दक्षिणोत्तरतो यथाक्रमं देवकुरूत्तरकुरूनाम्नी चन्द्रार्द्धसंस्थाने द्वे युग्मिनो क्षेत्रे स्तस्ते च दशसहस्र विशुद्धमहाविदेहार्द्धमानपृथुले यतो महाविदेहविस्तारस्त्रयस्त्रिंशसहस्राणि षट् योजनशतानि चतुरशीत्यधिकानि चतस्रः कलाश्च ३३६८४, ४ कलाः एतन्मध्यान्मेरूविष्कम्भे

---

१. धणुं (धणुपट्ठं ?) - V।।

दशसहस्रप्रमाणे १०००० शोधिते शेष २३६८४/४ तदर्द्धे एकादश सहस्राण्यष्टशतानि द्विचत्वारिंशदधिका द्वेच कले ११८४२/२ कले। **'तीसे'** इत्यादि तासामुत्तरकुरूणां **'जीवा उत्तरतो'** नीलवर्षधरसमीपे **'प्राचीन-प्रतीचीनायता उभयतः'** पूर्वपश्चिमभागाभ्यां **'वक्षस्कारपर्वतौ स्पृष्टा'** एतदेव भावयति **'तद्यथा पुरत्थिमिल्लाए'** इत्यादि पूर्वया **'कोट्या'**ऽग्रभागेन **'पूर्वं वक्षस्कारपर्वतं'** माल्यवन्नामानं **'स्पृष्टा पश्चिमया'** कोट्या **'पश्चिमं वक्षस्कारपर्वतं'** गन्धमादनाख्यं **'स्पृष्टा'** सा च जीवा आयामेन **'त्रिपञ्चाशतं योजनसहस्राणि'** कथमिति चेदुच्यते, इह मेरोःपूर्वस्यामपरस्यां च दिशि भद्रशालवनस्य यदायामेन परिमाणं यच्च मेरो र्विष्कम्भस्य तदेकत्रमीलितं गन्धमादन-माल्यवद्वक्षस्कार-गिरिमूलपृथुत्वपरिमाणरहितं यावत्प्रमाणं भवति तावदुत्तरकुरूणां जीवायाः परिमाणम्, उक्तं च–**"मंदरपुव्वेणायय बावीससहस्स भद्दसालवणं। दुगुणं मंदर सहियं दुसेलहियं च कुरु जीवा।।१।।"** तच्च यथोक्तप्रमाणमेव तथाहि - मेरोः पूर्वस्यामपरस्यां च दिशि प्रत्येकं भद्रशालवनस्य दैर्घ्यपरिमाणं द्वाविंशति योजन सहस्राणि ततो द्वाविंशतिः सहस्राणि द्वाभ्यां गुण्यन्ते जातानि चतुश्चत्वारिंशसहस्राणि ४४००० मेरोश्च पृथुत्वपरिमाणं दशयोजनसहस्राणि १०००० तानि पूर्वराशौ प्रक्षिप्यन्ते जातानि चतुष्पञ्चाशत्सहस्राणि ५४००० गन्धमादन-माल्यवतोश्च प्रत्येकं मूले पृथुत्वं पञ्चयोजनशतानि, ततः पञ्चशतानि द्वाभ्यां गुण्यन्ते जातं योजनसहस्रं तत्पूर्वराशेरपनीयते जातानि त्रिपञ्चाशद्योजनसहस्राणि ५३००० **'तीसे'** इत्यादि तासामुत्तरकुरूणां **'धनुःपृष्टं दक्षिणेन'** दक्षिणस्यां **'षष्ठियोजनसहस्राणि चत्वारि योजनशतानि अष्टादशोत्तराणि द्वादश च एकोनविंशतिभागान् योजनस्य परिक्षेपेण'** द्वयोरपि हि गन्धमादनमाल्यवतोरायाम-परिमाणमेकत्रमीलितमुत्तरकुरूणां धनुःपृष्टपरिमाणं **"आयामो सेलाणं दोण्ह वि मिलिओ कुरूणं धणुपट्ठ"** मित्युक्तेः। गन्धमादन-माल्यवतो र्वक्षस्कारगिर्योः प्रत्येकं दैर्घ्यपरिमाणं त्रिंशद्योजनसहस्राणि द्विशते नवोत्तरे षट् च कलाः ३०२०९ कलाः ६ उभयोश्च

मीलितायामो यथोक्त परिमाणो भवति ६०४१८ कलाः १२।।१०८।।

साम्प्रतमुत्तरकुरूणां स्वरूप-विशेषं जिज्ञासिषुः प्रश्नं करोति-

(१०९) उत्तरकुराए णं भंते! कुराए केरिसए आयारभावपडोआरे पण्णत्ते?, गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, एवं पुव्ववण्णिआ जच्चेव सुसमसुसमावत्तव्वया सच्चेव णेअव्वा [1]जाव पउमगंधा १ मिअगंधा २ अममा ३ सहा ४ तेतली ५ सणिंचारी[2] ६।।१०९।।

'उत्तर कुराए ण' मित्यादि स्पष्टं नवर**'मुत्तर कुराए'** त्ति एकवचनं प्राकृतत्वात्, एतद्वक्तव्यतामतिदिशन्नाह **'एवं पुव्ववण्णिया'** इत्यादि एवं पूर्ववर्णिता **'यैव सुषमसुषमावक्तव्यता सैव नेतव्या,'** अत्रापीति गम्यं, किं पर्यंते' त्याह **'जाव पम्ह गंधे'** त्यादि यावत्पद्मगन्धादयः षड्विधामनुष्या अनुसजन्ति संतत्या भवन्ति तत्र पद्मगन्धाः पद्मसमगन्धयः **'मियगंध'** त्ति मृगमदगन्धयः **'अममा'** इति ममत्वरहिताः **'सहि'** त्ति सहाः सहिष्णवः समर्थाः **'तयलि'** त्ति तजश्च तलं च रूपं येषां ते तजस्तलिनः **'सणिच्चारी'** त्ति शनैश्चारिणः सुषमसुषमारकभाविमनुजवदत्रत्या अपि युग्मिनस्त्रिपल्योपमायुष्कादिभावा भवन्ति उच्यते च **"दोसु वि कुरासु मणुया तिपल्लपरमाउणो तिकोसुच्चा। पिट्ठकरंडसयाइं दो छप्पन्नाइं मणुयाणं।।१।। सुसमसुसमाणुभावं अणुभवमाणाणवच्चगोवणया अउणापण्णदिणाइं अट्ठम भत्तस्साहारो।।२।।"** इति।।१०९।।

अथोत्तरकुरूवर्तियमकपर्वतवक्तव्यतां पृच्छन्नाह-

(११०-१११) कहि णं भंते! उत्तरकुराए जमगा णामं दुवे पव्वया पण्णत्ता?, गोअमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठजोअणसए चोत्तीसे

१. द्र. २/७-५०।। २. सणिच्चारी - V।।

चत्तारि अ सत्तभाए जोअणस्स अबाहाए [१]सीआए महाणईए उभओ कूले एत्थ णं जमगा णामं दुवे पव्वया पण्णत्ता, जोअणसहस्सं उड्ढं उच्चत्तेणं, अड्ढाइज्जाइं जोअणसयाइं उव्वेहेणं, मूले एगं जोअणसहस्सं आयाम-विक्खम्भेणं, मज्झे अद्धट्ठमाणि जोअणसयाइं आयाम-विक्खम्भेणं उवरिं पंच जोअणसयाइं आयाम-विक्खम्भेणं, मूले तिण्णि जोअणसहस्साइं एगं च बावट्ठं जोअणसयं किंचिविसेसाहिअं परिक्खेवेणं। मज्झे दो जोअणसहस्साइं तिण्णि बावत्तरे जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं, उवरि एगं [२]जोअणसहस्सं पंच य एकासीए जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं, मूले वित्थिण्णा मज्झे संखित्ता उप्पिं तणुआ जमगसंठाणसंठिआ सव्वकणगामया अच्छा सण्हा पत्तेअं २ पउमवरवेइया परिक्खित्ता पत्तेयं पत्तेयं वणसंडपरिक्खित्ता। ताओ पउमवरवेइआओ दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पंच धणुसयाइविक्खम्भेणं, वेइआवणसण्डवण्णओ [३]भाणिअव्वो तेसि णं जमगपव्वयाणं उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते [४]जाव।।११०-१११।।

'कहि णं' मित्यादि, क्व 'भदन्त! उत्तरकुरूषु कुरुषु यमकौ नाम्ना द्वौ पर्वतौ प्रज्ञप्तौ?' स्वाम्याहं 'गौतम! नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणान्त्याच्चरमान्ताच्चरमरूपात्पर्यन्तादष्टौ योजन शतानि चतुस्त्रिंशानि चतुस्त्रिंशदधिकानि चतुरश्च योजनस्य सप्तभागान् अबाधया कृत्वाऽपान्तराले मुक्त्वेति' भावः, अत्रान्तरे 'शीताया महानद्याः' पूर्वपश्चिमयोर्दिशो 'रुभयोः कूलयोरत्रैतस्मिन्' प्रदेशे 'यमकौ नाम द्वौ पर्वतौ प्रज्ञप्तौ' तद्यथा 'एकः पूर्वकूले एकः पश्चिमकूले प्रत्येकं चैकं 'योजनसहस्रमूर्ध्वमुच्चैस्त्वेनार्द्धतृतीयानि योजनशतान्युद्वेधे- नावगाहेन' मेरूं विना शेषशाश्वतगिरीणां सर्वेषामविशेषेणोच्चैस्त्वापेक्षया चतुर्भागस्यावगाहभावात्, 'मूले एकं

१. अग्रे ४/२०६ सूत्रे-सीओआए महाणईए 'पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं' उभओ कुले इति पाठोऽस्ति ।। २. गोपुच्छ संठाण संठिया- V. जीवा-३/६३२।। ३. द्र. १/१०-१३।।४. द्र. जीवा. ३/६३३।।

योजनसहस्रं विष्कम्भः' १०००, 'मध्येऽर्द्धाष्टमानि योजनशतानि' ७५०, 'उपरि पञ्चयोजनशतानि' ५००, 'मूले त्रीणि योजन सहस्राणि एकं च द्वाषष्टं' द्वाषष्ट्यधिकं 'योजन शतं किञ्चिद्विशेषाधिकं परिक्षेपेण' प्रज्ञप्तौ ३१६२ 'मध्ये द्वेयोजनसहस्राणि त्रीणि योजनशतानि द्विसप्तत्यधिकानि' २३७२ 'किञ्चिद्विशेषाधिकानि परिक्षेपेण,' 'उपर्येकं योजनसहस्रं' पञ्च 'चैकाशीतान्येकाशीत्यधिकानि योजनशतानि' १५८१ 'किञ्चिद्विशेषाधिकानि परिक्षेपेण,' एवं च तौ 'मूले विस्तीर्णौ, मध्ये संक्षिप्तौ, उपरितनुकौ यमकसंस्थानसंस्थितौ जीवाभिगमे' गोयूच्छसंस्थानसंस्थितौ इति दृश्यते 'सर्वात्मना कनकमयौ' 'अच्छे' त्यादि प्राग्वत्, तौ च 'प्रत्येकं २ पद्मवरवेदिकाभ्यां परिक्षिप्तौ प्रत्येकं प्रत्येकं वनखण्डपरिक्षिप्तौ ताओ णं पउमवरवेइयाओ' त्ति ते च पद्मवरवेदिके 'द्वे गव्यूते ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन पञ्चधनुः शतानि विष्कम्भतो वेदिकावनखण्डवर्णकश्च' जगत्युपरिगतपद्मवर वेदिकावनखण्डवर्णकवद्वाच्य इत्यर्थः।

'तेसिण' मित्यादि प्राग्वत् तावद्वक्तव्यं यावद्वाणमन्तरा 'देवा य देवीओ य आसयंति सयंति जाव पच्चणुभवमाणा विहरंति।'।।११०-१११।।

(११२) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं दुवे पासायवडेंसगा पं०, ते णं पासायवडेंसगा बावट्ठिं जोअणाइं अद्धजोअणं च उड्ढं उच्चत्तेणं, इक्कतीसं जोअणाइं कोसं च आयाम-विक्खंभेणं पासायवण्णओ भाणिअव्वो सीहासणा सपरिवारा जाव एत्थ णं जमगाणं देवाणं सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं सोलसभद्दासणसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।।११२।।

'तेसिण' मित्यादि तयो'र्बहुसमरमणीययोर्भूमिभागयो र्बहुमध्यदेशभागेऽत्र द्वौ प्रासादावतंसकौ प्रज्ञप्तौ' 'ते णं पासायवडिंसगा' इत्यादि तौ च प्रासादावतंसकौ 'द्वाषष्टि योजनान्यर्द्धं योजनं चोर्ध्वमुच्चैस्त्वेनेकत्रिंशतं योजनानि क्रोशं चैकं विष्कम्भेन' 'पासाय

वण्णओ भाणियव्वो' त्ति अत्रानयोः प्रासादावतंसकयोर्वर्णकः प्राग्वत्समग्रोऽपि भणितव्य इत्यर्थः **'सीहासणा सपरिवार'** त्ति प्रासादान्तर्मणिपीठिकोपरि सिंहासने सपरिवारे वाच्ये **'जाव एत्थ णं जमयाणं देवाणं'** इत्यादि युग्मं नवरमिह यावत्करणात्सिंहासनवर्णको वाच्यस्तदनु यमकदेवसम्बन्धिसामानिकादिभद्रासनानि वक्तव्यानि।।११२।।

अथ यमकयोर्नामनिमित्तं ज्ञातुकामः प्रश्नमाह-

(११३) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जमगा पव्वया २?, गोअमा! जमगपव्वएसु णं तत्थ २ देसे तहिं २ बहवे खुड्डाखुड्डियासु वावीसु[1] जाव बिलपंतियासु बहवे उप्पलाइं [2]जाव जमगवण्णाभाइं जमगा य इत्थ दुवे देवा महिड्ढीया, तेणं तत्थ चउण्हं सामाणिअसाहस्सीणं [2]जाव भुंजमाणा विहरंति, से तेणट्ठेणं गो०! एवं वुच्चइ–जमगपव्वया २, अदुत्तरं च णं सासए णामधिज्जे जाव जमगपव्वया२।।११३।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि अथ **'केनार्थेन'** केन कारणे**'नैवमुच्यते यमकपर्वतौ'** यमकपर्वताविति? स्वाम्याह-**'गौतम'**! **'यमकपर्वतयो'**र्णमिति वाक्यालङ्कारे **'तत्र तत्र देशे' 'तहिं तहिं'** तस्य तस्य देशस्य तत्र तत्र प्रदेशे **'बहव्यः क्षुल्लिका क्षुल्लिका वाव्यो यावद्बिलपङ्क्तयो'** वर्त्तन्ते तत्र य **'बहुन्युत्पलानि'** यावत्सहस्रपत्राणि **'यमकप्रभाणि यमका'** नाम शकुनिविशेषास्तत्प्रभाणि तदाकाराणि एतदेव व्याचष्टे यमकवर्णाभानि यमकवर्णसदृशवर्णानीत्यर्थो **'यमकौ'** च यमकनामानावत्र द्वौ द्वौ यमकपर्वतयोः स्वामिनौ महर्द्धिकौ यावत्परिवसत इत्यादिसूत्रमनुक्तमपि दृश्यं **'ते णं तत्थ चउण्ह सामाणियसाहस्सीए णं जाव भुंजमाणा विहरंती'** ति प्राग्वद्विस्तरेण व्याख्येयं ततो यमकाकारयमकवर्णोत्पलादियोगाद्यमकाभिधानदेवस्वामिकत्वाच्च तौ यमकपर्वतावित्यु-

१. ०याआ जाव बिलपंतियाओ-अखकत्रिपबस।। २. द्र. जीवा. ३/६३७।।

च्येते। तथा चाह-'**से एएणट्ठेण**' मित्यादि ।।११३।।

सम्प्रत्यनयोर्यमकाभिधराजधानीस्थानं पृच्छति-

(११४) कहि णं भंते! जमगाणं देवाणं जमिगाओ रायहाणीओ पण्णत्ताओ?, गोअमा! जम्बुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं अण्णंमि जम्बुद्दीवे २ बारस जोअणसहस्साइं ओगाहित्ता, एत्थ णं जमगाणं देवाणं [1]जमिगाओ रायहाणीओ पण्णत्ताओ, बारस जोअणसहस्साइं आयाम विक्खम्भेणं, सत्तत्तीसं जोअणसहस्साइं णव य अडयाले जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं, पत्तेअं २ पायारपरिक्खित्ता, ते णं पागारा सत्तत्तीसं जोअणाइं अद्धजोअणं च उड्ढं उच्चत्तेणं, मूले अद्धत्तेरस जोअणाइं विक्खम्भेणं मज्झे [2]छ सकोसाइं जोअणाइं विक्खम्भेणं, उवरिं तिण्णि सअद्धकोसाइं जोअणाइं विक्खम्भेणं, मूले वित्थिण्णा, मज्झे संखित्ता, उप्पिं तणुआ, बाहिं वट्टा, अंतो चउरंसा, सव्वरयणामया अच्छा, ते णं पागारा णाणामणिपंचवण्णेहिं कविसीसएहिं उवसोहिआ, तंजहा-किण्हेहिं जाव सुक्किल्लेहिं, ते णं कविसीसगा अद्धकोसं आयामेणं देसूणं अद्धकोसं उड्ढं उच्चत्तेणं, पंच धणुसयाइं बाहल्लेणं, सव्वमणिमया अच्छा।।११४।।

'**कहि ण**' मित्यादि, क्व '**भदन्त! यमकयोर्देवयोर्यामिके नाम राजधान्यौ प्रज्ञप्तौ?**' स्वाम्याह-'**गौतम!**' '**जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्योत्तरतोऽन्यस्मिन्न सङ्ख्येयतमे जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वादशयोजनसहस्राण्यवगाह्यात्रान्तरे यमकयोर्देवयोर्यमके नाम राजधान्यौ प्रज्ञप्ते**' ते च '**द्वादशयोजनसहस्राण्यायामविष्कम्भाभ्यां**' १२००० '**सप्तत्रिंशतं योजनसहस्राणि नवयोजनशतान्यष्टचत्वारिंशदुत्तराणि किञ्चिद्विशेषाधिकानि परिक्षेपत:**' ३७९४८, ते च द्वेऽपि '**प्रत्येकं प्राकारपरिक्षिप्ते तौ**' च '**प्राकारौ**

१. जमगाओ V एवमग्रेऽपि. जीवा ३/६३८।। २. छस्सको° V, छच्च सको° कखस।।

सप्तत्रिंशतं योजनान्यर्द्धं योजनं चोर्ध्वमुच्चैस्त्वेन' 'मूलेऽर्द्धत्रयोदशयोजनानि विष्कम्भेन मध्ये षट् योजनानि सक्रोशानि विष्कम्भेनोपरि च त्रीणि योजनानि सार्द्धक्रोशानि विष्कम्भेन मूले विस्तीर्णौ मध्ये संक्षिप्तौ उपरि तनुकौ बहिर्वृत्तावन्तश्चतुरस्रौ सर्वात्मना रत्नमयौ' 'अच्छा' इत्यादि विशेषणवृन्दं प्राग्वत्। **'तेणं पागारा'** इत्यादि तौ च प्राकारौ **'नानामणिपञ्चवर्णैः कपिशीर्षकैरुपशोभितौ'** पञ्चवर्णत्वमेव भावयति तं जहा- **'किण्हेहि'** मित्यादि व्यक्तं **'ते णं कविसीसगा'** इत्यादि तानि कपिशीर्षकाणि प्रत्येक**'मर्द्धक्रोशमायामेन देशोनमर्द्धक्रोशमूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन पञ्च धनुः शतानि बाहल्येन' 'सव्वमणिमया'** इत्यादि प्राग्वत् ।।११४।।

(११५) जमिगाणं रायहाणीणं एगमेगाए बाहाए पणवीसं पणवीसं दारसयं पण्णत्तं, ते णं दारा बावट्ठिं जोअणाइं अद्धजोअणं च उड्ढं उच्चत्तेणं, इक्कतीसं जोअणाइं कोसं च विक्खम्भेणं, तावइअं चेव पवेसेणं, सेआ वरकणगथूभिआगा एवं [1]रायप्पसेणइज्जविमाणवत्तव्वयाए[2] दारवण्णओ जाव अट्ठट्ठमंगलगाइंति।।११५।।

'जमिगाणं रायहाणी ण' मित्यादि यमिकयो राजधान्यो**'रेकैकस्यां बाहायां पञ्चविंशं पञ्चविंशत्युत्तरद्वारशतं प्रज्ञप्तं'** सर्वसङ्ख्यया पञ्चद्वारशतानि **'ते णं दारा'** इत्यादि, तानि द्वाराणि प्रत्येकं **'द्वाषष्टि योजनान्यर्द्धयोजनं चोर्ध्वमुच्चत्वेनैकत्रिंशतं योजनानि क्रोशं च विष्कम्भेन' 'तावइयं चेव पवेसेणं'** ति तावदेव एकत्रिंशतं योजनानि क्रोशं चेत्यर्थः प्रवेशेन **'सिया वरकणगथूभियागा'** इति प्राग्वत् **'एवं रायप्पसेणइज्जे'** त्यादि एवमिति विशेषणद्वयोः प्रदर्शनप्रकारेण राजप्रश्नये या **'विमानवक्तव्यता'** तत्र यो **'द्वारवर्णकः'** स तथा इदमुक्तं भवति यथा **'राजप्रश्नीयोपाङ्गे सूर्याभविमानसत्कद्वाराणां** वर्णकः सविस्तमुक्तस्तथैतेषामप्यवसेय इति किं पर्यवसान इत्याह-**'जाव अट्ठट्ठमंगलगा'**

---

१. द्र. राय० सू० १२९-१६८।। २. ०ए-अकखत्रिबसपुवृ. ह्रीवृ. नास्ति।।

इति यावदष्टावष्टौ मङ्गलकानि तेषां द्वाराणामुपरि वाच्यानि।।११५।।

(११६) जमियाणं रायहाणीणं चउद्दिसिं पञ्च पञ्च जोअणसए अबाहाए चत्तारि वणसण्डा पण्णत्ता, तंजहा–असोगवणे १, सत्तिवण्णवणे २, चंपगवणे ३, चूअवणे ४, ते णं वणसंडा साइरेगाइं बारसजोअणसहस्साइं आयामेणं, पञ्च जोअणसयाइं विक्खम्भेणं, पत्तेअं २ पागारपरिक्खित्ता किण्हा [1]वणसण्डवण्णओ, भूमीओ पासायवडेंसगा य [2]भाणिअव्वा।।११६।।

'जमियाणं रायहाणीण' मित्यादि यमिकयो राजधान्यो: **'पञ्च पञ्च योजनशतानि' 'अबाहाए'** त्ति बाधनं बाधा-आक्रमणं न बाधा अबाधा तस्यामबाधायां कृत्वेति गम्यते, अपान्तराले मुक्त्वेति भाव: **'चउद्दिसिं'** ति चतुर्दिशि चतसृषु दिक्षु **'चत्वारो वनखण्डा: प्रज्ञप्तास्तद्यथा'-'असोयवणे'** त्यादि अशोकतरुप्रधानं **'वनमशोकवनमेवं सप्तपर्णवनं चम्पकवनं चूतवनमपि'** भावमेतानि च पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तररूपासु दिक्षु क्रमेण ज्ञेयानि **'ते णं वणसंडा'** इत्यादि ते च वनखण्डा: **'सातिरेकाणि द्वादशयोजनसहस्राणि आयामेन पञ्चयोजनशतानि विष्कम्भेन प्रत्येकं प्रत्येकं प्रकारपरिक्षिप्ता:' 'किण्हा वणसंडवण्णओ'** त्ति कृष्णा इत्येकविशेषणसूचित: सर्वोऽपि वनखण्डवर्णक: प्राग्वद्वाच्य: **'भूमीओ पासायवडिंसगा य भाणियव्वा'** इति तथा भूमयो बहुसमरमणीयभूमिभागा: प्रसादावतंसकाश्च प्राग्वदेव सवर्णका भणितव्या इत्यर्थ:।।११६।।

(११७) जमिगाणं रायहाणीणं अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते वण्णगोत्ति[3]।।११७।।

'जमिगाण' मित्यादि यमिकयो **'राजधान्योरन्त:'** प्रत्येकं **'बहुसमरमणीयो भूमिभाग: प्रज्ञप्त:।।११७।।**

१. द्र. जीवा. ३/३५८।। २. द्र. जीवा. ३/३५९।। ३. द्र. जीवा. ३/३६०।।

(११८) ▽ तेसि णं बहुसमरमणिज्जाणं भूमिभागाणं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं दुवे उवयारियालयणा पण्णत्ता, बारस जोअणसयाइं आयाम विक्खम्भेणं ▽ वण्णगोत्ति तिण्णि जोअणसहस्साइं सत्त य पंचाणउए जोअणसए परिक्खेवेणं, [१]अद्धकोसं च बाहल्लेणं, सव्वजंबूणयामया अच्छा, पत्तेअं पत्तेअं पउमवरवेइआपरिक्खित्ता, पत्तेअं पत्तेअं वणसंडवण्णओ भाणिअव्वो, तिसोवाणपडिरूवगा तोरणा चउद्दिसिं भूमिभागो य [२]भाणिअव्वोत्ति।।११८।।

'**तेसि ण**' मित्यादि, तयो'**र्बहुसमरमणीययोर्भूमिभागयोर्बहुमध्यदेशभागे**' '**एत्थ णं दुवे उवयारियालयणा पण्णत्ता**' इति अत्रैकैकस्योपर्यैकैकस्य भावाद् द्वे उपरिकालयने प्रज्ञप्ते राजधानी स्वामिसत्कप्रासादावतंसकादीनुपकरोत्युपष्टभ्नायतीत्युपकारिका राजधानीस्वामिसत्कप्रासादावतसंकादीनां पीठिका अन्यत्र त्वियमुपकार्योपकारिकेति प्रसिद्धा उक्तं च-''**गृहस्थानं स्मृतं राज्ञामुपकार्योपकारिकेति**''। '**उपकारिकालयनमिवोपकारि कालयनं।।**' ते च द्वे अपि प्रत्येकं '**द्वादशयोजनशतान्यायामविष्कम्भाभ्यां त्रीणि योजनसहस्राणि सप्त च योजनशतानि पञ्चनवतानि-पञ्चनवत्यधिकानि परिक्षेपेण**' ३७९५ प्रज्ञप्तानि, '**अर्द्धयोजनं बाहल्येन**' '**सव्वजंबूणयामय**' त्ति सर्वात्मना जाम्बूनदमये '**अच्छे**' त्यादि प्राग्वत् ते चोपकारिकालयने '**प्रत्येकं प्रत्येकं पद्मवरवेदिका परिक्षिप्ते प्रत्येकं प्रत्येकं वनखण्डपरिक्षिप्ते**' च '**वण्णओ**' त्ति वेदिकावनखण्डसम्बन्धीवर्णको भणितव्यः '**तिसोवाणे**' त्यादि तत्र त्रिसोपानप्रतिरूपकाणि तथा '**तोरणानि चतुर्दिशि भूमिभागाश्च भणितव्या**' एतेषां वर्णकः प्राग्वदध्येतव्यः।।११८।।

(११९) तस्स णं बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं [३](एगे) पासायवडेंसए पण्णत्ते बावट्ठिं

▽▽ चिह्नद्वयमध्यवर्त्तिपाठः अकखत्रिब नास्ति।। १. "अद्ध जोयणं-अकखत्रिवसपुवृ. हीवृ.।" अत्र 'जोयणं' इति पदं लिपिप्रमादादगतमिति सम्भाव्यते। हीरविजयसूरीणा उपाध्यायपुण्यसागरेण च आदर्शेषु यथा पाठो लब्धस्तथैव टीकितः। जीवाभि. ३/३६१ 'अद्धकोसं' इत्येव पाठो दृश्यते।। २. द्र. जीवा, ३/३६२-६४।। अत्र 'दुवे मूलपासायवडेंसया पण्णत्ता' इति पाठो युज्यते, एष सम्भावना १२० सूत्रस्य 'तेसिणं मूलपासायवडेंसगाणं' इति पाठेन संपुष्टा भवति। किन्तु सर्वेष्वादर्शेष्वपि पासायवडेंसाए पण्णत्ते' इति पाठो लभ्यते।' इति V पृ. ४९१ टि. ४।।

जोअणाइं अद्धजोअणं च उड्ढं उच्चत्तेणं, इक्कतीसं जोअणाइं कोसं च आयाम-विक्खम्भेणं, [1]वण्णओ, उल्लोआ भूमिभागा सीहासणा सपरिवारा। एवं [2]पासायपंतीओ (एत्थ पढमापंती ते णं पासायवेडिंसगा) एक्कतीसं जोअणाइं कोसं च उड्ढं उच्चत्तेणं, साइरेगाइं अद्धट्ठजोअणाइं आयामविक्खम्भेणं [3]बिइअपासायपंती ते णं पासायवडेंसया साइरेगाइं अद्धसोलस जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, साइरेगाइं अद्धट्ठमाइं जोअणाइं आयाम-विक्खम्भेणं, [4]तइअपासायपंती ते णं पासायवडेंसया साइरेगाइं अद्धट्ठमाइं जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, साइरेगाइं अद्धट्ठजोअणाइं आयाम-विक्खम्भेणं, [5]वण्णओ सीहासणा सपरिवारा।।११९।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्योपकारिकालयनद्वयान्तवर्त्तिनो भूमिभागस्य **'बहुमध्येदेशभागेऽत्रास्मिन्'** प्रदेशे **'प्रासादावतंसकः प्रज्ञप्तः'** एकवचन निर्देशस्तु एकैकस्मिन् भूमिभागे एकैकस्य प्रासादस्य सद्भावात् स च प्रासादावतंसको **'द्वाषष्टिं योजनान्यार्द्धं योजनं चोर्ध्वमुच्चैस्त्वेनैकत्रिंशतं योजनानि क्रोशं चैकमायामविष्कम्भाभ्यां'** **'वण्णओ'** त्ति प्रासादस्य वर्णकश्च **'अब्भूगयमूसिय पहसिए विवे'** त्यादिको वाच्यः **'उल्लोचभूमिभाग'** त्ति उल्लोचा भूमिभागाश्च वर्णयितव्याः **'सीहासणा सपरिवार'** त्ति प्रासादावतंसक मध्यस्थितमणिपीठिकायाः सिंहासनानि सपरिवाराणि वक्तव्यानि **'एवं पासाय पंतीओ'** त्ति एवमिति उल्लोचादिवत्प्रासादपङ्क्तयोऽप्यत्र तिस्रो भणनीयास्तत्र प्रथमपंक्तिपाठस्त्वेवं 'से णं पासाय वडेंसए अन्नेहिं चउहिं तदद्धुच्चत्तप्पमाणमित्तेहिं पासायवडिंसएहिं द्वितीयपङ्क्तिगतप्रासादा **'अर्द्धषोडशयोजनानि'** 'सार्द्धानि' पञ्चदशेत्यर्थः **'ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन सातिरेकाण्यर्द्धाष्टमानि योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां'** **'ततीयं**

---

१. द्र. जीवा. ३/३६४-६७।। २. प्रस्तुतप्रकरणे संक्षिप्तः पाठः उपलभ्यते, अस्य सम्यगवबोधार्थं जीवा स्य ३/३६८ सूत्रमवलोकनीयमस्ति। तत्र एवं पाठो विद्यते-'सेणं पासायवडेंसगा एगतीसं जोयणइं' इत्यादि- इति V पृ. ४६१ टि.६ ।। ३. द्र. जीवा. ३/३६९।। ४. द्र. जीवा. ३/३७०।। ५. द्र. जीवा. ३/३७०।।

पासायपंति' त्ति तृतीयाप्रसाद पङ्क्तिरप्यत्र वक्तव्या 'ते णं पासायवडिंसग' त्ति ते तृतीयपङ्क्तिप्रासादा **'अर्द्धाष्टमानि योजनान्युर्ध्वमुच्चैस्त्वेन सातिरेकाणि अध्यष्टयोजनानि क्रोशाधिकानि सार्द्धानि त्रीणि**' योजनानीत्यर्थः **'आयाम-विष्कम्भाभ्यां' 'वण्णओ**' त्ति एतेषां प्रसादानां वर्णको राजप्रश्नीयाद्यनुसारेण वाच्यस्तदनु **'सीहासणा सपरिवारा**' इति प्रासादमध्यवर्त्ति पीठिकासु सिंहासनानि सपरिवाराणि वक्तव्यानि।।११९।।

(१२०) तेसि णं मूलपासायवडिंसयाणं उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए, एत्थ णं जमगाणं देवाणं सभाओ सुहम्माओ पण्णत्ताओ, अद्धतेरस जोअणाइं आयामेणं छस्सकोसाइं जोअणाइं विक्खम्भेणं णव जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अणेगखम्भसयसण्णिविट्ठा सभावण्णओ[1]। ।१२०।।

'तेसि णं मूल पासायवडिंसगाण' मित्यादि, तयो र्मूलप्रासादावतंसकयोः सूत्रे बहुवचनं "**दुवयणे बहुवयण**"' मिति प्राकृतशैली वशात् '**उत्तरपुरत्थिम दिसि भागे**' त्ति ईशानकोणे इत्यर्थः, अत्र **'यमकयोर्देवयो**'र्योग्य'**सभे सुधर्मे प्रज्ञप्ते**' सुधर्मानामविशिष्टछन्दकोपेता ते च सुधर्मे कथं भूते इत्याह '**अद्धतेरसे**' त्यादि '**अर्द्धत्रयोदश योजनान्यायामेन षट् योजनानि सक्रोशानि विष्कम्भेन नव योजनान्यर्द्धमुच्चैस्त्वेन**' '**अणेगखंभसयसन्निविट्ठा सभा वण्णओ**' त्ति अनेकेषु स्तम्भशतेषु सन्निविष्टे अनेकस्तम्भसन्निविष्टे इत्येकविशेषणोपलक्षणादन्योऽपि सुधर्मासभावर्णको वक्तव्यः स च '**जीवाभिगमादेरेवं**' दृश्यः "**अब्भुग्गय सुकयवइरवेइयातोरणवररइयसालिभंजिया सुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसंठियपसत्थवेरूलियविमलखंभाओ णाणामणीकणगरयण-खइयउज्जलबहुसमसुविभत्तनिचितरमणिज्जकुट्टिमतलाओ ईहामिग जाव चित्ताओ,**

---

१. द्र. जीवा. ३/३७२।।

खंभुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामाओ जाव सस्सिरीयरूवाओ कंचणमणिरयण-थूभियागाओ णाणाविहपंचवण्णघंटापडागापरिमंडियग्गसिहराओ धवलाओ मरीइकवयंविणिम्मुयंतीओ लाउल्लोइय महियाओ गोसीससरसरत्त-चंदणदद्दरदिण्ण-पंचंगुलितलाओ उवचियवंदणकलसाओ वंदणघड-सुकयतोरणपडि दुवारदेस-भागाओ आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमुल्लदामकलावाओ पंचवण्णसरस-सुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियाओ कालागुरू जाव गंधवट्टिभूयाओअच्छरगणसंघ विकिन्नाओ दिव्वतुडियमहुरसद्दसंनिनादयाओ सुरम्माओ सव्वरयणामयीओ अच्छाओ जाव पडिरूवाओ ३/३७२ इति व्याख्या, अभ्युद्गता' अतिरमणीयतया द्रष्टृणां प्रत्यभिमुखं उत्प्राबल्येन स्थिता सुकृतेव सुकृता निपुणशिल्पिरचितेति भावः, अभ्युद्गता चासौ सुकृता चाभ्युद्गतसुकृता वज्रवेदिका द्वारमुण्डिकोपरि वज्ररत्नमयवेदिका तोरणं चाभ्युद्गतसुकृतं यत्र ते तथा तथा वराभिः-प्रधानाभिः रचिताभिः रतिदाभिर्वा शालभञ्जिकाभिः सुश्लिष्टाः सम्बद्धा विशिष्टं प्रधानं लष्टं-मनोज्ञं संस्थितं-संस्थानं येषां ते तथा, प्रशस्ताश्च वैडूर्यमयाः स्तम्भा यत्र ते तथा, ततः प्राक्पदेन कर्मधारयः, तथा नानामणिकनकरत्नानि खचितानि यत्र क्तान्तस्य परनिपातो भार्यादिदर्शनात्, नानामणिकनकरत्नखचित उज्वलो-निर्मलो बहुसमोऽत्यंत समः सुविभक्तो-निचितो-निबिडो रमणीयश्च भूमिभागो यत्र ते तथा 'ईहा मिगे' त्यादि विशेषणवृन्दं प्राग्वत्परिभावनीयम्।।१२०।।

(१२१) तासि णं सभाणं सुहम्माणं तिदिसिं तओ दारा पण्णत्ता, ते णं दारा दो जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, जोअणं विक्खम्भेणं, तावइअं चेव पवेसेणं, सेआ वण्णओ [1]जाव वणमाला।।१२१।।

'तासिण' मित्यादि, तयोः **'सभयोः'** **'सुधर्मयोस्त्रिदिशि'** तिसृषु दिक्षु

१. द्र. जीवा. ३/३७२।।

पूर्वदक्षिणोत्तरूपासु **'त्रीणि द्वाराणि प्रज्ञप्तानि'** **'ते णं दारा'** इत्यादि, तानि च द्वाराणि प्रत्येकं प्रत्येकं **'द्वे योजने ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन योजनमेकं विष्कम्भेन तावदेवैकमेव योजनं प्रवेशेन'** **'सेया वण्णओ'** त्ति 'सेया वरकणगथूभियागा' इत्यादिद्वारवर्णकस्तावद्वक्तव्यो **'जाव वणमालाओ'** त्ति यावद्वनमाला वर्णिता भवन्तीति।।१२१।।

(१२२) तेसि णं दाराणं पुरओ पत्तेअं २ तओ मुहमंडवा पण्णत्ता, ते णं मुहमंडवा अद्धत्तेरसजोअणाइं आयामेणं, छस्सकोसाइं जोअणाइं विक्खम्भेणं साइरेगाइं दो जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, [1]जाव दारा भूमिभागा यत्ति।।१२२।।

'तेसि णं दाराणं पुरतो' इत्यादि, तेषां द्वाराणां पुरतः **'प्रत्येकं प्रत्येकं त्रयोर्मुखमण्डपाः प्रज्ञप्तास्ते च मुखमण्डपा अर्द्धत्रयोदशयोजनान्यायामेन षट्योजनानि सक्रोशानि विष्कम्भेन सातिरेके द्वे योजने ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन'** **'जाव दारा भूमिभागो य'** अत्र यावत्करणान्मुखमण्डपानां वर्णको वाच्यस्तदनु एतेषां द्वाराणि भूमिभागश्च वर्णनीयस्तथा।।।१२२।।

(१२३) पेच्छाघरमंडवाणं तं चेव [2]पमाणं भूमिभागो मणिपेढिआओत्ति, ताओ णं मणिपेढिआओ जोअणं आयामविक्खम्भेणं अद्धजोअणं बाहल्लेणं सव्वमणिमईओ, सीहासणा भाणिअव्वा।।१२३।।

'पेच्छाघरमंडवाणं तं चेव पमाणंति' मुखमण्डपपुरोवर्त्तिनां प्रेक्षागृहमण्डपानां तदेव प्रमाणं ज्ञेयं यन्मुखमण्डपानां **प्राग्भाणी'** त्ति **'भूमिभागो'** त्ति समभूभागोऽपि तथैव वर्णयितव्यः समभूभागानां मध्ये च इह सूत्रेऽनुक्तोऽपि **'जीवाभिगमादा'**वुक्तत्वात्प्रत्येकं वज्रमय्योऽक्षपाटकश्चतुरस्राकारो भणनीय एतन्मध्ये च प्रत्येकं **'मणिपेढियाओ'** त्ति मणिपीठिका वाच्याः

---

१. द्र. जीवा. ३/३७४-७५।। २. द्र. जीवा. ३/३७६।।

'ताओणं मणिपेढियाओ' इत्यादि, ताश्च मणिपीठिका **'योजनमेकमायाम-विष्कम्भाभ्यां'** सूत्रे त्वेकवचनं समाहारविवक्षणादेवमन्यत्रापि **'ज्ञेयमर्द्धयोजनं बाहल्येन' 'सव्वमणिमईओ'** त्ति सर्वात्मना मणिमय्य: **'सीहासणा भाणियव्व'** त्ति तासां मणिपीठिकानामुपरि सिंहासनानि भणितव्यानि एतानि च वर्णक परिवार युक्तानि दृष्टव्यानि।।१२३।।

(१२४) तेसि णं पेच्छाघरमंडवाणं पुरओ मणिपेढिआओ पण्णत्ताओ ताओ णं मणिपेढियाओ [१]दो जोअणाइं आयाम-विक्खम्भेणं [२]जोअणं बाहल्लेणं सव्वमणिमईओ।।१२४।।

'तेसि णं पेच्छाघरमंडवाण' मित्यादि तेषां प्रेक्षागृहमण्डपानां **'पुरत:'** प्रत्येकं प्रत्येकं **'मणिपीठिकास्ताश्च मणिपीठिका योजनमायामविष्कम्भाभ्यामर्द्धयोजनं बाहल्येन सर्वात्मना मणिमय्य:'**।

(१२५) तासि णं उप्पिं पत्तेअं २ [३]तओ थूभा, ते णं थूभा [४]दो जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, [५]दो जोअणाइं आयामविक्खम्भेणं सेआ संखतल [६]जाव अट्ठट्ठमंगलया।।१२५।।

'तासि णं उप्पि' मित्यादि तासां मणिपीठिकानामुपरि **'प्रत्येकं प्रत्येकं त्रयस्तूपा ते च स्तूपा द्वे योजने ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन योजनमायामविष्कम्भाभ्यां'** ते च किंविशिष्टा इत्याह **'सेय'** त्ति श्वेता धवला **'संखतल जाव अट्ठट्ठमंगलग'** त्ति इह यावत्करणात् 'संखतलविमलनिम्मलदधिघणगोक्खीरफेणरययनियरप्पगासा सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा तेसि णं थूभाणं उप्पिं अट्ठट्ठमंगलगा झया छत्ताइ छत्ता' इति द्रष्टव्यमेतच्च सुबोधं प्राग्विवृत्तार्थं च ।।१२५।।

(१२६) तेसि णं थूभाणं चउद्दिसिं चत्तारि मणिपेढिआओ पण्णत्ताओ ताओ णं

---

१. जोयणं-अकखत्रिबस ।। २. अद्धजोयणं अकखत्रिबस ।। ३. तओ- नास्ति जीवा. ३/ ३७१ चेइयथुभे पण्णत्ते-इति पाठ:।। ४. सातिरेगाइं दो जोयणाइं-जीवा. ३/३८१।। ५. जोयणं- अकखत्रिबस।। ६. द्र. जीवा. ३/३८१-८२।।

मणिपेढिआओ जोअणं आयाम विक्खम्भेणं अद्धजोअणं बाहल्लेणं, जिणपडिमाओ [1]वत्तव्वाओ। चेइअरुक्खाणं मणिपेढिआओ दो जोअणाइं आयाम विक्खम्भेणं जोअणं बाहल्लेणं, [2]चेइअरुक्खवण्णओत्ति।।१२६।।

तेसिणं थूभाणं चउद्दिशि मि' त्यादि, तेषां चैत्यस्तूपानां चतुर्दिशि चतसृषु दिक्षु एकैकस्यां दिशि एकैक मणिपीठिकाभावेन चतस्रो मणिपीठिकास्ताश्च मणिपीठिका योजनमायाम-विष्कम्भाभ्यां अर्धयोजनं बाहल्येन। **जिणपडिमाओ वत्तव्वाओ'** त्ति, अत्र जिनप्रतिमा वक्तव्या। एतत्प्रतिपादकपाठक्रमो **जीवाभिगमादेरेव** दृश्यः। **तासिणं मणिपेढिया णं उप्पिं पत्तेयं २ चत्तारि जिणपडिमाओ जिणुस्सेह पमाणमित्ताओ पलियंकनिसण्णाओ थूभाभिमूहीओ सन्निखित्ताओ चिट्ठंति। तं जहा-उसभ वद्धमाण चंदाणण वारिसेणा** इति व्यक्तं चैतन्नवरं चत्तारि जिणपडिमाओ जिणुस्सेहपमाणमित्ताओ त्ति एकैकस्या मणिपीठिकाया उपरि एकैक प्रतिमाभावेन चतस्रो जिनप्रतिमा जिनोत्सेधप्रमाणमात्रा जिनोत्सेध उत्कर्षतः पञ्चधनुः शतानि। जधन्यतः सप्तहस्ता इह पञ्चधनुः शतानि सम्भाव्यन्ते। **पलियंकनिसण्णाओ'**त्ति पर्यङ्कासननिषण्णाः **सण्णिक्खित्ताओ'**त्ति तथाजगत्स्थितिस्वाभाव्येन सम्यग्निवेशिताः **चेइयरुक्खाण मणिपेढियाओ'**त्ति, चैत्यवृक्षाणां मणिपीठिका यासामुपरि चैत्यवृक्षा व्यवस्थितास्सन्ति। ता मणिपीठिका द्वे योजने आयाम-विष्कम्भाभ्यां योजनबाहल्येन। **चेइयरुक्खवण्णओ'**ति, सति धर्मिणि धर्माश्चिन्त्यन्ते इतिनयालम्बनेन प्रागुक्तमणिपीठिकानामुपरि पूर्वं प्रत्येकं चैत्यवृक्षो वाच्यस्तत एतेषां वर्णकश्च वक्तव्य इत्यर्थः अत्र पाठक्रमो जीवाभिगमादेवं द्रष्टव्यः। **तासिणं मणिपेढियाणं उप्पिं पत्तेयं २ चेइयरुक्खे पण्णत्ते। तेणं चेइयरुक्खा अद्धजोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अद्धजोयणं उव्वेहेणं। दो जोयणाइं खंधी, अद्धजोयणं विक्खंभेणं, छजोयणाइं विडिमा,**

---

१. द्र. जीवा. ३/३८४-८५।। २. द्र. जीवा. ३/३८५-९१।।

बहुमज्झदेशभाए अट्ठजोयणाइं आयाम विक्खंभेणं साइरेगाइं अट्ठजोयणाइं सव्वग्गेणं पण्णत्ता, तेसिणं चेइयरुक्खाणं अयमेयारुवे वण्णवासे पण्णत्ते। तं वइरामयमूलरइयसुपइट्ठिय विडिमा, रिट्ठामय विउलकंद वेरुलियरुइलखंधी सुजायवरजायरूवपढमगविसालसाला नाणामणिमयरयण विविहसाहप्पसाह, वेरुलियपत्त, तवणिज्जपत्तबेंटा, जंबुणयरत्तमउयसुकुमालपवाल-पल्लव-वरंकुरधरा विचित्तमणिरयणसुरभिकुसुमफलभरणमियसाला, सच्छाया, सप्पभा, सस्सिरिया, अहियनयण-मणनिव्वुइकरा, अमयरससमरसफला, पासाईया, जाव पडिरूवा य इति। व्याख्या तासां मणिपीठिकानामुपरि प्रत्येकं प्रत्येकं चैत्यवृक्षः प्रज्ञप्तः ते च चैत्यवृक्षा अष्टौ योजनान्युर्ध्वमुच्चैस्त्वेनार्द्धयोजनमुद्वेधेन उण्डत्वेन द्वे योजने उच्चैस्त्वेन स्कन्धः स एवार्द्धं योजनं विष्कम्भेन या बहुमध्यदेशभागे ऊर्ध्वं विनिर्गता शाखा सा विडिमा सा षट् योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन सापि चार्द्धं योजनं विष्कम्भेन सर्वाग्रेण सातिरेकाण्यष्टौ योजनानि प्रज्ञप्तानि। तेषां चैत्यवृक्षाणामयमेतद्रूपो वर्णावासः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-वज्ररत्नमयानि मूलानि येषां ते वज्रमयमूलास्तथा रजता रजतमयी सुप्रतिष्ठिता विडिमा प्रागुक्तरूपा येषां ते रजतसुप्रतिष्ठितविडिमास्ततः प्राक्पदेन कर्मधारयः सुजातं मूलद्रव्यशुद्धं वरं यज्जातरूपं हेम तन्मयाः प्रथमका मूलभूता विशालाः शाखा येषां ते तथा, नानामणिरत्नानां नानामणिरत्नात्मिका विविधाः शाखा प्रशाखा येषां ते तथा वैडूर्याणि वैडूर्यमयानि पत्राणि येषां ते तथा, तथा तपनीयानि तपनीयमयानि पत्रवृन्तानि येषां ते तथा, ततः प्राग्वत्पदद्वय पदद्वयमीलनेन कर्मधारयः, जाम्बूनदा आरक्तस्वर्णमया रक्ता रक्तवर्णाः मृदवो मनोज्ञाः सुकुमारा सुकुमारस्पर्शा ये प्रवाला ईषुदुन्मीलितपत्रभावाः पल्लवाः सञ्जातपरिपूर्णप्रथमपत्रभावरूपा वराङ्कुराः प्रथममुद्भिद्यमाना अङ्कुरास्तान् धरन्तीति ये ते तथा, विचित्रमणिरत्नमयानि सुरभीणि कुसुमानि फलानि च तेषां भरेण नमिताः नाम्रं ग्राहिताः शालाः शाखा येषां ते तथा सच्छायाः सत्प्रभाः सश्रीका इति व्यक्तं, तथा सोद्योता

मणिरत्नानामुद्योतभावात्, अधिकमत्यर्थं नयनं मनो निर्वृत्तिकराः अमृतरससमरसानि फलानि येषां ते तथा 'पासाइया' इत्यादि विशेषण चतुष्टयं प्राग्वत्। एते च चैत्यवृक्षका अन्यैर्बहुभिस्तिलकनीपचन्दनतालतमालप्रियालादिभिर्वृक्षैः सर्वतः संपरिक्षिप्ताः इत्यादि-वनवर्णनं **'जीवाभिगमादू'**ह्यं चैत्यवृक्षाणामुपरिचाष्टमङ्गलकादीनि वाच्यानि।।१२६।।

(१२७) तेसि णं चेइअरुक्खाणं पुरओ ताओ मणिपेढिआओ पण्णत्ताओ ताओ णं मणिपेढिआओ जोयणं आयाम-विक्खम्भेण, अद्धजोअणं बाहल्लेणं ।।१२७।।

'तेसि णं चेइयरुक्खाणं पुरतो' इत्यादि, तेषां चैत्यवृक्षाणां पुरतः प्रत्येकं प्रत्येकं **'मणिपीठिकाः प्रज्ञप्तास्ताश्च मणिपीठिका योजनमायाम-विष्कम्भाभ्यामर्द्धयोजनं बाहल्येन।'**।।१२७।।

(१२८) तासि णं उप्पिं पत्तेअं २ महिंदज्झया पण्णत्ता, ते णं अद्धट्ठमाइं जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अद्धकोसं उव्वेहेणं, अद्धकोसं बाहल्लेणं वइरामयवट्ट० [1]वण्णओ। वेइआ-वणसंड तिसोवाण तोरणा य [2]भाणिअव्वा ।।१२८।।

'तासां मणिपीठिकानामुपरि प्रत्येकं प्रत्येकं महेन्द्रध्वजः प्रज्ञप्तस्ते च महेन्द्रध्वजा अर्द्धाष्टमानि सार्द्धानि सप्तयोजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेनार्द्धकोशं चोद्वेधेनार्द्धं क्रोशं बाहल्येन जीवाभिगमे' तु विष्कम्भेनेति दृश्यते **'वइरामयवट्ट० वण्णओ'** त्ति इहाद्यपदसूचितः सर्वोऽपि महेन्द्रध्वजवर्णको वाच्यः स चैवं 'वइरामयवट्ट-लट्ठ-संठियसुसिलिट्ठपरिघट्ठ-मट्ठ-सुपइट्ठिया विसिट्ठा अणेगवरपंचवण्णकुडभीसहस्सपरिमंडियाभिरामा वाउद्धुयविजयवेजयंती पडागछत्ताइछत्तकलिता तुंगा गगणतलमभिलंघमाणसिहरा पासाईया जाव पडिरूवा य।' वज्ररत्नमयास्तथा वृत्तं वर्तुलं लष्टं मनोज्ञं संस्थितं संस्थानं येषां ते तथा, तथा सुश्लिष्टा यथा भवत्येवं परिघृष्टा इव खरशानया पाषाणप्रतिमेव सुश्लिष्टा परिघृष्टा मृष्टा सुकुमारशानया

१. द्र. जीवा. ३/३९३-९४।। २. द्र. जीवा. ३/३९५-९६।।

पाषाणप्रतिमावत् सुप्रतिष्ठिता मनागपि चलनासम्भवात्, ततो विशेषणसमासः शेषे प्राग्वन्नवरं कुडभी-लघुपताका महेन्द्रध्वजानां चोपरि अष्टमङ्गलकादीनि वाच्यानि **'वेइगा-वणसंड-तिसोवाण-तोरणा य भाणियव्वा'** इति वेदिकावनखण्डत्रिसोपनतोरणानि भणितव्यानि एतानि हि नन्दापुष्करिणीसम्बन्धीनि ज्ञेयानि तद्गणने चैवं पाठक्रमः 'तेसिं महिंदज्झयाणं पुरतो तिदिसं तओ णंदापुक्खरिणीओ पण्णताओ, पुक्खरिणीओ अद्धतेरसं जोयणाइं आयामेण छसक्कोसाइं तोरणाइं विक्खंभेण दसजोयणाइं उव्वेहेणं अच्छाओ पुक्खरिणीवण्णओ पत्तेयं २ पउमवरवेइया परिक्खित्ताओ पत्तेयं २ वणसंडपरिक्खित्ताओ तोरणा भाणियव्वा जाव छत्ताइछत्ता' स्पष्टं चैतन्नवरं 'नंदा पुक्खरिणीओ' त्ति नन्दाभिधानाः पुष्करिण्यः नन्दापुष्करिण्यः 'अद्ध तेरस जोयणाइं' त्ति सार्द्धानि द्वादश योजनान्यायामेन षट् योजनानि सक्रोशानि विष्कम्भेन दशयोजनान्युद्वेधेन-उण्डत्वेनेति।।१२८।।

(१२९) तासि णं सभाणं सुहम्माणं छच्च मणोगुलिआसाहस्सीओ पण्णत्ताओ, तंजहा–पुरत्थिमेणं दो साहस्सीओ पण्णत्ताओ, पच्चत्थिमेणं दो साहस्सीओ, दक्खिणेणं एगा साहस्सी, उत्तरेणं एगा [१]जाव दामा चिट्ठंतित्ति।।१२९।।

'तासि णं सभाण' मित्यादि तयोः सभयोः **'सुधर्मयोः'** **'षट् षट् मनोगुलिका सहस्राणि'** पीठिकासहस्राणि **'प्रज्ञप्तानि तद्यथा-पूर्वस्यां दिशि द्वे सहस्रे पश्चिमायां द्वे सहस्रे दक्षिणस्यामेकं सहस्रमुत्तरस्यामेकं सहस्रमिति जाव दामा चिट्ठंति'** त्ति यावत्करणादेतासु च फलकनागदन्तकमाल्यदामवर्णनं प्राग्वत्।।१२९।।

(१३०) एवं गोमाणसिआओ, णवरं धूवघडिआओत्ति।।१३०।।

'एवं गोमाणसियाओ' त्ति एवं मनोगुलिकावत् गोमानसिकाः शय्यारूपाः स्थानविशेषा अपि षट् षट् सहस्रप्रमाणा वाच्याः नवरं **'धूवघडिओ'** त्ति नवरमयं विशेषोऽत्र

---

१. द्र. जीवा. ३/३९७।।

फलकनागदन्तकेषु धूपघटिका भणनीयास्तद्वर्णनं प्राग्वत्।।१३०।।

(१३१) तासि णं सुहम्माणं सभाणं अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे [1]पण्णत्ते।।१३१।।

'तासि णं सुहम्माणं' मित्यादि, तयोः सुधर्मयोः **'सभयोरन्तो बहुसमरणीयो भूमिभागो'** वाच्यः।।१३१।।

(१३२) मणिपेढिआ दो जोअणाइं आयाम विक्खम्भेणं, जोअणं बाहल्लेणं ।।१३२।।

'मणिपेढियाओ' त्ति बहुसमरमणीयभूभागमध्यदेशे च मणिपीठिके वक्तव्ये ते च **'दो जोयणाइ'** मित्यादि द्वे योजने आयाम-विष्कम्भाभ्यां **'योजनबाहल्येन'**।।१३२।।

(१३३) तासि णं मणिपेढिआणं उप्पिं माणवए चेइअखम्भे [2]महिंदज्झयप्पमाणे।।१३३।।

'तासिं जाव उप्पि' मित्यादि तयो मणिपीठिकयोरूपरि **'माणवकनामा चैत्यस्तम्भो महेन्द्रध्वजप्रमाणो'** वाच्यो यावत्करणादेतद्वर्णनप्रकारश्चैवं 'तासिणं मणिपेढियाणं उप्पिं एत्थ णं माणवगा नामं चेइयखंभा पं० अद्धट्ठमाइं जोयणांइ उड्ढं उच्चत्तेणं, अद्धकोसं उव्वेहेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं, छक्कोडीया छलंसा छसु विग्गहिया वइरामयवट्टलट्ठसंट्ठिया एवं जहा महिंदज्झयस्स।।१३३।।

(१३४) उवरिं [3]छक्कोसे ओगाहित्ता हेट्ठा [4]छक्कोसे वज्जित्ता जिणसकहाओ पण्णत्ताओत्ति।।१३४।।

'उवरिं छक्कोसे उगाहित्ता हेट्ठा छक्कोसे वज्जेत्ता जिणसकहाओ पण्णत्ताओ' पाठान्तरे 'जिणसकहावण्णओ' अत्र च **जीवाभिगमाद्यनुसारणैवं** विस्तारेण पाठो वक्तव्यः तेसि णं माणवगाणं चेइयखंभाणं उवरिं छकोसे आगाहित्ता हेट्ठा वि छक्कोसे वज्जेत्ता मज्झे अद्धपंचमेसु

१. द्र. जीवा. ३/३९१-४००।। २. द्र. जीवा. ४/१३२।। ३-४. छस्सक्कोसे अकखात्रिबस ।।

जोयणेसु एत्थणं बहवे सुवण्णरूप्पमया फलगा पं०, तेसु णं सुवण्णरूप्पमएसु फलएसु बहवे वइरामया नागदंतगा पं० तेसु णं वइरामएसु नागदंतएसु बहवे रययामया सिक्कगा पं० तेसु णं रययामएसु सिक्कएसु बहवे वइरामया गोलवट्टसमुग्गया पं०, तेसुणं वइरामएसु गोलवट्टसमुग्गएसु बहूओ जिणसकहाओ संनिक्खित्ताओ चिट्ठंति जाओ णं जमगाणं देवाणं अण्णेसिं च बहूण वाणमंतराणं देवाणं देवीणं च अच्चेणिज्जाओ वंदणिज्जाओ पूयणिज्जाओ सक्कारणिज्जाओ सम्माणणिज्जाओ कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासणिज्जाओ' इति व्याख्या, तयो र्माणवकयो श्चैत्यस्तम्भयोरुपरि षट्क्रोशानवगाह्य उपरितनभागात् षट्क्रोशान् वर्जयितव्येत्यर्थः अधस्तादपि षट्क्रोशान् वर्जयित्वा मध्येऽर्द्धपञ्चमेषु योजनेषु 'बहवे सुवण्णरूप्पमया फलगा' इत्यादि सुगमं नवरं 'वइरामया गोलवट्टसमुग्गय' त्ति वज्रमया गोलवृत्ताः समुद्गकाः 'जिणसकहाओ' त्ति जिनसक्थिनि 'अच्चणिज्जाओ इत्यादि, अर्चनीयानि वन्दनतो, वन्दनीयानि स्तुत्यादिना, पूजनीयानि पुष्पादिना, सत्कारणीयानि वस्त्रादिना, सन्माननीयानि बहुमान करणतः, कल्याणं मङ्गलं दैवतं चैत्यमिति बुध्या पर्युपासनीयानि माणवकचैत्यस्तम्भयोश्चोपरि अष्टमङ्गलकछत्रातिछत्रादीनि च वाच्यानि।।१३४।।

(१३५) माणवगस्स पुव्वेणं सीहासणा [१]सपरिवारा पच्चत्थिमेणं सयणिज्जा-वण्णओ[२]।।१३५।।

'माणवगस्स पुव्वेण सीहासणा सपरिवारा' इति माणवकस्य पूर्वस्यां दिशि सिंहासने सपरिवारे परिवारसहिते वाच्ये **'पच्चत्थिमेणं सयणिज्जं'** त्ति माणवकयोः पश्चिमायां दिशि शयनीयं भणनीयं **'वण्णओ'** त्ति एतस्य वर्णको वाच्यः स च जीवाभिगमादेरवसातव्यः।।१३५।।

(१३६) सयणिज्जाणं उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए खुड्डुगमहिंदज्झया मणिपेढिआविहूणा

---

१. द्र. जीवा. ४/४०४-०५।। २. द्र. जीवा. ४/४०६-०७।।

[1]महिंदज्झयप्पमाणा।।१३६।।

'सयणिज्जाओ णं उत्तरओ' इत्यादि शयनीययोरुत्तरस्यां 'क्षुद्रमहेन्द्रध्वजौ मणिपीठिकाविहीनौ' महेन्द्रध्वजप्रमाणौ वक्तव्यौ।।१३६।।

(१३७) तेसिं अवरेणं चोप्पाला पहरणकोसा, तत्थ णं बहवे फलिहरयणपामुक्खा [2]जाव चिट्ठंति ।।१३७।।

'तेसिं अवरेण' मित्यादि तयोः क्षुद्रमहेन्द्रध्वजयोरपरस्यां यमकदेवयोश्च 'चोप्पलौ' नाम 'प्रहरणकोशौ'-प्रहरणस्थानौ प्रज्ञप्तौ 'तत्थ ण' मित्यादि तत्र चोप्पलाभिधानप्रहरणकोशयो- 'बहुनि परिघरत्नप्रमुखाणि' 'जाव चिट्ठंति' त्ति यावत्करणात्प्रहरणरत्नानि संनिक्षिप्तानि तिष्ठन्ति।।१३७।।

(१३८) सुहम्माणं उप्पिं अट्ठट्ठमंगलगा ।।१३८।।

'सुहम्माणं उप्पिं अट्ठट्ठमंगलगा' इति स्पष्टम्।।१३८।।

(१३९) तासि णं उत्तरपुरत्थिमेणं सिद्धायणा एस चेव जिणघराणवि गमोत्ति, णवरं इमं णाणत्तं एतेसि णं बहुमज्झदेसभाए पत्तेअं २ मणिपेढिआओ दो जोअणाइं आयाम-विक्खम्भेणं, जोअणं बाहल्लेणं, तासिं उप्पिं पत्तेअं २ देवच्छंदया पण्णत्ता, दो जोअणाइं आयाम विक्खम्भेणं, साइरेगाइं दो जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं सव्वरयणामया जिणपडिमा, वण्णओ [3]जाव धूवकडुच्छुगा।।१३९।।

'तोसिणं' मित्यादि तयोः सुधर्मयोः सभयोः 'उत्तरपुरत्थिमेणं' ति उत्तरपौरस्त्ये-ईशानकोणे इत्यर्थः 'सिद्धायतने' प्रज्ञप्ते तत्पाठश्चैवं 'तासि णं सुहम्माणं सभाणं उत्तरपुरत्थिमेणं एत्थणं दुवे सिद्धायतणा पं०, अद्धतेरस जोयणाइं आयामेणं छसक्कोसाइं

१. द्र. जीवा. ४/४०८-०९।। २. द्र. जीवा. ४/४१०।। ३. द्र. जीवा. ३/४१२-२०।।

जोयणाइं विक्खंभेणं तहेव दारमुहमंडवा' इत्यादि **'जीवाभिगम'**प्रसिद्धो ज्ञातव्यः **'एसेव जिणघराण वि गमो'** त्ति एष एव जिनगृहयोरपि गमः प्रकारः **'नवरं इमं णाणत्तं'** त्ति नवरमिदं नानात्वविशेषस्तदेव दर्शयति। **एएसिण'**मित्यादि, एतयोः सिद्धायतनयोर्बहुमध्यदेशभागे प्रत्येकं मणिपीठिके प्रज्ञप्ते द्वेयोजने आयाम-विष्कम्भाभ्यां योजनं बाहुल्येन, तयोरुपरिदेवछंदकौ प्रज्ञप्तौ, ते च द्वेयोजने आयाम-विष्कम्भाभ्यां सातिरेके द्वेयोजने ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन **'सव्वरयणामया'** इत्यादि प्राग्वत्, **'जिणपडिमा वण्णओ जाव धूपकुडुच्छगा'** इति। अत्र देवच्छन्दके जिनप्रतिमावर्णकस्तावद्वाच्यो यावद्धूपकडुच्छुका इति, अत्रैवं पाठक्रमः **'तत्थ णं देवच्छंदएसु अट्ठसयं जिणपडिमाणं जिणुस्सेहपमाणमित्ताणं संनिक्खित्तं चिट्ठति। तासिणं जिणपडिमाणं अयमेयारूवे वण्णावासे पं० तं- तवणिज्जमया हत्थतला'** इत्यादि वर्णकःसर्वोऽपि प्राग्वद्वाच्यः सिद्धायतनयोरूपरि अष्टौ मङ्गलकानि ध्वजछत्रातिछत्रादीनि च प्राग्वद्वाच्यानि।।१३९।।

(१४०) [1]एवं अवसेसाणवि सभाणं जाव उववायसभाए सयणिज्जं [2]हरओ य, अभिसेअसभाए बहु आभिसेक्के भंडे, अलंकारिअसभाए बहु अलंकारिअभंडे चिट्ठइ, ववसायसभासु पुत्थयरयणा, णंदा पुक्खरिणीओ, बलिपेढा दो जोअणाइं आयामविक्खम्भेणं, जोअणं [3]बाहल्लेणं [4]जावत्ति,-

उववाओ संकप्पो, अभिसेअ विहूसणा य ववसाओ।
अच्चणिअसुधम्मगमो जहा य परिवारणाइड्ढी।।१।।
जावइयंमि, पमाणंमि हुंति जमगाओ णीलवंताओ।
तावइअमंतरं खलु, जमगदहाणं दहाणं च।।२।।

१. एवं चेव अव° V।। २. अकखत्रिबसपुवृ. हीवृ. एतेषु सर्वेष्वपि 'हरओ च' इति पाठः ' आभिसेक्के भांडे' इति पाठानन्तरं विद्यते, किन्तु जीवा. स्य ३/४२५ सूत्रस्यावलोकनेन एतज्जायते उपपातसभायाः उत्तरपौरस्त्ये ह्रदो विद्यते, तस्य उत्तरपौरस्त्ये अभिषेक सभा विद्यते, अतः 'हरओ य' इति पाठः अभिषेकसभातः पूर्वमेव युज्यते।। ३. सव्वरयणामया सकोसं जोयण बाहल्लेणं - अकखत्रिबसपुवृ हीवृ.।। ४. द्र.जीवा.३/४२९-४३८।।

'एवं चेव अवसेसाण वि सभाणं वि' एवमेव सुधर्मासभावदवशिष्टानामपि**'उपपातसभादीनां'** वक्तव्यता वक्तव्या **'जाव उवसायसभाए'** इति यावदुपपातसभायां **'शयनीयं'** तिष्ठन्ति वाच्यं **'अभिसेयसभाए बहु अभिसेकभंडे हरओ च'** त्ति अभिषेक सभायां बहु आभिषेक्यं भाण्डं कलशभृङ्गारादिकं ह्रदश्चास्तीति वाच्यं **'आलंकारियसभाए सुबहु आलंकारियं भंडं चिट्ठति'** त्ति आलङ्कारिकसभायां सुबहु आलङ्करिकं भाण्डं मुकुटकेयूरादिकं तिष्ठति इह सूत्रे उपपातसभादौ एकवचनान्तत्वं जात्यपेक्षं **'ववसायसभासु'** इत्यादि व्यवसायसभयोः **'पुस्तकरत्ने'** तथा **'नन्दा पुष्करिण्यौ बलिपीठे'** च स्त इति वक्तव्यं **'सव्वरयणामया'** इत्यादि प्राग्वत् यावत्करणाद्यमकदेवयो रुपपातसङ्कल्पाभिषेकादिकं वाच्यमनयोरुपपातादिप्रकाशिकां गाथामाह– **'उववाओ-संकप्पो'** इत्यादि 'उववाउ' त्ति उपपात उपपातसभाओ र्यमकदेवयोर्वाच्यः सङ्कल्पश्चाभिनवोत्पन्नयोः किमावयोः पूर्वं पश्चाद्वा कर्तुं श्रेय इत्यादिरूपोऽभिषेकश्चाभिषेकसभयोर्महर्ध्या सामानिकादिदेवकृतो विभूषणा च वस्त्रालङ्करकृ- तालङ्कारसभयोः, व्यवसायश्च **'व्यवसाय'**सभयोः पुस्तकवाचनतः **'अच्चणिय'** त्ति अर्चनिका सिद्धायतन सिद्धप्रतिमादीनां **'सुधम्मगमो'** त्ति ततः सुधर्मयोः सभयोर्गमनं वाच्यं **'जह च परियारणा इड्ढि'** त्ति यथा च परिवारणा परिवारः सामानिकादिरूपः 'इड्ढि' त्ति ऋद्विमत्त्वं 'एवं महिड्ढिये' त्यादि वचनैर्वाच्यमनयोरिति गाथार्थः, इहोपपातादिकं परिवारर्द्धिपर्यन्तं सर्वं यथा **'जीवाभिगमोपाङ्गे विजयदेव'**माश्रित्य सविस्तरं भणितमस्ति तथाऽनयोरपि वाच्यं केवलं विजयस्थाने यमकयोरभिलापः कार्यः, ग्रन्थगहनताप्रसङ्गान्नेह प्रपञ्चिमिति।।

अथ नीलवद्धर्षधराद्रि यमकाद्रि नीलवदादिह्रदपञ्चकस्य परस्परमन्तर साम्यं गाथया दर्शयति **'जावइयंमि'** गाहा। यावति प्रमाणे यावत्प्रमाणं क्षेत्रमन्तरं कृत्वा नीलवतो वर्षधराद्यमकौ भवतस्तावदेवान्तरं यमकह्रदयोर्यमकनीलवद्ह्रदयोर्ज्ञेयं ह्रदानां च

नीलवादादीनां पञ्चानां तावदेव परस्परमन्तरं नन्यूनमधिकं चेत्यर्थः।।१४०।।

अथ नीलवद्ह्रदवक्तव्यतां पिपृच्छिषुरिदमाह -

(१४१) कहि णं भंते! उत्तरकूराए णीलवंतद्दहे णामं दहे पण्णत्ते?, गोअमा! जमगाणं दक्खिणिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठसए चोत्तीसे चत्तारि अ सत्तभाए जोअणस्स अबाहाए सीआए महाणईए बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं णीलवंतद्दहे णामं दहे पण्णत्ते, दाहिणउत्तरायए पाईणपडीणवित्थिण्णे जहेव पउमद्दहे तहेव वण्णओ णेअव्वो णाणत्तं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ते, णीलवंते णामं णागकुमारे देवे सेसं तं चेव [1]णेअव्वं ।।१४१।।

'कहि णं भंते' इत्यादि क्व भदन्त! **'उत्तरकुरूषु नीलवद्ह्रदो नाम ह्रदः प्रज्ञप्तो?'** भगवानाह-**'गौतम! यमक-पर्वतयोर्दोक्षिणात्याच्चरमान्ता'**दर्वाग् **'दक्षिणाभिमुखमष्टौ योजनशतानि चतुस्त्रिंशानि'** चतुस्त्रिंशदधिकानि **'चतुरश्च सप्तभागान् योजनस्याबाधया कृत्वेति'** गम्यते। अपान्तराले मुक्त्वेति भावः **'शीताया महानद्या बहुमध्यदेशभागे' 'एत्थणं नीलवंतद्दहे नामं दहे पण्णत्ते'** संक्षिप्तत्वादित्युक्तमपि दृश्यं 'एत्थ णं' त्ति एतस्मिन्नवकाशे उत्तरकुरुषु नीलवद् ह्रदोनाम ह्रदः प्रज्ञप्तः स च किं विशिष्ट इत्याह-**'दक्षिणोत्तरायातः प्राचीन-प्रतीचीन'** विस्तीर्णः **'जहेव पउमद्दह वण्णओ तहेव वण्णेयव्वो'** त्ति यथैव पद्मह्रदवर्णकः प्रागुक्तस्तथैवास्यापि वर्णको ज्ञेयोऽयं भावः, अयमपि एकं योजन सहस्रमायामेन पञ्चयोजनशतानि विष्कम्भतो दशयोजनान्युण्डत्वे अच्छः श्लक्ष्ण इत्यादि **'नाणत्तं'** ति नानात्वमिदं **'दोहि'** मित्यादि अयं द्वाभ्यां **'पद्मवरवेदिका'**भ्यामेकस्मिन् पार्श्व एकया पद्मवरवेदिकया द्वितीये पार्श्वे द्वितीयया पद्मवरवेदिकया इत्यर्थः, एवं **'द्वाभ्यां वनखण्डाभ्यां संपरिक्षिप्तो नीलवन्नामा च नागकुमारोऽत्र देवः'** परिवसति **'सेसं तं चेव णेयव्वं'** ति

---

१. द्र. ४/३-२२।।

शेषमुक्तव्यतिरिक्तं मूलपद्मतत्परिवारभूत कमलपरिक्षेपादिकं तदेव ज्ञेयं यथा पद्महृदाधिकारे भणितं तथैव नीलवद् हृदेऽपि वक्तव्यमित्यर्थः, एतन्नामावर्थस्तु नीलवद् हृदाकार नीलवद्धर्षधरपर्वतवर्णोत्पला -दियोगान्नीलवद्देवस्वामिकत्वाच्च बोद्धव्यः।।१४१।।

(१४२) णीलवंतद्दहस्स पुव्वावरे पासे दस २ जोअणाइं अबाहाए एत्थ णं वीसं कंचणगपव्वया पण्णत्ता, एगं जोयणसयं उड्ढं उच्चत्तेणं–

मूलंमि जोअणसयं, पण्णत्तरि जोअणाइं मज्झंमि।
उवरितले कंचणगा, पण्णासं जोअणा हुंति।।१।।
मूलंमि तिण्णि सोले, सत्तत्तीसाइं दुण्णि मज्झंमि।
अट्ठावण्णं च सयं, उवरितले परिरओ होइ।।२।।
पढमित्थ नीलवंतो १, बितिओ उत्तरकुरू २ मुणेअव्वो।
चंदद्दहोत्थ तइओ ३ [१]एरावय ४ मालवंतो अ ५।।३।।

एवं वण्णओ अट्ठो पमाणं पलिओवमट्ठिइआ देवा।।१४२।।

'णेलवंतद्दहस्स ण' मित्यादि नीलवतो हृदस्य **'पूर्वापरपार्श्वायोः'** प्रत्येकं **'दश दश योजनान्यबाधया'** कृत्वाऽपान्तरालं मुक्त्वेति भावः **'एत्थ णं'** ति अत्रान्तरे **'वीसं'** ति दश पूर्वस्यां दशापरस्यामित्येवं विंशतिः **'काञ्चनपर्वताः प्रज्ञप्ता'**स्ते च काञ्चनपर्वताः प्रत्येक**'मेकं योजन शतमूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन'** पञ्चविंशतियोजनान्युद्वेधेनैतेषां मूलादौ विष्कम्भपरिरयपरिमाणं गाथाभ्यामाह-**'मूलंमि'** गाहा-मूले एकं **'योजन शतं'** विष्कम्भेनेति सर्वत्र गम्यं **'मध्ये पञ्चसप्ततियोजनानि'** विष्कम्भेन, उपरितले पञ्चाशतं योजनानि विष्कम्भेन **'काञ्चनपर्वताः'** भवन्ति' **'मूलंमि तिण्णिसोले'** गाहा-मूले त्रीणियोजनशतानि षोडशोत्तराणि ३१६ **'मध्ये द्वे योजनशते सप्तत्रिंशदधिके'** २३७ **'उपरितले एकयोजन'**

१. एरावण -V।।

शतमष्टपञ्चशदधिकं १५८ **'परिरय:,'** एतेषां परिक्षेपो भवत्यत्र परिधित्रयेऽपि किञ्चिद्विशेषाधिकत्वमनुक्तमपि द्रष्टव्यं। शीताविद्धहृदपञ्चकनामान्याह **'पढमोऽत्थ नीलमंतो'** गाहा-अत्र शीताविद्धहृदपञ्चक मध्ये **'प्रथमो नीलवन्नामा'** हृद: प्रागुक्त स्वरूपो ज्ञेय: १ **'द्वितीयो हृद उत्तरकुरू'** नामा ज्ञातव्य: २, **'तृतीयोऽत्र चन्द्र'** नामा हृद: ३, **'चतुर्थ ऐरावत'** नाम हृद: ४, पञ्चमो **'माल्यवन्ना'**माहृद: ५, **'एवं वण्णओ'** त्ति एवमिति पद्महृदवर्णकप्रकारेणैषामपि पञ्चानां हृदानां वर्णको वाच्यस्तथाहि-यथा पद्महृदस्य मध्ये महदेकं पद्मं यावच्च तस्य परिमाणं यथा च तस्य पद्मस्य तदर्द्धप्रमाणाष्टोतरशत-संख्यपद्मपरिक्षेपो द्वितीय इन्द्रसामानिकादिदेवयोग्य: पद्मपरिक्षेपस्तृतीय आरक्षकदेवयोग्य: परिक्षेपो यथा चान्येऽपि तत्र त्रय: पद्मपरिक्षेपा यावत्प्रमाणं च तस्य मूलभूतस्य पद्मस्योपरि भवनं मध्ये यावत्परिमाणा मणिपीठिका तस्याश्चोपरियावत्प्रमाणं शयनीयं तदेतत्सर्वमन्यूना-तिरिक्तमेतेष्वपि हृदेषु प्रत्येकं वक्तव्यमिति **'अट्ठो'** त्ति अर्थ:। **'केणट्ठेण'** मित्यादि प्रश्नोत्तरार्थोऽपि स्वधिया वक्तव्यस्तत्र नीलवद्हृदस्यान्वर्थ: प्रागेवाभाणि शेषणां त्वेवमुत्तरकुरुप्रभाद्युत्पलयोगादुत्तरकुरूनामाधिपदेवयोगाच्चोत्तरकुरू नामा हृदो २, न चैवमितरेतराश्रयदोषप्रसङ्ग उभयेषामपि नाम्नामनादिकालं तथा प्रवृत्ते:, एमन्यत्रापि निर्दोषता भावनीया। तथा चन्द्रप्रभ चन्द्राकारोत्पलादियोगाच्चन्द्रनामदेवस्वामिकत्वाच्चन्द्रहृद इति ३, ऐरावतहस्तिवर्णोत्पलादियोगादैरावताभिधाधिपदेवयोगाच्चैरावतहृद इति ४, माल्यवद् हृदाकारमाल्यवन्नामवक्षस्कारसद्दग्वर्णोत्पलादिसद्भावान्माल्यवन्नामदेवावासयोगाच्च माल्यवद् हृद इति व्यपदिश्यते ५, **'पमाणं'** ति प्रमाणमपि पद्महृदतुल्यं द्रष्टव्यं **'पलिउवमठितीया देवा'** इति पल्योपमस्थितिकाश्चात्र देवा: परिवसन्त्ययमत्र भाव:नीलवति हृदे नागकुमारेन्द्राधिपति शेषेषु तु व्यन्तरास्ते च देवा: सर्वेऽपि प्रत्येकं पल्योपमायुष: प्रत्येकं चतुर्णामिद्धसामानिकसहस्राणां चतसृणामग्रमहिषीणां सपरिवाराणां तिसृणां पर्षदां सप्तानामनीकानां सप्तानामनीकाधिपतीनां

षोडशानामात्मरक्षकदेवसहस्राणामन्येषां च स्वस्वराजधानीवास्तव्यानां बहूनां देवानां देवीनां चाधिपतयो राजधान्यश्चैतेषां पञ्चानां देवानां मेरोरुत्तरतस्तिर्यगसंख्येयान् द्वीपसमुद्रानतिक्रम्यापरस्मिन् जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वादशयोजनसहस्राण्यवगाह्य परतो यथा स्थानमवसेयास्तथा काञ्चनगिरिवक्तव्यतापि यथा मालवद्ह्रदे प्रोक्ता तथा शेषह्रदचतुष्टयेऽपि बोद्धव्या सर्वे मिलिता उत्तरकुरुषु शतं काञ्चनाद्रयो भवन्ति **'एवं'** ति एवं देवकुरुष्वपि काञ्चनाद्रिशतं द्रष्टव्यं सर्वमीलने काञ्चनगिरिणां शतद्वयं भवतीति यदुक्तं **"दस जोयण अंतरिया पुव्वेण वरेण चेव हरयाणं दसदस च कंचणगिरि दुन्नि सया होंति सव्वे वि।।१।।"** ।।१४२।। साम्प्रतं जम्बूवृक्षवक्तव्यातामाह-

(१४३) कहि णं भंते! उत्तरकुराए २ जम्बूपेढे णामं पेढे पण्णत्ते?, गोअमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं, मंदरस्स [1]उत्तरेणं, मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं[2], सीआए महाणईए पुरत्थिमिल्ले कूले, एत्थ णं उत्तरकुराए जम्बूपेढे णामं पेढे पण्णत्ते, पंच जोअणसयाइं आयाम क्खिम्भेणं, पण्णरस एक्कासीयाइं जोअणसयाइं किंचिविसेसाहिआइं परिक्खेवेणं, बहुमज्झदेसभाए बारस जोअणाइं बाहल्लेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ पदेसपरिहाणीए २ सव्वेसु णं चरिमपेरंतेसु दो दो गाऊआइं बाहल्लेण, सव्वजम्बूणयामए अच्छे से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, दुण्हंपि वण्णओ[3]।।१४३।।

'कहिणं भंते' इत्यादि क्व भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे **'उत्तरकुरुषु'** जम्ब्वाः सम्बन्धिपीठं

---

१. यथा देवकुरूप्रकरणे ४/२०७ मंदरस्स पव्वयस्स दाहिण-पच्चत्थिमेणं इति पाठोऽस्ति तथाऽत्रापि मंदरस्स पव्वयस्स उत्तर-पुरत्थिमेणं इति पाठो युज्यते। जीवाभिगमेऽपि ३।६६८ एवं विधः पाठो लभ्यते। इति V पृ ४९५ टि.५।। २. यथा देवकुरू प्रकरणे ४।२०७ विज्जुयपभस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेण इति पठोऽस्ति तथाऽत्रापि गंधमादणस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं इति पाठो युज्यते। जीवा. अपि ३।६६८ एवंविधः पाठो लभ्यते। इति V पृ ४९५-टि.६।। ३. द्र. १।१०-१३।।

'जम्बूपीठं नाम पीठं प्रज्ञप्तं?' भगवानाह-गौतम! **'नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां मंदरस्य पर्वतस्योत्तरस्यां'** गन्धमादनस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पूर्वेण पूर्वस्यां दिशि **'माल्यवतो वक्षस्कारपर्वतस्य पश्चिमायां शीताया महानद्याः पूर्वदिक्'** सम्बन्धिनि **'कूलेऽत्रैत'** स्मिन्नवकाशे **'उत्तरकुरुषु'** २ जम्ब्वाः सुदर्शनापरनामिकायाः **'पञ्चदश' 'योजनशतान्येकाशीत्यधिकानि किञ्चिद्विशेषाधिकानि'** १५८१ **'परिक्षेपेण बहुमध्यदेशभागे द्वादश योजनानि बाहल्येन तदनन्तरं च मात्रया मात्रया प्रदेशपरिहान्या'** परिहीयमानं परिहीयमानं **'सर्वेषु चरमपर्यन्तेषु द्वौ क्रोशौ बाहल्येन सव्वजंबूणयामए'** त्ति सर्वात्मना जाम्बूनदामया **'अच्छे'** इत्यादि विशेषणवृन्दं प्राग्वत्, उक्तं च **"जंबूणयामयं जंबूपीढमुत्तरकुराइ पुव्वद्धे सीयाए। पुव्वेणं पंचसयायाम विक्खंभं पन्नरसेक्कासीए सोहीए परहि मज्ज बाहल्लं जोयण दुछक्कं १२ कमसो हायंतं तेसु दो कोसा २" 'सेण'**मित्यादि ते जम्बूपीठमे**'कया' 'पद्मवरवेदिकया एकेन च वनखण्डेन सर्वतः सर्वासु'** दिक्षु **'समन्ततः'** सामस्त्येन **'परिक्षिप्तं' 'दोण्हंपि वण्णओ'** त्ति द्वयोरपि वेदिकावनखण्डयो वर्णकः प्राग्वद्वक्तव्यः।।१४३।।

(१४४) तस्स णं जम्बूपेढस्स चउद्दिसिं एए चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता, वण्णओ [१]जाव तोरणाइं ।।१४४।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य जम्बूद्वीपस्य चतुर्दिश्येकैकत्रिसोपानप्रतिरूपकभावेन चत्वारि त्रिसोपानप्रतिरूपकाणि प्रतिविशिष्टरूपाणि सोपानानि प्रज्ञप्तानि **'वण्णओ जाव तोरणा'** इति त्रिसोपानानां वर्णकस्तावद्वाच्यो यावत्तोरणानि वर्णनीयानि भवन्तीति।।१४४।।

(१४५) तस्स णं जम्बूपेढस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं मणिपेढिया पण्णत्ता, अट्ठजोअणाइं आयाम-विक्खम्भेणं, चत्तारि जोअणाइं बाहल्लेणं।।१४५।।

---

१. द्र.जीवा. ३।२८७।९१।।

'तस्स णं जंबूपीढस्से' त्यादि तस्य जम्बूद्वीपस्य **'बहुमध्यदेशभागेऽत्र मणिपीठिका प्रज्ञप्ता'** सा **'चाष्टौ योजनान्यायाम-विष्कम्भाभ्यां चत्वारि योजनानि बाहल्येन'** सर्वमणिमयी अच्छा यावत्प्रतिरूपा इत्यादि सर्वं वाच्यम्।।१४५।।

(१४६) तीसे णं मणिपेढिआए उप्पिं एत्थ णं जम्बू सुंदसणा पण्णत्ता, अट्ठ जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अद्धजोअणं उव्वेहेणं, तीसे णं खंधो दो जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अद्धजोअणं बाहल्लेणं, तीसे णं साला छ जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, बहुमज्झदेसभाए अट्ठ जोअणाइं आयामविक्खंभेणं साइरेगाइं अट्ठ जोअणाइं सव्वग्गेणं तीसे णं अयमेआरूवे वण्णावासे पं०–[1]वइरामया मूला रययसुपइट्ठिअविडिमा [2]जाव (अहिअ) मणणिव्वुइकरी पासाईआ दरिसणिज्जा०।।१४६।।

'तीसे ण' मित्यादि, तस्या **'मणिपीठिकाया उपरि बहुमध्यदेशभागेऽत्र जम्बूः सुदर्शना प्रज्ञप्ता'** सा **'चाष्टौ योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेनार्द्धयोजनमुद्वेधेन तस्या'** जम्ब्बाः **'स्कन्धो द्वे योजने ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन, अर्द्धयोजनं बाहल्येन तस्याः'** जम्ब्बाः **'शालेति'** ऊर्ध्वविनिर्गताशाखा **'षट् योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन बहुमध्यदेशभागेऽष्टौ योजनान्यायाम-विष्कम्भाभ्यां'** **'साइरेगाइं अट्ठजोयणाइं सव्वग्गेणं'** ति सा जंबूः सातिरेकाण्यष्टौ योजनानि **'सर्वाग्रेणोद्वेधोच्चैस्त्वपरिमाणमीलनेन'** **'तीसे ण'** मित्यादि तस्या जम्ब्वा **'अयमेतद्रूपो वर्णकव्यासो'** वर्णकविस्तरः **'प्रज्ञप्तस्तद्यथा वज्रमयानि मूलानि रजतमयी विडिमा'** बहुमध्यदेशभागे ऊर्ध्वं विनिर्गता शाखा **'जीवाभिगमे तु'** वज्रमय मूला रजतमय सुप्रतिष्ठित विडिमा इत्यादिरूपो वर्णको दृश्यते **'जाव अहियमणनिव्वुइकरी पासाईया दरसणिज्जा'** अत्र यावत्करणात्सर्वोऽप्यस्या वर्णकः प्रागुक्तचैत्यवृक्षवर्णकानुसारेण प्रत्येतव्यः, इत्थं वा वर्णको वाच्यस्तथाहि " मूला वइरामया से कंदो खंधो य रिट्ठवेरूलिओ

---

१. वइरामयमूलरयय०-V ।। २. द्र. जीवा. ३।६७२।।

सोवन्निया य साहा पसाह तह जायरूवा य।।१।। विडिमा राययवेरूलिय पत्त तवणिज्जपत्तविंटा से पल्लव अग्गपवाला जंबूणय राययाा तीसे।।२।। रयणमया पुप्फफला" इति।।१४६।।

(१४७) जंबूए णं सुदंसणाए चउद्दिसिं चत्तारि साला पं०। तेसि णं सालाणं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं सिद्धाययणे पण्णत्ते, कोसं आयामेणं अद्धकोसं विक्खम्भेणं, देसूणगं कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं, अणेगखम्भसयसण्णिविट्ठे जाव दारा पंचधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं जाव वणमालाओ, मणिपेढिआ पञ्चधणुसयाइं आयाम-विक्खम्भेणं अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं बाहल्लेणं, तीसे णं मणिपेढिआए उप्पिं देवच्छंदए पंचधणुसयाइं आयाम-विक्खम्भेणं, साइरेगाइं पंचधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, जिणपडिमावण्णओ [1]णेअव्वोत्ति। तत्थ णं जे से पुरत्थिमिल्ले साले, एत्थ णं भवणे पण्णत्ते, [2]कोसं आयामेणं एवमेव णवरमित्थ, सयणिज्जं [3]सेसेसु पासायवडेंसया सीहासणा य [4]सपरिवारा इति।।१४७।।

'जंबूए ण' मित्यादि जम्ब्वा: **'सुदर्शनायाश्चतुर्दिशि'** एकैकस्यां दिशि एकैकशाखा भावत**'श्चतस्र: शाला:'** शाखा: **'प्रज्ञप्ता:,' 'तासि णं सालाण'** मित्यादि, **'तासां'** शालानां **'बहुमध्यदेशभागेऽत्रान्तरे सिद्धायतनवर्णक:,' 'अणेगखंभसयसंनिविट्ठे'** इत्यादि सिद्धायतनवर्णक: प्राग्वत्तावद्वक्तव्यो **यावद् द्वाराणि पञ्चधनु: शतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेनै**तद्वर्णनमपि तावद्वाच्यं **'जाव वणमालाओ'** त्ति यावद्वनमालावक्तव्यता परिसमाप्ति: **'मणिपेढिय'** त्ति मणिपीठिका चात्र सिद्धायतनमध्ये वाच्या सा च **पञ्चधनु: शतान्यायामविष्कम्भाभ्यामर्द्धतृतीयानि धनु:शतानि बाहल्येन 'तीसे ण'** मित्यादि तस्या **'मणिपीठिकाया उपरि देवच्छन्दक:'** स च **'पञ्च धनु: शतान्यायाम-विष्कम्भाभ्यां**

१. द्र. जीवा ३/६७४-७७।। २. कोसं आयामेण - अकखत्रिबस नास्ति ।। ३. द्र. जीवा ३/६७३।।
४. अपरिवारा - कस।।

सातिरेकाणि पञ्चधनु:शतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन' 'जिणपडिमाण वण्णओ सव्वो नेयव्वो' त्ति देवच्छन्दकान्तर्जिनप्रतिमानामष्टोत्तरं शतमस्तीत्यादिरूपो जिनप्रतिमावर्णक: सर्वो नेतव्य: **'तत्थ णं जे से'** इत्यादि तत्र या सा **'पौरस्त्या'** पूर्वदिग्वर्त्तिनी **'शाला'** सूत्रे पुंस्त्वनिर्देश: प्राकृतत्वात्, **'अत्रैकं भवनं प्रज्ञप्तमेतच्चअनाहताभिधदेवावासयोग्यं ज्ञेयं' 'एमेव'** त्ति एवमेव सिद्धायतनवदेवास्य भवनस्य प्रमाणादि वाच्यं **'नवरमित्थ सयणिज्जं'** नवरमयं विशेषोऽत्र भवने शयनीयं **'सेसेसु पासायवडेंसगा'** इति शेषासु तिसृषु शाखासु प्रासादावतंसका वाच्या:, एकैकस्यां शाखायामेकैक: प्रासादावतंसक इत्यर्थ: [१]प्रासादावतंसकानामपि प्रमाणं सिद्धायतनसदृशं विज्ञेयं **'सीहासणा अपरिवार'** त्ति अत्र प्रसादेषु [२]सिंहासनान्यपरिवाराणि किमुक्तं भवति? एकैकस्य प्रासादावतंसकस्य मध्ये पञ्चधनु: शतायाम-विष्कम्भाऽर्द्धतृतीय धनु:शतबाहाल्या मणिमयी पीठिका तासां च मणिपीठिकानामुपरि प्रत्येकमनाहतदेवयोग्यं सर्वरत्नमय सिंहासनं भद्रासनरूपपरिवाररहितं वाच्यमिति।।१४७।।

(१४८) जम्बू णं बारसहिं पउमवरवेइआहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता वेइआणं [३]वण्णओ।।१४८।।

'जंबू ण' मित्यादि जम्बूस्सुदर्शनाभिधा**'द्वादशभि: पद्मवरवेदिकाभि: सर्वत:'** सर्वासु दिक्षु **'समन्तत:'** सामस्त्येन **'सम्परिक्षिता' 'वेइगाणं वण्णओ'** त्ति वेदिकानां वर्णक: स च प्राग्वद् वा दृष्टव्य:।।१४८।।

(१४९) जम्बू णं अण्णेणं अट्ठसएणं जम्बूणं तदद्धुच्चत्ताणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता तासि णं [४]वण्णओ, ताओ णं जम्बू छहिं पउमवरवेइआहिं

---

१. अत्र विशेषार्थं शान्ति० वृत्ति द्रष्टव्य।। २. सींहासनानि सपिरवाराणि शान्ति० वृत्ति।। ३. द्र. १।१०-११।। ४. द्र. जीवा. ३।६७९।।

संपरिक्खित्ता।।।१४९।।

'जंबू ण' मित्यादि जंबू: सुदर्शना **'अन्येन जम्बूनामष्टशतेनाष्टाधिक'**शतेन **'तदद्धुच्चत्तेणं'** ति तदर्द्धोच्चात्वादिप्रामाणानामित्यर्थ: **'सर्वत:'** सर्वासु दिक्षु **'समन्तत:'** सामस्त्येन **'सम्परिक्षिप्ता'** मूलजम्ब्वपेक्षयार्द्धप्रमाणत्वमासामेव तथाहि ता अष्टाधिकशतसंख्या जम्बव: प्रत्येकं चत्वारि योजनानि उच्चैस्त्वेन क्रोशमेकमवगाहेनैकं योजनमुच्च: स्कन्ध: क्रोशबाहल्येन स्कन्धस्त्रीणि योजनानि विडिमा सर्वाग्रेणोच्चैस्त्वेन चत्वारि योजनानि विष्कम्भतोऽपि चत्वारि योजनानि तत्रैकैका शाखा अर्द्धगव्यूतहीने द्वे द्वे दीर्घा क्रोशपृथुत्व: स्कन्ध इति भवन्ति सर्व सङ्ख्यया विष्कम्भत श्चत्वारि योजनानीति **'तासि णं वण्णओ'** ति तासां चाष्टोत्तरशतसङ्ख्यानां जम्बूनां वर्णको मूलजम्बूवद्वाच्य:, **'ताओ ण'** मित्यादि ता **'जम्बव: षड्भि: पद्मवरवेदिकाभि: सम्परिक्षिप्ता:'**।।१४९।।

(१५०) जम्बूए णं सुदंसणाए उत्तरपुरत्थिमेणं उत्तरेणं [1]उत्तरपच्चत्थिमेणं एत्थ णं अणाढिअस्स देवस्स चउण्हं सामाणिअसाहस्सीणं[2] चत्तारि जम्बूसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।।१५०।।

'जंबूएण' मित्यादि जम्ब्वा: **'सुदर्शनाया उत्तरपूर्वस्यामुत्तरस्यामुत्तर-पश्चिमायामेतासु** तिसृषु दिक्षु **'अनाहतस्य'** जम्बूद्वीपाधिपते**'र्देवस्य चतुर्णां सामानिकसहस्राणां'** योग्यानि चत्वारि जम्बूसहस्राणि प्रज्ञप्तानि ।।१५०।।

(१५१) तीसे णं पुरत्थिमेणं चउण्हं अग्गमहिसीणं चत्तारि जम्बूओ पण्णत्ताओ,–

दक्खिणपुरत्थिमे, दक्खिणेण तह अवरदक्खिणेणं च।
अट्ठ दस बारसेव य, भवन्ति जम्बूसहस्साइं।।१।।

---

१. उत्तरेणं पुरत्थिमेणं दक्खिणेणं-क । उत्तरेणं उत्तरपुरत्थिमेणं-जीवा. ३।६७०।। २. ०यदेव सा० कखत्रिस।

अणिआहिवाण पच्चत्थिमेण सत्तेव होंति जम्बूओ।
सोलस साहस्सीओ, चउद्दिसिं आयरक्खाणं।।२।।

'तीसे ण' मित्यादि, तस्या जम्ब्वा: **'पूर्वस्यां चतसृणामग्रं वरमहिषीणां योग्याश्चतस्रो जम्ब्व:' प्रज्ञप्ता: 'दक्षिणपुरत्थिमे'** गाहा-सुदर्शनाया जम्ब्वा इति सर्वत्र ज्ञेयं दक्षिणपूर्वस्यामभ्यन्तरपर्षदोऽष्टानां देवसहस्राणां योग्यान्**यष्टौ** जम्बूसहस्राणि, **'दक्षिणस्यां'** मध्यम पर्षदो **'दशानां'** देवसहस्राणां योग्यानि दश जम्बूसहस्राणि **'अवर दक्खिणेणं'** ति दक्षिणापरस्यां बाह्यपर्षदो द्वादशदेवसहस्राणां योग्यानि **'द्वादश'** जम्बूसहस्राणि भवन्ति **'अणियाहिवईण'** गाहा- **'पच्चत्थिमेण'** त्ति पश्चिमायां सप्तनामनीकाधिपतीनां योग्या: **'सप्तैव जम्ब्वो भवन्ति' 'चउद्दिसि'** ति ततश्चतुसृषु दिक्षु **'षोडशसहस्रसंख्या-नामात्मरक्षकाणां'** योग्यानि षोडश जम्बूसहस्राणीति गाथार्थ: ।।१५१।।

(१५२) जम्बूए णं तिहिं सइएहिं वणसंडेहिं सव्वओ समंता [१]संपरिक्खित्ता।।१५२।।

'जंबू ण' मित्यादि सा जम्बू: सुदर्शना **'त्रिभि: शततिकै'**र्योजनशतप्रमाणै **'र्वनखण्डै: सर्वत:'** सर्वासु दिक्षु **'समंतत:'** सामस्त्येन **'संपरिक्षिप्ता'** वनखण्डानां त्रिसंख्याकत्वमाभ्यन्तर-मध्य-बाह्यभेदादवशातव्यम्।।१५२।।

(१५३) जम्बूए णं पुरत्थिमेणं पण्णासं जोअणाइं पढमं वणसंडं ओगाहित्ता, एत्थ णं भवणे पण्णत्ते कोसं आयामेणं सो चेव [२]वण्णओ सयणिज्जं च, एवं सेसासुवि दिसासु भवणा।।१५३।।

'जंबुए णं पुरत्थिमेण' मित्यादि जम्ब्वा: सुदर्शनाया: पूर्वस्यां दिशि **'प्रथमं वनखण्डं पञ्चाशतं योजनान्यवगाह्यत्रैकं भवनं प्रज्ञप्तं'** तच्च **'क्रोशमेकमायामत:' 'सो चवे**

१. इतोऽग्रे [तं जहा- अब्भंतरएणं मज्झिमेणं बाहिरेणं] इति पाठ: V वर्तते। जीवा. ३।६८१ सूत्रेऽपि अस्ति। शावृ. मध्येऽपि - व्याख्यातमस्ति।। २. द्र. जीवा. ३।६७३।।

वण्णओ' त्ति स एव य: पूर्वदिग्वर्त्ति भवनसम्बन्धीवर्णक: स एवास्यापि बोद्धव्य इत्यर्थ:। '**सयणियं चे**' ति शयनीयं चात्र वाच्यं '**एवं सेसासु वि दिसासु भवणा**' इति एवं पूर्वदिशीव शेषास्वपि दिक्षु भवनानि वाच्यानि, इदमुक्तं भवति दक्षिण पश्चिमोत्तरदिग्वर्त्ति प्रथम वनखण्डेषु प्रत्येकं पञ्चाशत योजनेभ्य: परतो भवनं सशयनीयं भणनीयमिति।।१५३।।

(१५४) जम्बूए णं उत्तरपुरत्थिमेणं पढमं वणसण्डं पण्णासं जोअणाइं ओगाहित्ता, एत्थ णं चत्तारि पुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ, तंजहा-पउमा १, पउमप्पभा २, कुमुदा ३, कुमुदप्पभा ४, ताओ णं कोसं आयामेणं, अद्धकोसं विक्खम्भेणं, पंचधणुसयाइं उव्वेहेणं [1]वण्णओ ।।१५४।।

'**जंबूए ण**' मित्यादि जम्ब्वा: सुदर्शनाया **उत्तरपूर्वस्यामीशानकोणे** इत्यर्थ: '**प्रथमवनखण्डं पञ्चाशतयोजनान्यवगाह्यात्र चतस्र: पुष्करिण्य: प्रज्ञप्तास्तद्यथा पद्मा १ पद्मप्रभा २ कुमुदा ३ कुमुदप्रभा ४** पूर्वादिषु दिक्षु क्रमेणैताश्चतस्रोऽपि ज्ञेयास्ताश्च पुष्करिण्य: '**क्रोशमायामेनार्द्धक्रोशं विष्कम्भेन पञ्चधनु:शतान्युद्वेधेन वण्णओ**' त्ति 'अच्छाओ सण्हाओ' इत्यादि पुष्करिणीवर्णक: प्राग्वद्वाच्य:।।१५४।।

(१५५) तासि णं मज्झे पासायवडेंसगा कोसं आयामेणं अद्धकोसं विक्खम्भेणं, देसूणगं कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं [2]वण्णओ सीहासणा सपरिवारा, एवं सेसासु विदिसासु, गाहा-

पउमा पउमप्पभा चेव, कुमुदा कुमुदप्पहा।
उप्पलगुम्मा णलिणा, उप्पला उप्पलुज्जला।।१।।
भिंग भिगप्पभा[3] चेव, अंजणा कज्जलप्पभा।
सिरिकंता सिरिमहिआ, सिरिचंदा चेव सिरिनिलया।।२।।१५५।।

---

१. द्र. जीवा. ३।२८६।। २. द्र. जीवा. ३।६८३-८४।। ३. भिंगणिभा-कख जीवा.३।६८७।।

'तासि ण' मित्यादि, तासां पुष्करिणीनां **'मध्ये प्रासादावतंसको'** वाच्यः **'कोसमायामेण'** मित्यादि, स च प्रासादावतंसकः क्रोशमायामेना**'र्द्धक्रोशं विष्कम्भेन देशोनं क्रोशमुच्चैस्त्वेन' 'वण्णओ'** ति वर्णकश्चैतस्य जम्बूवृक्षदक्षिणपश्चिमादिशाखाभाविप्रसादवद्वाच्यः **'सीहासणं अपरिवारं'** ति तस्य प्रासादावतंसकस्य मध्ये सिंहासनमनाहृतदेवयोग्य-[१]मपरिवारं वेदितव्यं **'एवं सेसासु विदिसासु'** त्ति एवमिति यथा जम्ब्वा उत्तरपूर्वस्यां प्रथमं वनखण्डं पञ्चाशतं योजनान्यवगाह्य चतस्रः पुष्करिण्यः प्रोक्तास्तासां मध्ये चैकः प्रासादावतंसको भणितस्तथा शेषास्वपि तिसृषु विदिक्षु चतस्रः पुष्करिण्यस्तासामन्तराले चेकैकः प्रासादावतंसको वक्तव्यो नवरं पुष्करिणीनां नानात्वं तच्चेदं दक्षिणपूर्वस्यां पूर्वादिक्रमेण-**'उत्पल गुल्मा'** १ **नलिना** २ **उत्पला** ३ **उप्पलोज्वला** ४ दक्षिणापरस्यां **भृङ्गा** १ **भृङ्गनिभा** २ **अञ्जना** ३ **कज्जलप्रभा** ४ अपरोत्तरस्यां **श्रीकान्ता** १ **श्रीमहिता** २ **श्रीचन्द्रा** ३ **श्रीनिलया** ४ 'गाहा' इति षोडशानामपि वापीनां नामाभिधायिके इमे गाथे-**'पउमा पउमप्पभा'** चेवैत्यादिका प्रथमा **'भिंगा भिंगप्पभा चेवे'** त्यादिका द्वितीया गाथाद्वयमपि कण्ठ्यम्।।१५५।।

(१५६) जम्बूए णं पुरत्थिमिल्लस्स भवणस्स उत्तरेणं, उत्तरपुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स दक्खिणेणं, एत्थ णं, [२](महं एगं)कूडे पण्णत्ते, अट्ठ जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, दो जोअणाइं उव्वेहेणं मूले अट्ठ जोअणाइं आयाम-विक्खम्भेणं, बहुमज्झदेसभाए छ जोअणाइं आयाम-विक्खम्भेणं, उवरिं चत्तारि जोअणाइं आयाम-विक्खम्भेणं-

पणवीसट्ठारस बारसेव मूले अ [३]मज्झि उवरिं च।
सविसेसाइं परिरओ, कूंडस्स इमस्स बोद्धव्वो।।१।।

---

१. सपिरवारिण वाच्यानि, जीवानिजमेजपिरवारा णि-इति शांति० वृत्तौ।। २. एगेमहं - त्रि.ह्रीवृ.।। ३. मज्झमुवरिंच- V ।।

मूले वित्थिण्णे, मज्झे संखित्ते, उवरिं तणुए, सव्वकणगामए अच्छे वेइआवणसंड-वण्णओ[१] एवं सेसावि कूडा।।१५६।।

'जंबूए ण' मित्यादि जम्ब्वा: सुदर्शनाया: **'पूर्वदिग्भाविनो भवनस्योत्तरत: उत्तरपूर्वदिग्भाविन: प्रासादावतंसकस्य दक्षिणतोऽत्र महानेक: कूट: प्रज्ञप्त: स चाष्टौ योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन द्वे योजने उद्वेधेन मूलेऽष्टौ योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां बहुमध्यदेशभागे षट्योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यामुपरि चत्वारि योजनान्यायाम-विष्कम्भाभ्यामस्य'** कूटस्य मूलादौ परिरयमानं गाथया प्राह-**'पणवीसद्वारस बारसेवे'** त्यादि गाथा। व्याख्या - मूले सविशेषाणि सातिरेकाणि पञ्चविंशतियोजनानि मध्ये सविशेषाणि अष्टादश योजनानि, उपरि सविशेषाणि द्वादशयोजनानि परिरय: परिक्षेप: कूटस्यास्य बोद्धव्यस्तथा च सति मूले विस्तीर्णो मध्ये संक्षिप्त उपरितनुक: **'सव्वकणगामए'** त्ति सर्वात्मना कनकमय: **'अच्छे'** इत्यादि वर्णनं प्राग्वत् **'वेइया वणसंडवण्णओ'** त्ति स च कूट एकया पद्मवरवेदिकया एकेन च वनखण्डेन सम्परिक्षिप्त: पद्मवरवेदिकावनखण्डवर्णक: पूर्ववन्मन्तव्य: एतस्य च कूटस्योपरि बहुसमरमणीये भूमिभागे महदेकं सिद्धायतनं तच्च प्रागुक्तविडिमोपरि सिद्धायतनमिव वेदितव्यमित्याद्यत्रानुक्तमपि **'जीवाभिगमादवसेयं' 'एवं सेसा वि कूड'** त्ति एवमिति प्रथमकूटवच्छेषा अपि सप्तकूटा ज्ञातव्या:, एतेषां दिग्विभागस्त्वेवं ज्ञेयस्तथाहि-पूर्वदिग्भाविनो भवनस्य दक्षिणतो दक्षिणपूर्वदिग्भाविन: प्रासादावतंसकस्योत्तरतो द्वितीय: कूटस्तथा दक्षिणदिग्भाविनो भवनस्य पूर्वतो दक्षिणे पूर्वदिग्भाविन: प्रासादावतंकस्य पश्चिमायां दिशि तृतीयस्तथा दक्षिणदिग्भाविनो भवनस्य पश्चिमायां दक्षिणापरदिग्भाविन: प्रासादावतंसकस्य पूर्वतश्चतुर्थस्तथा पश्चिमदिग्भाविनो भवनस्य दक्षिणतो दक्षिणापरदिग्भाविन: प्रासादावतंसकस्योत्तरत: पञ्चमस्तथा पश्चिमदिग्भाविनो भवनस्योत्तरत

१. द्र. १।१०.१३।।

उत्तरपश्चिमदिग्भाविनः प्रासादावतंसकस्य दक्षिणतः षष्टस्तथोत्तरदिग्भाविनो भवनस्य पश्चिमायामुत्तरपश्चिमदिग्भाविनः प्रासादावतंसकस्य पूर्वतः सप्तमस्तथोत्तरदिग्भाविनो भवनस्य पूर्वतः उत्तरपूर्वदिग्भाविनः प्रासादावतंसकस्य परतोऽष्टमः कूट एतेषामप्युपरि प्रत्येकमेकैकं सिद्धायतनं वाच्यम्, उक्तं च - **'अट्ठुसह कूडसरिसा सव्वे जंबूणयामया भणिया तेसुवरिं जिणभवणा कोसपमाणपरमरम्मा'** इति।।१५६।।

(१५७) जम्बूए णं सुदंसणाए दुवालस णामधेज्जा पं०, तं०–

[1]सुदंसणा १ अमोहा २य, सुप्पबुद्धा ३ जसोहरा ४।
विदेहजम्बू ५ सोमणसा ६, णिअया ७ णिच्चमंडिया ८।।१।।
[2]सुभद्दा य ९ विसाला य १०, सुजाया ११ सुमणा १२ विआ।
सुदंसणाए जम्बूए, णामधेज्जा दुवालस।।२।।

'जंबूए ण' मित्यादि जम्ब्वाः **'सुदर्शनया द्वादशनामधेयानि प्रज्ञप्तानि'** तानि च गाथाभ्यां निवेदयति **'सुदंसणा'** गाहा, सुष्ठु शोभनं दर्शनं दृश्यमानता यस्या नयनमनोहारित्वात्सुदर्शना यथा च तस्याः शोभनं दर्शनं तथाग्रे स्वयमेव सूत्रकृद्भावयिष्यति **'अमोहा य'** इति मोघं निष्फलं न मोघा अमोघा अनिष्फला इत्यर्थस्तथाहि सा स्वस्वामिभावेन प्रतिपन्ना सती जम्बूद्वीपाधिपत्यमुपजनयति तदन्तरेण तद्विषयस्य स्वामिभावस्यैवायोगात्, ततोऽमोघेति २, **'सुप्पबुद्धा'** इति सुष्ठु अतिशयेन प्रबुद्धेव प्रबुद्धा मणिकनकरत्नानां निरन्तरं सर्वतश्चाकचिक्येन सर्वकालमुन्निद्रेति भावः ४, **'जसोहरा'** इति यशः सकलभुवनव्यापि धरतीति यशोधरा **'लिहादित्वादच'** जम्बूद्वीपो हि विदितमहिमा भुवनत्रयेऽप्यनया जम्ब्वोपलक्षितस्ततो भवति यथोक्तयशोधारित्वमस्याः ४, **'विदेहजंबू'** इति विदेहेषु जम्बूर्विदेहजम्बू विदेहान्तर्गतोत्तरकुरुकृतनिवासत्वात् ५, **'सोमणसा'** इति

१. द्र. जीवा. ३।६८९-९८।। २. भद्दा-अकखबस।।

सौमनस्यहेतुत्वात्सौमनस्या न हि ताः पश्यतः कस्यापि मनो दुष्टं भवति केवलं तां दृष्ट्वा प्रीतमनास्तां तदधिष्ठातारं च प्रशंसतीति ६, **'नियता'** इति सर्वकालमवस्थिता शाश्वतत्वात् ७, **'निच्चमंडिया'** इति नित्यमण्डिता सदा भूषितत्वात् ८, **'सुभद्दा य'** गाहा शोभन भद्रं कल्याणं यस्याः सा सुभद्रा सकलकालं कल्याणभागिनीत्यर्थः न हि तस्याः कदाचिदप्युपद्रवः सम्भवति महर्द्धिकेनाधिष्ठितत्वात् ९, **'विसाला य'** विशाला विस्तीर्णा आयामविष्कम्भाभ्यामुच्चैस्त्वेन चाष्टयोजनप्रमाणत्वात् १०, **'सुजाया'** इति शोभनं जातं जन्म यस्याः सा सुजाता विशुद्धमणिकनकरत्नमूलद्रव्यतया जन्मदोषरहितेति भावः ११, **'सुमणा इय'** इति शोभनं मनो यस्याः सकाशाद्भवति सा सुमनाः भवति हि तां पश्यतां महर्द्धिकानामपि मनः-शोभनमतिरमणीयत्वात् १२।। **'सुदंसणाए'** इत्यादि तान्येतानि **'सुदर्शनायाः जम्ब्वाः द्वादशनामधेयानि,'** इति गाथा युगलार्थः।।१५७।।

(१५८) जम्बूए णं अट्ठट्ठमंगलगा०।।१५८।।

'जंबूए णं अट्ठट्ठ मंगलगा' इति जम्ब्वाः सुदर्शनाया उपर्यष्टावष्टौ मङ्गलकानि वाच्यानि।।१५८।।

सम्प्रति सुदर्शनाशब्दप्रवृत्तिनिमित्तं पिपृच्छिषुरिदमाह-

(१५९) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–जम्बू सुंदसणा २?, गोअमा! जम्बूए णं सुदंसणाए अणाढिए णामं देवे जंबुद्दीवाहिवई परिवसइ महिड्ढीए, से णं तत्थ चउण्हं सामाणिअसाहस्सीणं [1]जाव आयरक्खदेवसाहस्सीणं, जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स, जंबूए सुंदसणाए, अणाढिआए रायहाणीए, अण्णेसिं च बहूणं देवाण य [2]जाव देवीण य विहरइ।।१५९।।

---

१. द्र. ४।१५१।। २. द्र. जीवा. ३।३५०।।

'से केणट्ठेणं भंते' इत्यादि प्रतीतं निर्वचनमाह- **'गोयमे'** त्यादि सुगमं **'नवरमणाढिए नामं देवे'** इति न आद्दता आदरक्रियाविषयीकृता: शेषा जम्बूद्वीपगता देवा येनात्मनोऽत्यद्भूतं महर्द्धिकत्वमीक्षमाणेन सोऽनाद्दत: सकलनिर्वचनभावार्थश्चायं यस्मादेवं **'महर्द्धिको'**ऽनाद्दत नाम देवो **'जम्बूद्वीपाधि'**पतिस्तत्र **'परिवसति'** ततस्तस्य समस्तापि स्फातिस्तत्र कृतावासेति सा सुदर्शना स चानाद्दत देव: किं कुर्वन्नास्ते? इत्याह **'से णं तत्थ चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं जावे'** त्ति यावत्करणात् 'चउण्हमग्गमहिसीणं सत्तण्हं अणियाहिवईण' मित्यादि पदसमूहपरिग्रहोऽर्थ: प्राग्वेदव, **'जंबूए सुदंसणाए'** इत्यादि जम्ब्बा: सुदर्शनाया: **'अनाद्दतायाश्च राजधान्या अन्येषां च बहुनां देवानां' 'जाव विहरइ'** ति यावत्करणात् 'आहेवच्चं भट्टित्त' मित्यादि पदोपादानम्।। १५९।।

अथानाद्दतदेवस्य राजधानीस्थानं प्रष्टुमिदमाह-

(१६०) कहि णं भंते! अणाढिअस्स देवस्स अणाढिआ णामं रायहाणी पण्णत्ता?, गोअमा! जंबुद्दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं जं चेव पुव्ववण्णिअं जमिगापमाणं तं चेव णेअव्वं, [१]जाव उववाओ अभिसेओ च निरवसेसो ❖ से तेणट्ठेणं गो०! एवं वुच्चइ अदुत्तरं णं च णं गोअमा! जंबूसुदंसणा जाव भुविं च ३ धुवा णिअआ सासया अक्खया जाव अवट्ठिआ❖।।१६०।।

'कहिणं भंते' इत्यादि सुगमं भगवानाह- **'गौतम! जम्बूद्वीपे'** द्वीपे **'मंदरस्य पर्वतस्योत्तरत:'** **'जं चेव'** त्यादि यदेव पूववर्णितयमिकयो: राजधान्या: प्रमाणं तदेवात्र नेतव्यं, यावदुपपातोऽभिषेकश्च निरवशेष:, उपलक्षणत्वाद्विभूषणा-व्यवसायजिनप्रतिमार्चन-सुधर्मागमादिक: सर्वोऽप्यर्थो यावद्वर्णितो भवति तावद्वर्णको वाच्य: **'से तेणट्ठेण'** मित्यादि

---

१. द्र. ४।१५१।। ❖❖ चिह्नद्वयम-ध्यवर्ति-पाठ: शांति० वृत्तौ १५८ सूत्र प्रान्ते वर्तते।।

निर्वचनवाक्यं स्पष्टं शाश्वतादिपदव्याख्या प्राग्वत् **'अदुत्तरं च णं गोयमा जाव'** त्ति इह यावत्करणात् **'जंबूए सुदंसणाए सासए नामधेज्जे पन्नत्ते'** इत्यादि ज्ञेयम् ।।१६०।।

अथोत्तरकुरुक्षेत्रनामनिमित्तं बुभुत्सुरिदमाह-

(१६१) ते केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ उत्तरकुरा २?, गोअमा! उत्तरकुराए उत्तरकुरू णामं देवे परिवसइ, महिड्ढीए [1]जाव पलिओवमट्ठिइए से तेणट्ठेणं गोअमा! एवं वुच्चइ उत्तरकुरा २, अदुत्तरं च णंति जाव सासए।।१६१।।

'स केणट्ठेण' मित्यादि, भगवानाह-**'गौतम! उत्तरकुरुषु २ उत्तरकुरू** रिति **'नाम्ना देव: परिवसति महर्द्धिको यावत्पल्योपमस्थितिक:' 'से तेणट्ठेण'** मित्यादि प्राग्वद्व्याख्येयम्।।१६१।।

अथ माल्यवन्नमगजदन्ताकृतिवक्षस्कारपर्वतवक्तव्यतामभिधित्सुरिदमाह-

(१६२) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे मालवंते णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?, गो०! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं, [2]णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं उत्तरकुराए पुरत्थिमेणं, कच्छस्स चक्कवट्टिविजयस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं महाविदेहे वासे मालवंते णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणवित्थिण्णे, जं चेव गंधमायणस्स पमाणं विक्खंभो अ, णवरमिमं णाणत्तं सव्ववेरुलिआमए अवसिट्ठं तं चेव [3]जाव गोअमा! नव कूडा पण्णत्ता, तंजहा–सिद्धाययकूडे०

सिद्धे य मालवंते उत्तरकुरु कच्छ सागरे रयए।
सीयाय [4]पुण्णभद्दे [5]हरिस्सहे चेव बोद्धव्वे।।१।।

'कहिणं भंते' इत्यादि क्व भदन्त! **'महाविदेहे वर्षे माल्यवन्नामा वक्षस्कारपर्वत:**

१. द्र. २।२४।। २. णेलमंतस्स-अब। एवमग्रेऽपि।। ३. द्र. ४।१०३-५।। ४. पुण्णाणामे-अकखबस।। ५. हरिकूडे-अकखत्रिबस।।

प्रज्ञप्तो?' भगवानाह-'**गौतम। मंदरस्य पर्वतस्य**' '**उत्तरपुरत्थिमेणं**' त्ति उत्तरपूर्वस्यामैशान्यामित्यर्थः, '**नीलवन्तो वर्षधराद्रे र्दक्षिणस्यामुत्तरकुरूणां पूर्वस्यां कच्छस्य चक्रवर्त्तिविजयस्य पश्चिमतोऽन्तरे महाविदेहे माल्यवानिति नाम्ना वक्षस्कार पर्वतः प्रज्ञप्तः**' स च किंभूत इत्याह- '**उत्तरदक्षिणायतः पूर्वपश्चिमविस्तीर्णः**' '**जं चेवे**' त्यादि यदेव '**गन्धमादनस्य**' प्रागुक्तस्वरूपस्य '**प्रमाणमु**'च्चत्वादि विष्कम्भश्च तदेवास्यापि वाच्यं तथाहि-'**तीसं जोयणसहस्साइं दोण्णिय नवुत्तरे जोयणसए छच्च एगूणविंसति भागे जोयणस्स आयामेण**' मित्यादि '**गयदंते संठाणसंठिए**' इति पर्यन्तं प्राग्वदेवावसेयं '**नवरं इमं णाणत्तं**' ति केवल गन्धमादनादत्रायं विशेषस्तमेवाह '**सव्व विरूलियामए**' त्ति अयं हि सर्वात्मना वैडूर्यमयः '**अवसिट्ठं तं चेव**' त्ति अवशिष्टं वेदिका-वनखण्ड-भूमिभागादिवर्णनं तावत्तदेव ज्ञेयं यावत्'**मालवंतेणं भंते वक्खार पव्वए कति कूडा पण्णत्ता**' इत्यन्तं कूटसंख्या प्रश्नसूत्रं निर्वचनं तु साक्षात्सूत्रेणैव दर्शयति '**गोयमे**'त्यादि व्यक्तं नवरं '**सिद्धे य**' गाहा।। व्याख्या-'**सिद्ध**' त्ति '**सिद्धायतनकूटं**' भीम इत्युक्ते भीमसेन ग्रहणवत् १, तथा '**मालवत्कूटं** २, **उत्तरकुरु कूटं** ३, **कच्छ कूटं** ४, **सागरकूटं** ५, **रुचककूटं** ६ पाठान्तरे रजतकूटं ६, **शीताकूटं** ७, **पुण्ण** त्ति **पूर्णभद्रं** नाम कूटं ८, '**हरि**' त्ति '**हरिस्सह**' कूटं ९, चैव बोद्धव्यम्।।१६२।।

अथ सिद्धायतनकूटवक्तव्यतामाह-

(१६३) कहि णं भंते! मालवंते वक्खारपव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?, गोअमा! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं, मालवंतस्स कूडस्स दाहिणपच्च-त्थिमेणं एत्थ णं सिद्धाययणे कूडे [पण्णत्ते] पंच जोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अवसिट्ठं तं चेव [1]जाव रायहाणी, एवं मालवंतकूडस्स उत्तरकुरुकूडस्स कच्छकूडस्स, एए चत्तारि कूडा

१. द्र. ४।४५-४७।।

दिसाहिं पमाणेहिं या [१]णेअव्वा कूडसरिसणामया देवा ।।१६३।।

'कहिणं भंते' इत्यादि, कव भदन्त! **'माल्यवति वक्षस्कार पर्वते सिद्धायतनकूटं प्रज्ञप्तं?'** स्वाम्याह -**'गौतम! मन्दरस्य पर्वतस्योत्तरपौरस्त्ये ईशानकोणे माल्यवत्कूटस्य दक्षिणपश्चिमायामत्र सिद्धायतनं नाम्ना कूटं प्रज्ञप्तं तच्च पञ्चशतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन' 'अवसिट्ठं तं चेव'** अवशिष्टं यदत्र नोक्तं मूलविष्कम्भादि तद्गन्धमादनसत्कसिद्धायतन-कूटवद्वेदितव्यं **'जाव रायहाणी'** ति यावद्वर्णकसूत्रसमाप्त्यनन्तरं राजधानीवक्तव्यता स्यादत्रापि कूटे केचिद्देवं वदन्त्यतस्तद्राजधानी सूत्रे उक्ता तत्त्वं पुनः केवलिनो विदन्ति **'एव'** मित्यादि एवमिति सिद्धायतनकूटवन् **'माल्यवत्कूटस्योत्तरकुरूकूटस्य कच्छकूटस्य'** च वक्तव्यताऽभिधातव्या **'एते चत्तारी'** त्यादि एतान्यन्तरोक्तानि सिद्धायतनकूटादीनि चत्वारि कूटानि **'दिग्भिर्मानैश्च'** समान्येव **'नेतव्यानि'** तथाहि-प्रथमं सिद्धायतन कूटं तच्च मेरोरूत्तर पूर्वस्यां दिशि मेरोः प्रत्यासन्नं तस्योत्तरःपूर्वस्यां दिशि द्वितीयं माल्यवत्कुटं तस्याप्युत्तरपूर्वस्यां दिशि तृतीयमुत्तरकुरूकूटं तस्याप्युत्तरपूर्वस्यां दिशि चतुर्थं कच्छकूटमेतानि चत्वार्यपि कूटानि विदिग्भावीनि हिमवंतकूटप्रमाणानि चातो भवति चतुर्णामपि कूटानां दिशामानेन च साम्यमिति **'कूडसरिसणामया देव'** त्ति एतेषु च कूटेषु सदृग्नामानो देवा भणनीयाः।।१६३।।

अथ सागरकूटस्य स्वरूपं पृच्छन्नाह-

(१६४) कहि णं भंते! मालवंते सागरकूडे नामं कूडे पण्णत्ते?, गोअमा! कच्छकूडस्स उत्तरपुरत्थिमेणं, रययकूडस्स दक्खिणेणं, एत्थ णं सागरकूडे णामं कूडे पण्णत्ते, पंच जोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अवसिट्ठं तं चेव सुभोगा देवी, रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं, रययकूडे भोगमालिणी देवी, रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं, अवसिट्ठा कूडा उत्तरदाहिणेणं णेअव्वा एक्केणं पमाणेणं ।।१६४।।

---

१. द्र. ४।४८-५२।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **भदन्त! माल्यवति सागरकूटनाम कूटं प्रज्ञप्तं?'** भगवानाह - **'गौतम! कच्छकूटस्योत्तर-पूर्वस्यां रजतकूटस्य दक्षिणस्यां दिश्यत्र प्रदेशे सागरकूटं नाम्ना कूटं प्रज्ञप्तं तच्च पञ्चयोजन शतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन अवशिष्टं'** विष्कम्भादि **'तथैव'** सिद्धायतनकूटवदवेत्यर्थः, यावत् **सुभोगा** नाम्नी चात्र **देवी** इयं हि दिक्कुमारी **'रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं'** त्ति अस्या राजधानी उत्तरपूर्वस्यां वाच्या **'रययकूडे'** इत्यादि एवं रजतकूटे **भोगमालिनी देवी**, इयमपि दिक्कुमारी, अस्या राजधानी [उत्तर] पूर्वस्यामिदं च कूटं सागरकूटस्योत्तरस्यां ज्ञेयं सागरकूटस्यैतस्माद्दक्षिणस्यामवस्थानात् **'अवसिट्ठा कूडा'** 'इत्यादि अवशिष्टानि कूटानि **उत्तरदक्षिणतो ज्ञेयानि** तथाहि-रूचककूटादुत्तरस्यां दिशि सप्तमं शीताकूटं तत्र शीतानाम देवी तस्याप्युत्तरस्यां दिशि पूर्णभद्रनामकमष्टमं कूटं तत्र पूर्णभद्रनामा देवः **'एक्केणं पमाणेणं' 'ति एकेनैव'** प्रमाणनेदमुक्तं भवति, एतानि सर्वाण्यपि कूटानि हिमवत्कूटसमानपरिमाणानि प्रत्येयानि।।१६४।।

अथ नवमकूट वक्तव्यतामाह-

(१६५) कहि णं भंते! मालवंते हरिस्सहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?, गोअमा! पुण्णभद्दस्स उत्तरेणं, णीलवंतस्स कूडस्स दक्खिणेणं एत्थ णं हरिस्सहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते, एगं जोअणसहस्सं उड्ढं उच्चत्तेणं, जमगपमाणेणं णेअव्वं[1], रायहाणी उत्तरेणं असंखेज्जदीवे अण्णंमि जम्बुद्दीवे दीवे उत्तरेणं बारस जोअणसहस्साइं[2] ओगाहित्ता, एत्थ णं हरिस्सहस्स देवस्स [3]हरिस्सहा णामं रायहाणी पण्णत्ता, चउरासीइं जोअणसहस्साइं आयाम विक्खम्भेणं, बे जोअणसयसहस्साइं पण्णट्ठिं च सहस्साइं छच्च [4]बत्तीसे जोअणसए परिक्खेवेणं, सेसं जहा चमरचंचाए रायहाणीए तहा पमाणं भाणिअव्वं[5], महिद्धीए महज्जुईए।।१६५।।

---

१. द्र. ४।११०।। २. °हस्सं-अ । °हस्सा-खत्रिबस।। ३. हरिकंता-अकखत्रिबसपृवृ.हीवृ.।। ४. छत्तीसे - त्रिपमु.। अशुद्धं प्रतिभाति बकार स्थाने छकारो जातः लिपिप्रमादात् । इति V पृ.५०० टि.७।। ५. द्र.भग.२।१२१.१३।९६।।

'कहि णं' मित्यादि क्व **'भदन्त! माल्यवति हरिस्सहकूटं नाम्ना कूटं प्रज्ञप्तं?'** स्वाम्याह-**'गौतम! पूर्णभद्रस्य कूटस्योत्तरस्यां नीलवत्कूटस्य दक्षिणतोऽत्रान्तरे हरिस्सह कूटं नाम्ना कूटं प्रज्ञप्तं तच्चैकं योजनसहस्रमूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन' 'जमगप्पमाणेणं णेयव्वं'** ति यमकाद्रिप्रमाणेन तुल्यपरिमाणमिदमपि ज्ञेयमित्यर्थः **'रायहाणी उत्तरेण'** मित्यादि अस्य हरिस्सहकूटाधिपस्य हरिस्सहदेवस्य राजधानी **'उत्तरेणं'** त्ति मेरोरुत्तरस्यां दिशि **'असंखेज्ज दीव'** त्ति तिर्यगसंख्येयान् द्वीपसमुद्रानतिक्रम्येत्यर्थः, **'अन्यस्मिञ्जम्बूद्वीपे उत्तरस्यां द्वादश-योजनसहस्राण्यवगाह्यात्र हरिस्सह'** नाम्नो **'देवस्य हरिकान्ता नाम राजधानी प्रज्ञप्ता'** सा च **'चतुरशीतिं योजनसहस्राण्याम-विष्कम्भाभ्यां' 'बे जोयणसय सहस्साइं'** ति द्वे योजनलक्षे **'पञ्चषष्टिं'** च **'योजन सहस्राणि'-'छच्च बत्तीसे जोयण सए'** त्ति षट्च योजनशतानि द्वात्रिंशदधिकानि २६५६३२ परिक्षेपेण **'सेसं जहा चमरचंचाए'** इत्यादि शेषं सभादिप्रमाणं यथा **श्रीभगवत्यां** चमरचञ्चायां राजधान्यां प्रत्यपादि तथाऽस्यामपि सभादीनां प्रमाणं भणितव्यं **'महिड्ढिए महज्जुतिए'** इति वाक्यैकदेशोपलम्भात् एवं संपूर्णवाक्यं वाच्यं 'हरिकंताए रायहाणीए हरिस्सहे नामं देवे महिड्ढिए महज्जुतिए महब्बले जाव परिवसति' इति।।१६५।।

(१६६) से केणट्ठे णं भंते! एवं वुच्चइ मालवंते वक्खारपव्वयए २?, गोअमा! मालवंते णं वक्खारपव्वए तत्थ तत्थ देसे तहिं २ बहवे [1]सरिआगुम्मा णोमालिआगुम्मा [2]जाव मगदंतिआगुम्मा, ते णं गुम्मा दसद्धवण्णं कुसुमं कुसुमेंति, जे णं तं मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स बहुसमरमणिज्जं भूमिभागं वायविधुअग्गसालामुक्कपुप्फपुंजोव-यारकलिअं करेंति मालवंते अ इत्थ देवे महिड्ढीए [3]जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोअमा! एवं वुच्चइ, अदुत्तरं च णं [4]जाव णिच्चे ।।१६६।।

---

१. सेरि° V।। २.द्र. १।१० ।। ३. द्र. १।२४।। ४. द्र. १।४७।।

'से केणट्ठेणं भंते' 'इत्यादि प्रश्ननिवर्चनसूत्रे सुबोधे नवरं **'सेरिया गुम्म'** त्ति सरिका गुल्मा नवमालिकागुल्मा यावत्करणात् कोरेण्टगुल्मा बन्धुजीवकगुल्मा मनोवद्यगुल्मा बीयकगुल्मा: कुष्टक गुल्मा: सिंदुवारगुल्मा जातिगुल्मा मुद्गरगुल्मा यूथिकागुल्मा मल्लिकागुल्मा वासन्तिका गुल्मा वस्तुलगुल्मा: कस्तुल गुल्मा: सेवालगुल्मा अगस्त्यगुल्मा मृगदन्तिकागुल्माश्चम्पकगुल्मा नवनीतिकागुल्मा: कुन्दगुल्मा महाकुन्दगुल्मा: सरिकादयो लोकत: प्रत्येतव्या:। गुल्मा नाम ह्रस्वस्कन्ध-बहुकाण्ड-पत्र-पुष्प-फलोपेतास्तत: सर्वत्र विशेषणसमास: सरिकादिकानां चेमास्तिस्र सङ्ग्रहणिगाथा **' सेरियए नोमालिय कोरंटय बंधुजीवत्र मणोज्जे। वीययवणकणवीरे कुंजे तह सिंदुवारे य।।१।। जाईमोग्गर तह जूहिया च तह मल्लिया च वासंती वत्थुल सेवालग त्थिमगदंति या चेव।।२।। चंपकजाई नव-नीइयाय कुंदे तहा महाकुंदे एवमणेगागरे हवंति गुम्मा मुणेयव्वा।।२।, 'ते णं गुम्मा'** इत्यादि तेऽनन्तरोक्ता णमिति वाक्यालङ्कारे गुल्मा **'दशर्द्धवर्ण'** -पञ्चवर्णं कुसुमं जातावेकवचनं **'कुसुमसमूहं कुसुमय'**न्त्युत्पादयन्तीति भाव: **'येन'** कुसुमोत्पादनेन **'माल्यवतो वक्षस्कारपर्वतस्य तं बहुसमरमणीयं भूमिभागं' 'वाय विधुते'** त्यादि वातेन विधुता: कम्पिता वातविधुतास्ताश्च ता **'अग्रशाखाश्च'** वातविद्युता -ग्रशाखास्ताभि र्मुक्तो य: **'पुष्पपुञ्ज:'** स **'एवोपचार:'** पूजा य: स तथा तेन **'कलितो'** य: स तथा **'तं कुर्व्वन्ति'** ते गुल्मा इति गम्यं, ततो माल्यमस्तीति माल्यवान् यदि वा **'माल्यवांश्चात्र देवो महर्द्धिको यावत्पल्योपमस्थितिक: परिवसति' 'से तेणट्ठेण'** मित्यादि पूर्ववत्।।१६६।।

अथ माल्यवद् गजदन्तगिरे: प्रत्यासन्नं विजयमादिं विधाय प्रदक्षिणया सर्वविजयस्वरूप -मभिधित्सु: पूर्वं कच्छ नाम्नो विजयस्य वक्तव्यता आह -

(१६७) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे कच्छे णामं विजए ण्णत्ते?, गोअमा! सीआए महाणईए उत्तरेणं, णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं,

चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं, मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे कच्छे णामं विजए पण्णत्ते उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणवित्थिण्णे पलिअंकसंठाणसंठिए गंगासिंधूहिं महाणईहिं वेयड्ढेण य पव्वएणं छब्भागपविभत्ते सोलस जोअणसहस्साइं पंच य बाणउए जोअणसए दोण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणं दो जोअणसहस्साइं दोण्णि अ तेरसुत्तरे जोअणसए किंचिविसेसूणे विक्खम्भेणं।।१६७।।

'कहि णं भंते' इत्यादि, क्व भदन्त! 'महाविदेह वर्षे कच्छो नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः?' स्वाम्याह-'गौतम! शीताया महानद्या उत्तरस्यां नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां चित्रकूटस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पश्चिमायां माल्यवतो वक्षस्कारपर्वतस्य पूर्वस्यामत्रान्तरे जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे कच्छ' इति 'नाम्ना विजयः' प्रज्ञप्तः किं विशिष्ट इत्याह 'उत्तरेत्यादि 'उत्तर दक्षिणायतः प्राचीन-प्रतीचीनविस्तीर्णः पर्यङ्कसंस्थानसंस्थितो गङ्गा-सिन्धुभ्यां महानदीभ्यां वैताढ्येन पर्वतेन षड्भिर्भागैः प्रविभक्तः' षड्भाग प्रविभक्तस्तथा 'षोडशयोजनसहस्राणि पञ्च' च योजनशतानि द्विनवत्यधिकानि १६५९२ द्वौ चैकोनविंशतिभागौ योजनस्यायामेन द्वे योजनं सहस्रे द्वे च योजनशते त्रयोदशोत्तरे' २२१३ 'किञ्चिद्विशेषोने विष्कम्भेन'।।१६७।।

(१६८) कच्छस्स णं विजयस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं वेअड्ढे णामं पव्वए पण्णत्ते, जे ण कच्छं विजयं दुहा विभयमाणे २ चिट्ठइ, तंजहा–दाहिणड्ढकच्छं च उत्तरड्ढकच्छं च।।१६८।।

'कच्छस्स ण' मित्यादि कच्छस्य 'विजयस्य बहुमध्यदेशभागेऽत्र वैताढ्यो नाम्ना पर्वतः प्रज्ञप्तः' 'ज ेणं' ति यो वैताढ्यो णमित्यलङ्कारे 'कच्छं विजयं द्विधा विभजमानस्तिष्ठति,' 'तद्यथा-दक्षिण कच्छं चोत्तर कच्छं च।।१६८।।

अथ दक्षिणार्द्धकच्छस्वरूपं निरुपयति -

(१६९) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे दाहिणड्ढकच्छे णामं विजए पं० ?, गोअमा! वेअड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणेणं, सीआए महाणईए उत्तरेणं, चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चथिमेणं मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे दाहिणड्ढकच्छे णामं विजए प०, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणवित्थिण्णे अट्ठ जोअणसहस्साइं दोण्णि अ एगसत्तरे जोअणसए एक्कं च एगूणवीसइभागं जोअणस्स आयामेणं, दो जोअणसहस्साइं दोण्णि अ तेरसुत्तरे जोअणस्सए किंचिविसेसूणे विक्खम्भेणं, [१]पलिअंकसंठाणसंठिए।।१६९।।

'कहि ण' मित्यादि प्रश्नवाक्यं गतार्थमुत्तरं स्वाम्याह **'गौतम! वैताढ्यस्य पर्वतस्य दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरस्यां चित्रकूटस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पश्चिमायां माल्यवतो वक्षस्कारपर्वतस्य पूर्वस्यामत्र जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहक्षेत्रे दक्षिणार्द्धकच्छो नाम्ना कच्छ: प्रज्ञप्त:'** स च किंभूत इत्याह-**'उत्तरे'** त्यादि, **'उत्तर-दक्षिणायत:' 'प्राचीन-प्रतीचीनविस्तीर्णोऽष्टौ योजनसहस्राणि द्वे च योजनशते एकसप्तत्युत्तरे'** ८२७१ **'एकं चेकोनविंशतिभागं योजनस्यायामेन द्वे योजनसहस्रे द्वे च योजनशते त्रयोदशोत्तरे'** २२१३ **'किञ्चिद्विशेषोने विष्कम्भत: पर्यङ्कसंस्थानसंस्थित:।।१६९।।**

(१७०) दाहिणड्ढकच्छस्स णं भंते! विजयस्स केरिसए आयारभावपडोआरे पण्णत्ते ?, गोअमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, [२]तं जहा-[३]जाव कत्तिमेहिं चेव अकत्तिमेहिं चेव। ।१७०।।

'दहिणड्ढकच्छस्से' त्यादि दक्षिणार्द्धकच्छस्य भदन्त! **'विजयस्य कीदृश आकारभाव प्रत्यवतार:'** स्वरूपसम्भव: **'प्रज्ञप्तो'** ? भगवानाह-**'गौतम! बहुसमरमणीयो**

१. पलियंकसंठिए- V।। १. तं जहा- V नास्ति।। २. द्र. २।१२२।।

भूमिभागः प्रज्ञप्तोऽत्र' च 'आलिंगपुक्खरेइ वा' इत्यादिको वर्णकस्तावद्वाच्यो यावत् कृत्रिमैरकृत्रिमैश्च मणिभिरुपशोभित इति वाक्यार्थः।।१७०।।

(१७१) दाहिणड्ढकच्छे णं भंते ! विजए मणुआणं केरिसए आयारभावपडोआरे पण्णत्ते?, गोअमा! तेसि णं मणुआणं छव्विहे संघयणे [1]जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति।।१७१।।

'दाहिण कच्छेण' मित्यादि दक्षिणकच्छे **विजये भदन्त! मनुजानां कीदृश आकार-भावप्रत्यवतारः प्रज्ञप्तो?** भगवानाह-गौतम! **'तेसिं मणुयाण'** मित्यादि पूर्ववद्व्याख्येयं ।।१७१।। सम्प्रति कच्छविजय-मध्यवर्त्तिः वैताढ्यवक्तव्यतां प्रतिपादयति-

(१७२) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे कच्छे विजए वेअड्ढे णामं पव्वए?, गोअमा! दाहिणड्ढ कच्छविजयस्स उत्तरेणं, उत्तरड्ढकच्छस्स दाहिणेणं, चित्तकूडस्स पच्चत्थिमेणं, मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं कच्छे विजए वेअड्ढे णामं पव्वए पण्णत्ते, तं जहा–पाईणपडीणायए उदीणदाहिणवित्थिण्णे दुहा वक्खारपव्वए पुट्ठे–पुरत्थिमिल्लाए कोडीए जाव दोहिवि पुट्ठे भरहवेअड्ढसरिसए[2] णवरं दो बाहाओ जीवा धणुपट्ठं च ण कायव्वं, विजयविक्खम्भसरिसे आयामेणं, विक्खम्भो उच्चत्तं उव्वेहो तहेव च [3]विज्जाहर सेढीओ तहेव, णवरं पणपण्णं २ विज्जाहरणगरावासा पं०, आभिओगसेढीए उत्तरिल्लाओ सेढीओ सीआए ईसाणस्स सेसाओ सक्कस्स, कूडा–

सिद्धे १ कच्छे २ खंडग ३, माणी ४ वेअड्ढ ५ पुण्ण ६ तिमिसगुहा ७।
कच्छे ८ वेसमणे वा ९ वेअड्ढे होंति कूडाइं।।१।। ।।१७२।।

---

१. द्र. २।१२३।। २. द्र. १।२३-४७।। ३. VJ[1], J[2] -विज्जाहरआभिओगसेठीओ-मु.।।

'**कहि ण**' मित्यादि, क्व '**भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे कच्छनाम्नि विजये वैताढ्यो नाम्ना पर्वतः प्रज्ञप्तः? भगवानाह-गौतम ! दक्षिणार्द्धकच्छविजयस्योत्तरस्यामुत्तरार्द्धकच्छविजयस्य दक्षिणस्यां चित्रकूटस्य पश्चिमायां मालवतो वक्षस्कारस्य पूर्वस्यामत्र प्रदेशे कच्छनाम्नि विजये वैताढ्यो नाम्ना पर्वतः प्रज्ञप्तः। पाईणे**' त्यादि '**पूर्वापरायात उत्तरदक्षिणविस्तीर्णो, द्विधाप्यग्रभागाभ्यां वक्षस्कारपर्वतस्पृष्टः**' एतदेवाह- '**पुरत्थिमिल्लाए**' इत्यादि पूर्वस्यां '**कोट्यां**' पौरस्त्यं चित्रकूटनामानं वक्षस्कारपर्वतं स्पृष्टः पाश्चात्यया कोट्या पाश्चात्यं माल्यवन्तं वक्षस्कारपर्वतं स्पृष्टो भरत वैताढ्येनातिदिशन्नाह '**भरहवेयड्ढसरिसके**' इति भरतवैताढ्यसदृशोऽयमपि प्रत्येयः '**नवर**'मित्यादि भरतवैताढ्यादत्रायं विशेषो '**द्वे बाहे जीवा धनुःपृष्टं च न कर्त्तव्यं विजयविष्कम्भसदृशमायामतो**' यावान् विजयस्य विष्कम्भस्तावान् वैताढ्यस्यायाम इत्यर्थः। '**विक्खंभो उच्चत्तं उव्वेहो तहेव**' त्ति विष्कम्भोच्चत्वे द्वेधा तथैव भरतवैताढ्यवदेवेत्यर्थः। '**विज्जाहर सेढीओ तहेव**' त्ति विद्याधरश्रेण्यावपि तथैव '**नवरि**' त्ति अत्रायं विशेषो भरतवैताढ्ये दक्षिणे श्रेणौ '**पञ्चाशद्विद्याधरनगरावासा उत्तरश्रेणौ च षष्ठिप्रमिता नगरावासाः**'। इह तु द्वयोरपि श्रेण्योः प्रत्येकं '**पणवन्नं**' त्ति '**पञ्चपञ्चाशत् पञ्चपञ्चाशद्विद्याधरनगरावासाः प्रज्ञप्ताः। आभियोगिकश्रेण्यौ**' च तत्रैवेहापि द्वे एव परं '**शीताया** उत्तरदिक्स्थायास्ता **ईशानेन्द्र**' लोकपालयोग्याः शेषाः '**शक्रलोकपाल**'योग्या इति विशेष एतदेव सूत्रकृदाह-'**अभियोगसेढीओ**' इत्यादि भावितार्थं '**कूडे**' त्ति अत्रापि नवकूटानि वक्तव्यानि तानि गाथया प्राह '**सिद्धे**' गाहा-'**सिद्ध**' त्ति सिद्धकूटं '**कच्छ**' त्ति दक्षिणकच्छार्द्धकूटं २ '**खंडक**' त्ति खण्डकप्रपात गुहा कूटं ३ '**माणी**' त्ति माणिभद्रकूटं ४ '**वैताढ्य कूटं**' ५ '**पुण्णत्ति**' पूर्णभद्रकूटं ६ '**तिमिस्र गुहा**' **कूटं** ७ '**कच्छ**' त्ति उत्तरकच्छार्द्धकूटं ८ '**वैश्रवण**'कूटं ९ '**वैताढ्ये भवन्ति कूटानि,**' अत्रायं भावः सर्वेष्वपि

विजयेषु ऐरावतक्षेत्रे च ये वैताढ्यास्तेषु द्वितीयाष्टम कूटे दक्षिणोत्तरार्द्धविजयादि सद्दगनाम्नी शेषाणि तु भरतवैताढ्यकूटनामकानीति उक्तं च **'एरावए विजएसु य दो दो जम्मुत्तरद्धं सरिनामा वेयड्ढेसु कूडा सेसा ते चेव जं भरहे'** इति।।१७२।।

अथोत्तरार्द्धकच्छस्वरूपं पृच्छन्नाह-

(१७३) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे उत्तरड्ढकच्छे णाम विजए पण्णत्ते?, गोअमा! वेयड्ढस्स पव्वयस्स उत्तरेणं, णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं, मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे [1]जाव सिज्झंति, तहेव णेअव्वं सव्वं।।१७३।।

'कहिण' मित्यादि प्रश्नवाक्यं स्पष्टं, स्वाम्याह **'गौतम! वैताढ्यस्य पर्वतस्योत्तरस्यां नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां मालवतो वक्षस्कारपर्वतस्य पूर्वस्यां चित्रकूटस्य वक्षस्कार पर्वतस्य पश्चिमायामत्र जम्बूद्वीपे' 'जाव सिज्झंति'** ति इह यावत्करणात् 'महाविदेहे वासे उत्तरड्ढकच्छनामं विजए पण्णत्ते उत्तरदाहिणायते' इत्यादि सर्वं प्रागुक्तं सूत्रं 'जाव सिज्झंति' एतदन्तं वाच्यं **'तहेव णेयव्वं सव्वंति'** तथैव दक्षिणार्द्धकच्छवदुत्तरार्द्धकच्छेऽपि सर्वं स्वरूपं नेतव्यम्।।१७३।।

अथ सिन्धुकुण्डस्वरूपं निरूपयति-

(१७४) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे उत्तरड्ढकच्छे विजए सिंधुकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते?, गोअमा! मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, उसभकूडस्स पच्चत्थिमेणं, णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णितंबे, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे उत्तरड्ढकच्छविजए सिंधुकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते, सट्ठिं जोअणाणि आयाम

१. ४।१६९-७१।।

विक्खंभेणं [1]जाव भवणं अट्ठो रायहाणी अ णेअव्वा । भरहसिंधुकुंडसरिसं सव्वं णेअव्वं, जाव तस्स णं सिंधुकुण्डस्स दाहिणिल्लेणं तोरणेणं सिंधुमहाणई पवूढा समाणी उत्तरड्ढकच्छविजयं एज्जेमाणी २ सत्तहिं सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ अहे तिमिसगुहाए वेअड्ढपव्वयं दालयित्ता दाहिणकच्छविजयं एज्जेमाणी २ चोद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं समग्गा दाहिणेणं सीयं महाणइं समप्पेइ, सिंधूमहाणई पवहे अ मूले अ भरहसिंधुसरिसा पमाणेणं [2]जाव दोहिं वणसंडेहि संपरिक्खित्ता।।१७४।।

'कहि ण' मित्यादि प्रश्नवाक्यं गतार्थं भगवानाह-'गौतम! माल्यवतो वक्षस्कारपर्वतस्य पूर्वस्यां ऋषभकूटस्य पश्चिमायां नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दाक्षिणात्ये नितम्बेऽत्र जम्बूद्वीपे द्वीपे उत्तरार्द्धकच्छविजये सिन्धुकुण्डं नाम्ना कुण्डं प्रज्ञप्तं' तच्च 'षष्टियोजनान्यायाम-विष्कम्भाभ्यां' 'जाव भवणं' ति यावत्करणात्परिध्यादिकं सर्वं भणित्वा सिन्धुदेवीयोग्यं भवनं वाच्यम् 'अट्ठो' त्ति नामान्वर्थो 'राजधानी च नेतव्यात्रातिदेशमाह' 'भरह सिंधुसरिसं सव्वं नेयव्वं' ति प्रागुक्तभरतसिन्धुसदृशं सर्वं वक्तव्यं याव'त्तस्य कुण्डस्य दाक्षिणात्येन तोरणेन सिन्धु र्महानदी प्रव्यूढा सती उत्तरार्द्धं कच्छविजयं' 'एज्जेमाणी' ति परियती परिगच्छन्ती २ 'सप्तभि: सलिलासहस्रै: समग्रा दक्षिणदिशा शीतां महानदीं सम्प्राप्नोति सिन्धु र्महानदी प्रवाहे कुण्डान्निर्गमस्थाने मूले शीता' प्रवेशे च 'भरतोक्तसिन्धुसद्क्प्रमाणेन' ज्ञातव्या। इयमपि तथैव तावद्वर्णनीया 'यावद् द्वाभ्यां वनखण्डाभ्यां सम्परिक्षिप्ता।।१७४।।

इदानीमृषभ कूट स्वरूपं प्रतिपादयिषुरिदमाह

(१७५) कहि णं भंते! [3]उत्तरड्ढकच्छविजए उसभकूडे णामं पव्वए पण्णते?, गोअमा! सिंधुकुंडस्स पुरत्थिमेणं गंगाकुण्डस्स पच्चत्थिमेणं, णीलवन्तस्स वासहरपव्वयस्स

१. द्र. ४।३७।। २. द्र. ४।३७।। ३. उत्तरड्ढकच्छे-अकखत्रिबस। एवमग्रेऽपि।।

दाहिणिल्ले णितंबे, एत्थ णं उत्तरड्ढकच्छविजए उसहकूडे णामं पव्वए पण्णत्ते, अट्ठ जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं तं चेव पमाणं [1]जाव रायहाणी से णवरं उत्तरेणं भाणिअव्वा।।१७५।।

'कहि ण' मित्यादि क्व **'भदन्त! उत्तरार्द्धकच्छविजये ऋषभकूटो नाम्ना पर्वतः प्रज्ञप्तः'**? भगवानाह-**'गौतम! सिन्धुकुण्डस्य पूर्वस्यां गङ्गाकुण्डस्य पश्चिमायां नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दाक्षिणात्येन नितम्बेऽत्रान्तरे उत्तरार्द्ध कच्छे ऋषभ कूटो नाम्ना पर्वतः प्रज्ञप्तः'** स **चाष्टौ योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन 'तं चेव पमाणं'** ति तदेव प्रमाणमस्य वाच्यं यद्भरतसम्बन्धिन ऋषभकूटस्य पूर्वमवादीदिति **'जाव रायहाणी' से'** त्ति तावत् सर्वं वाच्यं यावत्से तस्य ऋषभकूटदेवस्य राजधानी भणितव्या **'नवरमुत्तरेणं'** ति केवलमियं मेरोरूत्तरस्यां दिशि वाच्येत्यर्थः ।।१३५।।

अथ गङ्गाकुण्डस्वरूपमावेदयन्नाह -

(१७६) कहिं णं भंते! उत्तरड्ढकच्छे विजए गंगाकुण्डे णामं कुण्डे पण्णत्ते?, गोअमा! चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं, उसहकूडस्स पुरत्थिमेणं, णीलवन्तस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णितंबे, एत्थ णं उत्तरड्ढकच्छे गंगाकुण्डे णामं कुण्डे पण्णत्ते, सट्ठिं जोअणाइं आयाम-विक्खम्भेणं तहेव जहा सिंधू [2]जाव वणसंडेण य संपरिक्खित्ता।।१७६।।

'कहि ण'मित्यादिप्रश्नसूत्रं प्रकटं निर्वचनं तु भगवानाह-गौतम! **'चित्रकूटस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पश्चिमायां ऋषभकूटस्य पर्वतस्य पूर्वस्यां नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दाहिणात्ये नितम्बेऽत्र प्रदेशे उत्तरार्द्धकच्छविजये गंङ्गाकुण्डं नाम्ना कुण्डं प्रज्ञप्तं।'** तच्च **'षष्ठिं योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां' 'तहेवे'**त्यादि तथैवात्र वर्णकसूत्रं वक्तव्यं **'यथा**

१. द्र. १।५१।। २. द्र. ४।१७४।।

सिन्धुकुण्ड' वक्तव्यतावसरे उक्तं **'यावद् द्वाभ्यां वनखण्डाभ्यां सम्परिक्षिप्तम्।।१७६।।**

अथ कच्छविजयनामनिमित्तं बुभुत्सुः पृच्छति-

(१७७) [१]से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ कच्छे विजए कच्छे विजए?, गोअमा! कच्छे विजए वेअड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणेणं, सीआए महाणईए उत्तरेणं, गंगाए महाणईए पच्चत्थिमेणं, सिंधूए महाणईए पुरत्थिमेणं दाहिणड्ढकच्छविजयस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं खेमाणामं रायहाणी पं० विणीआरायहाणीसरिसा भाणिअव्वा, तत्थ णं खेमाए रायहाणीए कच्छे णामं राया समुप्पज्जइ, महया हिमवंत जाव सव्वं भरहोवणयं भाणिअव्वं निक्खमणवज्जं सेसं सव्वं भाणिअव्वं [२]जाव भुंजए माणुस्सए सुहे, कच्छे णामधेज्जे अ, कच्छे इत्थ देवे महड्ढीए जाव पलिओवमट्ठिईए परिवसइ, से एएणट्ठेणं गोअमा! एवं वुच्चइ कच्छे विजए कच्छे विजए जाव णिच्चे ।।१७७।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि, अथ केनार्थेन **'भदन्त! एवमुच्यते कच्छो विजयः २'** इति भगवानाह-**'गौतम! कच्छे'** नाम्नि विजये वैताढ्यस्य पर्वतस्य दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरस्यां गङ्गाया महानद्याः पश्चिमायां सिन्धोर्महानद्याः पूर्वस्यां दक्षिणार्द्धकच्छविजयस्य बहुमध्यदेशभागे **'एत्थ णं'** ति **'अत्रान्तरे क्षेमा नाम राजधानी प्रज्ञप्ता'** सा च **'विनीता राजधानीसदृग् भणितव्या,' 'तत्थ ण'** मित्यादि तत्र **'क्षेमा'**नाम्न्यां **'राजधान्यां कच्छो नाम्न राजा समुत्पद्यते' 'महया हिमवंतमलयमंदरे'** त्यादि राजवर्णक विशेषितं सर्वं **'भरहोवयणं'** ति भरत-साधनं **'भणितव्यम्,'** इदमुक्तं भवति यथाहि-प्राक् भरतस्य भरतसाधनमुक्तं तथात्र कच्छस्य राज्ञः कच्छविजयसाधनं वाच्यमिति तत्किं **'निष्क्रमणमपि'** वाच्यं? नेत्याह **'निक्खमणवज्ज'** 'मित्यादि निष्क्रमणवर्जं शेषं सर्वं

१. कहिणं भंते! खेमा णामं रायहाणी पण्णत्ता? गोयमा! - अब।। २. द्र. ३।१-१२१,२२६।।

भणितव्यं **'यावद्भुङ्क्ते ते मानुष्यानि सुखानि कच्छनामधेयः कच्छश्चात्र देवो महर्द्धिको यावत्पल्योपमस्थितिकः परिवसति' 'से तेणट्ठेण'** मित्यादि तदेतेनार्थेन **'गौतम! कच्छो विजयः कच्छो विजय'** इति **'जाव निच्चे'** ति इह यावत्करणात् 'अदुत्तरं च ण' मित्यादि सूत्रमध्येयम्।।१९९।।

साम्प्रतं प्रथमवक्षस्कारगिरिवक्तव्यतामाह-

(१७८) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे चित्तकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?, गोअमा! सीआए महाणईए उत्तरेणं, णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं, कच्छविजयस्स पुरत्थिमेणं, सुकच्छविजयस्स पच्चत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे चित्तकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणवित्थिण्णे सोलसजोअणसहस्साइं पंच य बाणउए जोअणसए दुण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणं, पंच जोअणसयाइं विक्खम्भेणं, नीलवंतवासहरपव्वयंतेणं चत्तारि जोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, चत्तारि गाउअसयाइं उव्वेहेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ उस्सेहोव्वेहपरिवुड्ढीए परिवड्ढमाणे २ सीआमहाणईअंतेणं पंच जोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, पंच गाऊअसयाइं उव्वेहेणं, अस्सखंधसंठाणसंठिए सव्वरयणामए अच्छे सण्हे जाव पडिरूवे उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसंडेहिं संपरिक्खित्ते, वण्णओ दुण्हवि।।१७८।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे चित्रकूटो नाम्ना वक्षस्कार पर्वतः प्रज्ञप्तः'**? भगवानाह- **'गौतम! शीताया महानद्या उत्तरस्यां नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां कच्छविजयस्य पूर्वस्यां सुकच्छविजयस्य पश्चिमायामत्रान्तरे जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे चित्रकूटो नाम्ना वक्षस्कारपर्वतः**

प्रज्ञप्तः स चोत्तरदक्षिणायतः पूर्वापरविस्तीर्णः षोडशयोजनसहस्राणि पञ्च योजनशतानि द्विनवत्यधिकानि' १६५९२ **'द्वौ चैकोनविंशतिभागौ योजनस्यायामेन पञ्चयोजन शतानि विष्कम्भेन' 'णीलवंत वासहर पव्वयंतेणं'** ति नीलवद्वर्षधरपर्वतसमीपे **'चत्वारि योजन शतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन चत्वारि गव्यूतशतान्युद्वेधेन' 'तयणंतरं च णमित्यादि'** ततोऽनन्तरं च **'मात्रया मात्रया'** स्तोकं स्तोकमु**'त्सेधोद्वेधपरिवृद्ध्या परिवर्द्धमानः 'सीयं महानदिंतेण'** ति शीतामहानदी समीपे **'पञ्चयोजन शतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन' 'पञ्च गव्यूतशतान्युद्वेधेन' 'आसखंधगे'** त्यादि अश्वस्कन्ध**'संस्थान-संस्थितः सर्वात्मना रत्नमयः' 'अच्छे सण्हे जाव पडिरूवे'** इति प्राग्वत्। **'उभओ पस्सि'** मित्यादि स चोभयोः पार्श्वयो**'र्द्वाभ्यां पद्मवरवेदिकाभ्यां द्वाभ्यां च वनखण्डाभ्यां सम्परिक्षिप्तः' 'वण्णओ दोण वि'** त्ति द्वयोरपि वेदिका वनखण्डयोर्वर्णको जगत्युपरिगतवेदिकावनखण्डवद् वक्तव्यः।।१७८।।

(१७९) चित्तकूडस्स णं वक्खारपव्वयस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते [१]जाव आसयंति।।१७९।।

'चित्तकुडस्स ण' मित्यादि चित्रकूटनाम्नौ **'वक्षस्कारपर्वतस्योपरि बहुसम रमणीयो भूमिभागः प्रज्ञप्तः'** पूर्ववदेवात्र सर्वं वाच्यं यावद्बहवोऽत्र वानमन्तरा देवा देव्यश्च क्रीडां कुर्वन्ति **'आसते'** इत्यादि।।१७९।।

अथ चित्रकूटे कूटवक्तव्यतामाह-

(१८०) चित्तकूडे णं भंते! वक्खारपव्वए कति कूडा पण्णत्ता?, गोअमा! चत्तारि कूडा पण्णत्ता, तंजहा–सिद्धाययणकूडे चित्तकूडे, कच्छकूडे, सुकच्छकूडे, [२]समा

---

१. द्र. ४।२।। २. समं - अकखत्रिबस।।

उत्तरदाहिणेणं परुप्परंति, पढमं सीआए उत्तरेणं, चउत्थए नीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं अट्ठो एत्थ णं चित्तकूडे णामं देवे महिड्ढीए [1]जाव रायहाणी सेत्ति ।।१८०।।

'चित्तकूडे ण' मित्यादि चित्रकूटे **'भदन्त! वक्षस्कारपर्वते कति कूटानि प्रज्ञप्तानि?'** स्वाम्याह- **'गौतम! चत्वारि कूटानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-सिद्धायतनकूटं १, चित्रकूटं २, कच्छकूटं ३, सुकच्छकूटं'** ४, चेति। एतानि च सर्वाणि षोडश वक्षस्कारगतानि कूटानि हिमवत्कूटसदृशप्रमाणानि अत आह **'समं उत्तरदाहिणेण'** मित्यादि एतत्कूटचतुष्टयमप्युत्तरदक्षिणेन वर्तमानं **'परस्परप्रमाणादिना'** समं तुल्यमिति प्रत्येतव्यं तेषु च द्वितीयतृतीयकूटे प्रथम-चतुर्थयोर्मध्ये इति प्रथमचतुर्थयोरेव स्थानं दर्शयति **'पढमए'** इति प्रथमः कूटः शीताया महानद्या उत्तरस्यां चतुर्थस्तु नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां तथा **'अट्ठो'** त्ति चित्रकूटनामनिमित्तभूतोऽर्थः **'से केणट्ठेण'** मित्यादिना प्राग्वत् प्रष्टव्यस्ततो गौतमेत्यादिना तावन्निर्वाच्यो यावत् **'एत्थ वी'** त्यादि अत्रापि **'चित्रकूटो नाम्ना देवो महर्द्धिकः'** परिवसति इत्यादि सर्वं तावद्वोद्धव्यं **'जाव रायहाणी से'** त्ति यावद्राजधानी से तस्य चित्रकूटदेवस्य वर्णिता भवतीति।।१८०।।

अथ द्वितीयविजयवक्तव्यतां व्यक्तीकुर्वन्नाह-

(१८१) कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सुकच्छे णामं विजए पण्णत्ते?, गोअमा! सीआए महाणईए उत्तरेणं णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं, गाहावईए महाणईए पच्चत्थिमेणं, चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सुकच्छे णामं विजए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए [2]जहेव कच्छे विजए तहेव सुकच्छे विजए, णवरं खेमपुरा रायहाणी सुकच्छे राया समुप्पज्जइ, तहेव

१. द्र. ४।५१-५२।। २. द्र. ४।१६७-७७।।

सव्वं।।१८१।।

'कहि णं' मित्यादि क्व 'भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे सुकच्छो नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः?' भगवानाह-'गौतम! शीताया महानद्या उत्तरस्यां नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां ग्राहावत्या महानद्याः पश्चिमायां चित्रकूटस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पूर्वस्यां' 'एत्थणं' ति अत्रान्तरे 'जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे सुकच्छो नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः' स च किं भूत इत्याह-'उत्तरदक्षिणायतः' 'जहेवे' त्यादि यथैव 'कच्छो विजयः' प्राग् 'व्यावर्णितस्तथैव सुकच्छो विजयो' वर्णनीयो नवरमयं विशेषः 'क्षेमपुराभिधानाऽत्र राजधानी' वाच्या 'सुकच्छो नाम्ना राजा समुत्पद्यत' इति 'तहेव सव्वं' ति अन्यत्षड्खण्डसाधनादिकं सर्वं तथैव भरताधिपभरतचक्रिवद्वक्तव्यम्।।१८१।।

अथ ग्राहवतीकुण्ड स्वरूपमभिधित्सुराह -

(१८२) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे गाहावइकुंडे णामं कुडे पण्णत्ते? गो० सुकच्छविजयस्स पुरत्थिमेणं, महाकच्छस्स विजयस्स पच्चत्थिमेणं, णीलवंतस्स वाहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णितम्बे, एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे गाहावइकुंडे णामं कुण्डे पण्णत्ते, जहेव रोहिअंसाकुण्डे तहेव [1]जाव [2]गाहावइदेवी भवणे।।१८२।।

'कहि णं' मित्यादि क्व 'भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे ग्राहवती कुण्डमिति नाम्ना कुण्डं प्रज्ञप्तम्?' स्वाम्याह-'गौतम! सुकच्छस्य विजयस्य पूर्वस्यां महाकच्छविजयस्य पश्चिमायां नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दाक्षिणात्ये नितम्बे' 'एत्थ णं' अत्रान्तरे 'जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे ग्राहवती कुण्डं नाम्ना कुण्डं प्रज्ञप्तमस्य' रोहितांशाप्रपातकुण्डेन सहातिदेशमाह-'जहेव रोहियंसा कुंडे तहेव जाव गाहावति देवी भवणे' इति अस्याः अयं भावो यथाहि पूर्वं रोहितांशा प्रपातकुण्डमायामविष्कम्भादिना वर्णितं

१. द्र. ४।४०-४१।। २. अबसपुवृ. गाहावाइदेवी भवणे - V शावृ.।।

तथेदमपि तावद्वर्णनीयं यावद् ग्राहवती देवी भवनमिति।।१८२।।

(१८३) तस्स णं गाहावइस्स कुण्डस्स दाहिणिल्लेणं तोरणेणं गाहावई महाणई पवूढा समाणी सुकच्छ महाकच्छविजए दुहा विभयमाणी २ अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा दाहिणेणं सीअं महाणइं समप्पेइ गाहावई णं महाणई पवहे अ मुहे अ सव्वत्थ समा पणवीसं जोअणसयं विक्खम्भेणं, अड्ढाइज्जाइं जोअणाइं उव्वेहेणं, उभओ पासिं दोहि अ पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसण्डेहिं जाव दुण्हवि वण्णओ[३] इति।।१८३।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य **ग्राहवती कुण्डस्य दाक्षिणात्येन तोरणेन ग्राहवती महानदी प्रव्यूढा सती सुकुच्छ महाकच्छविजयौ द्विधा विभजमाना विभजमानाऽष्टाविंशत्या सलिला सहस्रै: समग्रा दक्षिणदिशा शीतां महानदीं समवाप्नोति, ग्राहवती महानदी प्रवाहे मुखे च सर्वत्र समा पञ्चविंशतियोजनशतं विष्कम्भेनार्द्धतृतीयानि योजनानि उद्वेधेन-उण्डत्वेनोभयो: पार्श्वयो: पद्मवरवेदिकाभ्यां वनखण्डाभ्यां परिक्षिप्ता' 'दुण्ह य वण्णओ'** त्ति द्वयोरपि वर्णक: प्राग्वदेवाभिधातव्य:।।१८३।।

अथ तृतीयविजयस्वरूपं प्ररूपयन्नाह-

(१८४) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे महाकच्छे णामं विजये पण्णत्ते?, गोअमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं, सीआए महाणईए उत्तरेणं, [२]पम्हकूडस्स (वक्खार) पव्वयस्स पच्चत्थिमेणं, गाहावईए महाणईए पुरत्थिमेणं, एत्थ णं महाविदेहे वासे महाकच्छे णामं विजए पण्णत्ते, सेसं जहा कच्छविजयस्स जाव महाकच्छे इत्थ देवे महिड्ढीए अट्ठो अ [३]भाणिअव्वो।।१८४।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे महाकच्छो नाम्ना विजय:**

---

१. द्र.१।१०.१३।। २. वम्ह°- कखत्रियस। ब्रह्मकूट - पृवृ-।। ३. द्र. ४।१६७-७७।।

प्रज्ञप्तः?' स्वाम्याह-**'गौतम! नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरस्यां ब्रह्मकूटस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पश्चिमायां ग्राहावत्या महानद्याः पूर्वस्यामत्र महाविदेहवर्षे महाकच्छो नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः'** **'सेस'** मित्यादि शेषमायाम-विष्कम्भ-भूमिभाग-तत्रत्यमनुष्यस्वरूपवर्णनादि **'यथा कच्छविजयस्योक्तं'** तथास्याप्यवसेयं **'यावन्नामार्थप्रश्नाधिकारे'** **'महाकच्छोऽत्र देवो महर्द्धिकः'** परिवसति तेन **'अट्ठो भाणियव्वो'** त्ति महाकच्छनामार्थो भणितव्यः।।१८४।।

सम्प्रति द्वितीयवक्षस्कारस्वरूपमाह-

(१८५) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे पम्हकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?, गोअमा! णीलवंतस्स दक्खिणेणं सीआए महाणईए उत्तरेणं, महाकच्छस्स पुरत्थिमेणं कच्छावईए पच्चत्थिमेणं, एत्थ णं महाविदेहे वासे पम्हकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणवित्थिण्णे, सेसं जहा चित्तकूडस्स [१]जाव आसयंति।।१८५।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे ब्रह्मकूटो नाम्ना वक्षस्कार पर्वतः प्रज्ञप्तः?'** भगवानाह-**'गौतम्! नीलवतो वर्षधराद्रेर्दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरस्यां महाकच्छस्यविजयस्य पूर्वस्यां कच्छकावतीविजयस्य पश्चिमायामत्र महाविदेहे वर्षे ब्रह्मकूटो नाम्ना वक्षस्कारपर्वतः प्रज्ञप्तः स चोत्तरदक्षिणाायतः पाईणपडीणवित्थिण्णे'** त्ति पूर्वापरविस्तीर्णः **'सेस'**मित्यादि, शेषमायाम-विष्कम्भोद्वेधादि **'यथा चित्रकूटस्य'** वक्षस्कारपर्वतस्योक्तं तथास्यापि वाच्यं **'यावदत्र'** बहवो वानमन्तरा देवा-देव्य[२]**'चासते'**।।१८५।।

---

१. द्र. ४।१७८-७९।।

अत्र कूटसङ्ख्यामाह-

(१८६) पम्हकूडे चत्तारि कूडा पं० तं०-सिद्धाययणकूडे, पम्हकूडे, महाकच्छकूडे, कच्छकूडे एवं [1]जाव अट्ठो, पम्हकूडे इत्थ देवे महड्ढिए पलिओवमठिईए परिवसइ, से तेणट्ठेणं।।१८६।।

'बंभकूडे' त्यादि, ब्रह्मकूटे वक्षस्कारपर्वते **'चत्वारि कूटानि प्रज्ञप्तानि', 'तद्यथा', 'सिद्धायतनकूटं १ ब्रह्मकूटं २, महाकच्छकूटं ३, कच्छकावतीकूटं ४, एवं जाव अट्ठो'** त्ति एवं यावदर्थो ब्रह्मकूटनामनिमित्तभूतो वर्णितो भवति तावद्वाच्यं तत्र च ब्रह्मकूट इति नाम कथं? तत्राह-**'बंभकूडे'** इत्यादि ब्रह्मकूटे पल्योपमस्थितिको **'ब्रह्मकूटा'**भिधानो **'देवः परिवसति' 'से तेणट्ठेण'** मित्यादि प्राग्वत्।।१८६।।

अथ चतुर्थ विजय वक्तव्यतां पृच्छन्नाह-

(१८७) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे कच्छगावती णामं विजए पं०?, गो०! णीलवंतस्स दाहिणेणं, सीआए महाणईए उत्तरेणं, [2]दहावतीए महाणईए पच्चत्थिमेणं, पम्हकूडस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं महाविदेहे वासे कच्छगावती णामं विजए पं० उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणवित्थिण्णे सेसं जहा कच्छस्स विजयस्स जाव कच्छगावई अ इत्थ देवे।।१८७।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे कच्छकावती नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः?'** स्वाम्याह **'नीलवतो वर्षधराद्रेर्दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरस्यां ग्राहवत्या महानद्या पश्चिमायां ब्रह्मकूटस्य वक्षस्कारगिरेः पूर्वस्यामत्रान्तरे महाविदेहे वर्षे कच्छकावती नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः।'** स **'चोत्तरदक्षिणायतः प्राचीन-**

---

१. द्र. ४।१८०, ५१,५२।। १. दह° अकखत्रिबसपुवृ.हीवृ.। एवमग्रेऽपि।।

प्रतीचीनविस्तीर्णः' '**सेस**'मित्यादि शेषमवशिष्टं स्वरूपं '**यथाकच्छविजयस्या**'भिहितं तथैवास्यापि '**यावत्कच्छकावती चात्र देवः परिवसति।।१८७।।**

साम्प्रतं द्रहवतीकुण्डस्वरूपनिरुपणायाह-

(१८८) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे दहावई कुण्डे णामं कुण्डे पण्णत्ते?, गोअमा! आवत्तस्स विजयस्स पच्चत्थिमेणं, कच्छगावईए विजयस्स पुरत्थिमेणं, णीलवंतस्स दाहिणिल्ले णितंबे, एत्थ णं महाविदेहे वासे दहावईकुण्डे णामं कुण्डे पं० सेसं जहा गाहावईकुण्डस्स [1]जाव अट्ठो।।१८८।।

'**कहि णं भंते**' इत्यादि, क्व भदन्त! '**महाविदेहे वर्षे द्रहवती कुण्डं नाम्नां कुण्डं प्रज्ञप्तं?**' भगवचानाह-'**गौतम! आवर्त्तस्य विजयस्य पश्चिमायां कच्छकावती विजयस्य पूर्वस्यां नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दाक्षिणात्ये नितम्बेऽत्र च महाविदेहे वर्षे [2]ह्रदवतीकुण्डं नाम्ना कुण्डं प्रज्ञप्तं। शेषं यथा ग्राहवती कुण्डस्य**' वर्णनं तथास्यापि बोधव्यं। '**यावदर्थो**' द्रहवतीकुण्ड नाम निमित्तभूतो द्रहवती देवी स्वामिकत्वादुक्तः स्यात्।।१८८।।

(१८९) तस्स णं दहावईकुण्डस्स दाहिणेणं तोरणेणं दहावई महाणई पवूढा समाणी कच्छावई आवत्ते विजए दुहा विभयमाणी २ दाहिणेणं सीअं महाणइं समप्पेइ, सेसं जहा[3] गाहावईए।।१८९।।

'**तस्स ण**' मित्यादि तस्य '**द्रहवती कुण्डस्य दाक्षिणात्येन तोरणेन द्रहवती महानदी प्रव्यूढासती कच्छकावत्यावर्त्तविजयौ द्विद्या विभजमाना दक्षिणदिशा शीतामहानदीं समुपैति**' '**सेसं जहा गाहावईए**' त्ति शेषं प्रवहप्रवेशविस्तारोद्वेधादि यथा ग्राहवत्या उक्तं तथास्यापि प्रत्येयम्।। १८९।।

---

१. द्र. ४।१८२।। २. द्रहावती० शांति. वृत्तौ।। १. द्र. ४।१८३।।

अथ पञ्चमविजयस्वरूपं प्रतिपादयन्नाह –

(१९०) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे आवत्ते णामं विजए पण्णत्ते?, गोअमा! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं, सीआए महाणईए उत्तरेणं, णलिणकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं, दहावतीए महाणईए पुरत्थिमेणं, एत्थ णं महाविदेहे वासे आवत्ते णामं विजए पण्णत्ते, सेसं [१]जहा कच्छस्स विजयस्स।।१९०।।

'कहि ण' मित्यादि क्व **'भदन्त महाविदेहे वर्षे आवर्त्तो नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः?'** स्वाम्याह-**'गौतम! नीलवतो वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरस्यां नलिनीकूटस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पश्चिमायां द्रहवत्या महानद्याः पूर्वस्यामत्रान्तरे महाविदेहे वर्षे आवर्त्तो नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः।' 'सेसं जहा कच्छ विजयस्स'** त्ति शेषमुक्तव्यतिरिक्तं सर्वमपि वर्णनं यथा कच्छविजयस्योक्तं तथैवास्यापि **'यावदावर्त्तनामा चात्र देवोऽ'**वसेय इति।।१९०।।

अधुना तृतीयवक्षस्कारवक्तव्यतां निवेदयन्नाह-

(१९१) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे णलिणकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?, गो०! णीलवंतस्स दाहिणेणं, सीआए उत्तरेणं, [२]मंगलावइस्स विजयस्स पच्चत्थिमेणं, आवत्तस्स विजयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं महाविदेहे वासे णलिणकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणवित्थिण्णे, सेसं जहा चित्तकूडस्स जाव[३] आसयंति।।१९१।।

'कहि ण' मित्यादि क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे नलिनी कूटो नाम्ना वक्षस्कारपर्वतः प्रज्ञप्तः?'** भगवानाह **'गौतम! नीलवतो वर्षधरस्य दक्षिणस्यां शीताया**

---

१. द्र. ४।१६७-७७।। २. णंग° अब । एवमग्रेऽपि।। ३. द्र. ४।१७८-७९।।

महानद्या उत्तरस्यां मङ्गलावतीविजयस्य पश्चिमायामावर्त्तविजयस्य पूर्वस्यामत्रान्तरे महाविदेहे वर्षे नलिनी कूटो नाम वक्षस्कार पर्वतः प्रज्ञप्तः' स चो'त्तरदक्षिणयतः **पूर्वापरविस्तीर्णः' 'सेस'** मित्यादि शेषमायाम-विष्कम्भादि यथा चित्रकूटवक्षस्कारस्योक्तं तथैवत्रापि विज्ञेयं यावद्बहवो देवादेव्यश्चासते।।१९१।।

अऽत्र कूट संख्यां प्रश्नयन्नाह–

(१९२) णलिणकूडे णं भंते! कति कूडा पं०?, गोअमा! चत्तारि कूडा पण्णत्ता, तंजहा–सिद्धाययणकूडे, णलिणकूडे, आवत्तकूडे, मंगलावत्तकडे एए कूडा पञ्चसइआ रायहाणीओ उत्तरेणं ।।१९२।।

'नलिणि कूडे' त्यादि नलिनी कूटे **'भदन्त! कति कूटानि प्रज्ञप्तानि?'** भगवानाह–**'गौतम! चत्वारि कूटानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा सिद्धायतनकूटं १ नलिनीकूटं २, आवर्त्तकूटं ३, मङ्गलावर्त्तकूटं ४,' 'एए कूडा पंचसइय'** त्ति एतानि सर्वाण्यपि कूटानि पञ्चशत योजन प्रमाणानि **'रायहाणीओ उत्तरेण'** ति एतत्कूटाधिपदेवानां राजधान्यो मेरोरूत्तरस्यां दिशि वाच्याः।।१९२।।

साम्प्रतं षष्टविजयव्यतिकरं व्यञ्जयन्नाह–

(१९३) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे मंगलावत्ते णामं विजए पण्णत्ते?, गोअमा! णीलवंतस्स दक्खिणेणं, सीआए उत्तरेणं, णलिणकूडस्स पुरत्थिमेणं, पंकावईए पच्चत्थिमेणं, एत्थ णं मंगलावत्ते णामं विजए पण्णत्ते जहा कच्छस्स विजए तहा एसो भाणियव्वो [१]जाव मंगलावत्ते अ इत्थ देवे परिवसइ, से एएणट्ठेणं।।१९३।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे मङ्गलावर्तो नाम्ना विजयः**

---

१. द्र. ४।१६७-७७।।

प्रज्ञप्तः?' भगवानाह–**'गौतम! नीलवतो वर्षधरस्य दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरतः नलिनीकूडस्य पूर्वस्यां पङ्कावत्या महानद्या पश्चिमायामत्रान्तरे मङ्गलावर्त्तो नाम विजयः प्रज्ञप्तः।' 'जहा कच्छविजए'** इत्यादि यथा कच्छविजयः प्रमाणादिभिर्भणितस्तथैवैषोऽपि वाच्यो **'यावन्मङ्गलावर्त्तोऽत्र देवः परिवसति' 'से तेणट्ठेण'** मित्यादि, निवर्चनं प्राग्वत्।।१९३।।

अथ पङ्कवतीकुण्डस्वरूपमभिधातुमाह-

(१९४-१९५) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे पंकावई कुंडे णामं कुण्डे पण्णत्ते?, गोअमा! मंगलावत्तस्स पुरत्थिमेणं पुक्खलविजयस्स पच्चत्थिमेणं, णीलवंतस्स दाहिणे णितंबे, एत्थ णं पंकावई जाव कुण्डे पण्णत्ते तं चेव गाहावइकुण्डप्पमाणं जाव मंगलावत्तपुक्खलविजये[1] दुहा विभयमाणी २ अवसेसं [2]तं चेव जं[3] चेव गाहावईए।।१९४-१९५।।

'कहिणं' मित्यादि क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे पङ्कवती कुण्ड नाम्ना कुण्डं प्रज्ञप्तं?'** स्वाम्याह–**'गौतम! मङ्गलावर्त्तविजयस्य पूर्वस्यां पुष्कलविजयस्य पश्चिमायां नीलवतो वर्षधरस्य दाक्षिणात्येनितम्बे' 'एत्थ णं'** ति अत्रान्तरे **'पङ्कवती कुण्डं प्रज्ञप्तं'**। **'तं चेव गाहावइ प्पमाणं'** त्ति तदेव ग्राहवतीकुण्डप्रमाणमस्यापि ज्ञेयं **'जाव मंगलावत्ते'** त्यादि यावन्मङ्गलावर्त्त **'पुष्कल विजयौ द्विधा विभजमाना २'** अत्र यावत्करणात् **'तस्य णं पंकावती कुंडस्स दाहिणिल्ले णं तोरणेणं पंकावती महानदी पवूढा समाणी'** इति द्दश्यं ग्रन्थान्तरे वेगवतीत्यस्या नाम पठ्यते **'अवसेसं तं चेव गाहावतीए'** त्ति अवशेषं शीताप्रवेशादि तदेवास्या अपि यद् ग्राहावत्या वर्णने उक्तमिति।।११५।।

साम्प्रतं सप्तमविजयाधिकारं बिभणिषुराह-

---

१. °लावत्त वि° मु.स.।। २. द्र. ४।१८३।। ३. जं चेव -V क पु.J नास्ति।।

(१९६) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे [१]पुक्खले णामं विजए पण्णत्ते?, गोअमा! णीलवंतस्स दाहिणेणं, सीआए उत्तरेणं, पंकावईए पुरत्थिमेणं, [२]एगसेलस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेण, एत्थ णं पुक्खले णामं विजए पण्णत्ते, जहा कच्छविजए तहा भाणिअव्वं [३]जाव पुक्खले अ इत्थ देवे महिड्ढिए पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से एएणट्ठेणं०।।१९६।।

'कहि णं' मित्यादि, क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे पुष्कलो नाम विजयः प्रज्ञप्तः?'** भगवानाह–**'गौतम! नीलवतो वर्षधरस्य दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरस्यां पङ्कवत्या महानद्याः पूर्वस्यामेकशैलस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पश्चिमायामत्रान्तरे पुष्कलो नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः' 'जहा कच्छविजये तहा भाणियव्व'** मिति, यथा कच्छविजये आयाम-विष्कम्भपरिमाणमनुष्यस्वरूपवर्णन-राजधानी-यावद्विजय सदृग्नामराजभवनमन्यदपि सर्वसाधारणं यद्वक्तव्यमुक्तं तथात्र वाच्यं **'यावत्पुष्कलोऽत्र देवः पल्योपमायुः परिवसतीति' 'से एएणट्ठेण'** मित्यादि निर्वचन सूत्रं प्राग्वदेव।। १९६।।

अथ चतुर्थवक्षस्कारवक्तव्यता प्रादुष्कुर्वन्नाह

(१९७) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे एगसेले णामं वक्खारपव्वए पं०?, गो०! पुक्खलचक्कवट्टिविजयस्स पुरत्थिमेणं, पोक्खलावतीचक्कवट्टिविजयस्स पच्चत्थिमेणं, णीलवंतस्स दक्खिणेणं, सीआए उत्तरेणं, एत्थ णं एगसेले णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, चित्तकूडगमेणं णेअव्वो [४]जाव देवा आसयंति।।१९७।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे एकशैलो नाम वक्षस्कारपर्वतः प्रज्ञप्तः?'** भगवानाह-**'गौतम! पुष्कलावर्त्तचक्रवर्त्तिविजयस्य पूर्वस्यां पुष्कलावती चक्रवर्त्तिविजयस्य पश्चिमायां नीलवतो वर्षधरस्य दक्षिणस्यां शीताया महानद्या**

१. पुक्खलावत्ते-मु। एवमग्रेऽपि।। २. एक्कसे°मु.।। ३. द्र. ४।१६७-७७।। ४. द्र. १।१३।।

उत्तरस्यामत्रान्तरे एकशैलो नाम वक्षस्कारपर्वतः प्रज्ञप्तः' 'चित्तकूडगमेणं णेयव्वं' ति चित्रकूटाभिधप्रथमवक्षस्कारवर्णनप्रकारेणायमपि ज्ञातव्यो यावद्बहवो **'देवा देव्यश्चासत'** इत्यादि।।१९७।।

(१९८) चत्तारि कूडा, तं०-सिद्धाययणकूडे, एगसेलकूडे पुक्खलकूडे पुक्खलावई कूडे कूडाणं तं चेव पंचसइअं परिमाणं [1]जाव एगसेले अ देवे महिड्ढीए।।१९८।।

'कूडा' इति कति कूटान्यत्रेत्यर्थप्रकाशकप्रश्नसूत्रानन्तरं भगवानाह–**'गौतम! चत्वारि कूटानि प्रज्ञप्तानि,'** एवमन्यत्रापि यत्र किञ्चित्पददर्शनात्तत्सम्बन्धि वाक्यं भण्यमानं न विरुद्धं प्रमीयते तत्र तद्भणनीयमेवेति ज्ञेयं **'तं जहा'** इति उपन्यस्तकूटोपदर्शनार्थः **'सिद्धायतणे'** त्यादि **'सिद्धायतनकूटं'** १ **'एकशैलकूटं'** २ **'पुष्कलकूटं'** ३ **'पुष्कलावतीकूटं'** ४ **'कूडाण'** मित्यादि, एतेषां च कूटानां **'तदेव पञ्चविंशतिकं प्रमाणं यावदेकशैलदेवो महर्द्धिकोऽत्रैक'** -शैलपर्वते परिवसति तेनैकशैलनामदेवाधिष्ठितत्वादयमेकशैल इति, राजधानी चास्य पूर्ववद्वाच्या, एवमन्यत्रापि यत्र पर्वताधिपतीनां राजधानीस्थानादिकं भणितुं युज्यते तत्तत्र सुधिया स्वयमुपयुज्य वाच्यं यतोऽत्र सूत्रे क्वचित्किञ्चित्साक्षादाख्यातं किञ्चिदतिदेशादिना क्वचित् किञ्चित्संक्षिप्तत्वान्नोक्तमप्यतस्तत्तत्र स्वयमेव परिभावनीयम्।।१९८।।

साम्प्रतमष्टमविजयस्वरूपं स्पष्टयन्नाह-

(१९९) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे पुक्खलावई णामं चक्कवट्टिविजए पण्णत्ते?, गोअमा!, णीलवंतस्स दक्खिणेणं, सीआए उत्तरेणं, उत्तरिल्लस्स सीआमुहवणस्स पच्चत्थिमेणं, एगसेलस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं महाविदेहे वासे पुक्खलावई णामं विजए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए, एवं जहा कच्छविजयस्स [2]जाव

१. द्र. ४।१८०।। २. द्र. ४।१६७-७७।।

पुक्खलावई अ इत्थ देवे परिवसइ, एएणट्ठेणं।।१९९।।

'कहि ण' मित्यादि क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे पुष्कलावती नाम्ना चक्रवर्त्तिविजयः प्रज्ञप्तः?'** भगवानाह–**'गौतम! नीलवतो वर्षधरस्य दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरस्यां शीता मुखवनस्य पश्चिमायामेकशैलस्य वक्षस्कारस्य पूर्वस्यामत्रान्तरे महाविदेहे वर्षे पुष्कलावती नाम्ना विजयः प्रज्ञप्तः'** स चो**'त्तर-दक्षिणायतः' 'एवं जहा कच्छविजयस्स'** त्ति एवं प्रागुक्तरीत्या यथा कच्छविजयस्यायाम विष्कम्भादिमनुजस्वरुपवर्णनादिकं च भणितं तथास्यापि वक्तव्यं **'यावत्पुष्कलावती चात्र देवः परिवसति' 'से तेणट्ठेण'** मित्यादि प्राग्वत्।।१९९।।

अथ शीतानद्युत्तरदिग्वर्त्तिशीतामुखवनस्वरूपं प्रचिकटयिषुराह-

(२००) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे सीआए महाणईए उत्तरिल्ले सीआमुहवणे णामं वणे पं०?, गोअमा! णीलवंतस्स दक्खिणेणं, सीआए उत्तरेणं पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पुक्खलावइचक्कवट्टिविजयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं सीआमुहवणे णामं वणे पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणवित्थिण्णे सोलसजोअणसहस्साइं पंच य बाणउए जोअणसए दोण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणं, [१]सीआमहाणइअंतेणं दो जोअणसहस्साइं नव य [२]बावीसे जोअणसए विक्खम्भेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ परिहायमाणे २ णीलवंतवासहरपव्वयंतेणं एगं एगूणवीसइभागं जोअणस्स विक्खम्भेणं, से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसण्डेणं संपरिक्खित्तं। वण्णओ सीआमुहवणस्स जाव देवा[३] आसयंति, एवं उत्तरिल्लं पासं समत्तं। विजया भणिआ। रायहाणीओ इमाओ-

---

१. सीयं महा० अकखत्रिबस । सीयएमहा० मु.।। २. तेवीसे - अकखत्रिबसपुवृ हीवृ.।। अत्र च तेवीसे इति पाठोऽशुद्ध :- शावृ-।। ३. द्र. १।१३।।

खेमा १ खेमपुरा २ चेव, रिट्ठा ३ रिट्ठपुरा ४ तहा।
खग्गी ५ मंजूसा ६ अवि अ, ओसही ७ पुंडरीगिणी ८।।१।।

[सोलस विज्जाहरसेढीओ] तावइआओ अभिओगसेढीओ, सव्वाओ इमाओ ईसाणस्स, सव्वेसु विजएसु कच्छवत्तव्यया जाव अट्ठो, रायाणो सरिसणामगा विजएसु, सोलसण्हं [1]वक्खारपव्वयाणं चित्तकूडवत्तव्वया जाव कूडा चत्तारि २ बारसण्हं णईणं गाहावइवत्तव्वया जाव उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं वणसण्डेहिं अ वण्णओ ।।२००।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व 'भदन्त! महाविदेहे वर्षे शीताया महानद्या उत्तरदिशिवर्तमानं शीतामुख वनं नाम वनं प्रज्ञप्तं?' भगवानाह- 'गौतम! नीलवतो वर्षधरस्य दक्षिणस्यां शीताया महानद्या उत्तरस्यां पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमायां पुष्कलावती चक्रवर्त्तिविजयस्य पूर्वस्यामत्र शीतामुखवनं नाम वनं प्रज्ञप्तं, तच्चोत्तर-दक्षिणायतं' 'पूर्वपश्चिमविस्तीर्णं षोडश योजनसहस्राणि पञ्च योजनशतानि द्विनवत्यधिकानि' १६५९२ 'द्वौ चैकोनविंशति भागौ योजनस्यायामेन शीतामहानद्यन्ते शीतानदी समीपे 'द्वे योजनसहस्रे नव च योजनशतानि त्रयोविंशत्यधिकानि' २९२३ 'विष्कम्भेन तदनन्तरं च मात्रया मात्रया परिहायमानं' २ 'नीलवद्वर्षधरसमीपे एकमेकोनविंशतिभागं योजनस्यैकां' कलामित्यर्थो 'विष्कम्भेन' 'से ण' मित्यादि तच्च वन'मेकया पद्मवरवेदिकयैकेन च वनखण्डेन सम्परिक्षिप्तं' 'वण्णओ' इत्यादि 'शीतामुखवनस्य' वर्णको बहुसमरमणीयो भूमिभाग इत्यादिकस्तावद्वक्तव्यो 'यावद्देवा आसते' इत्यादि, 'एव' मित्यादि एवमित्युक्तप्रकारेण शीताया महानद्या 'उत्तरदिग्वर्त्तमानं पार्श्वं समाप्तम्।' 'विजया भणिय' त्ति अष्टौ विजया भणिता: 'रायहाणीओ इमाओ' त्ति

---

१. पव्वया-पुवृ.।।

एषु च विजयेषु राजधान्यस्त्विमास्ता एव सङ्ग्रहश्लोकेन दर्शयति **'खेमे'** त्यादि **'क्षेमा १ क्षेमपुरा चैव २ रिष्टा ३ रिष्टपुरा ४ तथा खड्गी ५ मञ्जूषा ६ पि च। औषधी ७ पुण्डरीकिणी ८ एता'** नगर्यः कच्छादीनां विजयानां दक्षिणार्द्धमध्यमखण्डेषु विज्ञेयाः शीता-शीतोदयोरूत्तरदिग्भाविनां षोडशानामपि विजयानां दक्षिणार्द्धमध्यमखण्डेष्वेव राजधानीनां सत्त्वात् **'तावइयाओ अभिओगाओ सेढीओ'** त्ति तावन्त्य एवाभियोगिकश्रेण्यः इदमुक्तं भवति यथाहि भरतवैताढ्ये द्वे आभियोगिकश्रेण्यौ (णी) उक्ते तथैतेष्वपि विजयेषु प्रतिवैताढ्यमाभियोगिकश्रेणिद्वयं मन्तव्यमिति **'सव्वाओ इमाओ इसाणस्स'** त्ति इमाः सर्वा ईशानेन्द्रस्यैव सम्बन्धिन्यो मेरोरुत्तरेण तस्यैवाधिपत्यादिति।

अथ सुकच्छादिविजयेषु या वक्तव्यता नोक्ता तामतिदेशतः सूचयति **'सव्वेसु विजएसु कच्छवत्तव्वय'** ति सर्वेषु विजयेषु कच्छवक्तव्यता ज्ञेया यादृशी कच्छविजयस्य वक्तव्यता पूर्वं भणिता तादृश्येव सर्वविजयानां प्रत्येतव्येत्यर्थः **'जाव अट्ठो'** त्ति यावदर्थ इति नामार्थो वर्णितो भवति **'रायाणो सरिसनामगा विजएसु'** त्ति सर्वेष्वपि विजयेषु राजानो विजयनामसदृशनामान इत्यर्थः। **'सोलस वक्खारपव्वया चित्तकूडवत्तव्वया'** इति षोडश वक्षस्कारपर्वतानां वक्तव्यता यथा चित्रकूटवक्तव्यता तथा वाच्येत्यर्थः **'जावकूडा चत्तारिचत्तारी'** त्ति यावत्कूटानि प्रतिवक्षस्कारं चत्वारि चत्वारि वक्तव्यानि **'बारसण्ह'** मित्यादि द्वादशानां चान्तरनदीनां वक्तव्यता ग्राहवतीवक्तव्यतावद्विज्ञेया **'यावदुभयोः पार्श्वयोर्द्वाभ्यां पद्मवरवेदिकाभ्यां वनखण्डाभ्यां च'** सम्परिक्षिप्ता **'वर्णकः'** सर्वोऽपि प्राग्वदेव वाच्यः।।२००।।

अथ शीतादक्षिणदिग्वर्त्तिशीतामुखवनस्वरूपं पृच्छन्नाह–

(२०१) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सीआए महाणईए दाहिणिल्ले

सीयामुहवणे णामं वणे पण्णत्ते?, एवं जह चेव उत्तरिल्लं सीआमुहवणं तह चेव दाहिणंपि [१]भाणिअव्वं णवरं णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं, सीआए महाणईए दाहिणेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, वच्छस्स विजयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सीआए महाणईए दाहिणिल्ले सीआमुहवणे णामं वणे पं०, उत्तरदाहिणायए तहेव सव्वं, णवरं णिसहवासहरपव्वयंतेणं एगमेगूणवीसइभागं जोअणस्स विक्खम्भेणं, किण्हे [२]किण्होभासे जाव महया गन्धद्धणिं मुअंते [३]जाव आसयंति, उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं वणव्वण्णओ।।२०१।।

'कहि णं' मित्यादि [क्व] **'भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे शीताया महानद्या दक्षिणदिग्वर्त्तमानं शीतामुखवनं नाम वनं प्रज्ञप्तं?' 'एवं जहेवे'** त्यादि, एवमुक्तप्रकारेण यथैवो**'त्तराहं शीतामुखवनं'** भणितं **'तथैव दक्षिणात्यमपि भणितव्यं नवर'**मिति पूर्वस्मादत्रायं विशेषः **'निसहस्से'** त्यादि निषधस्य **'वर्षधरपर्वतस्योत्तरस्यां शीताया महानद्या दक्षिणस्यां पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमायां वत्सस्य विजयस्य पूर्वस्यामत्र शीताया महानद्या दक्षिणवर्त्तिशीतामुखवनं प्रज्ञप्तं'** तच्चो**'त्तरदक्षिणायतं' 'तहेव सव्वं'** ति सर्वमायामादि तथैवोत्तराहशीतामुखवनवद्वाच्यं **'नवरि'** त्ति अयं विशेषः **'निसहवस्सहरपव्वयंतेणं'** ति निषधवर्षधराद्रिसमीपे **'एकमेकोनविंशतिभागं योजनस्य विष्कम्भेन'** जगत्या वक्रत्वात् **'किण्हे किण्हो भासे'** इत्यादि वनवर्णनं यावदासते इत्यन्तं प्राग्वत् **'उभओ पस्सि'** मित्यादि उभयोः पार्श्वयो **'द्वाभ्यां पद्मवरवेदिकाभ्या'** मित्यादि सर्वं वाच्यं **'वर्णको'**ऽपि पूर्ववत्।। २०१।।

अथ नवमविजय स्वरूपमभिधित्सुराह–

(२०२) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे वच्छे णामं विजए पण्णत्ते?,

१. द्र. ४।२००।। २. किण्होभासे जाव आसयंति - V ।। ३. द्र. १।१३।।

गोअमा! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं, सीआए महाणईए दाहिणेणं, दाहिणिल्लस्स सीआमुहवणस्स पच्चत्थिमेणं, तिउडस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे वच्छे णामं विजए पण्णत्ते, तं चेव [१]पमाणं, सुसीमा रायहाणी १, तिउडे वक्खारपव्वए, सुवच्छे विजए, कुण्डला रायहाणी २, तत्तजला णई महावच्छे विजए, अपराजिआ रायहाणी ३, वेसमणकूडे वक्खारपव्वए, वच्छावई विजए, पभंकरा रायहाणी ४, मत्तजला णई रम्मे विजए अंकावई रायहाणी ५, अंजणे वक्खारपव्वए रम्मगे विजए, पम्हावई रायहाणी ६, उम्मत्तजला महाणई, रमणिज्जे विजए, सुभा रायहाणी ७, मायंजणे वक्खारपव्वए मंगलावई विजए, रयणसंचया रायहाणी ८, एवं जह चेव सीआए महाणईए उत्तरं पासं तह चेव दक्खिणिल्लं[२] भाणिअव्वं, दाहिणिल्लसीआमुहवणाइ, इमे वक्खारकूडा तं०–[३]तिउडे १ वेसमणकूडे २ अंजणे ३ मायंजणे ४, णईओ तत्तजला १, मत्तजला २, उम्मत्तजला ३, विजया तं०–

वच्छे सुवच्छे महावच्छे, चउत्थे वच्छगावई।
रम्मे रम्मए चेव, रमणिज्जे मंगलावई।।१।।
रायहाणीओ, तंजहा–सुसीमा कुण्डला चेव, अवराइय पहंकरा।
अंकावई पम्हावई सुभा रयणसंचया।।२।।

वच्छस्स विजयस्स णिसहे दाहिणेणं, [४]सीआ उत्तरेणं दाहिणिल्लसीदामुहवणे[५] पुरत्थिमेणं तिउडे पच्चत्थिमेणं सुसीमा रायहाणी पमाणं तं चेव, वच्छाणंतरं तिउडे तओ सुवच्छे विजए। एएणं कमेणं तत्तजला णई, महावच्छे विजए। वेसमणकूडे

१. द्र. ४।१६७-७७ ।।२. दक्खिणं-अकखत्रिबस।। ३. तिउडकूडे-अब । तिउडे कूडे-कखत्रि।। ४. सीआओ - J२।।
५. सीयावण मुहे-अकखत्रिबस।।

वक्खारपव्वए, वच्छावई विजए। मत्तजला णई रम्मे विजए। अंजणे वक्खारपव्वए रम्मए विजए। उम्मत्तजला णई, रमणिज्जे विजए। मायंजणे वक्खारपव्वए मंगलावई विजए।।२०२।।

'**कहि ण**' मित्यादि, क्व '**भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे वत्सो नाम्ना विजय: प्रज्ञप्त:?**' भगवानाह–'**गौतम! निषधस्य वर्षधरपर्वतस्योत्तरत: शीताया महानद्या दक्षिणस्यां दाक्षिणात्यस्य शीतामुखवनस्य पश्चिमायां त्रिकूटस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पूर्वस्यामत्रान्तरे जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे वत्सो नाम विजय: प्रज्ञप्त:**' '**तं चेव पमाणं**' ति तदेव कच्छसम्बन्धिप्रमाणमस्यापि 'सुसीमा नाम्नी चात्र '**राजधानी।।**'

अथ शेषवक्षस्कारविजयान्तरनदीनां क्रमादिपरिज्ञानार्थं नामान्याह '**तिउडे वक्खार पव्वए**' इत्यादि वत्सविजयादपरस्यां दिशि त्रिकूटो नाम्ना पञ्चमो वक्षस्कारपर्वत: एतस्मात्पश्चिमायां '**सुवत्सो**' नाम दशमो **विजयस्तत्र** च '**कुण्डला**' नाम '**राजधानी**' सुवत्सविजयात्प्रतीच्यां '**तप्तजलाभिधानान्तरनदी**' चतुर्थी अस्याश्च पश्चिमदिशि '**महावत्सनामा**' एकादशो '**विजयस्तत्रापराजिता राजधानी** महावत्सविजयात्पश्चिमतो '**वैश्रमणकूटो**' नाम षष्टो '**वक्षस्कारपर्वतस्ततोऽपरस्यां**' '**वत्सकावतीविजयो**' द्वादशस्तत्र'**प्रभङ्करा राजधानी,**' एतस्माद्विजयात्पश्चिमायां '**मत्तजलानामान्तरनदी**' पञ्चमी मत्तजलाया: पश्चिमायां जम्बूद्वीपे '**रम्यो विजयस्त्रयोदशस्तत्राङ्कावती राजधानी, रम्याद्विजयादपरस्यामञ्जनो वक्षस्कार**पर्वत: सप्तमस्ततश्च पश्चिमतो'**रम्यको विजय**श्चतुर्दशस्तत्र '**पक्ष्मावती राजधानी**' रम्यकविजयात्पश्चिमत '**उन्मत्तजलान्तरनदी**' षष्ठा उन्मत्तजलात: पश्चिमायां '**रमणीयो विजय:**' पञ्चदशस्तत्र '**शुभा**' नाम्ना '**राजधानी**'

रमणीयविजयात्पश्चिमतो **'मातञ्जनो वक्षस्कारपर्वतोऽष्टम'** एतस्मात्पश्चिमतो **'मङ्गलावती विजयः'** षोडशस्तत्र **'रत्नसञ्चया राजधानी' 'एवं जह चेवे'** त्यादि एवं प्रागुक्तप्रकारेण यथैव **'शीताया उत्तरपार्श्वं'** प्ररूपितं **'तथैव दक्षिणपार्श्वमपि भणितव्यं' 'दाहिणिल्ल सीयामुहवणा इमे वक्खारकूडा'** इति दाक्षिणात्य शीतामुखवनादिमे 'वक्खारकूड' त्ति कूट-कूटवतोरभेदोपचारादिमानि वक्षस्कारकूटानि वक्षस्कारपर्वता इत्यर्थस्तद्यथा-**'त्रिकूटो वैश्रमणकूटोऽञ्जनो मातञ्जनो'** यदिवा त्रिकूटादिषुवक्षस्कारेषु इमानि वक्षस्कारकूटानि वक्षस्कारनामकानि द्वितीयानि कूटानीत्यर्थः 'तंजहे' त्यादि स्पष्टमेव, एतेषु हि प्रथमं सिद्धायतननामकं कूटं तृतीय चतुर्थे तु स्वविभक्तविजयसदृग्नाम्नी एतत्कूटत्रयमत्रानुक्तमपि द्रष्टव्यं द्वितीयं तु वक्षस्कारनामकमेतच्च सूत्रे साक्षादुक्तमिति भावः।।

अथ वत्सादिविजयानां तद्राजधानीनां च सङ्ग्राहकं गाथाद्वयमाह-**'विजया'** इत्यादि, विजया **'वत्सः१सुवत्सो २ महावत्सो ३ वत्सकावती ४ रम्यो ५ रम्यक श्चैव ६ रमणीयो ७ मङ्गलावती'** ८ **'रायहाणीओ'** त्ति एतेषु अष्टासु विजयेषु इमा राजधान्य**'स्तद्यथा-सुसीमा १ कुण्डला २ चैवापराजिता ३ प्रभङ्करा ४ अङ्कावती'** च ५ **'पक्ष्मावती'** ६ च **'शुभा'** ७ **'रत्नसञ्चया'** ८ इति। एताश्च राजधान्यो विजयानामुत्तरार्द्धमध्यमखण्डेषु यतः शीताशीतोदयो दक्षिणदिग्वर्त्तिनां विजयानामुत्तरार्द्ध-मध्यमखण्ड एव राजधानी सद्भावात् **'वच्छस्से'** त्यादि, वत्सस्य **'विजयस्य निषधो वर्षधरो दक्षिणस्यां'** ज्ञेयः। **'शीता तूत्तरस्यां दक्षिणात्यशीतामुखवनं पूर्वस्यां त्रिकूटो वक्षस्कारः पश्चिमायामत्र'** विजये **'सुसीमा राजधानी'** वाच्या **'पमाणं तं चेव'** त्ति अस्याः प्रमाणं तदेव यद्विनीताया उक्तमित्यर्थः पुनर्विजयादीनां क्रममेव दर्शयति **'वच्छाणंतर'** मित्यादि वत्सविजयादनन्तरं **'त्रिकूटो वक्षस्कारस्ततः सुवत्सो एतेन क्रमेण' 'तत्तजला नइ'** त्ति

सुवत्सविजयादनन्तरं तप्तजलान्तरनदी ततो **'महावत्सो विजयस्ततो वैश्रमणकूटो वक्षस्कारस्ततो वत्सकावतीविजयस्ततो 'मत्तजलान्तरनदी'** ततो **'रम्यो विजयस्ततोऽञ्जनो वक्षस्कारपर्वतस्ततो रम्यको विजयस्तत श्चोन्मत्तजलानदी'** ततो **'रमणीयो विजय'**स्ततो **'मातञ्जनो वक्षस्कारपर्वत'** स्ततो **'मङ्गलावतीविजय'** इति। इत्युक्ता षोडशविजयवक्तव्यता।।२०२।।

साम्प्रतं सौमनसाभिधगजदन्ताकारवक्षस्कार -वक्तव्यतां प्रकाशयन्नाह–

(२०३) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सोमणसे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते?, गो० णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं, मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणपुरत्थिमेणं, [१]मंगलावईविजयस्स पच्चत्थिमेणं, देवकुराए पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे सोमणसे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते, उत्तरदाहिणायए पाईणपडीणवित्थिण्णे [२]जहा मालवंते वक्खारपव्वए तहा णवरं सव्वरययामए[३] अच्छे [४]जाव पडिरूवे णिसहवासहरपव्वयंतेणं चत्तारि जोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, चत्तारि गाऊअसयाइं उव्वेहेणं, सेसं तहेव सव्वं, णवरं अट्ठो से गोअमा! सोमणसे णं वक्खारपव्वए बहवे देवा य देवीओ अ सोमा सुमणा [५]सोमणसिया सोमणसे अ इत्थ देवे महिद्धीए [६]जाव परिवसइ से एएणट्ठेणं गोअमा! जाव णिच्चे।।२०३।।

'कहि णं भंते' इत्यादि, क्व **'भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे सौमनसो नाम्ना वक्षस्कारपर्वत: प्रज्ञप्त:?'** भगवानाह–**'गौतम! निषधस्य वर्षधरपर्वतस्योत्तरस्यां 'मंदरस्स पव्वयस्स दाहिण पुरत्थिमेणं'** ति मेरोराग्नेयामित्यर्थ:, **'मङ्गलावत्या विजयस्य पश्चिमायां देवकुरूणां पूर्वस्यां' 'इत्थ णं'** ति अत्रान्तरे **'जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे**

---

१. °वइस्स वि° अकखत्रिबस।। २. द्र. ४।१६२।। ३. °रयणामए - अत्रिबसहीवृ.।। ४. द्र. १।८ ।। ५. सोमणसिया- मु.प.शावृ.नास्ति।। ६. द्र. ४।१०३-४-७।।

सौमनसो नाम्ना वक्षस्कार पर्वतः प्रज्ञप्तः' स चो'त्तरदक्षिणायतः पूर्व पश्चिमविस्तीर्णः' **'जहा मालवंते'** इत्यादि यथा माल्यवान् वक्षस्कारः परिमाणादिना पूर्ववर्णितस्तथैवायमपि **'नवरि'** त्ति अयं विशेषः **'सव्वरयणामए'** त्ति अयं सर्वात्मना रजतमयः **'अच्छे'** इत्यादि पदव्याख्या प्राग्वत् **'निसहे'**त्यादि **'निषधवर्षधरसमीपे चत्वारियोजनशतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन चत्वारिगव्यूत शतान्युद्वेधेन' 'सेसं तहेव सव्वं'** ति शेषं विष्कम्भायामादि सर्वं तथैव माल्यवद्वक्षस्कारवदेवावसेयं **'नवरि अत्थो से'** त्ति केवलमर्थो नामनिमित्तभूतः **'से'** इति अस्य सौमनस्यैवं वाच्यं से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ सोमणसे वक्खार पव्वए २' इति प्रश्नः स्वयमेव कार्यस्ततो भगवानाह- **'गौतमे'** त्यादि गौतम! **'सौमनसे वक्षस्कार पर्वते बहवो देवा देव्यश्च सौम्या'** बहिर्वृत्या **'सुमनसोऽ'**न्तवृत्त्या **'सोमणस्सिया'** इति सौमनस्यिताः सञ्जात सौमनस्या इत्यर्थः परिवसन्त्यतः सुमनसामयमावास इति सौमनसो यदि वा **'सौमनस श्चात्र देवो महर्द्धिको यावत्परिवसति' 'से तेणट्ठेण'** मित्यादि प्राग्वत्।।२०३।।

अथात्र कूटवक्तव्यता माह–

(२०४) सोमणसे वक्खारपव्वए कइ कूडा पं० ?, गो०! सत्त कूडा पं०, तं०–

सिद्धे सोमणसे २ विअ, बोद्धव्वे मंगलावईकूडे ३।
देवकुरु ४ विमल ५ कंचण ६ वसिट्ठकूडे ७ अ बोद्धव्वे।।१।।

एवं सव्वे पंचसइआ कूडा, एएसिं पुच्छा दिसिविदिसाए भाणिअव्वा [१]जहा गंधमायणस्स, विमल-कंचणकूडेसु णवरिं देवयाओ सुवच्छा वच्छमित्ता य, अवसिट्ठेसु कूडेसु सरिसणामया देवा रायहाणीओ दक्खिणेणंति।।२०४।।

'सोमणसे' इत्यादि सौमनसे **'वक्षस्कार पर्वते भदन्त!' कति कूटानि प्रज्ञप्तानि?**

१. द्र. ४।१०६.।।

भगवानाह–**'गौतम! सप्त कूटानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-' 'सिद्धे'** गाहा व्यक्तैव भावार्थ स्त्वयं **'सिद्धकूटं १ सौमनसकूटं २, मङ्गलावतीकूटं ३, देवकुरुकूटं ४, विमलकूटं ५, काञ्चनकूटं ६, विशिष्टकूटं ७'** चेति। **'एवं सव्वे पंचसया कूडा'** इति एतानि सर्वाणि कूटानि पञ्चशतयोजनप्रमाणानीत्यर्थः **एतेसिं पुच्छाए'** त्ति एतानि कूटानि क्व सन्तीत्येवं रूपायां पृच्छायामेतानि कूटानि **'दिसिविदिसाए'** त्ति दिग्विदिशो यथोचितं वक्तव्यानि सुखावबोधयातिदिशति **'जह गंधमायणस्स त्ति'** यथा गन्धमादनवक्षस्कारस्य कूटानां दिग्विदिग्व्यवस्थितिः प्राग्भणिता तथैषामपि वाच्येत्यर्थः, **'विमलकंचणकूडे'** त्यादि, नवरं विमलकाञ्चनकूटयोः स्वामिन्यौ देवते सुवत्सा-वत्समित्राभिधे एते च दिक्कुमार्याविति, अवशिष्टेषु कूटेषु **'सरिसणामय'** त्ति कूटनामसदृगनामानो देवाः एतेषां च राजधान्यो दक्षिणस्यां ज्ञातव्याः।। २०४।।

अथ देवकुरुवक्तव्यतां विवक्षुरिदमाह-

(२०५) कहि णं भंते! महाविदेहे वासे देवकुरा णामं कुरा पण्णत्ता ?, गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं, णिसहस्स वासहरपव्वयणा उत्तरेणं, विज्जुप्पहवक्खारस्स-रपव्वयस्स पुरत्थिमेणं, सोमणसवक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं, एत्थ णं महाविदेहे वासे देवकुराणामं कुरा पण्णत्ता, पाईणपडीणायया उदीणदाहिणवित्थिण्णा[1] इक्कारस जोअणसहस्साइं अट्ठ य बायाले जोअणसए दुण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खम्भेणं, [2]जहा उत्तरकुराए वत्तव्वया जाव अणुसज्जमाणा पम्हगंधा मिअगंधा अममा सहा तेतली[3] सणिचारीति ६।।२०५।।

'कहिण' मित्यादि क्व **'भदन्त! महाविदेहे वर्षे देवकुरुवः प्रज्ञप्ताः?'** भगवानाह- **'गौतम! मन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणतो निषधस्य वर्षधरस्योत्तरतो**

१. अतः परं उत्तरकुरूप्रकरणे (४।१०८) अद्धचंदसंठिया इति पाठोऽपि विद्यत्ते। इति V पृ. ५०९ टि.१४।।
२. द्र. ४।१०८-९।। ३. सहि एताली-साणिचारी-अब।।

विद्युत्प्रभवक्षस्कारपर्वतस्य पूर्वस्यां सौमनसवक्षस्कारपर्वतस्य पश्चिमतः' 'एत्थ णं' ति अत्रान्तरे **'देवकुरवो नाम कुरवः'** प्रज्ञप्ताः सूत्रे चैकवचननिर्देश आकारान्तनिर्देशश्च प्राकृतत्वात्, ताश्च कथं भूता इत्याह **'पाईणे'** त्यादि **'पूर्वापरायता उत्तरदक्षिणविस्तीर्णा एकादशयोजनसहस्राण्यष्टौ च योजनशतानि द्विचत्वारिंशदधिकानि द्वौ चैकोनविंशति भागौ योजनस्य विष्कम्भेन' 'जहा उत्तर कुराए'** इत्यादि यथोत्तरकुरूणां वक्तव्यता तथा देवकुरूणामपि ज्ञेया **'जाव अणुसज्जण'** त्ति यावत् षड्विद्या मनुष्या अनुसजन्ति सन्तत्या अनुवर्त्तन्ते इत्येवंरूपाऽनुषजना **'पम्ह गंधा'** इत्यादि पदानां व्याख्या प्राग्वत्।। २०५।।

अथ चित्र-विचित्रकूटाभिधपर्वतद्वयवक्तव्यतामाह–

(२०६) कहि णं भंते! देवकुराए चित्तविचित्तकूडा णामं दुवे पव्वया प०?, गो०!, णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठचोत्तीसे जोअणसए चत्तारि अ सत्तभाए जोअणस्स अबाहाए सीओआए महाणईए पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं उभओ कूले एत्थ णं चित्तविचित्तकूडा णामं दुवे पव्वया पं०, एवं जच्चेव जमगपव्वयाणं [१]सच्चेव, एएसिं रायहाणीओ दक्खिणेणं।।२०६।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! देवकुरूषु चित्रविचित्रकूटौ नाम्ना द्वौ पर्वतौ प्रज्ञप्तौ?'** स्वाम्याह **'गौतम! निषधस्य वर्षधरपर्वतस्योत्तराहाच्चरमान्तादष्ट-योजनशतानि चतुस्त्रिंशदधिकानि चतुरश्च सप्तभागान् योजनस्याबाधया कृत्वाऽपान्तरे'** मुक्त्वेति भावः **'शीतोदाया महानद्याः पूर्वपश्चिमयो र्दिशोः' 'उभओ कूले'** त्ति उभयो कूलयोर**'त्रैतस्मिन् प्रदेशे चित्रविचित्रकूटौ नाम्ना द्वौ पर्वतौ प्रज्ञप्तौ' 'एवं जच्चेवे'** त्यादि एवमुक्तप्रकारेण यैव वक्तव्यता यमकपर्वतयोरुक्ता सैवेतयोरपि ततो विष्कम्भोद्वेधपरिघपरिक्षेपोच्चत्वोपरितनसमभूमिभागान्तर्गतप्रासादादिकं तदेवात्रापि वाच्यं

१. द्र. ४।११०-१४०।।

'चित्रविचित्रकूटौ चात्र देवौ' 'जाव रायहाणीओ दाहिणेणं' ति यावदेतयो राजधान्यौ मेरोर्दक्षिणस्यां वाच्यौ।। २०६।।

अथ शीतोदाविद्धह्रदपञ्चकस्वरूपं निर्दिदिक्षुः पूर्वं निषधद्रहवक्तव्यतां पृच्छन्नाह-

(२०७) कहि णं भंते! देवकुराए २ णिसहद्दहे णाम दहे पण्णत्ते?, गो०! तेसिं चित्तविचित्तकूडाणं पव्वयाणं उत्तरिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठचोतीसे जोअणसए चत्तारि अ सत्तभाए जोअणस्स अबाहाए सीओआए महाणईए बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं णिसहद्दहे णामं दहे पण्णत्ते, एवं जच्चेव नीलवंत-उत्तरकुरु-[1]चंदेरावय-मालवंताणं वत्तव्वा सच्चेव णिसह-देवकुरु-सूर-सुलस-विज्जुप्पभाणं णेअव्वा, रायहाणीओ दक्खिणेणंतिव।।२०७।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! देवकुरुषु २ निषधद्रहो नाम्ना द्रहः प्रज्ञप्तः?'** स्वाम्याह-**'गौतम! तयोश्चित्रविचित्रकूटयोः पर्वतयोरुत्तराच्चरमान्तादष्टौ योजनशतानि चतुस्त्रिंशानि चतुस्त्रिंशदधिकानि चतुरश्च सप्तभागान् योजनस्याबाधयाकृत्वा शीतोदाया महानद्या बहुमध्यदेशभागे अत्रान्तरे निषधद्रहो नाम्ना द्रहः प्रज्ञप्तः' 'एवं जच्चेवे'** त्यादि एवं प्रागुक्तरीत्यैवोत्तरकुरूवर्त्तिनां शीताविद्धानां नीलवदुत्तरकुरुचन्द्रैरावत-माल्यवतां ह्रदानां वक्तव्यता प्रोक्ता सैव **'निषध १, देवकुरू २, सुर ३, सुलस ४, विद्युत्प्रभाणां ५ नेतव्या।'** एतेन **'दक्षिणउत्तरायते'** इत्यादिना सूत्रेण तादृशायामादिमत्त्वं पद्मवरवेदिकाद्वयपरिक्षिप्तत्वं च यथा तेषां भणितं तथैषामपि भणितव्यं नामार्थश्च निषधादिवर्णोत्पलादियोगान्निषधादिदेवयोगाच्च निर्वाच्यस्तदधिपतिदेवानां **'राजधान्यश्च दक्षिणस्याम्।।२०७।।**

---

१. °रावण° V । जीवाभि. ३।६६७ सूत्रेऽपि एरावणद्दहे इति पाठो दृश्यते। जं. ४।१४२ सूत्रेऽपि एरावण पाठो लभ्यते।।

अथ देवकुरूषु कूटशाल्मलीपीठवक्तव्यतामाह-

(२०८) कहि णं भंते! देवकुराए २ कूडसामलिपेढे णामं पेढे पण्णत्ते?, गोअमा! मन्दरस्स पव्वयस्स दाहिणपच्चत्थिमेणं, णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं, विज्जुप्पभस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं सोमणसस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं सीओआए महाणईए पच्चत्थिमेणं देवकुरुपच्चत्थिमद्धस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं देवकुराए कुराए कुडसामलीए कूडसामली पेढे णामं पेढे पं० एवं जच्चेव जम्बूए सुंदसणाए वत्तव्वया सच्चेव सामलीएवि भाणिअव्वा णामविहूणा [1]गरुलदेवे रायहाणी दक्खिणेणं अवसिट्ठं तं चेवं [2]जाव देवकूरू अ इत्थ देवे पलिओवमट्ठिईए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गो०! एवं वुच्चइ देवकुरा २, अदुत्तरं च णं देवकुराए०।।२०८।।

'**कहि ण**' मित्यादि, क्व भदन्त! '**देवकुरुषु कूटशाल्मलीपीठं प्रज्ञप्तं?**' भगवानाह- '**गौतम! मंदरस्य पर्वतस्य दक्षिणपश्चिमायां निषधस्य वर्षधर पर्वतस्योत्तरस्यां विद्युत्प्रभस्य वक्षस्कारपर्वतस्य पूर्वस्यां सौमनसवक्षस्कारपर्वतस्य पश्चिमायां शीतोदाया महानद्याः पश्चिमायां देवकुरुपश्चिमार्द्धस्य बहुमध्यदेशभागेऽत्रान्तरे देवकुरुषु कूटाकारा**' शिखराकारा शाल्मलीकूटशाल्मली तस्या:'**कूट शल्मलीपीठं नाम्ना पीठं प्रज्ञप्तं एवं जच्चेव**'त्यादि एवं पूर्वोक्तविधिना यैव '**जम्ब्वाः सुदर्शनाया वक्तव्यता सैव शाल्मल्या अपि नामविहीना**' द्वादशनामवर्जा सर्वापि वक्तव्यता वाच्या सा चैवं संक्षेपतः इदं शाल्मलीपीठं रजतमयमायाम-विष्कम्भादिभिर्जम्बूपीठसमानमेतद्बहुमध्यभागे मणिपीठिका प्रागुक्तप्रमाणैव तदुपरि शाल्मली जम्बूतुल्यप्रमाणस्वरूपा अन्यैश्च शाल्मलीवृक्षैः सर्वदिक्षु परिक्षिप्ता तदनुवनखण्डपुष्करिणी

१. गरूलवेणुदेवे- V।। २. द्र. ४।१४३-१६१।।

कूटादिवर्णनमिति 'उक्तं च -"**देवकुरुपच्छिमद्धे गरुडावासस्स सामलिदुमस्स एसेव कमो नवरं पेढं कूडा य रययमया**" इति '**गरुलवेणुदेव**' त्ति अस्या अधिपतिर्गरुड सुपर्णकुमारजातीयो वेणुदेवो नाम्ना देवः '**रायहाणी दाहिणेणं**' त्ति अस्य राजधानी मेरोर्दक्षिणस्यां वाच्या '**अवसिट्ठं तं चेव**' त्ति अवशिष्टं '**से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ देवकुरा २**' इत्यादि तथैव '**यावद्देवकुरुरिति नाम्नात्र देवः पल्योपमस्थितिकः परिवसति**' से तेणट्ठेण' मित्यादि पूर्ववद्व्याख्येयम्।।२०८।।

अथ विद्युत्प्रभनामगजदन्ताकारवक्षस्कारवक्तव्यतां व्यक्तीकुर्वन्नाह-

(२०९) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे विज्जुप्पभे णामं वक्खारपव्वए पन्नते?, गो०! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं, मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणपच्चत्थिमेणं, देवकुराए पच्चत्थिमेणं, पम्हस्स विजयस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे विज्जुप्पभे वक्खारपव्वए पं०, उत्तरदाहिणायए एवं जहा[1] मालवंते णवरि सव्वतवणिज्जमए अच्छे जाव देवा आसयंति।।२०९।।

'**कहि ण**' मित्यादि, क्व '**भदन्त! जम्बूद्वीपे २ महाविदेहे वर्षे विद्युत्प्रभो नाम्ना वक्षस्कारपर्वतः प्रज्ञप्तः?**' भगवानाह - '**गौतम! निषधस्य वर्षधरपर्वतस्योत्तरस्यां मन्दरस्य दक्षिणपश्चिमायां नैरूत्यामित्यर्थः।**' '**देवकुरूणां पश्चिमायां पक्ष्मविजयस्य पूर्वस्यामत्र जम्बूद्वीपे २ महाविदेहे वर्षे विद्युत्प्रभो वक्षस्कारपर्वतः प्रज्ञप्तः**' स चो'त्तरदक्षिणायतः' '**एवं जहा मालवंतो**' एवं यथा माल्यवान् वक्षस्कार आयामविष्कम्भादिना पूर्वं वर्णितस्तथायमपि वर्णनीयो '**नवरमयं** '**सर्वात्मना तपनीयमय**' आरक्तस्वर्णमयः '**अच्छे**' इत्यादि प्राग्वत्ता '**वद्वक्तव्यं**' '**यावद्बहवो देवा**' अत्रा'**सते**' इत्यादि।।२०९।।

---

१. द्र. ४/१६२।।

अत्रैव कूटवक्तव्यतां पृच्छन्नाह-

(२१०) विज्जुप्पभे णं भंते! वक्खारपव्वए कइ कूडा पं०?, गो०! नव कूडा पं०, तं०–सिद्धाययणकूडे, विज्जुप्पभकूडे, देवकुरुकूडे, पम्हकूडे, कणगकूडे, सोवत्थिअकूडे, सीओआकूडे, सयज्जलकूडे, हरिकूडे।

सिद्धे अ विज्जुणामे, देवकुरू पम्ह कणग सोवत्थी।
सीओआ य सयज्जल[1] हरिकूडे चेव बोद्धव्वे।।१।।

एए हरिकूडवज्जा पञ्चसइआ णेअव्वा, एएसिं कूडाणं पुच्छाए दिसिविदिसाओ णेअव्वाओ[2]। जहा मालवन्तस्स हरिस्सहकूडे तह चेव हरिकूडे, रायहाणी जह चेव दाहिणेणं चमरचंचारायहाणी तह णेअव्वा कणग-सोवत्थिअकूडेसु वारिसेण-बलाहयाओ दो देवयाओ, अवसिट्ठेसु कूडेसु कूडसरिसणामया देवा रायहाणीओ दाहिणेणं।।२१०।।

'विज्जुप्पभे ण' मित्यादि विधुत्प्रभे **'भदन्त! वक्षस्कारे कति कूटानि प्रज्ञप्तानि?'** स्वाम्याह-**'गौतमा! नव कूटानि प्रज्ञप्तानि,' 'तद्यथा सिद्धायतन कूटं १, विधुत्प्रभ कूटं २, देवकुरु कूटं ३, पक्ष्म कूटं ४, कनक कूटं ५ सौवस्तिक कूटं ६, शीतोदाकूटं ७, शतद्वाल कूटं ८, हरिकूटं ८,'** भूयोऽप्येतानि सङग्रहगाथया प्राह-'सिद्धे' इत्यादि गाथा व्यक्तार्था, **'एतानि'** कूटानि **'हरिकूटवर्जानि पञ्चशतिकानि'** पञ्चशतयोजनप्रमाणनि हरिकूटं तु योजन सहस्रोच्चमिति **'एएसि'** मित्यादि एतेषां **'कूटानां'** क्व स्थितिरित्येवं रूपायां **'पृच्छायां दिशो विदिशश्च'** यथौचित्यं ज्ञातव्या, इयमत्र भावना-विद्युत्प्रभे मेरो नैॠत्यां मेरो: प्रत्यासन्नं सिद्धायतनकूटं तस्य नैॠत्यां क्रमेण द्वितीयं तृतीयं चतुर्थं च एतानि चत्वार्यपि कूटानि विदिग्भावीनि चतुर्थस्य दक्षिण पश्चिमायां षष्टस्योत्तरत: पञ्चमस्य दक्षिणत: क्रमेण षष्टादीनि,

---

१. सयजल° त्रि। सूर्यजलकूटम्-ह्रीवृ.।। २. द्र. ४।१६३-६५।।

अत्राष्टौ कूटानि हिमवत्कूटवत्परिभावनीयानि नवरमस्य विशेषमाह–**'जहा मालवंतस्से'** त्यादि यथा माल्यवतो गजदन्तगिरे **'हरिस्सहकूटं'** वर्णितं **'तथैवास्यापि हरिकूटं'** वर्णनीयं **'रायहाणी'** त्यादि राजधानी चास्य देवस्य दक्षिणतो **'यथैव चमरचञ्चा राजधानी तथैव ज्ञेया'** क्वचित् 'रायहाणी तह चेव दाहिणेण चमरचंचा रायहाणीप्पमाणेण णायव्वा' इति पाठोऽयं च व्यक्त एव **'कणग सोवत्थिए'** इत्यादि कनकसौवस्तिककूटयो **'वारिषेणा बलाहके द्वे देव्यौ,'** एते च दिक्कुमार्यौ यथाक्रमं स्वामिन्यौ **'अवशिष्टेषु कूटेषु कूटनामसदृग्नामानो देवाः'** एषां च **'राजधान्यो दक्षिणतः।।२१०।।**

अथ विद्युत्प्रभनामनिमित्तं पिपृच्छिषुरिदमाह-

(२११) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–विज्जुप्पभे वक्खारपव्वए २?, गोअमा! विज्जुप्पभे णं वक्खारपव्वए विज्जुमिव सव्वओ समन्ता [1]ओभासेइ उज्जोवेइ पभासइ विज्जुप्पभे य इत्थ देवे महड्ढीए [2]जाव परिवसइ, से एएणट्ठेणं गोअमा ! एवं वुच्चइ विज्जुप्पभे २, अदुत्तरं च णं [3]जाव णिच्चे ।।२११।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि प्रश्न वाक्यं गतार्थमुत्तरं तु **'गौतम! विद्युत्प्रभो वक्षस्कारपर्वतो विद्युदिव सर्वतः'** सर्वासु दिक्षु **'समन्ततः'** सामस्त्येना**'वभासते-उद्योतते-प्रभासते विद्युत्प्रभश्चात्र देवः'** पल्योपम स्थितिको यावत्परिवसति **'से तेणट्ठेण'** मित्यादि सर्वं प्राग्वदेव।।२११।।

अथापरविदेहान्तर्वर्त्तिविजयान् सराजधानीवक्षस्कारान्तरनदीकान्नामग्राहमाह-

(२१२) एवं पम्हे विजए अस्सपुरा रायहाणी, अंकावई वक्खारपव्वए १। सुपम्हे विजए, सीहपुरा रायहाणी, खीरोदा महाणई २। महापम्हे विजए, महापुरा रायहाणी,

---

१. ओभासइ- V ।। २. द्र. १।२४।। ३. द्र. १।४७।।

पम्हावई वक्खारपव्वए ३। पम्हगावई विजए, विजयपुरा रायहाणी, [१]सीअसोआ महाणई ४। संखे विजए, अवराइआ रायहाणी, आसीविसे वक्खारपव्वए ५। कुमुदे विजए, [२]अरजा रायहाणी, अंतोवाहिणी महाणई ६। णलिणे विजए, असोगा रायहाणी, सुहावहे वक्खारपव्वए ७। [३]सलिलावई विजए, वीयसोगा रायहाणी ८। दाहिणिल्ले सीओआमुहवणसंडे उत्तरिल्लेवि एमेव भाणिअव्वे जहा सीआए, वप्पे विजए विजया रायहाणी चन्दे वक्खारपव्वए १। सुवप्पे विजए वे जयन्ती रायहाणी ओम्मिलिणी णई, २। महावप्पे विजए, जयन्ती रायहाणी, सूरे वक्खारपव्वए ३। वप्पावई विजए, अपराइआ रायहाणी, फेणमालिणी णई ४। वग्गू विजए, चक्कपुरा रायहाणी, णागे वक्खारपव्वए ५। सुवग्गू विजए, खग्गपुरा रायहाणी, गंभीरमालिणी अंतरणई ६। गन्धिले विजए, अवज्झा रायहाणी, देवे वक्खारपव्वए ७। गंधिलावई विजए, अओज्झा रायहाणी ८। एवं मन्दरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमिल्लं पासं भाणिअव्वं, तत्थ ताव सीओआए णईए दक्खिणिल्ले णं कूले इमे विजया, तं–

पम्हे सुपम्हे महापम्हे, चउत्थे पम्हगावई।
संखे कुमुए णलिणे, [४]अट्ठमे णलिणावई।।१।।

इमाओ रायहाणीओ, तं०–

आसपुरा सीहपुरा, महापुरा चेव हवइ विजयपुरा।
अवराइ य अरया असोग तह वीअसोगा य।।२।।

इमे वक्खारा, तंजहा–

अंके पम्हे आसीविसे सुहावहे एवं इत्थ परिवाडीए दो दो विजया

१. सीहसोगी-अकब- V।। २. अवरा-स। स्थानाङ्गे (२।३४१) ऽपि अवरा इति पाठो विद्यते किन्तु अरआ इति पाठः स्वीकृतः। इति V पृ ११-टि.१४।। ३. णिलणा° मु. प.। सलिलावती-स्था°२/३४०।। १. चउत्थे-अकखत्रिबस ।।

कूडसरिसणामया भाणिअव्वा दिसा विदिसाओ अ भाणिअव्वाओ, सीओआमुहवणं च भाणिअव्वं सीओआए [1]दाहिणिल्लं उत्तरिल्लं च।

सीओआए उत्तरिल्ले पासे इमे विजया, तं जहा–

वप्पे सुवप्पे महावप्पे चउत्थे वप्पयावई।

वग्गू अ सुवग्गू अ, [2]गंधिले गंधिलावई।।१।।

रायहाणीओ इमाओ तं जहा-विजयाय वेजयन्ती जयन्ती अपराजिआ।

चक्कपुरा खग्गपुरा, हवइ अवज्झा अओज्झा य।।२।।

इमे वक्खारा तं जहा-

चंदपव्वए १, सूरपव्वए २, नागपव्वए ३, देवपव्वए ४ इमाओ णईओ सीओआए महाणईए दाहिणिल्ले कूले–खीरोआ सीहसोआ अंतरवाहिणीओ णईओ ३, उम्मिमालिणी १, फेणमालिणी २, गंभीरमालिणी ३, उत्तररिल्लविजयाणंतराओ, इत्थ परिवाडीए दो दो कूडा विजयसरिसणामया भाणिअव्वा, इमे दो दो कूडा अवट्ठिआ तंजहा–सिद्धाययणकूडे पव्वयसरिसणामकूडे।।२१२।।

'एव' मित्यादि एवं वक्ष्यमाणविधिनामी विजया नेयास्तत्र तावद्विद्युत्प्रभस्य पश्चिमत: **'पक्ष्मविजयोऽश्वपुरा राजधानी'** ततोऽङ्कापाती **वक्षस्कार पर्वत:१'** तत: **'सुपक्ष्म विजय:'** **'सिंहपुरा राजधानी'** तत: **'क्षीरोदा महानदी २,'** ततो **'महापक्ष्म विजय'** स्तत्र च **'महापुरा राजधानी'** तत: **'पद्मापाती वक्षस्कारपर्वत:'** ३ तत **'पक्ष्मावती विजय'** स्तत्र **'विजयपुरा राजधानी'** तत: **'शीघ्रश्रोता'** सिंहश्रोता वा ग्रन्थान्तरे शीतश्रोता **'महानदी'** ४, तत: **'शङ्खो विजय'** स्तत्रा **'पराजिता राजधानी' तत आशीविषो वक्षस्कार पर्वत:** ५, **तत: कुमुदो विजयस्तत्रारजा राजधानी,** ततोऽन्तर्वाहिनी **महानदी ६'** ततो **'नलिनो**

१. दक्खिणिल्लं अकखत्रिबस।। २. गंधिला-अकखत्रिबस।।

विजयोऽशोका राजधानी, सुखावहो वक्षस्कारपर्वतः'७ ततः **सलिलावती विजयो वीतशोका राजधानी'** ८,'**दाहिणिल्ल**' त्ति दक्षिणात्ये '**शीतोदामुखवनखण्डे**' '**उत्तरिल्ले वि एमेव**' त्ति उत्तरस्यामपि एवमेव '**भणितव्या यथा शीतायाः, वप्रो विजयस्तत्र 'विजया राजधानी'** तत '**श्चन्द्रो**' वक्षस्कारपर्वतः१, ततः '**सुवप्रो विजयस्तत्र वैजयन्ती राजधानी**' ततो '**ऽवमालिनी नदी**' २, ततो '**महावप्रो विजयस्तत्र 'जयन्ती राजधानी**' ततः '**सूरो वक्षस्कार पर्वतः**' ३ ततो '**वप्रावती विजयोऽपराजिता राजधानी** ततः '**फेनमालिनी नदी**' ४ ततो '**वल्गु विजयश्चक्रपुरा राजधानी**' ततो '**नागो वक्षस्कारपर्वतः**' ५ ततः '**सुवल्गु विजयः खड्गपुरा राजधानी**' ततो '**गम्भीरमालिनी अन्तरनदी**' ६ ततो '**गन्धिलो विजयस्तत्रावध्या राजधानी**' ततो '**देवो वक्षस्कार पर्वतः**' ७ ततो '**गन्धिलावती विजय**'- स्तत्रायोध्या राजधानी' ८ '**एवं मंदरस्स**' इत्यादि एवं विजयादिभिर्मन्दरस्य पर्वतस्य पश्चिमं पार्श्वं भणितव्यमेतानि च विजयादीनि कुत्र व्यवस्थितानीत्यादि, तत्र पश्चिमविदेहवर्त्तिषोडशविजयानां मध्ये तावच्छीतोदाया महानद्या दाक्षिणात्ये कूले इमेऽष्टौ विजयास्तद्यथा '**पेम्हे**' इत्यादिगाथा भावितार्था, '**इमाओ रायहाणीओ**' त्ति एतेषु विजयेष्विमा राजधान्यः क्रमशो ज्ञेयाः '**आसपुरे**' त्यादि इमापि गाथा गतार्थेव '**इमे वक्खारा**' इति इमे चैतेषु वक्षस्कारास्तद्यथा '**अंके**' इत्यादि स्पष्टं, '**एवं एत्थे**' त्यादि एवमत्र परिपाट्या क्रमेण द्वौ द्वौ विजयौ कूटसदृगनामानाविति वक्षस्कार तृतीय-चतुर्थ कूटनामसदृशनामानौ वाच्यौ, एतेन प्रत्येकं वक्षस्कारेषु चत्वारि चत्वारि कूटानि सन्ति तत्र प्रथमस्य नाम सर्वत्र सिद्धायतनं द्वितीयस्य वक्षस्कार नामैव नाम तृतीयचतुर्थयोस्तु यस्माद्विजयाद्योवक्षस्कारो यश्च तदग्रेतन विजयस्तद्विजययोर्नामैव नामाऽवगन्तव्यमित्या-वेदितमेतेषां च विजयादीनां '**दिसाओ विदिसाओ**' त्ति यो यस्य यस्य यस्यां दिशि यस्यां च विदिशि ता भणनीयाः '**सीओदामुहवणं चे**' त्यादि शीतोदाया दक्षिणात्यमुत्तराहं च

शीतोदामुखवनं भणितव्यमित्येवं योजना कार्या **'सीओदाए उत्तरिल्ले पासे इमे विजया'** इत्यादि **'दवपव्वए'** एतदन्तं निगदसिद्धं **'सीओदाए'** इत्यादि शीतोदाया **'महानद्या दक्षिणे कूले क्षीरोदा शीघ्रश्रोतान्तर्वाहिनीति तिस्रो नद्यो'** दक्षिण-विजयान्तवर्त्तिन्य इत्यर्थस्तथो**'र्मिमालिनी फेनमालिनी गम्भीरमालिनीति'** तिस्रो नद्यः **'उत्तरिल्लविजयाणंतराओ'** त्ति शीतोदोत्तरकूलवर्ति -विजयान्तवर्त्तिन्य इत्यर्थः **'एत्थ पारिवाडीए'** इत्यादि एषु प्रागुक्त वक्षस्कारेषु परिपाट्या **'द्वे द्वे कूटे'** तृतीय-चतुर्थे **'स्वस्वोभयपार्श्ववर्त्तिविजयनामसमाननाम्नी वाच्ये इमे च'** **'द्वे द्वे कूटे'** प्रथम-द्वितीयेऽ **'वस्थिते'** सर्वत्र सदृग्नाम्नी ज्ञेये तद्यथा प्रथम **'सिद्धायतनं कूटं'** द्वितीयं तु **'पर्वतसदृग्नामकं कूटं'** वक्षस्कारनामसमनामकमित्यर्थः इत्थमुभयोरपि विदेहयोः सर्वाग्रेण द्वात्रिंशद्विजयाः षोडशवक्षस्कारा द्वादशान्तरनद्यश्च भवन्तीति। इत्युक्ता पूर्वापरविदेहवक्तव्यता।।२१३।।

साम्प्रतमेतन्मध्यभागव्यवस्थितमेरुपर्वतवक्तव्यतामभिधित्सुरिदमाह-

(२१३) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे २ महाविदेहे वासे [1]मंदरे णामं पव्वए पण्णत्ते?, गोअमा! उत्तरकुराए दक्खिणेणं, देवकुराए उत्तरेणं, पुव्व विदेहस्स वासस्स पच्चत्थिमेणं, अवरविदेहस्स वासस्स पुरत्थिमेणं, जम्बुद्दीवस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं जम्बद्दीवे दीवे मंदरे णामं पव्वए पण्णत्ते, णवणउतिजोअणसहस्साइं उड्ढं उच्चत्तेणं एगं जोअणसहस्सं उव्वेहेणं, मूले दसजोअणसहस्साइं णवइं च जोअणाइं दस य एगारसभाए जोअणस्स विक्खम्भेणं, धरणितले दस जोअणसहस्साइं विक्खम्भेणं, तयणंतरं च णं मायाए २ परिहायमाणे परिहायमाणे उवरितले एगं जोअणसहस्सं विक्खंभेणं, मूले एक्कत्तीसं जोअणसहस्साइं णव य दसुत्तरे जोअणसए तिण्णि अ एगारसभाए जोअणस्स परिक्खेवेणं, धरणिअले एकत्तीसं जोअणसहस्साइं छच्च

१. मंदिरे-अब । एवमग्रेऽपि।।

तेवीसे जोअणसए परिक्खेवेणं, उवरितले तिण्णि जोअणसहस्साइं एगं च बावट्ठं जोअणसयं किंचि विसेसाहियं परिक्खेवेणं, मूले वित्थिण्णे मज्झे संखित्ते [१]उवरिं तणुए गोपुच्छसंठाणसंठिए सव्वरयणामए अच्छे सण्हे। से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते [२]वण्णओ।।२१३।।

'कहिणं भंते' इत्यादि क्व भदन्त! 'जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे मन्दरो नाम्ना पर्वतः प्रज्ञप्तः?' भगवानाह-'गौतम! उत्तरकुरूणां दक्षिणतो देवकुरूणामुत्तरतः पूर्व विदेहवर्षस्य पश्चिमायामपरविदेह -वर्षस्य पूर्वस्यां जम्बूद्वीपस्य द्वीपास्य बहुमध्यदेश - भागोऽत्रान्तरे जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरो नाम्ना पर्वतः प्रज्ञप्तः' स च 'नवनवति योजन सहस्राण्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेनैकं योजनसहस्रमुद्वेधेन-मूले कन्दे दशयोजन सहस्राणि नवति च योजनानि दश चौकादशभागान् योजनस्य विष्कम्भेन धरणीतले दश योजनसहस्राणि विष्कम्भेन तदनन्तरं च मात्रया मात्रया स्तोकं स्तोकं परिहीयमान उपरितल एकं योजनसहस्रं विष्कम्भेन।' अथ प्रागुक्त विष्कम्भत्रयस्य क्रमात् परिधि त्रयमाह 'मूले' इत्यादि मूले भूमिमध्ये 'एकत्रिंशतं योजनसहस्राणि नव च योजनशतानि दशोत्तराणि त्रींश्चैकादशभागान् योजनस्य परिक्षेपेण धरणीतले' वा 'एकत्रिंशतं योजनसहस्राणि षट् च योजनशतानि' 'त्रयोविंशत्य' धिकानि 'परिक्षेपेण, उपरितले त्रीणि योजन सहस्राणि एकं योजनशतं द्वाषष्टं' द्विषष्टयधिकं 'किञ्चिद्विशेषाधिकं परिक्षेपेण।' अत एवाह-'मूले विस्तीर्णो मध्ये संक्षिप्त उपरितनुकः' एवं च सति 'गोपुच्छसंस्थानसंस्थितः' ऊर्ध्वीकृतगोपुच्छाकार इत्यर्थः 'सर्वात्मना रत्नमयः' 'अच्छे सण्हे' इत्यादि पदव्याख्या प्राग्वत्, अत्र 'विक्खंभवग्गदहगुण करणीवट्टस्स परिरओ होइ']लघुसंग्रहणी गा. इति गाथानुसारतो 'विशेषपरिमाणादिबृहत्क्षेत्रसमासटीकातः' परिभावनीयं 'से ण' मित्यादि,

---

१. उप्पिं-अक्खत्रिबस।। २. द्र. १।१०-१३।।

स च मन्दर **'एकया पद्मवरवेदिकया एकेन च वनखण्डेन सर्वतः समन्तात् सम्परिक्षिप्तो वर्णक'** श्चानयोः प्राग्वत् ।२१३।।

(२१४) मंदरे णं भंते! पव्वए कइ वणा पं०?, गो०! चत्तारि वणा पं०, तं०–भद्दसालवणे १, णंदणवणे २, सोमणसवणे ३, पंडगवणे ४।।२१४।।

'मंदरे ण' मित्यादि, मन्दरे **'भदन्त! पर्वते कति वनानि प्रज्ञप्तानि?'** प्रभुराह **'गौतम! चत्वारि वनानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-भद्रशालवनं'** १ **'नन्दन वनं'** २ **'सौमनस वनं'** ३ **'पाण्डुकवनं तत्र'** ।।२१४।।

पूर्वं भद्रशालवनं स्वरूपयन्नाह-

(२१५) कहि णं भंते ! मंदरे पव्वए भद्दसालवणे णामं वणे पं०?, गोअमा ! धरणितले एत्थ णं मंदरे पव्वए भद्दसालवणे णामं वणे पं०?, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणवित्थिण्णे सोमणस-विज्जुप्पह-गंधमायण-मालवंतेहिं वक्खारपव्वएहिं सीआ-सीओआहि अ महाणईहिं अट्ठभागपविभत्ते, मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं बावीसं बावीसं जोअणसहस्साइं आयामेणं, उत्तरदाहिणेणं अड्ढाइज्जाइं अड्ढाइज्जाइं जोअणसयाइं विक्खम्भेणं, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, दुण्हवि [1]वण्णओ भाणिअव्वो, किण्हे किण्होभासे जाव देवा आसयंति सयंति।।२१५।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! मंदर पर्वते भद्रशालवनं नामा वनं प्रज्ञप्तं?'** प्रभुराह- **'गौतम! धरणीतलेऽत्र मंदरपर्वते भद्रशालवनं नाम वनं प्रज्ञप्तं'** तच्च **'प्राचीन-प्रतीचीनायतमुत्तरदक्षिणविस्तीर्णं सोमनस'** १ **'विद्युत्प्रभ'** २ **'गन्धमादन'** ३

१.द्र. १।१०-१३।।

'माल्यवद्भि र्वक्षस्कारपर्वतै: शीताशीतोदाभ्यां च महानदीभ्यामष्टभागप्रविभक्तमष्टांशं कृतं तथाहि'-एको भागो मन्दरस्य पूर्वतो द्वितीयोऽपरतस्तृतीयो विद्युत्प्रभसौमनसयोर्मध्ये दक्षिणतश्चतुर्थो गन्धमादन-माल्यवतो र्मध्ये उत्तरतस्तथा शीतोदयोत्तरतो गच्छन्त्या दक्षिणखण्डं पूर्व-पश्चिमभागेन द्विधाकृतं ततो लब्ध: पञ्चमो भाग: पश्चिमतो गच्छन्त्या पश्चिमं खण्डं दिक्षिणोत्तरविभागेन द्विधाकृतं ततो लब्ध: षष्टो भागस्तथा शीतया महानद्या दक्षिणाभिमुखं गच्छन्त्योत्तरखण्डं पूर्व-पश्चिम भागेन द्विधाकृतं ततो लब्ध: सप्तमो भाग: पूर्वतो गच्छन्त्या पूर्वखण्डं दक्षिणोत्तरविभागेन द्विधाकृतं ततो लब्धोऽष्टमो भाग: स्थापना चेयं-

'मंदरस्से' त्यादि तच्च मन्दरस्य **'पूर्व-पश्चिमयो: द्वाविंशतियोजनसहस्रण्यायामेन।'** इदमुक्तं भवति मेरो: पूर्वस्या द्वाविंशति योजनसहस्राणि मेरो: पश्चिमायामपि द्वाविंशति योजनसहस्राण्यायामेन मेरुयुतं चेदिदमायामत उच्यते तदा चतुष्पञ्चाशतं सहस्राणियोजनानां भवति योजनसहस्रदशकमानस्य मेरोरायामस्याप्यत्रान्तर्भावात्परमिह तस्यागणनादेवमायामोक्तिरिति ज्ञेयं **'उत्तरेण'** मित्यादि **'मेरोरुत्तरस्यां दक्षिणस्यां'** च प्रत्येक **'मर्द्धतृतीयानि योजनशतानि विष्कम्भेन' 'से णं'** ति तद्वनमेकया **पद्मवरवेदिकया एकेन च वनखण्डेन सर्वत: समन्तात्संपरिक्षप्तं। द्वयोरपि'** वेदिकावनखण्डयो **'वर्णको भणितव्य:' 'किण्हे किण्होभासे'** इत्यादि कृष्णं कृष्णावभासमित्यादि भद्रशालवनवर्णक-स्तावद्वाच्यो **'यावत्तत्र बहवो देवा आसते शेरते'** इत्यादि प्राग्वत्।।२१५।।

(२१६) मंदरस्स णं पव्वयस्स पुरत्थिमेणं भद्दसालवणं पण्णासं जोअणाइं ओगाहित्ता, एत्थ णं महं एगे सिद्धाययणे पण्णत्ते, पण्णासं जोअणाइं आयामेणं, पणवीसं जोअणाइं विक्खम्भेणं, छत्तीसं जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अणेगखंभसयसण्णिविट्ठे [१]वण्णओ।।२१६।।

१. द्र. १।३७।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि मन्दरस्य **'पर्वतस्य पूर्वस्यां भद्रशालवनं पञ्चाशतं योजनान्यवगाह्यात्रान्तरे महदेकं सिद्धायतनं प्रज्ञप्तं'** तच्च **'पञ्चाशतं योजनान्यायामेन पञ्चविंशतियोजनानि विष्कम्भेन षट्त्रिंशतं योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेनानेकस्तम्भशत-सन्निविष्टं वर्णकः'** प्राग्वत्।।२१६।।

(२१७) तस्स णं सिद्धाययणस्स तिदिसिं तओ दारा पं०, ते णं दारा अट्ठ जोणाइं उद्धं उच्चत्तेणं, चत्तारि जोअणाइं विक्खम्भेणं, तावइयं चेव पवेसेणं, सेआ वरकणगथू-भिआगा [1]जाव वणमालाओ भूमिभागो अ भाणिअव्वो ।।२१७।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य **'सिद्धायतनस्य त्रिदिशि'** तिसृषु दिक्षु एकैकस्यां दिश्यैकैकद्वारसद्भावात् **'त्रीणि द्वाराणि प्रज्ञप्तानि' 'तेणं दारा'** इत्यादि तानि द्वाराण्यष्टौ **योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन चत्वारि योजनानि विष्कम्भेन तावदेव'** चत्वारियोजनानि एव **'प्रवेशेन' 'सेया वरकगणथूभियागा'** इत्यादिद्वारवर्णनं **'यावद्वनमाला'** वक्तव्यता समाप्तिस्तावद्वाच्यं। **'भूमि भाग'** श्चात्र 'से जहा नामए आलिंगपुक्खरेइ वा' इत्यादि वर्णकविशिष्टो **'भणितव्यः'**।।२१७।।

(२१८) तस्स णं बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगा मणिपेढिया पण्णत्ता, अट्ठजोअणाइं आयामविक्खम्भेणं, चत्तारि जोअणाइं बाहल्लेणं सव्वरयणामई अच्छा ।।२१८।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य भूमिभागस्य **'बहुमध्यदेशभागेऽत्र महत्येका मणिपीठिका प्रज्ञप्ता'** सा **'चाष्टौ योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां चत्वारि योजनानि बाहल्येन'** जङ्घत्वेन **'सर्वात्मना रत्नमयी' 'अच्छे'** त्यादि विशेषणवृन्दं पूर्ववद्व्याख्येयम्।।२१८।।

---

१. द्र. जीवा ६।३००-३०६।।

(२१९) तीसे णं मणिपेढिआए उवरिं देवच्छंदए अट्ठजोअणाइं आयामविक्खम्भेणं, साइरेगाइं अट्ठजोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, जाव जिणपडिमावण्णओ देवच्छंदगस्स [1]जाव धूवकडुच्छुआणं।।२१९।।

'तस्या मणिपीठिकाया उपरि देवच्छन्दकः' स **'चाष्टौ योजनान्यायाम विष्कम्भाभ्यां सातिरेकाण्यष्टौ योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन' 'जाव जिणपडिमा वण्णओ'** इत्यादि यावत्तत्र जिनप्रतिमावर्णक उक्तो भवति तावद्वक्तव्यता वाच्या जिनप्रतिमावर्णकसूत्रं तु तावद्वक्तव्यं याव **'देवच्छन्दकस्यान्तः'** 'अट्ठसयं **'धूव कडुच्छुगाणं'** संनिखिक्तं चिट्ठइ इति।।२१९।।

(२२०) मंदरस्स णं पव्वयस्स दाहिणेणं भद्दसालवणं पण्णासं एवं चउद्दिसिंपि मंदरस्स भद्दसालवणे चत्तारि सिद्धाययणा भाणिअव्वा ।।२२०।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि मन्दरस्य **'पर्वतस्य दक्षिणस्यां भद्रशाल वनं पञ्चाशतं'** योजनान्यवगाह्यत्र प्रदेशे एक महत्सिद्धायतनं प्रज्ञप्तमेतत्परिमाणादिकं सर्वं प्रागुक्तपूर्वदिग्वर्त्तिसिद्धायतनवद् दृष्टव्यं, **'एवं चतुद्दिसि'** मित्यादि एवमिति यथा द्वयोर्दिशोः सिद्धायतने भणिते तथा मन्दरस्य चतुर्दिश्यपि भद्रशालवने पञ्चाशद्योजनेभ्यः परतश्चत्वारि सिद्धायतनानि भणनीयान्येकमपरस्यामपरमुत्तरस्यां द्वे च पूर्व-दक्षिणयोः प्रागुक्ते इति भवन्ति चत्वारि सिद्धायतनानि वर्णकश्चामीषां समान एवं यावज्जिनप्रतिमावर्णनम्।।२२०।।

(२२१) मंदरस्स णं पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं भद्दसालवणं पण्णासं जोअणाइं ओगाहित्ता, एत्थ णं चत्तारि णंदापुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ, तं०—पउमा १ पउमप्पभा २ चेव, कुमुदा ३ कुमुदप्पभा ४, ताओ णं पुक्खरिणीओ पण्णासं जोअणाइं आयामेणं,

---

१. द्र.जीवा-३।४१४-४१९।।

पणवीसं जोअणाइं विक्खम्भेण, दसजोअणाइं उव्वेहेणं [1]वण्णओ वेइआवणसंडाणं भाणिअव्वो, चउद्दिसिं तोरणा [2]जाव तासि णं पुक्खरिणीणं बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महं एगे ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो पासायवडिंसए पण्णत्ते, पंचजोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अड्ढाइज्जाइं जोअणसयाइं विक्खंभेणं[3], अब्भुग्गयमूसिय पहसिय विव एवं सपरिवारो पासायवडिंसओ भाणिअव्वो।।२२१।।

'मंदरस्सण ण' मित्यादि मन्दरस्य **'पर्वतस्योत्तर-पौरस्त्ये'** ऐशान्यां **'भद्रशालवनं पञ्चाशतं योजनान्यवगाह्यात्रान्तरे चतस्रो नन्दापुष्करिण्यः प्रज्ञप्तास्तद्यथा पद्मा'** १, **पद्मप्रभा २ चैव कुमुदा ३ कुमुदप्रभा ४ ताश्च पुष्करिण्यः** प्रत्येकं **'पञ्चाशतं योजनान्यायामतः पञ्चविंशतिं योजनानि विष्कम्भेन दशयोजनान्युद्वेधेन'**-उण्डत्वेन **'वण्णओ वेइगावणसंडाणं भाणियव्वो'** त्ति इह वर्णक शद्व उभयत्रापि सम्बध्यते ततश्च पुष्करिणीनां तत्परिक्षेपकवेदिकावनखण्डानां च वर्णको भणितव्य इत्यर्थः, **'चउद्दिसिं तोरणा'** इत्यादि ततश्चतसृस्वपि दिक्षु प्रतिद्वारं 'तोरण' त्ति तोरणवक्तव्यतातावद्वाच्या **'यावत्तासां पुष्करिणीनां बहुमध्यदेशभागेऽत्र महानेक ईशानस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य प्रासादावतंसकः प्रज्ञप्तः'** स च **'पञ्चयोजनशतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेनार्द्धतृतीयानि योजनशतान्यायामविष्कम्भाभ्यां' 'अब्भुग्गये'** त्यादि वर्णकाः प्राग्वत् **'एवं सपरिवारो पासायवडिंसगो भाणियव्वो'** त्ति सपरिवारो द्वारतोरणमणिपीठिकासिंहसनादिपरिवार-सहितः प्रासादावतंसको भणनीयः।।२२१।।

(२२२) मंदरस्स णं एवं दाहिणपुरत्थिमेणं पुक्खरिणीओ उप्पलगुम्मा णलिणा उप्पला उप्पलुज्जला तं चेव पमाणं मज्झे पासायवडिंसओ सक्कस्स सपरिवारो तेणं चेव पमाणेणं।।२२२।।

---

१. द्र. जीवा. ३।२८६।। २. द्र. ४।२६-३०।। ३. आयाम विक्खंभेण - कखस।।

(२२३) दाहिणपच्चत्थिमेवि पुक्खरिणीओ भिंगा भिंगनिभा चेव, अंजणा [१]कज्जलप्पभा। पासायवडिंसओ सक्कस्स सीहासणं सपरिवारं।।२२३।।

(२२४) उत्तरपुरत्थिमेणं पुक्खरिणीओ-सिरिकंता १ सिरिचन्दा २, सिरिमहिआ ३ चेव सिरिणिलया ४। पासायवडिंसओ ईसाणस्स सीहासणं सपरिवारं।।२२४।।

'मंदस्स ण' मित्यादि मेरोर्दक्षिण **पूर्वस्यामग्नेय्यां** भद्रशालवने पञ्चाशद्योजन परतश्चतस्रः **'पुष्करिण्यः उत्पलगुल्मा १ नलिना २, उत्पला ३, उत्पलोज्वला'** ४ इति नाम्न्योऽवसेयाः **'तं चेव पामाणं'** ति तदेव पूर्वोक्त पुष्करिणीसत्कमेवैतासामपि प्रमाणमायामादि ज्ञातव्यं **'मज्झे पासायवडेंसओ'** इत्यादि पुष्करिणीनां मध्ये प्रासादावतंसकः शक्रस्य सौधर्मेन्द्रस्य सपरिवारस्तेनैव प्रमाणेन प्रागुक्तप्रासादपरिमाणेनायमपि ज्ञेय इत्यर्थः **'दाहिणपच्चित्थिमेण वि'** त्ति मेरोर्दक्षिणपश्चिमायामपि नैऋत्यामापि भद्रशालवने पञ्चाशद्योजनानन्तरं **'पुक्खरिणीओ'** त्ति चतस्रः **'पुष्करिण्यो भृङ्गा १ भृङ्गनिभा २ चैवाञ्जना ३ कज्जलप्रभा'** ४ इत्यभिधाना वाच्याः एतासामन्तराले **'प्रासादावतंसकः शक्रस्य'** तत्र च **'सिंहासनं सपरिवारं'** **'उत्तरपच्चत्थिमेणं'** त्ति उत्तरपश्चिमायां मेरोर्वायव्यकोणे भद्रशालवने पञ्चाशद्योजनपरतः **'पुष्करिणीओ'** इत्यादि चतस्रः **'पुष्करिण्यः श्रीकान्ता १ श्रीचन्द्रा २ श्रीमहिता ३ श्रीनिलया'** ४ इति नाम्ना वाच्याः **'पासायवडिंसगो ईसाणस्स'** त्ति आसां मध्ये प्रासादावतंसक ईशानेन्द्रस्य तत्र च सिंहासनं सपरिवारम्।।२२४।।

अथात्र दिग्हस्तिकूटवक्तव्यतामाह-

(२२५) मंदरे णं भंते! पव्वए भद्दसालवणे कइ दिसाहत्थिकूडा पं०?, गो०! अट्ठ दिसाहत्थिकूडा पण्णत्ता, तंजहा-

---

१. अंजणप्पभा - मु.प.।।

पउमुत्तरे १ णीलवंते २ सुहत्थी ३ अंजणागिरी ४।
कुमुदे अ, ५, पलासे य ६, वडिंसे ७ रोअणागिरी ८।।२२५।।

'मंदरे ण' मित्यादि, मन्दरे **'भदन्त! पर्वते भद्रशालवने कति दिग्हस्तिकूटानि प्रज्ञप्तानि?'** प्रभुराह–**'गौतम! अष्टौ दिग्हस्तिकूटानि'** दिक्षु पूर्वादिषु हस्त्याकाराणि कूटानि दिग्हस्तिकूटानि प्रज्ञप्तानि **'तद्यथा' 'पउमुत्तरे नीलवंते'** इत्यादि **'पद्मोत्तरकूटं १ नीलवत्कूटं २ सुहस्तिकूटं ३ अञ्जनागिरिकूटं'** ४ अञ्जनादीना गिरावित्यनेनाञ्जनपदस्य गिरावुत्तरपदे दीर्घान्ताऽऽदेशो नास्ति **'कुमुदकूटं ५ पलाशकूटं ६ अवतंसकूटं ७ रोचना गिरिकूटं'** ८ इति।।२२५।।

अथ क्रमादेषां स्वरूपमाह-

(२२६) कहि णं भंते ! मंदरे पव्वए भद्दसालवणे पउमुत्तरे णामं दिसाहत्थिकूडे पं० ?, गोअमा ! मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं, पुरत्थिमिल्लाए सीयाए उत्तरेणं, एत्थ णं पउमुत्तरे णामं दिसाहत्थिकूडे पण्णत्ते, पंचजोअणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, पंचगाउअसयाइं उव्वेहेणं, एवं [1]विक्खम्भपरिक्खेवो [2]भाणिअव्वो चुल्लहिमवंतसरिसो, पासायाण य तं चेव, पउमुत्तरो देवो रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं।।२२६।।

'कहि ण मित्यादि, क्व **'भदन्त! मन्दरे पर्वते भद्रशालवने पद्मोत्तरनाम दिग्हस्ति-कूटं प्रज्ञप्तं?'** प्रभुराह–**'गौतम! मन्दरस्य पर्वतस्योत्तरपूर्वस्यामीशानकोणे** इत्यर्थः **'पुरत्थिमिल्लाए सीयाए'** त्ति पूर्वाभिमुखगामिन्या मेरोः पूर्वदिग्वर्त्तिन्याः **'शीताया उत्तरस्यां' 'एत्थणं'** ति अत्रान्तरे **'पद्मोत्तरं नाम्ना दिग्हस्तिकूटं प्रज्ञप्तं'** तच्च **'पञ्चयोजनशतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन पञ्चगव्यूतशतान्युद्वेधेनैवं विष्कम्भः परिक्षेपश्च**

---

१. विक्खंभे - V अब।। २. द्र. ४।४८-५२।।

भणितव्यः,' स च **'क्षुल्लहिमवत्कूटसदृशः'** प्राग्वदेव बोद्धव्यः **'पासायाण य तं चेव'** त्ति प्रासादानामिति पद्मोत्तरादिकूटाधिपतिसम्बन्धिप्रासादानां तदेवायामादिवर्णनं ज्ञेयं। ये क्षुल्लहिमवद्वर्षधरसत्कक्षुल्लहिमवत्कूटनामकूटोपरिवर्त्तिप्रासादस्येत्यर्थः, **'पउमुत्तरो देवो'** त्ति इह पद्मोत्तरकूटे पद्मोत्तरनामा देवोऽधिपतिः **'रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं'** त्ति अस्य पद्मोत्तरदेवस्य राजधानी मेरोरुत्तरपूर्वायां तिर्यगसंख्येयान् द्वीपसमुद्रान् व्यतिक्रम्यान्यस्मिन् जम्बूद्वीपे द्वादश योजनसहस्राण्यवगाह्य वाच्या।।२२६।।

(२२७) एवं णीलवंतदिसाहत्थिकूडे मंदरस्स दाहिणपुरत्थिमेणं, पुरत्थिमिल्लाए सीआए दक्खिणेणं, एअस्सवि नीलवंतो देवो, रायहाणी दाहिणपुरत्थिमेणं।।२२७।।

'एवं नीलवंते' इत्यादि, एवमिति यथा पद्मोत्तरकूटं प्रमाणादिनाऽभिहितं तथा **'नीलवद्दिग्हस्तिकूटमपि'** वाच्यं किन्तु **'मन्दरस्य दक्षिण-पूर्वस्यामाग्नेय्यां 'पुरत्थिमिल्लाए'** त्ति पूर्वदिगभिमुख्याः **'शीताया दक्षिणस्यामेतस्याधिपतिर्नीलवन्नामा-**देवोऽस्य **'राजधानी'** मेरो**'दक्षिणपूर्वस्यां'** वक्तव्या२।।२२७।।

(२२८) एवं सुहत्थिदिसाहत्थिकूडे मंदरस्स दाहिणपुरत्थिमेणं, दक्खिणिल्लाए सीओआए पुरत्थिमेणं, एअस्सवि सुहत्थी देवो, रायहाणी दाहिण-पुरत्थिमेणं३।।२२८।।

'एवं सुहत्थिदिसाहत्थिकूडे' इत्यादि, एवं सुहस्तिदिग्हस्तिकूटं **'मन्दरस्य दक्षिणपूर्वस्यां दाक्षिणात्यायाः शीतोदायाः पूर्वस्यां वाच्यमेतस्यापि'** स्वामी **'सुहस्ति देवो राजधानी'** चास्य **'दक्षिणपौरस्त्ये'**३।।२२८।।

(२२९) एवं चेव अंजणागिरिदिसाहत्थिकूडे मंदरस्स दाहिणपच्चत्थिमेणं, दक्खिणिल्लाए सीओआए पच्चत्थिमेणं, एअस्सवि अंजणागिरी देवो रायहाणी

दाहिणपच्चत्थिमेणं ४।

'एवमेवाञ्जनागिरिदिग्हस्तिकूटं मन्दरस्य दक्षिणपश्चिमायां दाक्षिणात्यायाः शीतोदायाः पश्चिमतः एतस्याप्यञ्जनागिरिर्देवः'स्वामी **'राजधानी'** चास्य **'दक्षिणपश्चिमायाम्'** ४।।२२९।।

(२३०) एवं कुमुदे वि दिसाहत्थिकूडे मंदरस्स दाहिणपच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमिल्लाए सीओआए दक्खिणेणं, एअस्सवि कुमुदो देवो, रायहाणी दाहिणपच्चत्थिमेणं५।।२३०।।

'एवं कुमुददिग्हस्तिकूटं मन्दरस्य दक्षिणपश्चिमायां' 'पच्चत्थिमिल्लाए' मेरोः पश्चिमदिशि स्थितायाः **'शीतोदाया दक्षिणस्यामेतस्यापि कुमुदो देवः'** स्वामी **'राजधानी'** चास्य **'दक्षिणपश्चिमायाम्'** ५।।२३०।।

(२३१) एवं पलासे वि दिसाहत्थिकूडे मंदरस्स उत्तरपच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमिल्लाए सीओआए उत्तरेणं, एअस्सवि पलासो देवो, रायहाणी उत्तरपच्चत्थिमेणं६।।२३१।।

'एवं पलासे वि' त्ति एवं पलाशदिग्हस्तिकूटमपि **'मन्दरस्योत्तरापरस्यां' 'पच्च थिमिल्लाए'** त्ति पश्चिमाभिमुखं गच्छन्त्याः **'शीतोदाया उत्तरतो'** वाच्यमेतस्यापि **'पलाशनामा देवः'** स्वामी **'राजधानी' 'चास्योत्तरपश्चिमायां'** ६।।२३१।।

(२३२) एवं वडेंसेविदिसाहत्थिकूडे मंदरस्स उत्तरपच्चत्थिमेणं, उत्तरिल्लाए सीआए महाणईए पच्चत्थिमेणं, एआस्सवि वडेंसो देवो, रायहाणी उत्तरपच्चत्थिमेणं।।२३२।।

'एवमवतंसमपि दिग्हस्तिकूटं मन्दरस्योत्तरपश्चिमायां शीतायाः' महानद्याः **'पश्चिमतो'** वाच्यमेतस्याधिपति**'रवतंसकनामा देवो राजधानी' 'तस्या'** पि

मेरेरुत्तरपश्चिमायाम् ७।।२३२।।

(२३३) एवं रोअणागिरी दिसाहत्थिकूडे मंदरस्स उत्तरपुरत्थिमेणं, उत्तरिल्लाए सीआए पुरत्थिमेणं, एयस्सवि रोअणागिरी देवो, रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं।।२३३।।

'एवं रोचनागिरिदिग्हस्तिकूटं मन्दरस्योत्तरपूर्व' दिग्भागे **'उत्तरिल्लाए'** त्ति उत्तरदिग्वर्त्तिन्याः **'शीतायाः पूर्वस्यामेतस्यापि रोचनागिरिर्देवः'** स्वामी **'राजधानी चोत्तरपूर्वस्यां'** सर्वत्र मन्दरादिति ज्ञेयमेते च पद्मोत्तरादयोऽष्टावपि देवा विजयदेव इव महर्द्धिकाः पल्योपमस्थितयश्चावसेयाः।।२३३।।

अथ नन्दनवनवक्तव्यतामभिधित्सुराह–

(२३४) कहि णं भंते! मंदरे पव्वए णंदणवणे णामं वणे पण्णत्ते?, गो०! भद्दसालवणस्स बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ पंचजोअणसयाइं उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं मंदरे पव्वए णंदणवणे णामं वणे पण्णत्ते पंचजोअणसयाइं चक्कवालविक्खम्भेणं, वट्टे वलयाकारसंठाणसंठिए जे णं मंदरं पव्वयं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता णं चिट्ठइ णव जोयणसहस्साइं णव च चउप्पण्णे जोयणसए छच्चेगारसभाए जोयणस्स बाहिं गिरिविक्खंभो, एगत्तीसं जोयण सहस्साइं चत्तारि अ अउणासीए जोअणसए किंचिविसेसाहिए बाहिं गिरिपरिरएणं, अट्ठ जोअणसहस्साइं णव य चउप्पण्णे जोअणसए छच्चेगारसभाए जोअणस्स अंतो गिरिविक्खंभो, अट्ठावीसं जोअणसहस्साइं तिण्णि य सोलसुत्तरे जोअणसए अट्ठ य इक्कारसभाए जोअणस्स अंतो गिरिपरिरएणं, से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते [1]वण्णओ जाव देवा आसयंति।।२३४।।

१. द्र. १।१०-१३।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! मन्दरे पर्वते नन्दनवनं नाम वनं प्रज्ञप्तं?'** भगवानाह-**'गौतम! भद्रशालवनस्य बहुसमरमणीयाद्भूभिभागात्पञ्चयोजनशतान्यूर्ध्वमुत्पत्यात्रान्तरे मन्दरे पर्वते नन्दनवनं नामवनं प्रज्ञप्तं'** तच्च **'पञ्चयोजनशतानि चक्रवालविष्कम्भेन वृत्तं'** वर्तुलं तच्च चन्द्रमण्डलवन्मध्यपरिपूर्णमपि शङ्क्येत, तत आह **'वलयाकारसंस्थानसंस्थितं'** वलयाकारं मध्यशुषिरं यत्संस्थानं तत्तथा तेन संस्थितं यत्तद्वलयाकारसंस्थानसंस्थितं **'जे णं'** ति यन्नन्दनवनं **'मन्दरपर्वतं सर्वतः सर्वासु'** दिक्षु **'समन्ताद्विदिक्षु 'सम्परिक्षिप्य'** वेष्टयित्वा **'तिष्ठति'** नन्दनवने हि द्विविधो मेरुविष्कम्भो बहिरन्तश्च तत्र पूर्वं बहिर्विष्कम्भप्रमाणं दर्शयति **'नवजोयणसहस्साइ'**मित्यादि नव योजनसहस्राणि **'नव च योजनशतानि चतुष्पञ्चाशदधिकानि षट् चैकादश भागा योजनस्य'** ९९५४,६/११ **'बहिं गिरि विक्खंभो'** त्ति अयं नन्दनवने बहिर्मेखलायां बहिर्भागे गिरेर्मेरोर्विष्कम्भो बहिर्गिरिविष्कम्भसहितो मेरूविष्कम्भ इत्यर्थोऽस्य परिधिमाह **'एक्कत्तीस'** मित्यादि **'एकत्रिंशद्योजन सहस्राणि चत्वारि योजनशतानि एकोनाशीत्यधिकानि किञ्चिद्विशेषाधिकानि बहिर्गिरिपरिरयो'** णमिति वाक्यालङ्कारे।।

अथ नन्दनवन एवान्तर्गिरिविष्कम्भपरिमाणं दर्शयति **'अट्ठजोयण सहस्साइ'** मित्यादि **'अष्टौ योजनसहस्राणि नव च योजनशतानि' 'चतुष्पञ्चाशदधिकानिषट् चैकादश भागा योजनस्य'** ८९५४,६/११ **'अन्तर्गिरिविष्कम्भो नन्दनवनविष्कम्भरहितो'** मेरुविष्कम्भ इत्यर्थः, अस्यापि परिधिमाह **'अट्ठावीस'** मित्यादि अष्टाविंशतियोजनसहस्राणि त्रीणि च **'योजन शतानि षोडशोत्तराणि अष्टौ चैकादशभागा योजनस्यायमन्तर्गिरिपरिरयः' 'सेण'** मित्यादि, तद्वन **'मेकया पद्मवरवेदिकयैकेन वनखण्डेन सर्वतः समन्तातसम्परिक्षिप्तं वर्णकः'** पूर्ववत् **'यावद्देवा'** देव्य **'श्चासते'** शेरते इत्यादि।।२३४।।

(२३५) मंदरस्स णं पव्वयस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं महं एगे सिद्धाययणे प० एवं चउद्दिसिं चत्तारि सिद्धाययणा विदिसासु पुक्खरिणीओ तं [1]चेव पमाणं सिद्धाययणाणं पुक्खरिणीणं च पासायवडिंसगा तह चेव सक्केसाणाणं तेणं चेव पमाणेणं।।२३५।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि , **'मंदरस्य पर्वतस्य पूर्वस्यामत्रान्तरे महदेकं सिद्धायतनं प्रज्ञप्तमेवमिति'** भद्रशालवनवन्नन्दनवनेऽपि पञ्चाशद्योजनानन्तरं **'चतसृषु दिक्षु चत्वारि' 'सिद्धायतनानि विदिक्षु'** च **'पुष्करिण्यस्तदेव प्रमाणं सिद्धायतनानां पुष्करिणीनां'** च यद्भद्रशालवनवर्त्तिसिद्धायतनपुष्करिणीनामुक्तमित्यर्थः **'प्रसादावतंसकास्तथैव'** वापीनामन्तराले **'शक्रेशानयोस्तेनैव प्रमाणेन'** ज्ञेयाः।।२३५।।

अथात्र कूटवक्तव्यतामाह-

(२३६) णंदणवणे णं भंते! वणे कइ कूडा पं०?, गोअमा! णव कूडा पण्णत्ता, तंजहा–णंदणवणकूडे १, मंदरकूडे २, णिसहकूडे ३, हिमवयकूडे ४, रययकूडे ५, रुअगकूडे ६, सागरचित्तकूडे ७, वइरकूडे ८, बलकूडे ९।।२३६।।

'नंदनवणे ण' मित्यादि, नन्दनवने णमिति वाक्यालङ्कारे **'भदन्त! वने कति कूटानि प्रज्ञप्तानि?'** स्वाम्याह–**'गौतम! नवकूटानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा'–'नन्दनवनकूटं १ मन्दरकूटं २ निषधकूटं ३ हैमवन्तकूटं ४ रजतकूटं ५ रुचककूटं ६ सागरचित्रकूटं ७ वज्रकूटं ८ बलकूटं ९,'** ।।२३६।।

अथैषां क्रमात्स्वरूपमाह-

(२३७) कहि णं भंते! णंदणवणे णंदणवणकूडे णामं कूडे पं०? गोअमा! मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमिल्लसिद्धाययणस्स उत्तरेणं, उत्तरपुरत्थिमिल्लस्स

---

१. द्र. ४।२१६-२२४।।

पासायवडेंसयस्स दक्खिणेणं, एत्थ णं णंदणवणे णामं कूडे पण्णत्ते, पंचसइआ कूडा पुव्ववण्णिआ भाणिअव्वा, देवी मेहंकरा, रायहाणी विदिसाएत्ति१।।२३७।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व 'भदन्त! नन्दनवने नन्दनकूटनामकूटं प्रज्ञप्तं?' भगवानाह 'गौतम! मन्दरस्य पर्वतस्य पूर्वदिग्वर्त्तिनः सिद्धायतनस्योत्तरस्यामुत्तरपौरस्त्यस्य प्रासादावतंसकस्य दक्षिणस्यां' 'एत्थ णं' त्ति अत्रानयोरपान्तराले 'नन्दनवने नन्दनकूटं नाम्ना कूटं प्रज्ञप्त'मेतानि च सर्वाणि 'कूटानि पञ्चशतिकानि' पूर्ववर्णकवर्णितानि भणितव्यानि देवी' चात्र कूटे 'मेघङ्करा राजधानी' चास्या मेरोरुत्तरपूर्वस्यां 'रायहाणीओ विदिसाहिं।'।।२३७।।

(२३८) एआहिं चेव पुव्वाभिलावेणं णेअव्वा इमे कूडा इमाहिं दिसाहिं, पुरत्थि - मिल्लस्स भवणस्स दाहिणेणं दाहिणपुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स उत्तरेणं, मंदरे कूडे मेहवई रायहाणी पुव्वेणं २, दक्खिणिल्लस्स भवणस्स पुरत्थिमेणं दाहिणपुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पच्चत्थिमेणं णिसहे कूडे सुमेहा देवी, रायहाणी दक्खिणेणं ३, दक्खिणिल्लस्स भवणस्स पच्चत्थिमेणं दक्खिणपच्च - त्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पुरत्थिमेणं हेमवए कूडे मेघमालिनी देवी, रायहाणी दक्खिणेणं ४। पच्चत्थिमिल्लस्स भवणस्स दक्खिणेणं, दाहिणपच्चत्थिमिल्लस्स पासायवसेंडगस्स उत्तरेणं रयए कूडे सुवच्छा देवी, रायहाणी पच्चत्थिमेणं५। पच्चत्थिमिल्लस्स भवणस्स उत्तरेणं, उत्तरपच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स दक्खिणेणं रुअगे कूडे वच्छमित्ता देवी रायहाणी पच्चत्थिमेणं ६। उत्तरिल्लस्स भवणस्स पच्चत्थिमेणं उत्तरपच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पुरत्थिमेणं, सागरचित्ते कूडे वइरसेणा देवी रायहाणी उत्तरेणं ७। उत्तररिल्लस्स भवणस्स

पुरत्थिमेणं, उत्तरपुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पच्चत्थिमेणं, वइरेकूडे बलाहया[1] देवी, रायहाणी उत्तरेणं ८।।२३८।।

'एयाहिं चेवे' त्यादि, एताभिरेव वक्ष्यमाणाभिर्दिग्भिः **'पूर्वाभिलापेन'** राजधान्योऽवसेयाः, **'इमानि कूटानि एताभिश्च दिग्भि'**र्वाच्यानि एतदेवाह- **'पुरत्थिमिल्लस्से'**त्यादि **'पूर्वदिग्भाविभवनस्य दक्षिणतो दक्षिणपूर्वप्रासादावतंसकस्योत्तरतो मन्दरनामकं कूटं मेघवती'** देवी **'राजधानी पूर्वस्यां'** २, तथा **'दक्षिणात्यस्य भवनस्य पूर्वतो दक्षिणपूर्व प्रासादावतंसकस्य पश्चिमतो निषधकूटमत्र सुमेघा देवी राजधानी दक्षिणस्यां'** ३, तथा **'दाक्षिणात्यस्य भवनस्यापरस्यां दक्षिणपश्चिमस्य प्रासादावतंसकस्य पूर्वस्यां हेमवन्तकूटं मेघमालिनी देवी राजधानी दक्षिणस्यां'** ४, तथा **'पश्चिमभवनस्य दक्षिणस्यां दक्षिणपश्चिमस्य प्रासादावतंसकस्योत्तरस्यां रजतकूटं'** नाम्ना कूटं **'सुवत्सा देवी' 'राजधानी पश्चिमायां'** ५, **'पश्चिम भवनस्योत्तरस्यामुत्तरपश्चिमप्रासादावतंसकस्य दक्षिणस्यां रूचककूटं वत्समित्रा देवी राजधानी पश्चिमायां'** ६, **'औत्तराहभवनस्य पश्चिमतः उत्तरपश्चिमस्य प्रासादावतंसकस्य पूर्वस्यां सागरचित्र नामकं कूटं वज्रसेना'** ग्रन्थान्तरे वारिषेणा **'देवी राजधान्युत्तरस्यां'** ७, **'उत्तरभवनस्य पूर्वस्यामुत्तरपौरस्त्यप्रासादावतंसकस्य प्रतीच्यां वज्रकूटं बलाहकादेवी राजधान्युत्तरस्यां'** ८, एताश्च मेघकङ्करादयोऽष्टावपि देव्य ऊर्ध्वलोकवास्तव्या दिक्कुमारिका उच्यन्ते।।२३८।।

अथ प्रागुक्ताष्टकूटेभ्यः पृथक्प्रमाणादिस्वरूपस्य बलकूटस्य वक्तव्यतां पृच्छन्नाह–

(२३९) कहि णं भंते! णंदणवणे बलकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?, गोअमा मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेणं, एत्थ णं णंदणवणे बलकूडे णामं कूडे पं०, [2]एवं जं चेव

१. बलाहिका-त्रि हीवृ.।। २. द्र. ४।१६५।।

हरिस्सहकूडस्स पमाणं रायहाणी अ तं चेव बलकूडस्सवि, णवरं बलो देवो, रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणं।।२३९।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! नन्दनवने वने बलकूटं नाम्ना कूटं प्रज्ञप्तं?'** भगवानाह–**'गौतम! मन्दरस्य पर्वतस्योत्तरपूर्वस्यां'** दिश्यत्र **नन्दनवने'** वने **'बलकूटं नाम्ना कूटं प्रज्ञप्तं एवं जं चेवे'** त्यादि एवं यदेव **'हरिस्सहकूटस्य प्रमाणं'** यथैव च तत्कूटाधिपते **'राजधानी' 'तदेव बलकूटस्यापि'** परिमाणं तथैव च राजधान्यपि **'नवरमत्र बलो देवो राजधानी'** चा**'स्योत्तरपौरस्त्यां'** दिशि वाच्या।।२३९।।

सम्प्रति सौमनसवनवक्तव्यतामभिदधाति

(२४०) कहिं णं भंते! मंदरए पव्वए सोमणसवणे णामं वणे पं०?, गोअमा! णंदणवणस्स बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ अद्धतेवट्ठिं जोअणसहससाइं उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं मंदरे पव्वए सोमणसवणे णामं वणे पण्णत्ते, पंचजोयणसयाइं चक्कवालविक्खम्भेणं वट्टे वलयाकारसंठाणसंठिए, जे णं मंदरं पव्वयं सव्वओ समन्ता संपरिक्खित्ता णं चिट्ठइ, चत्तारि जोअणसहस्साइं दुण्णि य बावत्तरे जोअणसए अट्ठ य इक्कारसभाए जोअणस्स बाहिं गिरिविक्खंभेणं, तेरस जोअणसहस्साइं पंच य एक्कारे जोअणसए छच्च इक्कारसभाए जोअणस्स बाहिं गिरिपरिरएणं, तिण्णि जोअणसहस्साइं दुण्णि अ बावत्तरे जोअणसए अट्ठ य एक्कारसभाए जोयणस्स अंतो गिरिविक्खंभेणं, दस जोअणसहस्साइं तिण्णि अ अउणापण्णे जोअणसए तिण्णि य इक्कारसभाए जोअणस्स अंतो गिरि परिरएणंति। से णं एगाए पउमवरेइआए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समन्ता संपरिक्खित्ते [१]वण्णओ किण्हे किण्होभासे जाव आसयंति। एवं कूडवज्जा सच्चेव णंदणवणवत्तव्वया भाणियव्वा, तं चेव ओगाहिऊणं [२]जाव

१. द्र. १।१०-१३।। २. द्र. ४।२३५।।

पायावडेंसगा सक्कीसाणाणं।।२४०।।

'कहिण' मित्यादि क्व **'भदन्त! मन्दरे पर्वते सौमनसं नाम्ना वनं प्रज्ञप्तं?'** भगवानाह-**'गौतम! नन्दनवनस्य बहुसमरमणीयाद्भूमिभागादर्द्धत्रिषष्टानि योजन-सहस्राणि'** ६२५०० **'ऊर्ध्वमुत्पत्यात्रान्तरे मन्दरे पर्वते सौमनसं नाम वनं प्रज्ञप्तं'** तच्च **'पञ्च योजनशतानि' 'चक्रवालविष्कम्भेन वृत्तं वलयाकारसंस्थानसंस्थितं' 'जे ण'** मित्यादि, यत्सौमनसवनं **मन्दरं पर्वतं' 'सर्वतः समन्तात् संपरिक्षिप्य तिष्ठति।।'**

अथ सौमनसवने मेरो र्बहिर्विष्कम्भपरिमाणमाह-**'चत्तारी'** त्यादि चत्वारि **'योजनसहस्राणि द्वे च योजन शते द्विसप्तत्यधिकेऽष्टौ चैकादशभागा योजनस्य'** ४२७२ ८/११ **'बाह्य विष्कम्भः'** 'ण' मित्यलङ्कारे। अस्य परिरयमाह-**'त्रयोदश योजनसहस्राणि पञ्चयोजनशतान्येकादशोत्तराणि षट् चैकादशभागा योजनस्य बहिर्गिरिपरिरयो'** णमिति प्राग्वत्।। साम्प्रतमन्तर्गिरिविष्कम्भमाह-**'तिण्णी'** त्यादि **'त्रीणि योजनसहस्राणि द्वे च योजनशते द्विसप्तत्यधिकेऽष्टौ चैकादशभागा योजनस्य'** ३२७२ ८/११ **'अन्तर्गिरिविष्कम्भो'** णमिति प्राग्वत्, अस्य परिरयमाह-**'दसजोयण सहस्साइ'** मित्यादि दशयोजनसहस्राणि **'त्रीणि च योजनशतान्येकोनपञ्चाशदधिकानि त्रयश्चैकादश भागा योजनस्यान्तर्गिरिपरिरयो'** णमिति पूर्ववत् **'से णं' 'एगाए पउमवरवेइयाए'** इत्यादि प्राग्वत्, **'एवं कुडवज्जे'** इत्यादि एवं कूटवर्जा **'सैव नन्दनवनवक्तव्यता भणितव्या' 'तं चेव उगाहिऊणं'** ति तावदेवावगाह्य चत्वारि सिद्धायतानानि भणितानि चतसृषु विदिक्षु तावदेवावगाह्य चतस्रश्चतस्रः पुष्करिण्यः प्रोक्तास्तदपान्तराले च **'प्रासादाः शक्रेशानयो'**स्तथात्रापि सकलमिदं वाच्यमिति।।२४०।।

साम्प्रतं पण्डकवनवक्तव्यतां निवेदयति

(२४१) कहि णं भंते! मंदरे पव्वए पंडगवणे णामं वणे पं० ?, गो० ! सोमणसवणस्स बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ छत्तीसं जोअणसहस्साइं उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं मंदरे पव्वए सिहरतले पंडगवणे णामं वणे पण्णत्ते, चत्तारि चउणउए जोयणसए चक्कवालविक्खम्भेणं, वट्टे वलयाकारसंठाणसंठिए, जे णं मंदरचूलिअं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता णं चिट्ठइ तिण्णि जोअणसहस्साइं एगं च बावट्ठं जोअणसयं किंचिविसेसाहिअं[1] परिक्खेवेणं, से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं [2]जाव किण्हे देवा आसयंति।।२४१।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व 'भदन्त! मन्दरे पर्वते पाण्डुकवनं नाम वनं प्रज्ञप्तं?' प्रभुराह–'गौतम! सौमनसवनस्य बहुसमरमणीयाद्भूभिभागात्षट् त्रिंशतं योजनसहस्राण्यूर्ध्वमुत्पत्यात्र मन्दरे पर्वते' 'शिखरतले' शिखरोपरिगतभूमिभागे इत्यर्थः 'पाण्डकवनं' 'नाम्ना वनं प्रज्ञप्तं' तच्च 'चत्वारि योजनशतानि चतुर्णवत्यधिकानि चक्रवालविष्कम्भेन वृत्तं वलयाकारसंस्थानसंस्थितं' 'जे ण' मित्यादि यच्च 'मन्दरचूलिकां सर्वतः समन्तात् सम्परिक्षिप्य तिष्ठति' 'तिण्णि' त्ति त्रिणि योजनसहस्राण्येकं च योजनशतं द्विषष्ट्यधिकं' ३१६२ 'किञ्चिद्विशेषाधिकं परिक्षेपेण' 'से णं एगाए पउमवरवेइयाए' इत्यादि पूर्ववत्।।२४१।।

अथ मेरुशिखरस्य चूलिकावक्तव्यतामाह–

(२४२) पंडगवणस्स बहुमज्जदेसभाए एत्थ णं मंदरचूलिआ णाम चूलिआ पण्णत्ता चत्तालीसं जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, मूले बारस जोअणाइं विक्खम्भेणं, मज्झे अट्ठ जोअणाइं विक्खम्भेणं, उप्पिं चत्तारि जोअणाइं विक्खम्भेणं, मूले साइरेगाइं सत्ततीसं

१. °साहिए - अकखत्रिबस। २. द्र. १।१०-१३। "जाव इति पदं किण्हे पदानन्तरं युज्यते अत्र कश्चिद् लिपिप्रमादतः सम्भाव्यते।" इति V .पृ.चू.१८ टि.२.।।

जोअणाइं परिक्खेवेणं, मज्झे साइरेगाइं पणवीसं जोअणाइं परिक्खेवेणं, उप्पिं साइरेगाइं [१]बारस जोअणाइं परिक्खेवेणं, मूले वित्थिण्णा मज्झे संखित्ता उप्पिं तणुआ गोपुच्छसंठाणसंठिआ सव्ववेरुलिआमई अच्छा सा णं एगाए पउमवरवेइआए जाव संपरिक्खित्ता उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे [२]जाव सिद्धाययणं बहुमज्झदेसभाए कोसं आयामेणं, अद्धकोसं विक्खम्भेणं, देसूणगं कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं, अणेगखंभसय [३]जाव धूवकडुच्छुगा।।२४२।।

'पंडगवणस्स ण' मित्यादि पाण्डकवनस्य 'बहुमध्यदेशभागेऽत्र मन्दरचूलिका नाम्ना चूलिका प्रज्ञप्ता सा' च 'चत्वारिंशतं योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन मूले द्वादशयोजनानि विष्कम्भेन मध्येऽष्टौ योजनानि' 'विष्कम्भेनोपरि चत्वारि योजनानि विष्कम्भेन मूले सातिरेकाणि सप्तत्रिंशतं योजनानि परिक्षेपेण मध्ये सातिरेकाणि पञ्चविंशति योजनानि परिक्षेपेणोपरि सातिरेकाणि द्वादश योजनानि परिक्षेपेण अत एव मूले विस्तीर्णा मध्ये संक्षिप्तोपरि तनुका गोपुच्छसंस्थानसंस्थिता सर्वात्मना वैडूर्यमया' 'अच्छे' त्यादि पूर्ववत् 'सा णं एगाए' इत्यादि पूर्ववत् 'उप्पि' मित्यादि तस्या उपरि 'बहुसमरमणीयो भूमिभागो' यावत्तत्र 'सिद्धायतनं बहुमध्य देशभागे' बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्येति ज्ञेयं तच्च 'क्रोशमायामतोऽर्द्धक्रोशं विष्कम्भेन देशोनं क्रोशमूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन' 'अणेगे' त्यादि प्राग्वत् यावद् धूपकडुच्छुकानामष्टोत्तरशतमत्र तिष्ठति यावत्करणादष्टोत्तरशतसंख्या जिनप्रतिमा अत्र वर्णनीया:।

(२४३) मंदरचूलियाए णं पुरत्थिमेणं पंडगवणं पण्णासं जोअणाइं ओगाहित्ता एत्थ णं महं एगे भवणे प०, एवं जच्चेव सोमणसे पुव्ववण्णिओ गमो भवणाणं पुक्खरिणीणं पासायवडेंसगाण य सो चेव णेअव्वो [४]जाव सक्कीसाणवडेंसगा तेणं चेव

१. दुवालस - अत्रिब।। २. द्र. १।३६ - ३७।। ३. द्र. १।३७ - ४०।। ४. द्र. ४।२४०।।

परिमाणेणं।।२४३।।

'मंदरचूलियाए' इत्यादि मन्दरचूलिकाया: **'पूर्वस्यां पाण्डकवनं पञ्चाशतं योजनान्यवगाह्यात्रान्तरे महदेकं भवनं प्रज्ञप्तं' 'एवं जो चेवे'** त्यादि एवं य एव गम: प्रकार: **'सौमनसवने भवनपुष्करिणीनां प्रासादावतंसकानां'** च **'पूर्वं वर्णित: स एव गमोऽत्रापि 'ज्ञेयो यावच्छक्रेशानयो: प्रासादावतंसकास्तेनैव परिमाणेन** वर्णिता भवन्ति।।२४३।।

अथ पाण्डुकवनेऽभिषेकशिला वक्तव्यतामाह–

(२४४) पण्डकवणे णं भंते! वणे कइ अभिसेअसिलाओ पण्णत्ताओ?, गोअमा! चत्तारि अभिसेअसिलाओ प०, तं०–

पंडुसिला १ पण्डुकंबलसिला २रत्तसिला ३रत्तकम्बलसिला ४।।२४४।।

'पंडगवणे ण' मित्यादि पाण्डुकवने **'भदन्त! वने कति अभिषेकशिला-'** स्तीर्थकराणमभिषेकार्था: शिला अभिषेकशिला: **'प्रज्ञप्ता:?'** भगवानाह–**'गौतम! चतस्रोऽभिषेकशिला: प्रज्ञप्तास्तद्यथा पाण्डुकशिला १,पाण्डुकम्बलशिला२, रक्तशिला ३ रक्तकम्बलशिला४।।२४४।।**

अथासां क्रमात्स्वरूपमभिधत्ते-

(२४५) कहि णं भंते! पंडगवणे पंडुसिला णामं सिला पण्णत्ता?, गोअमा! मंदरचूलिआए पुरत्थिमेणं पंडगवणपुरत्थिमपेरंते, एत्थ णं पंडगवणे वणे पंडुसिला णामं सिला पण्णत्ता, उत्तरदाहिणायया पाईणपडीणवित्थिण्णा अद्धचंदसंठाणसंठिआ पंचजोअणसयाइं आयामेणं, अड्ढाइज्जाइं जोअणसयाइं विक्खम्भेणं, चत्तारि जोअणाइं बाहल्लेणं, सव्वकणगामई अच्छा वेइआवणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता

वण्णओ[1]।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त! पाण्डकवने पाण्डुशिला नाम्नी शिला प्रज्ञप्ता?'** प्रभुराह–**'गौतम! मन्दरचूलिकायाः पूर्वस्यां पाण्डकवनपूर्वपर्यन्तेऽत्रान्तरे पाण्डुकवने पाण्डुशिला नाम शिला प्रज्ञप्ता'** सा च किं विशिष्टेत्याह–**'उत्तरे'** त्यादि **'उत्तर-दक्षिणायता' 'पूर्वापरविस्तीर्णा अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थिता पञ्चयोजनशतान्यायामेना-र्द्धतृतीयानि योजनशतानि विष्कम्भेन चत्वारि योजनानि बाहल्येन सर्वात्मना कनकमयी' 'अच्छे'** त्यादि वर्णकः पूर्ववत्, **'वेदिका वनखण्ड वर्णको'**ऽपि तथैव। ।२४५।।

(२४६) तीसे णं पंडुसिलाए चउद्दिसिं चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता जाव[2] **तोरणा वण्णओ ।।२४६।।**

'तीसे ण' मित्यादि, तस्याः **'पाण्डुशिलायाश्चतसृषु दिक्षु चत्वारि त्रिसोपान-प्रतिरुपकाणि प्रज्ञप्तानि' 'जाव तोरणा'** इति यावत्तोरणवक्तव्यतापरिसमाप्तिस्तावत् **'वण्णओ'** त्ति त्रिसोपानादिवर्णको वक्तव्यः।।२४६।।

(२४७) तीसे णं पंडुसिलाए उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, [3]**जाव देवा आसयन्ति।।२४७।।**

'तीसे ण' मित्यादि , तस्याः **'पाण्डुशिलाया उपरि बहुसमरमणीयो भूमिभागः प्रज्ञप्त'** एतद्वर्णकस्तावद् वाच्यो **'याव'**त्तत्र **'देवा'**-देव्य **'श्चासते'**।।२४७।।

(२४८) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए उत्तरदाहिणेणं एत्थ णं दुवे अभिसेअसीहासणा पण्णत्ता पञ्च धणुसयाइं आयाम-विक्खम्भेणं

१. द्र. १।१० - १३।। २. द्र. ४।२६ - ३०।। ३. द्र. १।१३।।

अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं बाहल्लेणं, सीहासणवण्णओ [१]भाणिअव्वो विजयदूसवज्जोत्ति। तत्थ णं जे से उत्तरिले सीहासणे तत्थ णं बहूहिं भवणवइवाणमंतरजोइसिअवेमाणिएहिं देवेहिं देवीहिं अ कच्छाइआ तित्थयरा अभिसिच्चंति। तत्थ णं जे से दाहिणिल्ले सीहासणे तत्थ णं बहूहिं भवण जाव वेमाणिय देवेहिं देवीहि य वच्छाईया तित्थयरा अभिसिच्चंति।।२४८।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य 'बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्य बहुमध्यदेशभागे उत्तरदक्षिणयोरत्रान्तरे द्वेऽभिषेकसिंहासने प्रज्ञप्ते' ते च प्रत्येकं 'पञ्च धनुःशतान्यायाम-विष्कम्भाभ्यामर्द्धतृतीयानि धनुःशतानि बाहल्येन सिंहासनवर्णको विजयदूष्यवर्जो'ऽत्र वाच्यः'तत्थ ण'मित्यादितत्र तयोर्मध्ये 'यदौत्तराहसिंहासनं तत्र बहुभि र्भवनपतिवानमन्तरज्योतिष्कविमानिकैर्देवदेवीभिश्च कच्छादिजाः' कच्छादिविजयो-त्पन्ना'स्तीर्थकरा अभिषिच्यन्ते' तथा 'तत्र यद्दाक्षिणात्यं सिंहासनं तत्र' तथैव चतुर्निकायिकै 'र्देवैर्वत्सादिविजयोद्भवास्तीर्थकरा अभिषिच्यन्ते।।२४८।।

(२४९) कहि णं भंते! पंडगवणे पंडुकंबलासिलाणामं सिला पण्णत्ता?, गोअमा! मंदरचूलिआए दक्खिणेणं, पंडगवणदाहिणपेरंते, एत्थ णं पंडगवणे वणे पंडुकंबलसिलाणामं सिला पण्णत्ता?, पाईणपडीणायया उत्तरदाहिणवित्थिण्णा एवं तं चेव पमाणं वत्तव्वया य भाणिअव्वा [२]जाव।।२४९।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व 'भदन्त! पाण्डुकवने वने पाण्डुकम्बला शिला प्रज्ञप्ता?' भगवानाह-'गौतम! मन्दरचूलिकाया दक्षिणस्यां पाण्डकवनदक्षिणपर्यन्ते' 'एत्थ ण' मित्यादि प्राग्वत्, नवरमियं 'पूर्वापरायता दक्षिणोत्तर-विस्तीर्णा' 'एवं तं चेवे' त्यादि एवं तदेव 'पाण्डुशिलासम्बन्धिप्रमाणं' यथा च तस्या 'वक्तव्यता' तथा 'भणितव्या

१. द्र. जीवा. ३।३११।। २. द्र. ४।२४५ - ४७।।

यावत्'।।२४९।।

(२५०) तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे सीहासणे प०, तं चेव सीहासणप्पमाणं[1], तत्थ णं बहूहिं भवणवइ जाव भारहगा तित्थयरा अहिसिच्चंति।।२५०।।

'तस्य बहुरमणीयस्य भूमिभागस्य बहुमध्यदेशभागेऽत्र महदेकं सिंहासनं प्रज्ञप्तं तदेव सिंहासनप्रमाणमस्य' ज्ञेयं यत्पूर्वं सिंहासनस्योक्तमित्यर्थः, 'तत्थण' मित्यादि पूर्ववन् नवरं 'भारहका' इति भरतक्षेत्रभाविनस्तीर्थकरा अभिषिच्यन्ते।।२५०।।

(२५१) कहि णं भंते! पण्डगवणे रत्तसिला णामं सिला पं०?, गो०! मंदरचूलिआए पच्चत्थिमेणं पण्डगवणपच्चत्थिमपेरंते, एत्थ णं पंडगवणे वणे रत्तसिला णामं सिला पण्णत्ता, उत्तरदाहिणायया पाईणपडीणवित्थिण्णा [2]जाव तं चेव पमाणं सव्वतवणिज्जामई अच्छा उत्तरदाहिणेणं एत्थ णं दुवे सीहासणा पण्णत्ता, तत्थ णं जे से दाहिणिल्ले सीहासणे तत्थ णं बहूहिं भवण० पम्हाइआ तित्थयरा अभिसिच्चंति, तत्थ णं जे से उत्तरिल्ले सीहासणे तत्थ णं बहूहिं भवण० जाव वप्पाइआ तित्थयरा अभिसिच्चंति।।२५१।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व 'भदन्त! पाण्डुकवने रक्तशिला नाम्ना शिला प्रज्ञप्ता?' भगवानाह-'गौतम! मन्दर चूलिकायाः पश्चिमतः पाण्डकवनपश्चिमपर्यन्ते' 'एत्थण' मित्यादि पूर्ववदेव नवरमत्र 'दक्षिणात्ये सिंहासने पक्ष्मादि' विजयोद्भवास्तीर्थकरा अभिषिच्यन्ते तथौत्तराहे सिंहासने' तु 'वप्रादिविजयभाविनस्तीर्थकरा अभिषिच्यन्त' इति।।२५१।।

(२५२) कहि णं भंते! पंडगवणे रत्तकंबलसिला णामं सिला पण्णत्ता? गोयमा!

---

१. द्र. ४।२४८।। २. द्र. ४।२४५-४८।।

मंदरचूलिआए उत्तरेणं पंडगवणउत्तरचरिमंते एत्थ णं पंडगवणे वणे रत्तकंबलसिला णामं सिला पण्णत्ता?, पाईणपडीणायया उदीणदाहिणवित्थिण्णा सव्वतवणिज्जमई अच्छा [1]जाव मज्झदेसभाए सीहासणं, तत्थ णं बहूहिं भवणवइ जाव देवेहिं देवीहि अ एरावयगा तित्थयरा अभिसिच्चंति।।२५२।।

'कहि णं भंते' इत्यादि, क्व भदन्त! 'पाण्डकवने रक्तकम्बलशिला नाम शिला प्रज्ञप्ता?' स्वाम्याह-'गौतम! मन्दरचूलिकाया उत्तरस्यां पाण्डुकवनोत्तरश्चरमान्ते' 'एत्थ णं पंडकवणे' त्यादि, सर्वं पूर्ववद्व्याख्येयं नवरं 'एरावयगा' इति 'ऐरावतक्षेत्रोद्भवास्तीर्थकरा अभिषिच्यन्ते।।२५२।।

मन्दरस्यैव स्वरूप विशेषमाह –

(२५३) मंदरस्स णं भंते! पव्वयस्स कइ कंडा पण्णत्ता? गोयमा! तओ कंडा पण्णत्ता, तं जहा–हिट्ठिल्ले कंडे, मज्झिमिल्ले कंडे उवरिल्ले कंडे।।२५३।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि, मन्दरस्य 'भदन्त! पर्वतस्य कति काण्डानि प्रज्ञप्तानि?' काण्ड नाम विशिष्टपरिणामानुगतो विच्छेदः स्वाम्याह–'गौतम! त्रीणि काण्डानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा–अधस्तन-काण्डं मध्यम काण्डम्]उपरितन काण्डम् '।।२५३।।

(२५४) मंदरस्स णं भंते! पव्वयस्स हिट्ठिले कंडे कतिविहे पण्णत्ते?, गोअमा! चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–पुढवी १, उवले २, वइरे ३, सक्करा ४।।२५४।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि मन्दरस्य 'भदन्त! पर्वतस्याधस्तन काण्डं कतिविधं प्रज्ञप्तं?' स्वाम्याह – 'गौतम! चतुर्विधं प्रज्ञप्तं तद्यथा' -'पुढवी' ति क्वचित्'पृथ्वीमयं?' क्वचिदु'पलमयं' २,क्वचि'द्वज्रमयं'३, क्वचित् शर्करामयम् ४।।२५४।।

---

१. द्र. ४।२४५ - ४८।।

(२५५) मज्झिमिल्ले णं भंते ! कंडे कतिविहे पं० ?, गोअमा ! चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–अंके १, फलिहे २, जायरूवे ३, रयए ४ ।।२५५।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि मन्दरस्य **'भदन्त! पर्वतस्य मध्यमकाण्डं कतिविधं प्रज्ञप्तं?'** भगवानाह–**'गौतम! चतुर्विध प्रज्ञप्तं तद्यथा-'** **'अंके'** इत्यादि **'अंङ्करूपं १, स्फटिकरूपं २, जातरूपरूपं ३, रजतरूपम्** ४।।२५५।।

(२५६) उवरिल्ले कण्डे कतिविहे पण्णत्ते? गोअमा! एगागारे पण्णत्ते सव्वजम्बूणयामए।।२५६।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि, मन्दरस्य **'भदन्त! पर्वतस्योपरितनकाण्डं कतिविधं प्रज्ञप्तं?'** भगवानाह–**'गौतम!'** **'एक्ककारे'** त्ति एक एवाकार: प्रकारो यस्य तत् एकाकारं **'प्रज्ञप्त'** मेकाकारत्वमेवाह **'सव्वजंबूणयामए'** त्ति सर्वात्मना जाम्बूनदमयमारक्त-स्वर्णमयमित्यर्थ:।।।२५६।।

एषामेव काण्डानां बाहल्यपरिमाणं पृच्छन्नाह -

(२५७) मंदरस्स णं भंते! पव्वयस्स हेट्ठिल्ले कंडे केवइअं बाहल्लेणं पं० ?, गोयमा! एगं जोअणसहस्सं बाहल्लेणं पण्णत्ते।।२५७।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि, मन्दरस्य **'भदन्त! पर्वतस्याधस्तनं काण्डं'** कियत्परिमाणं बाहल्येन प्रज्ञप्तम्? स्वम्याह-गौतम! एकं योजनसहस्रं बाहल्येन प्रज्ञप्तमेतच्च भूमध्यगतं ज्ञेयम्।।२५७।।

(२५८) मज्झिमिल्ले कंडे पुच्छा, गोअमा! तेवट्ठिं जोअणसहस्साइं बाहल्लेणं पं०।।२५८।।

'मज्झिल्ले कंडे पुच्छे' ति मध्यमे काण्डे बाहल्यमाश्रित्य पृच्छा कार्या तत्र च भगवानाह

–**'गौतम! त्रिषष्टि योजनसहस्राणि बाहल्येन प्रज्ञप्त'** मेतच्च समभूभागादारभ्य प्रतिपत्तव्यम्।।२५८।।

(२५९) उवरिल्ले पुच्छा, गोयमा! छत्तीसं जोअणसहस्साइं बाहल्लेणं पं०, एवामेव सपुव्वावरेणं मंदरे पव्वए एगं जोअणसयसहस्सं सव्वग्गेणं पण्णत्ते।।२५९।।

'उवरिल्ले पुच्छा' इति, उपरितने काण्डे 'मंदरस्स ण' मित्यादिना सूत्रेण प्रश्नस्ततो भगवानाह– **'गौतम! षट्त्रिंशतं योजनसहस्राणि बाहल्येन प्रज्ञप्तं' 'एवमेवे'** त्यादि एवमेवानेन प्रकारेण पूर्वापरसमुदायेन मन्दरपर्वत एकं योजनशतसहस्रं सर्वाग्रेण ज्ञातः।।२५९।।

अथ मेरोर्नाम्नि पृच्छन्नाह–

(२६०) मंदरस्स णं भंते ! पव्वयस्स कति णामधेज्जा पण्णत्ता?, गोअमा! सोलस णामधेज्जा पण्णत्ता, तं जहा-

[1]मंदर १ मेरु २ मणोरम ३ सुदंसण ४ सयंपभे अ ५ गिरिराया ६।
रयणोच्चए ७ सिलोच्चए ८ मज्झे लोगस्स ९ णाभी य १०।।१।।
अच्छे अ ११ सूरिआवत्ते १२, सूरिआवरणे १३ तिआ।
उत्तमे १४ अ दिसादीअ १५, वडेंसेति १६ अ सोलसे।।२।।२६०।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि मन्दरस्य **'भदन्त! पर्वतस्य कति नामधेयानि प्रज्ञप्तानि'** भगवानाह–**'गौतम! षोडश नामधेयानि प्रज्ञप्तानि'** तथा **'मंदरे'**त्यादि, गाथाद्वयं **'मन्दरो मन्दरो'** नाम देवस्तत्र पल्योपमस्थितिको महर्द्धिकः परिवसति तेन तद्ययोगान्मन्दर

---

१. समवायाङ्गे (१६।३) त्रयाणां नाम्नां भेदो दृश्यते - मंदर - मेरू - मणोरम - सुदंसण - सयंपभे गिरिराया । रयणुच्चय पियदंसण मज्झे लोगस्स नाभी य ।।१।। अत्थे य सूरियावत्ते सूरियावरणेत्ति य। उत्तरे य दिसाई य, वडेंसे इय सोलसे ।।२।।.।।

इत्यभिधीयते? सकलतिर्यग्लोकमध्यभागस्य मर्यादाकारित्वान्**मेरु**: २, मनांसि देवानामप्यतिसुरूपतया रमयतीति '**मनोरम**:' ३, शोभनं जाम्बूनदमयतया रत्नबहुलतया च मनोनिर्वृत्तिकरं दर्शनं यस्यासौ '**सुदर्शन**:' ४, स्वयमादित्यादि निरपेक्षको रत्नबहुलतया प्रभा प्रकाशो यस्य स '**स्वयंप्रभ**:' ५, तथा सर्वेषामापि गिरीणामुच्चैस्त्वेन तीर्थकरजन्माभिषेकाश्रयतया च राजा '**गिरिराज**:' ६, तथा रत्नानां नानाविधानामुत्प्राबल्येन चय उपचयो यत्र स '**रत्नोच्चय**:' ७, तथा शिलानां पाण्डुकम्बलशिला प्रभृतीनामूर्ध्वं शिरस उपरि सञ्चय: सम्भवो यत्र स '**शिलोच्चय**:' ८, तथा लोकस्य तिर्यग्लोकस्य समस्तस्यापि मध्ये वर्त्तत इति '**लोकमध्य**:' ९, तथा लोकस्य तिर्यग्लोकस्य स्थालप्रख्यस्य नाभिरिव स्थलमध्यगत समुन्नतवृत्तं चन्द्रक इव '**लोकनाभि**:' १०, तथा '**अच्छ**:' स्वच्छ: सुनिर्मल जाम्बूनदरत्नबहुलत्वात् ११, तथा सूर्या उपलक्षणमेतच्चन्द्रग्रहनक्षत्रतारकाश्च प्रदक्षिणमावर्त्तन्ते स '**सूर्यावर्त्त**:'१२, तथा सूर्यारुपलक्षणमेतच्चन्द्रग्रहनक्षत्रतारकाभिश्च समन्तत: परिभ्रमणशीलैरावृीयते स्म वेष्ट्यते स्मेति '**सूर्यावरण**:,' "**कृद्बहुल**" मिति वचनात्कर्मण्यनट् प्रत्यय: १३, तथा गिरीणामुत्तम इति '**उत्तम**:' १४, दिशामादि: प्रभवो दिगादिस्तथाहि-रुचकात् दिशां विदिशां च प्रभवो रुचकश्चाष्टप्रदेशात्मको मेरुमध्यवर्ती ततो मेरुरपि '**दिगादि**रित्युच्यते १५, तथा गिरीमाणवतंसक इवे'**त्यवतंसक**:' १६, इति षोडशमेरोर्नामानि **समवायाङ्गे** तु शिलोच्चयस्थाने 'प्रियदर्शन' इति नाम उच्यते उत्तमस्थाने चोत्तर इत्युच्यते तत्र भरतादीनामुत्तरदिग्वर्त्तित्वादुत्तरो यदाह-"**सव्वेसिं उत्तरो मेरु**" इति।।२६०।।

अथ मन्दरस्य नामनिमित्तं जिज्ञासिषु: पृच्छति-

(२६१) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ मंदरे पव्वए २?, गोअमा! मंदरे पव्वए मंदरे णामं देवे परिवसइ, महिद्धीए जाव पलिओवमट्ठिईए, से तेणट्ठेणं गोअमा ! एवं वुच्चइ मंदरे

पव्वए २ अदुत्तरं तं चेवत्ति[1] ।।२६१।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि अथ केनार्थेन 'भदन्त! मन्दर इति व्यपदिश्यते?' स्वाम्याह- 'गौतम! मन्दरे पर्वते मन्दर इति नाम्ना देवः परिवसति महर्द्धिकः' 'जाव' त्ति यावत्करणात् 'महज्जुइतिए' इत्यादि पदोपादानं 'पलिओवमठितीए' त्ति पल्योपमस्थितिकस्ततो मन्दरदेवस्वामिकत्वादसौ मन्दर इति तथा चाह 'से तेणट्ठेण' मित्यादि 'अदुत्तरं च ण' मित्यादि प्राग्वत्।।२६१।।

अथ नीलवद्वर्षधरस्वरूपं पिपृच्छिषुरिदमाह–

(२६२) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे णीलवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते?, गोयमा! महाविदेहस्स वासस्स उत्तरेणं, रम्मगवासस्स दक्खिणेणं, पुरत्थिमिल्ललवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं एत्थ णं जम्बुद्दीवे २ णीलवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते, पाईणपडीणायए उदीणदाहिणवित्थिण्णे, णिसहवत्तव्वया णीलवंतस्स [2]भाणिअव्वा, णवरं जीवा दाहिणेणं धणु उत्तरेणं एत्थ[3] णं केसरिहद्दहो, दाहिणेणं सीआ महाणई पवूढा समाणी उत्तरकुरुं एज्जेमाणी २ जमगपव्वए णीलवंतउत्तकुरुचंदेरावत मालवंतद्दहे अ दुहा विभयमाणी २ चउरासीए सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ भद्दसालवणं एज्जेमाणी २ मंदरं पव्वयं दोहिं जोअणेहिं असंपत्ता पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी अहे मालवंतवक्खारपव्वयं दालयित्ता मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं पुव्वविदेहं वासं दुहा विभयमाणी २ एगमेगाओ चक्कवट्टिविजयाओ अट्ठावीसाए २ सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी २ पंचहिं सलिलासयसहस्सेहिं बत्तीसाए अ सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे विजयस्स दारस्स जगइं दालइत्ता पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, अवसिट्ठं तं [4]चेव। एवं

१. द्र. १।४७।। २. द्र. ४।८६ - ८९।। ३. तत्थ - अकखत्रिबस ।। ४. द्र. ४।११-९५।।

णारिकंतावि उत्तराभिमुही णेअव्वा, णवरमिमं [१]णाणत्तं गंधावइवट्टवेअड्ढ-पव्वयं जोअणेणं असंपत्ता पच्चत्थाभिमुही आवत्ता समाणी अवसिट्ठं तं चेव पवहे अ मुहे अ जहा हरिकंतासलिला।।२६२।।

'**कहि ण**' मित्यादि, क्व '**भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे नीलवान्नाम्ना वर्षधरपर्वतः प्रज्ञप्तः?**' भगवानाह '**गौतम! महाविदेहस्य क्षेत्रस्योत्तरस्यां रम्यकक्षेत्रस्य दक्षिणस्यां पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमतः पश्चिमलवणाब्धेः पूर्वतोऽत्रान्तरे जम्बूद्वीपे द्वीपे नीलवानिति नाम्ना वर्षधरपर्वतः प्रज्ञप्तः**' स च किंभूतः? इत्याह-'**प्राचीनप्रतीचीनायत उदीचीन-दक्षिणविस्तीर्णः।**' अथ भरताद् द्विगुणो हिमवान् ततो द्विगुणं हैमवत क्षेत्रं ततो महाहिमवांस्ततो हरिवर्ष ततो निषधस्ततो महाविदेहः एवमैरावतादपि विदेहान् यावद् द्विगुणवृद्धिर्दक्षिणोत्तरतस्तु द्वौ द्वौ समौ तथा च निषधेन तुल्यो नीलवानिति। निषधवक्तव्यतायाः प्राक् सविस्तरं भणनात्तथैव तद्वक्तव्यतामतिदिशति। '**निसढवत्तव्वया नीलवंतस्स भाणियव्वा**' इति निषधवक्तव्यता नीलवतो भणितव्या। इदमुक्तं भवति यादृशी वक्तव्यता उच्चत्वोद्वेधविष्कम्भादिरूपा निषधवर्षधरस्य प्राग्निर्दिष्टा तादृगेव नीलवतोऽपि वर्षधरस्य निरवशेषा भावनीयेति '**नवर**' मिति निषधादत्रायं विशेषः '**जीवा दाहिणेण**' मित्यादि, अस्य नीलवतो जीवा दक्षिणतो वाच्या '**धनुस्तूत्तरतो**'ऽत्र नीलवद्वर्षधरस्वरूपं किञ्चिदुच्यते तथाह्ययं नीलवन्नामा वर्षधरः पूर्वापरायत उत्तर-दक्षिणविस्तीर्णः पूर्वापरकोटिभ्यां लवणोदधिं स्पृष्टश्चतुर्योजनशतोच्च एक योजनशतोद्वेधः षोडशयोजनसहस्राण्यष्टौ च योजनशतानि द्विचत्वारिंशदधिकानि द्वे च कले विष्कम्भतः एतस्य च बाहा पूर्वस्यामपरस्यां च प्रत्येकं विंशति योजनसहस्राणि एकं च योजनशतं पंचषष्ट्यधिकं द्वे च कलेऽर्द्धकलां चायामतोऽस्य जीवा दक्षिणस्यां पूर्वापरायता उत्तर-दक्षिणविस्तीर्णा कोटिद्वयेन जलधिं स्पृष्टा चतुर्नवति

---

१. णाणत्तं मालवंत परियागं वट्टवेयड्ढपव्वयं - अब।।

योजनसहस्राणि एकं च योजन शतं षट्पञ्चाशदधिकं द्वे च कले आयामतोऽस्य च धनु:पृष्टमुत्तरस्यामेकं योजनलक्षं चतुर्विंशति योजन सहस्राणि त्रीणि च योजन शतानि षट्चत्वारिंशदधिकानि नव च कला: परिक्षेपत: स्वयं चोभयो: पार्श्वयो र्द्वाभ्यां पद्मवरवेदिकाभ्यां द्वाभ्यां च वनखण्डाभ्यां परिक्षिप्तोऽस्योपरि च बहुसमत्वादिविशेषणविशिष्टो भूमिभागो यावन्नानामण्यादिभिरुपशोभितस्तत्र च बहवो देवा देव्यश्चासते शेरते रमन्ते इत्यादि सर्वं वाच्यं **'तत्थ केसरिद्दहो'** त्ति तत्र नीलवद्वर्षधरस्योपरि केसरिह्रदो वाच्योऽयं च तिगिच्छिह्रद इव चतुर्योजन सहस्रायामो योजनसहस्रद्वयविष्कम्भो दश योजनोद्वेधोऽच्छादिविशेषणोपेतो वक्तव्योऽस्यापि मध्यभागे षट्पद्मपरिक्षेपयुक्तं चतुर्योजनायामविष्कम्भं योजनद्वयबाहल्यं चैकं महापद्ममेतत्कर्णिका च द्वियोजनायामविष्कम्भा योजनबाहल्या एतदुपरि पद्मह्रदान्तवर्त्तिश्रीदेवीभवनसमानं भवनं तत्र च कीर्त्ति नाम्नी देवी परिवसति कीर्त्तिनामदेवीनिवासयोगान्मनोहारिकेसरकलितकमलयोगाच्च केसरीत्यस्याभिधानमस्माच्च केसरिह्रदाद्दक्षिणतोरणेन शीता महानदी प्रव्यूढा सती सप्तयोजनसहस्राणि चत्वारियोजन शतान्येकविंशत्यधिकानि एकां च कलां दक्षिणाभिमुखी पर्वतोपरि गत्वा चतुर्योजनायामया पञ्चाशद्योजनविष्कम्भया योजनबाहल्यया जिह्विकयाऽशीत्युत्तरचतु:शतयोजनायामविष्कम्भे शीताप्रपातकुण्डे निपतति। एतन्मध्ये च चतुषष्टियोजनायामविष्कम्भो द्व्युत्तरयोजनशतद्वयपरिरयो जलन्तात्क्रोशद्वयोच्छ्रित: शीताद्वीपस्तन्मध्ये देशे शीतादेवीनिवासयोग्यं भवनं वाच्यमेतेषां वर्णक: प्राग्वदेव ज्ञातव्य इति **'सीतामहानदी पवूढा समाणी'** त्यादि प्रागुक्तशीताप्रतापकुण्डस्य दक्षिणतोरणेन शीतामहानदी प्रव्यूढा सती **'उत्तरकुरून् परियति २ यमकपर्वतौ'** तथा **'नीलवदुत्तरकुरूचन्द्रैरा- वतमाल्यवद्द्रहान् द्विधा विभजमाना विभजमाना चतुरशीत्या सलिलासहस्रैरापूर्यमाणा भद्रशालवनं परियती'** आययन्तीव वा **'मन्दरं पर्वतं द्वाभ्यां**

योजनाभ्यामसम्प्राप्ता पूर्वाभिमुखी परावर्त्तिता सती अधोभागेन माल्यवन्तं वक्षस्कारपर्वतं विभिद्य मंदरस्य पर्वतस्य पूर्वस्यां दिशि पूर्वविदेहं वर्षं द्विधा विभजमाना एकैकस्माच्चक्रवर्त्तिविजयात्प्रत्येक'मष्टाविंशत्या सलिलासहस्रैरापूर्यमाणा' 'पंचहि सलिलासयसहस्सेहिं' ति मूलत आरभ्य सर्वसंख्यया पञ्चभि र्नदीलक्षै **'द्वात्रिंशता सलिलासहस्रैश्च समग्रा–'** सहिता'**ऽधो विजयस्य द्वारस्य जगतीं विदार्य' 'पूर्वदिशा लवणसमुद्रं समप्येति'** - प्रविशतीत्यर्थः **'अविसिट्ठं तं चेव'** ति अवशिष्टं प्रवहे मुखे च विस्तारादिकं तदेव यच्छीतोदायाः प्राक् प्रत्यपादीत्यर्थः। तच्चैवं शीतायाः प्रवहे पञ्चाशद्योजननानि विष्कम्भो योजनं चोद्वेधो मुखे तु पञ्च योजनशतानि विष्कम्भो दशयोजनान्युद्वेध इत्येवं नारिकान्तापि **'उत्तराभिमुही णेयव्वा'** इत्येवं नारीकान्ताप्युत्तराभिमुखी नेतव्या। इयमत्र भावना। इयं हि केसरिह्रदादौत्तराहतोरणेन विनिर्गत्य पर्वतोपरि शीतावद्गत्वा प्रागुक्तशीताजिह्विकातोऽर्द्धप्रमाणया जिह्विकया चत्वारिंशदधिकयोजनशतद्वयायामविष्कम्भे नारीकान्ताप्रपातकुण्डे निपतति। एतन्मध्ये शीताद्वीपार्द्धमानो नारीकान्ताद्वीपस्तदुपरि भवनं नारीकान्ता देव्या वासार्हं वक्तव्यं ततश्च स्वप्रपातकुण्डस्योत्तरतोरणेन नारीकान्तामहानदी प्रव्यूढा सती रम्यक्वर्षं परियतीति प्रत्येतव्यं **'नवरी'** त्यादि नवरि केवल'**मिदं नानात्वं गन्धपातिनं वृत्तवैताढ्यपर्वतं योजनेनासम्प्राप्ता पश्चिमाभिमुखमावृत्ता सती' 'अवसिट्ठं तं चेव'** त्ति भणनात् 'रम्मगवासं दुहा विभयमाणी छप्पन्नाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा अहे जगइं दालइत्ता पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं सम्प्पेति' इति ज्ञेयं' **'पवहे मुहे य जहा हरिकंता'** 'इति प्रवहे द्रहाद्विनिर्गमरूपे मुखे च समुद्रप्रवेशरूपे यथा हरिकान्ता नदी पूर्वमुक्ता तथेयमपि तथाहि प्रभवे पञ्चविंशतियोजनानि विस्तारतोऽर्द्धयोजनं चोद्वधेन मुखमूले त्वर्द्धतृतीयानि योजन शतानि विष्कम्भेन पञ्च योजनान्युद्वेधेनेति।।

२६२।।

अथ नीलवद्वर्षधरकूटवक्तव्यतां प्रश्नयन्नाह-

(२६३) णीलवंते णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?, गोअमा! नव कूडा पं०, तं जहा–सिद्धाययणकूडे०-

सिद्धे १ 'णीले' २ पूर्वविदेह ३ सीअय ४ कीर्त्ति ५ णारी अ।
६, 'अवरविदेह ७ रम्मगकूडे ८ उवदंसणे ९ चेव।।१।।
सव्वे एए कूडा पञ्चसइया, रायहाणीयो उत्तरेणं ।।२६३।।

'नीलवंते ण' मित्यादि नीलवति णमिति वाक्यालङ्कारे **'भदन्त! वर्षधरे पर्वते कति कूटानि प्रज्ञप्तानि?'** भगवानाह –**'गौतम! नवकूटानि तद्यथा–सिद्धायतन कूटं १'** नवानां सङ्ग्राहिकी गाथामाह **'सिद्धे'** इत्यादि' सिद्धायतन कूटं १ **'नील'** त्ति नीलवत्कूटं २ **'पूर्वविदेह कूटं ३ शीताकूटं ४ कीर्त्तिकूटं,'** ५, **'नारी'** त्ति नारीकान्ता कूटं ६, **'अपरविदेह कूटं ७ रम्यक्कूटं ८ उपदर्श कूटं ९'** च : समुच्चये एवेत्यवधारणे ततश्च नवैव कूटान्यत्रेति भावः। **'सव्वे वि एते कूडा पंच सइया'** इति सर्वाण्यपि नवान्येतानि कूटानि पञ्चशतिकानि पञ्चशतयोजनोच्चानि **'रायहाणीओ उत्तरेणं'** त्ति एतत्कूटाधिपतीनां राजधान्यो मेरोरूत्तरस्यां दिशि इतोऽसंख्येयतमेऽन्यस्मिञ्जम्बूद्वीपे प्रत्येया इत्यर्थः।।२६३।।

अथ नीलवतो वर्षधरस्य नामनिबन्धनं बुभुत्सुरिदमाह –

(२६४) से केणट्ठेण भंते!' एवं वुच्चइ णीलवंते वासहरपव्वए? गोअमा ! णीले णीलोभासे, णीलवंते अ इत्थ देवे महिड्ढीए जाव परिवसइ। सव्ववेरुलिआमए णीलवंते जाव[1] णिच्चे।।२६४।।

'से केणट्ठेण' मित्या दि, अथ केनार्थेन **'भदन्त! एवमुच्यते नीलवान् वर्षधरपर्वतः**

१. द्र. ४।८१ - ८३।।

२' इति भगवानाह–गौतम! नीलवान् वर्षधरपर्वतो **'नीलो'** नीलवर्णस्तथा **'नीलावभासो'** यदिवा नीला वैडूर्याख्यमणयो भूयांसो यत्र स **'नीलवान्,'** तथाहि–चतुर्थो वर्षधराद्रिः सर्ववैडूर्यरत्नमयस्तेनासौ नीलमणियोगान्नीलवानिति तथा **'नीलवांश्चात्र देवो महर्द्धिको यावत्परिवसति'** तदेतेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते नीलवान् वर्षधरो नीलवान् वर्षधर इति **'सव्व वेरूलियामयनीलवंते जाव निच्चे'** इति सर्वात्मना वैडूर्यमयो नीलवान् वर्षधरपर्वत इतीह यावत्करणत् 'अदुत्तरं च णं गोयमा नीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स सासए नामधिज्जे पण्णत्ते' इत्यादि द्रष्टव्यं यावन्नित्य इति।।२६४।।

अथ क्रमप्राप्तरम्यकवर्षवक्तव्यतामाह-

(२६५) कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे रम्मए णामं वासे पण्णत्ते? गोयमा! णीलवंतस्स उत्तरेणं, रुप्पिस्स दक्खिणेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एवं जह चेव हरिवासं तह चेव रम्मयं [1]]वासं [2]भाणियव्वं, णवरं–दक्खिणेणं जीवा उत्तरेण धणुं (धणुपट्ठं?) अवसेसं तं चेव।।२६५।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व णमिति वाक्यालङ्कारे **'भदन्त'** परमकल्याण योगिन्! **'जम्बूद्वीपे द्वीपे रम्यकवर्ष नाम्ना वर्षं क्षेत्रं प्रज्ञप्तं?'** भगवानाह-**'गौतम! नीवलतो वर्षधरस्योत्तरस्यां रुक्मिणो वर्षधरस्य दक्षिणस्यां पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमायां पश्चिमलवणसमुद्रस्य पूर्वस्यां'** 'एत्थणं' त्ति अत्रान्तरे **'जम्बूद्वीपे रम्यक् वर्षं नाम्ना वर्षं प्रज्ञप्तमिदं'** च प्रागुक्तहरिवर्षक्षेत्रतुल्यमिति तेनैवातिदिशति **'एवं जहा चेव हरिवासं तहाचेव रम्मयं भाणियव्वं'** इति। एवं प्रागुक्तविधिना यथा हरिवर्षमायामविष्कम्भस्वरूपविशेषादिना भणितं तथैव रम्यकमपि भणितव्यं **'नवरमयं'** विशेषः **'दक्षिणस्यां जीवा उत्तरस्यां च**

१. वासं - अकखत्रिबसपुवृ.ह्रीवृ. नास्ति।। २. द्र. ४।८४।।

धनुरिति।' अत्र **'शेषं तदेवात्र'** रम्यकवर्षस्वरूपं किञ्चिदभिधीयते तथाहि–रम्यकवर्षं पूर्वापरायतमुत्तरदक्षिणविस्तीर्णं कोटिद्वयेन लवणाब्धिं स्पृष्टमष्टयोजनसहस्राणि चत्वारि च योजनशतान्येकविंशात्यधिकानि एकां च कलां विष्कम्भत : एतस्य बाहा पूर्वापरयोस्त्रयोदश योजनसहस्राणि त्रीणि च योजनशतान्येकषष्ट्यधिकानि षट् च कला: सार्द्धा आयामत:। एतस्य जीवा दक्षिणस्यां पूर्वापरायता कोटिद्वयेन लवणसमुद्रं स्पृष्टा त्रिसप्ततिं योजनसहस्राणि नव च योजनशतान्येकसप्तत्युत्तराणि सप्तदश च कला: सार्द्धा: आयामत:। एतस्य धनुरूत्तरस्यां चतुरशीति योजनसहस्राणि षोडश योजनाधिकानि चतस्रश्च कला: परिक्षेपतोऽस्य च भूमिभाग: प्राग्वद्बहुसमत्वादिविशेषणोपेतो यावद्बहुविधमण्याद्युपशोभितो वर्णनीयोऽत्रत्यमनुजा श्चहरिवर्षक्षेत्रभाविमिथुनकसमाना:।।२६५।।

सम्प्रति रम्यकवर्षमध्यभागव्यवस्थितवृत्तवैताढ्यस्य स्वरूपमवगन्तुकाम: पृच्छति-

(२६६) कहि णं भंते! रम्मए वासे गंधावाई णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ते? गोयमा! णरकंताए पच्चत्थिमेणं, णारीकंताए पुरत्थिमेणं, रम्मगवासस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं गंधावई णामं वट्टवेयड्ढे पव्वए पण्णत्ते, जं चेव वियडावइस्स तं चेव गंधावइस्सवि वत्तव्वं। अट्ठो, बहवे उप्पलाइं जाव गंधावइवण्णाइं गंधावइवण्णाभाइं गंधावइप्पभाइं। पउमे य इत्थ देवे महिड्ढीए [१]जाव पलिओवमट्ठिईए परिवसइ। रायहाणी उत्तरेणं।।२६६।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व **'भदन्त रम्यकवर्षे गन्धापाती नाम्ना वृत्तवैताढ्यपर्वत: प्रज्ञप्त:?' 'वृत्तो वर्तुलाकृति:'** स चासौ वैताढ्य पर्वतश्च वृत्तवैताढ्यपर्वत इति। भगवानाह–**'गौतम! नरकान्ताया:'** पूर्वोदधिं यान्त्या: **'पश्चिमायां नारीकान्ताया:'** पश्चिमसमुद्रं यान्त्या: प्रागुक्तस्वरूपाया: **'पूर्वस्यां रम्यकवर्षस्य बहुमध्यदेशभागे अत्रान्तरे**

१. द्र. १।२४।।

गन्धापाती नाम्ना वृत्तवैताढ्यपर्वतः प्रज्ञप्तः।' स्थानाङ्ग-क्षेत्रसमासयोस्तु माल्यवन्नामा वृत्तवैताढ्यो रम्यकेऽभिधीयते **'जं चेव वियडावइस्स तं चेव गंधावइस्स वि वत्तव्व'** मिति यदेव विकटापातिनो वृत्तवैताढ्यस्य परिमाणादिस्वरूपवर्णनं पूर्वमभ्यधायि तदेव गन्धापातिनोऽपि वक्तव्यमित्यर्थस्तथा ह्ययमपि मूलोपरिव्युत्त्वेन च योजनसहस्रप्रमाणः सर्वत्र समः पल्यङ्काकार इत्यादि प्राग्वद्वोद्धव्यं **'अट्ठो य'** त्ति अर्थश्च गन्धापातिनामनिमित्तभूतो वाच्यः स चैवं 'से **'केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ गंधावइ वट्टवेयड्ढपव्वए २'** इति सूत्रेण पृष्टः सन् **'बहवे उप्पलाइं'** इत्यादि गर्भेण वाक्येन निर्वाच्यस्तच्चैवं संपूर्णतया वाच्यं। 'गोयमा! गंधावइ वट्टवेयड्ढपव्वए बहुसु खुड्डाखुड्डीयासु वावीसु जाव बहवे उप्पलाइं जाव **'गंधावाइवण्णाइं गंधावइवण्णाभाइं गंधावइप्पभाइं पउमे य, एत्थ देवे महड्ढिए जाव पलिओवमठितीए परिवसति'** सुगमं चेदं **'रायहाणी उत्तरेणं'** ति एतदधिपतेः पद्मदेवस्य राजधानी मेरोरुत्तरस्यां दिशि वक्तव्येत्यर्थः।।२६६।।

अथ रम्यकवर्षस्य नामान्वर्थं पिपृच्छिषुरिदमाह-

(२६७) से केणट्ठेण भंते! एवं वुच्चइ–रम्मए वासे रम्मए वासे? गोयमा! रम्मगवासे णं रम्मे रम्मए रमणिज्जे। रम्मए य इत्थ देवे जाव परिवसइ। से तेणट्ठेणं।।२६७।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि, प्रश्नवाक्यं स्पष्टतरं भगवानाह-**'गौतम! रम्यकवर्षं रम्यं रम्यकं रमणीयमे'** कार्था एते शद्वा रम्यत्वातिशयप्रतिपादनार्थमुक्ता यदिवा रम्यते क्रीड्यते नानाविधैः कल्पपादपैः सुवर्ण-मणिखचितैश्च तैस्तैः प्रदेशैरतिरमणीयतया रतिविषयतां नीयते इति रम्यं रम्यमेव **'रम्यकं'** रम्यकनामा **'चात्र देवो'** महर्द्धिको **'यावत्परिवसति'** तेन तद्योगाद्रम्यकमिति व्यवह्रियते तथा चाह **'से तेणट्ठेण'** मित्यादि पूर्ववत्।।२६७।।

अथ रुक्मिनामनो वर्षधरस्य वक्तव्यतामाह-

(२६८) कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे रुप्पी णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते? गोयमा! रम्मगवासस्स उत्तरेणं, [1]हेरण्णवयवासस्स दक्खिणेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे रुप्पी णामं वासहरपव्वए, पण्णत्ते–पाईणपडीणायए उदीणदाहिणवित्थिण्णे, एवं जा चेव महाहिमवंतवत्तव्वया सा चेव रुप्पिस्सवि, णवरं–दाहिणेणं जीवा उत्तरेणं धणुं (धणुपट्ठं) अवसेसं तं चेव, महापुंडरीए दहे, [2]णरकंता महाणदी दक्खिणेणं णेयव्वा, जहा रोहिया पुरत्थिमेणं गच्छइ, रुप्पकूला उत्तरेणं णेयव्वा, [3]जहा हरिकंता पच्चत्थिमेणं गच्छइ, अवसेसं तं चेव।।२६८।।

'कहि ण' मित्यादि, क्व 'भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे रुक्मी नाम्ना वर्षधरपर्वतः प्रज्ञप्तः?' भगवानाह-'गौतम! रम्यकवर्षस्योत्तरतो हिरण्यवतवर्षस्य दक्षिणतः पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमतः पश्चिमलवणसमुद्रस्य पूर्वतोऽत्रान्तरे जम्बूद्वीपे द्वीपे रूक्मी नाम्ना वर्षधरपर्वतः प्रज्ञप्तः' स च 'प्राचीनप्रतीचीनायत उत्तरदक्षिणविस्तीर्णः' 'एवं जच्चेवे' त्यादि एवं यैव 'महाहिमवतो वक्तव्यता' पूर्वमाख्याता 'सैव' रुक्मिणोऽपि वक्तव्येत्यर्थः, 'नवरमस्य दक्षिणतो जीवा उत्तरतो धनुरिति' 'अवसेसं तं चेव' त्ति अवशिष्टं स्वरूपं तदेव यन्महाहिमवन्तः प्रोक्तमिति अस्यापि वक्तव्यता संक्षेपादुच्यते तथाहि- रुक्मिनामा वर्षधरः पूर्वापरकोटिभ्यां लवणोदधिं स्पृष्टो योजनशतद्वयोच्छ्रयः पञ्चाशद्योजनोद्वेधश्चत्वारि योजनसहस्राणि द्वे च योजनशते दशोत्तरे दश च कला विष्कम्भतोऽस्य च बाहा पूर्वतः पश्चिमतश्च प्रत्येकं नव नव योजनसहस्राणि द्वे च योजन शते षट्सप्तत्यधिके नव च कलाः सार्द्धा आयामतोऽस्य च जीवा दक्षिणस्यां पूर्वापरायता उत्तरदक्षिणविस्तीर्णा कोटिद्वयेन जलधिं स्पृष्टा त्रिपञ्चाशतं योजनसहस्राणि नव च

१. हेरण्णवासस्स - अकखत्रिबस ।। २. णारिकंता (अब), स्थानाङ्गेऽपि (२।२९३) णरकंत्ता इत्येव पाठो लभ्यते।।
२. द्र. ४।७३।७८

योजनशतान्यकेत्रिंशदधिकानि षट् च कलाः किञ्चिद्विशेषाधिका आयामतोऽस्य च धनुः पृष्टमुत्तरतः सप्तपञ्चाशतं योजनसहस्राणि द्वे च योजनशते त्रिनवत्यधिके दशकलाः परिक्षेपतः स्वयं चोभयोः पार्श्वयोर्द्वाभ्यां पद्मवरवेदिकाभ्यां द्वाभ्यां च वनखण्डाभ्यां परिक्षिप्तः एतस्योपरि बहुसमत्वादिविशेषणो भूमिभागो यावन्नानामण्यादिभिरुपशोभितस्तत्र च बहवे देवा देव्यश्चासते शेरते रमन्ते इयादि सर्वं वाच्यं **'महापोंडरियद्दहो'** त्ति एतदुपरितनसमभूभागमध्ये महापुण्डरीकद्रहो वाच्योऽयं च महापद्मद्रह इव योजन सहस्रद्वयायाम एकयोजनसहस्रं विष्कम्भो दश योजनोद्वेधः, एतन्मध्ये च द्वियोजनायामविष्कंभं योजनबाहल्यं तावत्पद्मवलयकलितं महापद्मं तत्कर्णिका चैकयोजनविस्तारा अर्द्धयोजनोच्चा तदुपरिभवनं च बुद्धिदेवीनिवासयोग्यमित्यादि प्राग्वदेवोपयुज्य वक्तव्या। एतस्माच्च द्रहाद्दक्षिणतोरणेन नरकान्तानदी निर्गच्छति निर्गत्य च यथा महापद्मह्रदविनिर्गता रोहितानदी पूर्वदिशा समुद्रं प्रविशति तथेयमपीत्याह-**'नरकंतानदी दक्खिणेण णेयव्वा जहा रोहिया पुरत्थिमेणं गच्छती'** 'ति अत्रायं भावार्थः, महापुण्डरीकह्रदाद्दाक्षिणात्येन तोरणेन नरकान्तानदी प्रव्यूढा सती षोडश योजनशतानि पञ्चोत्तराणि पञ्च च कला दक्षिणाभिमुखी पर्वतोपरि गत्वा शीताजिह्विकातोऽर्द्ध प्रमाण्या जिह्विकया शीताकुण्डादर्द्धमाने नरकान्ताप्रपातकुण्डे निपतति। तन्मध्यभागे च द्वात्रिंशद्योजनायामविष्कम्भो नरकान्ताभिधो द्वीपस्तदुपरि च नरकान्तादेवीनीवासार्हं च भवनं भणनीयं तथा नरकान्ताप्रपातकुण्डाद्दक्षिणतोरणेन नरकान्तामहानदी प्रव्यूढा सती रम्यकवर्षं परिगच्छन्ती गन्धापातिवृत्तवैताढ्यं योजनेनासम्प्राप्ता पूर्वाभिमुखी व्याघुटिता रम्यकवर्षं द्विधा विभजमाना षट्पञ्चाशन्नदीसहस्रसहिताऽधो जगतीं विभिद्य पूर्वदिशा लवणाब्धिं प्रविशति। इयं च प्रवाहे पञ्चविंशतियोजन-विष्कम्भाऽर्द्धयोजनोद्वेधा समुद्रप्रवेशेत्वर्द्धतृतीययोजनशतविस्तारा पञ्चयोजनोद्वेधा शीतातः सर्वत्रार्द्धप्रमाणत्वादिति **'रूप्यकूला उत्तरेणं णेयव्वा जह हरिकंता पच्चत्थिमेणं गच्छति अवसेसं तं चेवे'** ति, रूप्यकुला उत्तरस्यां नेतव्या यथा पूर्वं हरिकान्ताभिधा महानदी

महापद्महृदनिर्गता पश्चिमदिशा समुद्रं प्रविशतीत्युक्तं तथेयमप्यवशिष्टं पर्वतोपरिगमनादिकं तदेवास्याः समासतो वक्तव्यतैवं महापुण्डरिकहृदादौत्तराहद्वारेण रूप्यकूला महानदी प्रव्यूढा सती षोडशयोजनशतानि पञ्चोत्तराणि पञ्च च कला उत्तराभिमुखी पर्वतोपरि गत्वा एक योजनायामया सार्द्धद्वादशयोजनविस्तारया गव्यूतबाहल्यया जिह्विकया विंशत्युत्तरयोजनशता-यामविष्कम्भे रूप्यकूलाप्रपातकुण्डे निपतति। एतन्मध्ये रूप्यकूला द्वीपः षोडशयोजना-यामविष्कम्भः साधिकपञ्चाशद्योजनपरिक्षेपो जलान्ताद्व्यूतद्वयोच्छ्रित एतस्योपरि च रूप्यकूला देवी निवासोचितं भवनं वाच्यं ततश्च रूप्यकुलाप्रपातकुण्डस्योत्तरदिग्द्वारेण रूप्यकूला नदी प्रव्यूढा सती हैरण्यवन्तवर्षं प्रतियती माल्यवन्तवृत्तवैताढ्यपर्वतम-र्द्धयोजनेनासम्प्राप्ता पश्चिमाभिमुखी परावृत्ता सती हैरण्यवन्तवर्षं द्विधा विभजमानाऽष्टाविंशतिनदीसहस्रसहिताऽधो जगतीं विदार्य पश्चिमदिशा लवणसमुद्रं प्रविशति। इयं च प्रवहे सार्द्धत्रयोदशयोजनविस्तारा क्रोशोद्वेधा मुखे तु पञ्चविंशत्यधिकयोजन-शतविस्तारा दशगव्यूतोद्वेधा च, रुप्यकूलास्वरूपं सर्वमपि प्रायो रोहिता समं समवसेयमिति।।२६८।।

अथ रुक्मिवर्षधरकूटस्वरूपं प्ररुपयन्नाह-

(२६९) रुप्पिम्मि णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता? गोयमा! अट्ठ कूडा पण्णत्ता, तं जहा–गाहा -

सिद्धे रुप्पी रम्मग, णरकंता बुद्धि रुप्पकूला य।
हेरण्णवए मणिकंचणे य रुप्पिम्मि कूडाइं।।१।।
सव्वेवि एए पंचसइया, रायहाणीओ उत्तरेणं।।२६९।।

'रुप्पिंम्मि ण' मित्यादि, रूक्मिणि **'भदन्त! वर्षधरपर्वते कति कूटानि प्रज्ञप्तानि?'**

भगवानाह-**'गौतम! अष्टौ कूटानि प्रज्ञप्तानि सिद्धे'** त्यादि गाथा **'सिद्ध'** त्ति **'सिद्धायतनकूटं** १, **रुक्मिकूटं** २, **'रम्यककूटं** ३, **नरकान्ताकूटं** ४, **बुद्धिकूटं** ५, **रूप्यकूलाकूटं** ६, **हैरण्यवतकूटं** ७, **मणिकाञ्चनकूटं'** ८ रूक्मिणि वर्षधरे एतानि कूटानि **'सव्वे वि एते पंचसइय'** त्ति सर्वाण्येतानि कूटानि पञ्चशतिकानि पञ्चशतयोजनोच्चानीत्यर्थः **'रायहाणीओ उत्तरेणं'** ति एतत्कूटाधिपानां राजधान्यो मेरोरूत्तरस्यां दिशि वक्तव्याः।।२६९।।

अथ रुक्मिणो नामान्वर्थावबोधाय पृच्छति

(२७०) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–रुप्पी वासहरपव्वए रुप्पी वासहरपव्वए? गोयमा! रुप्पी णं वासहरपव्वए रुप्पी रुप्पपट्टे रुप्पिओभासे सव्वरुप्पामए। रुप्पी य इत्थ देवे पलिओवमट्ठिईए परिवसइ। से तेणट्ठेणं।।२७०।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि, अथ केनार्थेन **'भदन्त! एवमुच्यते रुक्मीवर्षधरपर्वत इति?'** भगवानाह-**'रुक्मीवर्षधरपर्वतो रुक्मी रूप्यवान् रूप्यपट्टो'** रूप्यमयपट्ट इव **'रुप्यावभासः सर्वात्मना रूप्यमय'**स्ततश्चायमर्थः, रुक्मं रूप्यं शद्बानामनेकार्थत्वात्तद्य-स्यास्तीति रुक्मी अत्र नित्ययोगलक्षणमर्थमधिकृत्येन्प्रत्ययः स हि पर्वतो रूप्यमयः शाश्वतक इति नित्ययोगे इन् प्रत्ययो यदिवा **'रुक्मी चात्र देवः पल्योपम स्थितिको यावत्परिवसति'** तेन तद्योगादयं रुक्मीत्याह **'से तेणट्ठेण'** मित्यादि प्राग्वत्।।२७०।।

सम्प्रति हैरण्यवतवर्षवक्तव्यतां व्यञ्जयति-

(२७१) कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे हेरण्णवए वासे पण्णत्ते? गोयमा! रुप्पिस्स उत्तरेणं, सिहरिस्स दक्खिणेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे हेरण्णवए वासे पण्णत्ते। एवं

जह चेव हेमवयं तह चेव हेरण्णवयंपि [1]भाणियव्वं, णवरं–जीवा दाहिणेणं उत्तरेणं धणुं (धणुपट्ठं?) अवसिट्ठं तं चेव।।२७१।।

'कहि णं भंते' इत्यादि, क्व **'भदन्त! जम्बूद्वीपे द्वीपे हैरण्यवतं नाम्ना वर्षं प्रज्ञप्तं?'** भगवानाह-**'गौतम! रूक्मिणो वर्षधराद्रेरुत्तरत: शिखरिणो वर्षधरस्य दक्षिणस्यां पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमत: पश्चिम लवणसमुद्रस्य पूर्वतोऽत्रान्तरे जम्बूद्वीपे द्वीपे हैरण्यवंतं नाम वर्षं प्रज्ञप्तमिदं'** च हैमवतक्षेत्रसमस्वरूपमिति तेनातिदिशन्नाह **'एवं जह चेव हेमवयं तह चेव हेरण्णवयं पि भाणियव्व'** मिति गतार्थं चेदं **'नवरं जीवा दाहिणेणं उत्तरेणं धणु'** मिति नवरमिति विशेषद्योतकं पदं ततोऽस्य जीवा दक्षिणतो धनुस्तूत्तरत इति **'अवसिट्ठं तं चेव'** त्ति अवशिष्टं प्रमाणादि तदेव यद्धैमवतस्योक्तमित्यर्थ: हैरण्यवतक्षेत्रस्य स्वरूपं हैमवतानुसारेण किञ्चिदभिधीयते, तथाहि-हैरण्यवतं वर्षं पूर्वपश्चिमायतं दक्षिणोत्तरविस्तीर्णं पर्यङ्कसंस्थानसंस्थितं पूर्वापरकोटिभ्यां लवणसमुद्रं स्पृष्टं द्वेयोजनसहस्रे एकं च योजनशतं पञ्चोत्तरं पञ्चकला विष्कम्भत: एतस्य बाहा पूर्वपश्चिमत: षट्योजनसहस्राणि सप्त च योजनशतानि पञ्चपञ्चाशदधिकानि कलात्रयं चायामेनैतस्य जीवा दक्षिणस्यां पूर्वापरायता पूर्वापरकोटिभ्यां लवणोदधिं स्पृष्टा सप्तत्रिंशतं योजनसहस्राणि षट् च योजनशतानि चतु:सप्तत्यधिकानि षोडश च कला आयामत:, एतस्य धनुरुत्तरस्यामष्टत्रिंशतं योजनसहस्राणि सप्त च योजनशतानि चत्वारिंशदधिकानि दश च कला: परिक्षेपत: एतद्भूमिभाग मनुष्यादिस्वरूपवर्णनं च हैमवतवदवसर्पिणीतृतीयारकवद्भावनीयमिति।। २७१।।

साम्प्रतं हैरण्यवतवर्षमध्यभागवर्त्तिवृत्तवैताढ्यवक्तव्यतामाह–

(२७२) कहि णं भंते! हेरण्णवए वासे मालवंतपरियाए णामं वट्टवेयड्ढपव्वए पण्णत्ते गोयमा! सुवण्णकूलाए पच्चत्थिमेणं, रुप्पकूलाए पुरत्थिमेणं, एत्थ णं [हेरण्णवयस्स

---

४. द्र. ४।५५-५६।।

वासस्स बहुमज्झदेसभाए] मालवंतपरियाए णामं वट्टवेयड्ढे पण्णत्ते। [1]जह चेव सद्दावई तह चेव मालवंतपरियाए। अट्ठो, उप्पलाइं पउमाइं [मालवंतप्पभाइ] मालवंतवण्णाइं मालवंतवण्णाभाइं। पभासे य इत्थ देवे महिड्ढीए पलिओवमट्ठिईए परिवसइ। से एएणट्ठेणं। रायहाणी उत्तरेणं।।२७२।।

'कहि णं भंते' इत्यादि, क्व भदन्त! **'हैरण्यवते वर्षे माल्यवत्पर्यायो नाम्ना वृत्तवैताढ्यपर्वतः प्रज्ञप्तः?'** भगवानाह–**'गौतम! सुवर्णकूलायाः पश्चिमतो रुप्यकूलायाः पूर्वतोऽत्रान्तरे माल्यवत्पर्यायो नाम स्थानाङ्गादौ तु'** विकटापातिनामा **'वृत्त वैताढ्यः प्रज्ञप्तोऽ'** यं च परिमाणादिना शब्दापातिवृत्तवैताढ्यतुल्य इति तेनेवातिदिशति **'जहा चेव सद्दावइ वट्टवेयड्ढ पव्वए तह चेव मालवंतपरियाए'** इति गातार्थं **'अट्ठो'** त्ति **'से केणट्ठेण'** मित्यादिना पृष्टो माल्यवन्नामनिमित्तभूतोऽर्थः **'उप्पलाइं पउमाइं'** इत्यादि गर्भेण वाक्येनात्रत्य पद्मादीनां माल्यवत्प्रभवत्वेन निर्वचनीयो यावत् **'प्रभासोऽत्र देवः'** स्वामीति तथा च 'गोयमा! मालवंत परियाए वट्ट वेयड्ढपव्वए बहुसु खुड्डखुड्डियासु वावीसु बहवे उप्पलाइं' इत्यादि सूत्रोक्तमेवावसेयं **'रायहाणी उत्तरेणं'** ति प्रभासदेवस्य राजधानी तूत्तरस्यां दिशि वाच्येत्यर्थः।। २७२।।

अथ हैरण्यवतस्य नामनिमित्तं जिज्ञासया पृच्छति।

(२७३) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–हेरण्णवए वासे हेरण्णवए वासे गोयमा! हेरण्णवए णं वासे रुप्पि-सिहरीहिं वासहरपव्वएहिं दुहओ [2]समुवगूढे णिच्चं हिरण्णं [3]दलयइ णिच्चं हिरण्णं पगासइ। हेरण्णवए य इत्थ देवे परिवसइ। से एएणट्ठेणं।।२७३।।

---

१. द्र. ४। ५७ - ६०।। २. समवगूढे त्रि. पुवृ.ह्रीवृ।। २. दलयइ निच्चं हिरण्णं मुंचति - अकखबसपुवृ. ह्रीवृ.) द्र. ४।६१ सूत्रस्य पादटिप्पनम्।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि अथ केनार्थेन **'भदन्त! एवमुच्यते हैरण्यवतं वर्षं २?'** भगवानाह-**'गौतम! हैरण्यवतं वर्षं रुक्मिशिखरिभ्यां वर्षधरपर्वताभ्यां' 'दुहओ'** त्ति उभयतः **'समवगूढ'** मिदमुक्तं भवति रुक्मिशिखरी चैतो द्वावपि पर्वतौ यथाक्रमं रूप्य-सुवर्णमयौ यच्च यन्मयं तत्र तद्विधते हैरण्यं सुवर्णमिति चानर्थान्तरं ततो हिरण्यं सुवर्णं विद्यते यस्यासौ हिरण्यवान् शिखरी पर्वतस्यैदं हैरण्यवतं तथाहि-ते द्वाभ्यामपि रुक्मिशिखरिभ्यां पर्वताभ्यामुभयो र्दक्षिणोत्तररूपयोः पार्श्वयोः कृतसीमाकं ततो भवति हिरण्यवतः शिखरिणोऽपि सम्बन्धीति हैरण्यवतं **'निच्चं हिरण्णं दलयती'** त्यादि यदिवा नित्यं हिरण्यं ददाति जनेभ्य आसन-दानादितया प्रयच्छति नित्यं हिरण्यं मुञ्चति **'नित्यं हिरण्णं'** तत्र तत्र प्रदेशे जनेभ्यः **'प्रकाशयति'** तथाहि–बहवस्तत्र मिथुनकमनुष्याणामुपवेशन-शयानादिरूपोपभोगयोग्याः कनकमयाः शिलापट्टकाः सन्ति पश्यन्ति च ते मिथुनक - मनुष्यास्तत्र तत्र प्रदेशे मनो हारिणो हिरण्यमयान्निवेशान् ततो हिरण्यं प्रभूतं प्रशस्यं नित्ययोगिवास्तीति हिरण्यवत्, हिरण्यवदेव हैरण्यवत स्वार्थेऽण प्रत्ययः **'हेरण्णवए त्थे'** त्यादि यदिवा हैरण्यवत **'नाम्नात्र देवः परिवसति'** ततस्तद्योगाद्धैरण्यवतमित्यभिधीयते इत्याह **'से तेणट्ठेण'** मित्यादि पूर्ववत्।।२७३।।

साम्प्रतं शिखरिवर्षधरवक्तव्यतां प्रादुष्करोति-

(२७४) कहि णं भंते! जंबुद्दीवे दीवे सिहरी णामं वासहरपव्वए पण्णते? गोयमा! हेरण्णवयस्स उत्तरेणं, एरावयस्स दाहिणेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं। एवं [1]जह चेव चुल्लहिमवंतो तह चेव सिहरीवि, णवरं–जीवा दाहिणेणं, धणुं (धणुपट्ठं) उत्तरेणं, अवसिट्ठं तं चेव। पुंडरीए दहे सुवण्णकूला महाणई दाहिणेणं णेअव्वा जहा रोहिअंसा पुरत्थिमेणं गच्छइ, एवं जह चेव

१. द्र जं. ४।१-२।।

गंगासिन्धूओ तह चेव रत्तारत्तवईओ णेअव्वाओ पुरत्थिमेणं रत्ता पच्चत्थिमेण रत्तवई अवसिट्ठं तं चेव, अपरिसेसं णेयव्वं।।२७४।।

'कहि णं भंते' इत्यादि, क्व भदन्त! **'जम्बूद्वीपे द्वीपे शिखरी नाम्ना वर्षधर पर्वत: प्रज्ञप्त:?'** भगवानाह- **'गौतम! हैरण्यवतस्य वर्षस्योत्तरस्यामैरावतस्य वर्षस्य दक्षिणस्यां पूर्वलवणसमुद्रस्य पश्चिमत:' 'पश्चिमलवणसमुद्रस्य' 'पूर्वतोऽन्तरे शिखरी नाम्ना वर्षधरपर्वत: प्रज्ञप्तोऽयं** च परिमाणादिना क्षुल्लहिमवत्सदृशेति तथैव दर्शयन्नाह-**'एवं जह चेव चुल्लहिमवंते तह चेव सिहरी वि'** इति गतार्थं परंत्वस्य जीवा दक्षिणस्यां धनुश्चोत्तरस्यामिति तस्मात्पार्थक्यमित्यावेदयन्नाह–**'नवरि जीवा दाहिणेणं धणु उत्तरेण**मिति कण्ठ्यं **'अवसिट्ठं तं चेव'** त्ति अवशिष्टं बाहादित्वं तदेव यत्क्षुल्लहिमवत: प्राक् दर्शितमित्यर्थोऽस्यापि च वक्तव्यता समासेन प्रदर्श्यते तथाहि शिखरीवर्षधराद्रि: पूर्वापरायत उत्तरदक्षिणविस्तीर्ण: पूर्वपश्चिमकोटिभ्यां लवणाब्धिं स्पृष्ट:, एकयोजनशतोच्च: पञ्चविंशतिं योजनानि भूमाववगाढ एकं योजनसहस्रं द्विपञ्चाशतं योजनानि द्वादश च कला विष्कम्भत:, अस्य बाहा पूर्वत: पश्चिमतश्च प्रत्येकं पञ्च योजनशतानि द्वात्रिंशदधिकानि कलार्द्धं च किञ्चिदूनमायामत:, अस्य च धनु:पृष्टमुत्तरस्यां पञ्चविंशति योजनसहस्राणि द्वे च योजनशते त्रिंशदधिके चतस्रश्च कला: परिक्षेपत: स्वयं च रुचकसंस्थानसंस्थित: कनकमय: पार्श्वद्वयेऽपि पद्मवरवेदिकावनखण्डाभ्यां परिक्षिप्तोऽस्योपरि च बहुसमत्वादिविशेषणविशिष्टो भूमिभागो वर्णनीयो यावत्तत्र बहवो देवा देव्यश्चासते शेरते रमन्ते इत्यादि सर्वं वाच्यं **'पुंडरियदहे'** त्ति अस्योपरितनसमभूभागे पुण्डरीक द्रहो वाच्य:, अयं च परिमाणादिना पद्महृदतुल्यस्तथाहि - पुण्डरीकद्रह: प्राचीनप्रतीचीनायत: उदग्दक्षिण विस्तीर्ण एकं योजनसहस्रमायामत: पञ्च योजनशतानि विष्कम्भतो दशयोजनान्युण्डत्वेन अच्छादिविशेषण विशिष्टोऽस्य मध्यभागे चैकयोजनायामविष्कम्भमर्द्धयोजनं बाहल्यं दशयोजनोद्वेधं-

जलान्तात्क्रोशद्वयमुच्छ्रितं तावत्तथाविधपद्मपरिक्षेपकलितं महापद्मं तस्य च कर्णिका कनकमया अर्द्धयोजनायामविष्कम्भात्क्रोशबाहल्या तदुपरि चैकं गव्यूतायामर्द्धगव्यूतविष्कम्भं चत्वारिंशदधिकचतुर्दशशत १४४० धनुरुच्चं भवनं तत्र लक्ष्मी नाम्नी देवी परिवसतीत्यादि सर्वं पूर्ववदुपयुज्य वक्तव्यम्, एतस्माच्च पुण्डरीकह्रदाद्दक्षिणतोरणेन निर्गत्य सुवर्णकुला नदी रोहितावत् पूर्वदिग्लवणाब्धिं प्रविशतीत्याह–**'सुवण्णकूलानदी दाहिणेणं णेयव्वा जहा रोहिया पुरत्थिमेणं गच्छती'** ति क्वचित् जहा रोहियंसा पुरत्थिमेणं गच्छती' ति पाठस्तत्र यथा रोहितांशा तथेयमित्यर्थः, इदमुक्तं भवति पर्वतोपरिगमनप्रमाणप्रभवमुखमूल-विष्कम्भोद्वेधनदीपरिवारादिना यथा रोहितांशा तथेयमपीत्यर्थः, अस्या अपि स्वरूपं संक्षिप्योच्यते, तथाहि–पुण्डरीकद्रहाद्दाक्षिणात्यतोरणेन सुवर्णकूला महानदी प्रव्यूढा सती द्वे योजनशते षट्सप्तत्यधिके षट् च कला दक्षिणाभिमुखी पर्वतोपरि गत्वा रुक्मकूलासमान्या जिह्विकया रुक्मकूलाप्रपातकुण्डसमे सुवर्णकूलाप्रपातकुण्डे प्रपतति तन्मध्ये च रुक्मकूलाद्वीपतुल्यप्रमाणसुवर्णकूलाद्वीपस्तदुपरि सुवर्णकूलादेवीनिवासयोग्यं भवनमित्यादि सर्वं वाच्यं ततश्च सुवर्णकूलाप्रपातकुण्डस्य दक्षिणद्वारेण सुवर्णकूलामहानदी प्रव्यूढा सती हैरण्यवतवर्षं प्रतियती चतुर्दशभि र्नदीसहस्रैरापूर्यमाणा माल्यवन्तं वृत्तवैताढ्यपर्वतमर्द्धयोजनेना सम्प्राप्ता पूर्वाभिमुखी व्यावृत्ता सती हैरण्यवतं वर्षं द्विधा विभजमानाष्टाविंशत्या नदीसहस्रैः समेताऽधोजगतीं दारयित्वा पूर्वदिशा लवणाब्धिं समुपैति इयं च प्रवहे सार्द्धद्वादशयोजनानि विष्कम्भतः क्रोशमुद्वेधतो मुखमूले तु पञ्चविंशतिं योजनानि विष्कम्भतः सार्द्धे द्वे योजने तूद्वेधत इति तथा एतस्मादेव पुण्डरीकह्रदात्पूर्वापरद्वाराभ्यां रक्तारक्तवत्यौ निर्गत्य गङ्गासिन्धू इव यथाक्रमं पूर्वाब्धिं पश्चिमोदधिं प्रविशत इति ज्ञापयन्नाह–**'एवं जह चेव गंगा सिंधूओ तह चेव रत्ता रत्तवईओ णेयव्वाओ पुरत्थिमेणं रत्ता पच्चत्थिमेणं रत्तवती'** ति भावितार्थं **'अवसिट्ठं तं चेव अपरिसेसं णेयव्वं'** ति अवशिष्टं पर्वतोपरिगमनादिकं तदेवापरिशेषं

नेतव्यं तथाहि-गङ्गासिन्धू इव रक्तारक्तवत्यावपि पुण्डरीकहृदाद्यथाक्रमं पूर्वपश्चिमतोरणाभ्यां निर्गत्य पञ्च योजनशतानि पर्वतस्योपरि गत्वा स्वस्वावर्तनकूटयोः परावृत्त्य पञ्च योजनशतानि त्रयो विंशत्यधिकानि तिस्रश्च कला उत्तराभिमुख्यौ पर्वतोपरि गत्वा स्वस्वजिह्विकाभ्यां सातिरेकयोजनशतिकेन प्रवाहेण रक्तारक्तवतीप्रपातकुण्डयो-र्निपततोऽनयोर्मध्ये च रक्तारक्तवतीद्वीपौ तदुपरि भवने तत्र च रक्तारक्तवतीनाम्न्यौ देव्यौ परिवसत इति। अत्रत्य जिह्विका कुण्ड द्वीप परिमाणादि गङ्गासिन्धुसम्बन्धिजिह्विकादिवद्भणितव्य-मिति ततश्च स्वस्वप्रपातकुण्डयोरौत्तराहतोरणाभ्यां रक्तारक्तवत्यौ निर्गत्य दक्षिणैरावतार्द्धं परिगच्छन्त्यौ प्रत्येकं सप्तभिः सप्तभिर्नदीसहस्रैरापूर्यमाणे यथाक्रमं खण्डप्रपाततिमिस्र गुहयोरधस्ताद्वैताढ्यं भित्वोत्तरैरावतार्द्धस्य मध्यदेशे गत्वा यथाक्रमं पूर्वापरसममुखं व्याघुट्य प्रत्येकं चतुर्दशभिः चतुर्दशभि र्नदीसहस्रैः सम्पूर्णोऽधो भागेन जगतीं विदार्य पूर्वापरसमुद्रौः प्रविशत इत्यादि सर्वं वाच्यम्।। २७४।।

अथ शिखरिवर्षधरकूटवक्तव्यतामाह–

(२७५) सिहरिम्मि णं भंते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?, गो० ! इक्कारस कूडा पं० तं०–सिद्धाययणकूडे १, सिहरिकूडे २, हेरण्णवयकूडे ३, सुवण्णकूलाकूडे ४, सुरादेवीकूडे ५, रत्ताकूडे ६, लच्छीकूडे ७, रत्तवईकूडे ८, इलादेवीकूडे ९, एरवयकूडे १० तिगिच्छिकूडे ११, एवं सव्वेवि एते कूडा पंचसइआ रायहाणीओ उत्तरेणं।।२७५।।

'सिहरिम्मि ण' मित्यादि, शिखरिणि **'भदन्त! वर्षधरपर्वते कति कूटानि प्रज्ञप्तानि?'** भगवानाह **'गौतम! एकादशकूटानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा–सिद्धायतनकूटं १**

शिखरिकूटं २ हैण्यवतकूटं ३ सुवर्णकूलाकूटं ४ सुरादेवीकूटं ५ क्वचित् श्रीदेवी कूटमिति दृश्यते ५ **'रत्त'** ति **रक्तावर्तनकूटं ६, लक्ष्मीकूटं ७ रक्तवत्यावर्तनकूटं ८, इलादेवीकूटं** क्वचिद्गन्धावतीदेवीकूटं, ९, **एरावतकूटं १०, तेकित्सिकूटं' ११**, इति **'सव्वे चेते कूडा पंचसइया'** इति सर्वाण्यप्येतानि कूटानि पञ्चशतिकानि क्षुल्लहिमवत्कूटसमानत्वेन पञ्चशतयोजनोच्चानीत्यर्थः **'रायहाणीओ उत्तरेणं'** ति कूटाधिपतीनां राजधान्यो मेरोरूत्तरस्यां दिशि वाच्या इत्यर्थः।।२७५।।

सम्प्रति शिखरिनाम्नान्वर्थं बुभुत्सुः पृच्छति।

(२७६) से केणट्ठेणं भंते! एवमुच्चइ सिहरिवासहरपव्वए २?, गोअमा! सिहरिंमि वासहरपव्वए बहवे कूडा सिहरिसंठाणसंठिआ सव्वरयणामया सिहरी अ इत्थ देवे जाव परिवसइ, से तेणट्ठेणं०।।२७६।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि प्रश्नवाक्यं कण्ठयमुत्तरं भगवानाह–**'गौतम!' शिखरिणि वर्षधर पर्वते बहूनि कूटानि 'सिहरिसंठाणसंठिय'** त्ति शिखरी पादपस्तस्य संस्थानमाला शिखरि संस्थानं तेन संस्थितानि शिखरिसंस्थानसंस्थितानि सर्वात्मना रत्नमयानि शिखरि चात्र देवो यावत्परिवसति तेन तद्योगादयं **'शिखरी'** त्याह-'से तेणट्ठेण' मिति कण्ठ्यम्।।२७६।।

अथैरावतक्षेत्रवक्तव्यतां पिपृच्छिषुरिदमाह-

(२७७) कहि णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे एरावए णामं वासे पण्णत्ते?, गोअमा! सिहरिस्स उत्तरेणं, उत्तरलवणसमुद्दस्स दक्खिणेणं, पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं, एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे एरावए णामं वासे पण्णत्ते, खाणुबहुले कंटकबहुले एवं जच्चेव भरहस्स वत्तव्वया सच्चेव सव्वा निरवसेसा [1]णेअव्वा सओयवणा सणिक्खमणा सपरिनिव्वाणा णवरं एरावओ चक्कवट्टी

१. द्र. ३।१-२२६।।

एरावओ देवो, से तेणट्ठेणं एरावए वासे २।।२७७।।

'कहि णं भंते' इत्यादि, क्व भदन्त! **'जम्बूद्वीपे द्वीपे ऐरावतं नाम्ना वर्षं प्रज्ञप्तं?'** स्वाम्याह–**'गौतम! शिखरिणो वर्षधरस्योत्तरस्यामुत्तरलवणसमुद्रस्य दक्षिणत: पूर्वलवणाब्धे: पश्चिमत:'** पश्चिमलवणाब्धे: **'पूर्वतोऽत्रान्तरे जम्बूद्वीपे द्वीपे ऐरावतं नाम्ना वर्षं प्रज्ञप्तं'** तच्च किंभूतमित्याह **'खाणुबहुले'** इत्यादि **'स्थाणुबहुलं कण्टकबहुलमेवं यदेव भरतस्य वर्णनं तदेव सर्वमस्य' 'ज्ञेय'** मित्यादि **'एवं जाचेव भरहस्से'** त्यादि एवं प्रागुक्तविधिना यैव भरतस्य वक्तव्यता ऐरावतस्यापि सैव निरवशेषा ज्ञेया तेनैतदैरावतवर्षमपि रक्तारक्तवतीवैताढ्यै: षड्भागप्रविभक्तं भरतसमायामविष्कम्भं मध्ये भागे वैताढ्यसद्भावाद्दक्षिणोत्तरार्द्धभेदाद् द्विविधमाकारभावस्वरूपादिकं भरतवदस्यापि वक्तव्यं **'सओयवणा सनिक्खमणा सपरिनिव्वाणा'** इति अत्रायं भाव:, यथाहि- भरतचक्रिणां वक्तव्यता:सओयवण' त्ति भरतसाधनान्विता सनिष्क्रमणा सव्रतग्रहणा सपरिनिर्वाणा समोक्षगमना भणिता तथाऽत्रत्य-चक्रवर्त्तिनोऽपि वक्तव्यता सैरावतसाधूनां सनिष्क्रमणा सपरिनिर्वाणा च भणितव्येति परमत्र **'से कणट्ठेण भंते एवं वुच्चइ एरावए वासे एरावए वासे'** इति प्रश्ने ऐरावत नामा चक्रवर्त्ती अत्र समुत्पद्यते **ऐरावतश्चात्र देवस्तद्योगादिदमैरावतमित्यावेदयन्नाह–'नवरं एरावए चक्कवट्टी देवे एरावए से तेणं एरावए वासे २'** इति सुगमम्।।२७७।।

अथ पंचम वक्षस्कारः

इत्युक्ता जम्बूद्वीपगतभरतादिक्षेत्रवक्तव्यता साम्प्रतं क्षेत्राधिकारादेव यदा तेषु तीर्थकराः समुत्पद्यन्ते तदा च यथा षट्पञ्चाशद्दिक्कुमार्यः समागतास्तीर्थकृतां जन्ममहिमां निर्मान्ति यथा चेन्द्रादयो देवाः समुपेत्य सुमेरुशिखरे तेषामेव जन्माभिषेकमहिमानं विदधते तदेतत्सर्वं सविस्तरं निवेदयन्नाह–

(१) जया णं एक्कमेक्के चक्कवट्टिविजए [१]भगवंतो तित्थयरा समुप्पज्जंति तेणं कालेणं तेणं समएणं अहेलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीओ महत्तरिआओ सएहिं २ कूडेहिं सएहिं २ भवणेहिं सएहिं २ पासायवडेंसएहिं पत्तेअं २ चउहिं सामाणिअसाहस्सीहिं चउहिं य महत्तरिआहिं सपरिवाराहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणिआहिवईहिं सोलसएहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अण्णेहिं अ [२]बहूहिं देवेहिं देवीहिं अ सद्धिं संपरिवुडाओ महया हयणट्टगीयवाइअ जाव भोगभोगाइं भुंजमाणीओ विहरंति, तं जहा-

भोगंकरा १ भोगवई २, सुभोगा ३ भोगमालिनी ४।
[३]तोयधारा ५ विचित्ता य ६, पुप्फमाला ७ अणिंदिआ ८।।१।।

'जया णं एगमेगे चक्कवट्टिविजए' इत्यादि यदा यस्मिन् काले णमिति वाक्यालङ्कारे एगमेगे' त्ति **"वीप्स्यादे र्वीप्स्ये स्वरे मो वा"** 'इत्यनेन प्राकृतत्वान्मकारस्तताश्चैकैकस्मिन् चक्रवर्त्तिविजये चक्रवर्त्तिविजेतव्ये क्षेत्रविशेषे भरतैरावतमहाविदेहविजयानामन्यतरस्मिन्नित्यर्थः। भगवन्तस्तीर्थकराः समुत्पद्यन्ते **'तेणं कालेणं'** ति तस्मिन् काले

१. भगवं- अ क ख ब त्रि स ।। २. बहूहिं वाणमंतरेहिं -अ क ख ब त्रि स । बहूहिं भगणवइ वाणमंतरेहिं -मु. ।। ३. स्था. ८/९९-१०सुबच्छा वच्छमित्ता य वारिसेणा वलाहगा -इति उत्तरार्धे दृश्यते ।

तीर्थकृज्जन्मावच्छिन्ने **'तेण समएणं'** ति तस्मिन्नेव समये अवसरे णमिति प्राग्वत् **'अहेलोग वत्थव्वाओ'** त्ति सौमनसः विद्युत्प्रभ-गन्धमादन-माल्यवन्नाम्नां गजदन्ताकारगिरीणामधस्ताद्भवनेषु यास्तिष्ठन्ति ता अधोलोकवास्तव्य अधोलोकवासिन्य इत्यर्थो **'ऽष्टौ दिक्कुमार्यो महत्तरिका'** विशिष्टऋद्ध्यादिमत्त्वेन महत्तमा इत्यर्थः एताश्च किं कुर्व्वन्त्यस्तिष्ठतीत्याह- **'सएहिं सएहिं कूडेहि'** मित्यादि यावत् **'भोगभोगाइं भुंजमाणीओ विहरंती'** त्युत्तरेण सम्बन्धः **'सएहिं सएहिं कूडेहिं'** ति स्वकीयैः **'स्वकीयैः कूटैः स्वकीयैः स्वकीयैः भवनैः स्वकीयैः स्वकीयैः प्रासादावतंसकै-'** र्भवनप्रासादयोः प्रागुक्त एव विशेषोऽत्र ज्ञेयः, एतैः करणभूतैरित्यभ्यूह्यं यदिवा प्राकृतत्वात्सप्तम्यर्थे तृतीया ततः स्वकीयेषु स्वकीयेषु कूटादिष्विति ज्ञेयं प्रत्येकं प्रत्येकमष्टावपि **'चतुर्भिः सामानिकसहस्रैः'** सूत्रे स्त्रीत्वदीर्घत्वे आर्षत्वाच्चतसृभिर्महत्तरिकाभिः' पूज्यस्थानीयाभिः **'सपरिवाराभिः'** **'सप्तभिरनीकै'** र्गन्धर्वानीकादिभिः **'सप्तभिरनीकाधिपतिभिः षोडशभिरात्मरक्षकदेवसहस्रैरन्यैश्च बहुभिर्देवै'**र्वानमन्तरै**'र्देवीभिश्च सार्द्धं सम्परिवृता'** **'महया हय'** इह यावत्करणान् 'महया हयनट्टगीयवाइयतंतीतल-ताल तुडियद्यणमुइंग पडहवाइयरवेणं दिव्वाइं **'भोगभोगाइं भुंजमाणीओ विहरंती'** ति व्यक्तं चेदं नवरं 'भोग भोगाइं ति भोगार्हा भोगाः शब्दादयो भोगभोगा अतिशयवद्भोगा इत्यर्थस्तान् सूत्रे नपुंसकत्वं प्राकृतत्वात्, त एवाष्टौ नामग्राहमाह-**'तं जहे'** त्यादि तद्यथा–**भोगङ्करा १ भोगवती २ सुभोगा ३ भोगमालिनी ४ सुवत्सा ५ वत्समित्रा** च ६ **पुष्पमाला ७ अनिन्दिता ८** इति।।१।।

(२-३) तए णं तासिं अहेलोगवत्थव्वाणं अट्ठण्हं दिसाकुमारीणं महत्तरिआणं पत्तेयं पत्तेअं आसणाइं चलंति, तए णं ताओ अहेलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीओ महत्तरिआओ पत्तेयं २ आसणाइं चलिआइं पासंति, २ त्ता ओहिं पउंजंति, पउंजित्ता भगवं तित्थयरं ओहिणा आभोएंति, २ त्ता अण्णमण्णं सद्दावेंति, २ त्ता एवं वयासी-

उप्पण्णे खलु भो! जम्बुद्दीवे दीवे भयवं! तित्थयरे तं जीयमेअं तीअपच्चुप्पण्णमणागयाणं अहेालोगवत्थव्वाणं अट्ठण्हं दिसाकुमारीमहत्तरिआणं जम्मणमहिमं करेत्तए, तं गच्छामो णं अम्हेवि भगवओ जम्मणमहिमं करेमोत्तिकट्टु एवं वयंति,२ त्ता पत्तेअं पत्तेअं आभिओगिए देवे सद्दावेंति,२ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! अणेगखम्भसयसण्णिविट्ठे लीलट्ठिअ० एवं विमाणवण्णओ भाणिअव्वो [१]जाव जोअणवित्थिण्णे दिव्वे जाणविमाणे विउव्वह विउव्वित्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणहत्ति।।

'तए णं तासि' मित्यादि, तत इति तीर्थकरजन्मनोऽनन्तरमेव **'तासामधोलोकवास्तव्यानामष्टानां दिक्कुमारीणां महत्तरिकाणां प्रत्येक प्रत्येकमासनानि चलन्ति ततस्ता अष्टौ दिक्कुमार्यः प्रत्येकं प्रत्येकमासनानि चलितानि पश्यन्ति दृष्ट्वा च' 'ओहिं पउंजंति'** त्ति अवधिज्ञानं प्रयुञ्जते **'भगवन्तं तीर्थकर'** मुत्पन्नमितिगम्यम **'वधिनाऽऽभोगयन्ति'** परिभावयन्ति पश्यन्तीत्यर्थः, अत्राभोएन्तीत्यनेन सत्यप्यवधौ यदैता ज्ञेयविषयमाभोगं न कुर्व्वन्ति तदा न किञ्चिज्जानन्ति पश्यन्ति वेत्यादि **'तं अण्णमण्णं सद्दावेंति'** अन्योऽन्यं शद्बापयन्ति **'शद्बापयित्वा चैवमवादिषु' 'उप्पण्णे'** इत्यादि उत्पन्नः **'खल्विति'** निश्चये **'भो'** इति पार्श्ववर्त्तिजनामन्त्रणे **'जम्बूद्वीपे द्वीपे भगवांस्तीर्थकरः' 'तं जीय'** मित्यादि तत्तस्माज्जीतमाचरितं कल्प इत्येकार्था **'एतत्' 'तीयपच्चुप्पन्नमणागयाणं'** ति अतीतवर्त्तमानानागतानामधोलोकवास्तव्यानामष्टानां दिक्कुमारीमहत्तरिकाणां **'भगवओ जम्मणमहिमं करित्तए'** ति भगवतो जन्ममहिमां कर्त्तुं **'तत्तस्माद्गच्छामो'** णमिति वाक्यालङ्कारे **'वयमपि भगवतो जन्ममहिमानं' 'कुर्म इति कृत्वैवं वदन्ति प्रत्येकं प्रत्येक'**माभिमुख्येन योजनमभियोगः प्रेष्यकर्मसु व्यापार्यमाणत्वं तेन

१. द्र.५/२८।।

जीवन्तीत्याभियोगिका:' कर्मकरास्तान् '**देवान् शद्दापयन्ति**'-आकारयन्ति '**शद्दापयित्वा**' च तेषां सम्मुखमे'**वमवादिषु: क्षिप्रमेव-**' शीघ्रमेव '**भो देवाणुप्रिया:**'! '**अणेग खंभसय संनिविट्ठे**' त्ति अनेकेषु स्तम्भशतेषु संनिविष्टानि यानि तानि तथा '**लीलट्ठिय एवं विमाण वण्णओ भणियव्वो**' त्ति इह 'लीलट्ठिय-सलिभंजियागे' इत्यादि रूपो विमानवर्णको भणितव्य: स च प्राग्वद्वक्ष्यमाणपालकविमानवद् बोद्धव्योऽतोऽत्र न प्रतन्यते '**जोयण वित्थिण्णे**' त्ति योजनविस्तीर्णानि '**दिव्यानि**' प्रधानानि '**जाणविमाणे**' त्ति यानरूपाणि वाहनरूपाणि विमानानि यानविमानानि '**विकुर्व्वत**'-वैक्रियाणि कुरूत '**विकुर्व्य एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह**' 'त्ति एतामाज्ञाप्तिं प्रत्यर्पयत यथोक्तकार्यसम्पादनेन सफलीकृत्य निवेदयत।।२-३।।

(४) तए णं ते आभिओगा देवा अणेगखम्भसय० जाव पच्चप्पिणंति।।४।।

'**तते णं ते**' इत्यादि, ततस्ते '**आभियोगिका देवा**' '**अणेग खंभ जाव पच्चप्पिणंति**' त्ति इह यावत्करणादनेकस्तम्भशतसंनिविष्टानीत्यादिविमानवर्णकोपेतानि विमानानि विकुर्वीति विकुर्व्य च तां पूर्वोक्तामाज्ञप्तिं प्रत्यर्पयन्ति-आदिष्टकार्यसम्पादनेन निवेदयन्ति।।४।।

(५) तए णं ताओ अहेलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरिआओ हट्ठतुट्ठ०पत्तेयं पत्तेयं चउहिं सामाणिअसाहस्सीहिं चउहिं महत्तरिआहिं जाव अण्णेहिं य बहूहिं देवेहिं देवीहिं अ सद्धिं संपरिवुडाओ ते दिव्वे जाणविमाणे दुरूहंति, दूरूहित्ता सव्विड्ढीए सव्वजुईए घण-मुइंग-पणवपवाइअरवेणं ताए उक्किट्ठाए जाव देवगईए जेणेव भगवओ तित्थगरस्स जम्मणणगरे जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणे तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता भगवओ तित्थयस्स जम्मणभवणं तेहिं दिव्वेहिं जाणविमाणेहिं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति, करित्ता उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए ईसिं चउरंगुलमसंपत्ते

धरणिअले ते दिव्वे जाणविमाणे ठविंति, ठवित्ता पत्तेअं २ चउहिं सामाणिअसाहस्सेहिं जाव सद्धिं संपरिवुडाओ दिव्वेहिंतो जाणविमाणेहिंतो पच्चोरुहंति २ त्ता सव्विड्ढीए [१]जाव णाइएणं जेणेव भगवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छन्ति, २ त्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति, २ त्ता पत्तेअं २ करयलपरिग्गहिअं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी णमोत्थु ते रयणकुच्छिधारिए जगप्पईवदाईए[२] सव्वजगमंगलस्स चक्खुणोअ[३] मुत्तस्स सव्वजगजीववच्छलस्स [४]हिअकरग-मग्गदेसिय-[५]पागड्ढिविभुपभुस्स जिणस्स णाणिस्स नायगस्स बुहस्स बोहगस्स सव्वलोगनाहस्स सव्वजंगमंगलस्स निम्ममस्स पवरकुलसमुब्भवस्स जाईए खत्तिअस्स जंसि लोगुत्तमस्स जणणी धण्णासि पुण्णासि तं कयत्थासि अम्हे णं देवाणुप्पिए! अहेलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरिआओ भगवओ तित्थगरस्स जम्मणमहिमं करिस्सामो तण्णं तुब्भेहिं ण भाइव्वं तिकट्टु उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति, २ त्ता वेउव्विअसमुग्घाएणं सम्मोहण्णंति, २ त्ता संखिज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरंति, तं जहा-रयणाणं जाव संवट्टगवाए विउव्वंति, २ त्ता तेणं सिवेणं मउएणं मारुएणं अणुद्धुएणं भूमितलविमलकरणेणं मणहरेणं सव्वोउअसुरहिकुसुमगंधाणुवासिएणं पिण्डिमणिहारिमेणं [६]गंधुद्धुएणं तिरिअं पवाइएणं भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणस्स सव्वओ समंता जोअणपरिमण्डलं से जहा णामए कम्मगरदारए सिआ जाव तहेव जं तत्थ तणं वा पत्तं वा कट्ठं वा कयवरं वा असुइमचोक्खं पूइअं दुब्भिगंधं तं सव्वं आहुणिअ २ एगंते एडेंति २ त्ता जेणेव भगवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमायाए अ अदूरसामंते [७]आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।।४।।

---

१. द्र.३/१२। जाव दुंदुहि णिग्घोसणाइएणं -V।। २. जगप्पतिदाइए-आव. चू. पृ. १३७। अतः परं तत्र-सव्वलोयनाहस्स सव्वजगमंगलस्स सव्वजगवच्छलस्स- इत्यादि विशेषणानि सन्ति-बोहगस्स- अनन्तरं चक्खुणो य मुत्तस्स इति पाठो विद्यते।। ३.अमुत्तस्स -ख।असुत्तस्स-त्रि। णिम्ममस्स अ क ख ब स पुवृ. ही वृ.।। १.अ क ख ब स पुवृ. ही वृ.हियकरग ० शा. पृ. ।। २. वागिद्धि °मु । वागिड्ढि -पशावृ.।। ३. गंधुद्धुरणं -V।। ४. आगय० अब।

'तएण' मित्यादि ततो णमिति प्राग्वत्ता **'अधोलोकवास्तव्या अष्टौ दिक्कुमार्यो महत्तरिका हृष्टतुष्टाः'** सत्यः **'प्रत्येकं प्रत्येकं चतुर्भिःसामानिकसहस्रैश्चतसृभि र्महत्तरिकाभिः'** सपरिवाराभि **'र्यावत्क'** रणात् 'सत्तहिं अणीए हि' मित्यादि द्दश्य **'मन्यैश्च'** स्व स्व परिवार सत्कै **'र्देवै र्देवीभिश्च सार्द्धं सम्परिवृत्तास्तानि यानविमानान्यारोहन्ति' 'सव्वड्ढिए'** इत्यादि पूर्ववत् **'जेणेव भगवओ'** इत्यादि यत्रैव भगवत **'स्तीर्थकरस्य जन्मनगरं यत्रैव तीर्थकरस्य जन्मभवनं तत्रैवोपागच्छन्ति भगवतस्तीर्थकरस्य जन्मभवनं तै र्दिव्यै र्यानविमानैस्त्रिः कृत्वस्त्रीन् वारानादक्षिणप्रदक्षिणीकुर्वन्ति' 'उत्तर पुरत्थिमे दिसिभाए'** त्ति उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे ईशानकोणे इत्यर्थः **'इसि'** त्ति ईषन्मनाक्, एतदेव भावयति **'चउरंगुलं'** ति चतुर्भिरङ्गुलैरित्यर्थः, **'असम्प्राप्तान्य'**संलग्नानि क्वेत्याह- **'धरणीतले तानि दिव्यानि यानविमानानि स्थापयन्ति' 'पत्तेयं पत्तेय'** ति प्रत्येक प्रत्येकं **'चतुर्भिः सामानिकसहस्रै-र्यावत्सार्द्धं संपरिवृता दिव्येभ्यो यानविमानेभ्यः प्रत्यवरोहन्ति'**–अवतरन्तीत्यर्थः।

'सव्विड्ढिए जाव नाइएणं' ति सर्वर्द्धया यावन्नादितेनेह यावत्करणात् 'सव्वजुईए' इत्यादि 'दुंदुहिनिग्घोसनाइएण'मित्यन्तं द्रष्टव्यं **'जेणेवे'** त्यादि यत्रैव **'भगवांस्तीर्थकरमाता च तत्रैवोपागच्छन्ति उपागत्य भगवन्तं तीर्थकरं तीर्थकरमातरं च त्रिःकृत्व आदक्षिणं प्रदक्षिणी कुर्वन्ति प्रत्येकं प्रत्येकं करतलपरिगृहीतं शिरस्यावर्त्तमस्तकेऽञ्जलिं कृत्वैवमवादिषुः' 'नमोत्थु ते रयणकुच्छिधारिए'** इत्यादि नमोऽस्तु ते तुभ्यं हे रत्नकुक्षिधारिके रत्नं कुक्षौ धरति या सा तथा तस्याः सम्बोधनं हे रत्नकुक्षिधारिके! तथा जगति प्रदीपमिव प्रदीपं समस्तवस्तुप्रकाशकत्वाद्ददाति या तथा तस्याः सम्बोधनं हे **'जगत्प्रदीपदायिके'**! एवं तीर्थकरमातरं नमस्कृत्य यथा चैनां स्तुवन्ति तथा दर्शयति **'सव्व जगमंगलस्से'** त्यादि यदसि त्वमेवंभूतस्य **'पुत्रस्य'** जननी तद्धन्यासीत्याद्युत्तरेण सह योगः

किंभूतस्य पुत्रस्येत्याह–सर्वजगन्मङ्गलस्य सर्वजगत्सु मङ्गलरूपत्वात्सर्वजगन्मङ्गलस्तस्य तथा **'चक्खुणे'** त्ति चक्षुरिव चक्षुर्लोकस्य विविधकार्येषु प्रवृत्तिनिवृत्तिविषयप्रदर्शकत्वात्तस्य चक्षुषः **'मुत्तस्य'** त्ति मुक्तस्य कर्मबन्धनेभ्यो भाविनि भूतोपचारात् **'सव्वजगज्जीवच्छलस्स'** त्ति सर्वस्मिन् जगति ये जीवास्तेषु वत्सलः स्नेहवान् यः स तथा तस्य **'हितकरमग्गादेसिय पागड्ढिविभुप्पभुस्स'** त्ति हितकरकं मार्गं दिशन्ती त्वेवंशीला हितकरमार्ग मार्गदर्शिकास्तेषां मध्ये प्राकर्षी अग्रेसरो य सः तथा विभूनां शक्रचक्र्यादीनामपि प्रभु र्विभुः प्रभु र्यः स तथा ततः प्राक् विशेषणेन कर्मधारयस्तस्य **'जिणस्स'** जिनस्य रागादि जेतुः **'णाणिस्स'** त्ति ज्ञानिनो ज्ञानवतः **'णोयगस्स हि'** नोयकस्य ज्ञायकस्य वा सर्वभावानां ज्ञातुः **'बुद्धस्स'** ज्ञाततत्त्वस्य **'बोधकस्यान्येषां'** तत्त्वज्ञापकस्य **'सर्वलोकनाथस्य'** लोकानां योगक्षेमविधायित्वात् **'सव्वजगमंगलस्स'** त्ति प्राग्वत् स्तुतित्वादत्र पौनरूक्त्यमदुष्टमुक्तं च **"वक्ता हर्षभयादिभिराक्षिप्तमनाः स्तुवंस्तथा निन्दन् यत्पदमसकृत् ब्रूयात्तत्पुनरुक्तं न दोषायेति"** यदिवा सर्वजगतां मङ्गलं कल्याणं यस्मात्स तथा तस्य तथा **'निर्ममस्य'** ममता वर्जितस्य **'प्रवरकुलसमुद्भवस्येति'** व्यक्तं **'जातीए खत्तियस्स'** त्ति उत्तममातृकपक्षयुक्तक्षत्रियस्येति प्रतिपत्तव्यमन्यथा मातृकपक्षयुक्तत्वं पुरूषमात्रस्यापि स्यादिति नास्योत्कर्षः कश्चिदुक्तो भवेदुत्कर्षाभिधानार्थं चास्य विशेषणकदम्बकोपादानं चिकीर्षितमिति **'जंसि लोउत्तमस्स जणणी,'** यतोऽसि त्वमेवं भूतगुणे विशिष्टस्य लोकोत्तमस्य जननी माता ततो **'धन्यासि'** धनं प्राप्तुं योग्यासि **'पुण्ण'**त्ति पुण्या पवित्रा पूर्णा वा गुणलक्षणैरसि **'कयत्था सि'** त्ति कृतार्थासि सम्पादितसकलार्थासि, इत्थमेतां भगवन्मातुः स्तुति कृत्वा स्वकार्यावेदनभयनिषेधोक्तिपूर्वकं यदकार्षुस्तदाह **'अम्हेण'** मित्यादि हे **'देवानुप्रिय!'** वयं **'ण'** मिति वाक्यालङ्कारेऽधोलोकवास्तव्याऽष्टौ **दिक्कुमार्यो महत्तरिका भगवतस्तीर्थकरस्य जन्ममहिमां करिष्यामस्तद्युष्माभिर्न भेत्तव्यं'** न भयवतीभिर्भाव्य

'मिति कट्टु इत्युक्त्वोत्तरपौरस्त्यदिग्भागमपक्रामन्ति-' गच्छन्ति **'अपक्रम्य वैक्रियसमुद्घातेन समवहन्यन्ते सङ्ख्येयानि योजनानि दण्डं निसृजन्ति तद्यथा' 'रयणाणं जावे'** त्यादि यावत्करणात् **'वइराण'** मित्यादि पदसमूहपरिग्रहो दृश्यो यावत् 'अहाबायरे पुग्गले परिसाडेंति अहासुहुमे पोग्गले परियादियंति' व्याख्या चास्य प्राग्वत् **'संवट्टगवाए विउव्वंति'** संवर्तकवातं विकुर्वन्ति **'विकुर्व्य'** च किं कुर्वन्तीत्याह **'सिवेण'** मित्याह, अत्रैवमर्थघटना मारूतेन वायुना **'भगवतस्तीर्थकरस्य जन्मभवनस्य सर्वत:'** सर्वासु दिक्षु **'समन्ता'** द्विदिक्षु **'योजनपरिमण्डलं'** पारिमाण्डल्येन यद्योजनप्रमाणं क्षेत्रं 'एत्थ णं' ति अत्र योजनपरिमण्डले यत्तृणादि तदे**'कान्ते' 'एडंति'** त्ति त्यजन्ति किम्भूतेन वायुना **'सिवेणं'** ति शिवेनोपद्रवरहितेन **'मउएणं'** ति मृदुकेन कोमलेन **'अणुद्धुएणं'** ति अनुद्धृतेन **'भूमितलविमलकरेणं'** ति भूमितलनैर्मल्यं कारकेणेत्यर्थ: **'मणहरेणं'** ति मनोहरेण **'सव्वोउयसुरभिकुसुमगंधाणुवासिएणं'** ति सर्वर्तुजसुरभिकुसुमगन्धानुवासितेन **'पिंडिमनिहारिमेणं'** ति पुद्गलसमूहरूपेण दूरप्रसारिणा चेत्यर्थ: **'गंधुद्धुएणं'** ति सुरभिगन्धोद्धुरेण तथा **'तिरियं पावाइएणं'** ति तिर्यग् प्रवातेन ईदृशेन वायुना च यथैतास्तृणाद्यपनयन्ति तथा दृष्टान्तद्वारेणाह –**'से जहा नामए कम्मगरदारए सिया जाव तहेव'** त्ति यावत्करणदिदं दृश्यं' 'तरुणे जुगवं बलवं अप्पायंके थिरसंघयणे थिरग्गहत्थे घणपाणिपायपिट्ठंतरोरूपरिणए दडनिचियवट्टवलियखंधे चम्मिट्ठगदुघमुंट्ठियंसमाहियणिचय-गायगत्ते उरस्सबलसमत्तागए तलजमलजुयलफलिहनिभबाहुलंघणपवणकवणपमद्दणसमत्थे छेए दक्खे पट्ठे कुसले मेहावी निउणसिप्पोवगए एगं महं दंडसंपुच्छणिं वा सलागहत्थगं वा वेणुसलाइयं वा गहाय रायंगणं वा रायंतेउरं वा आरामं वा उज्जाणं वा देउलं वा सभं वा पवं वा अतुरियमचवलमसंभंते निरंतरं सुनिपुणं सव्वओ समंता संपमज्जेज्जा']राज. प्र. सू. १२ इति व्याख्या 'से जहा नामए' इत्यादि स वक्ष्यमाणगुणो यथानामकोऽनिर्दिष्टनामक:

कश्चित्कर्मकारदारकः स्यात् किं विशिष्ट इत्याह–तरुणस्तरुणः प्रवर्द्धमानचया एव भवन्ति ततः किमनेन विशेषणेन? आसन्नमृत्योः प्रवर्द्धमानवयस्त्वाभावात् नह्यासन्नमृत्युः प्रवर्द्धमानवया भवन्ति, न च तस्य विशिष्टसामर्थ्यसम्भवः आसन्नमृत्युकत्वादेव विशिष्टसामर्थ्यप्रतिपादनार्थश्चैष आरम्भस्ततोऽर्थवद् विशेषणमन्ये तु व्याचक्षते इह यद्द्रव्यं विशिष्टवर्णादिगुणोपेत्तमभिनवं च तत् तरुणमिति लोके प्रसिद्धं यथा तरुणमिदमश्वत्थपत्रमिति। ततः सकर्मकरदारकस्तरुण इति किमुक्तं भवति? अभिनवो विशिष्टवर्णादिगुणोपेतश्चेति बलं सामर्थ्यं तद्यस्यास्तीति बलवान्, तथा युगं सुषमदुःषमादिकालः स स्वेन रूपेण यस्यास्ति न दोषदुष्टः स युगवान् किमुक्तं भवति? कालोपद्रवोऽपि सामर्थ्यविघ्नहेतुः स चास्य नास्तीति प्रतिपच्यर्थमेतद्विशेषणं युवा यौवनस्थो युवावस्थायां हि बलातिशय इत्यतेदुपादानं 'अप्पायंके' इति अल्पशब्दोऽभाववाची अल्पः सर्वथा अविद्यमान आतङ्को ज्वरादि र्यस्य स तथा स्थिरावग्रहस्तौ यस्य स स्थिराग्रहस्तः 'दढपाणिपाय पिट्ठंतरोरूपरिणए' इति दृढानि अति निबिडतामापन्नानि पाणिपादपृष्टान्तरोरूणि परिणतानि यस्य स तथा 'सुखादि दर्शनात्' पाक्षिकः क्तान्तस्य परनिपातस्तथा घनमतिशयेन निचितौ निबिडतरचयमापन्नौ च वलिताविव वलितौ स्कन्धौ यस्य तथा **'उरस्सबलसमन्नागए'** इति उरसि भवमुरस्यं तच्च तद्बलं च उरस्यबलं तत् समन्वागतः समनुप्राप्त उरस्यबलसमन्वागत आन्तरोत्साहवीर्ययुक्त इति भावः, तथा तलौ तालवृक्षौ तयो र्यमलं समश्रेणीकं यद्युगलं द्वयं परिघश्चार्गला तन्निभौ तत्सदृशौ दीर्घत्वसरलत्वपीनत्वादिना बाहू यस्य स तथा, तथा लङ्घनेऽतिक्रमणप्लवने मनाक् पृथुतरविक्रमवति गमने जवनेऽतिशीघ्रगतौ प्रमर्दने कठिनस्यापि वस्तुनश्चूर्णकारणे समर्थो यः स तथा, केचित् 'लंघण-पवणजवण वायामणसमत्थे' इति पाठस्तत्र व्यायामने व्यायामकरणे इति व्याख्येयं, छेको द्वासप्ततिकलापण्डितो दक्षः कार्याणामवलम्बित कारी प्रष्टो वाग्मी कुशलः सम्यक्क्रियापरिज्ञानवान् मेघावी परस्पराव्याहतपूर्वापरानुसन्धानदक्षोऽत एव

'निपुणसिप्पोवगए' इति निपुणं यथा भवति, एवं शिल्पक्रियासु कोशलमुपगतः प्राप्तो यः स तथा, एकं महान्तं शलाकहस्तकसरित्पर्णादिशलाकासमुदायं सरित्पर्णादिशालाकामयीं सन्मार्जनीमित्यर्थः वा शब्दो विकल्पार्थो 'दंडसंपुच्छणिं वा' इति दण्डयुक्ता संपुच्छनी सम्मार्जनी दण्डसंपुच्छनी तां वा 'वेणुसिलागिगं वा' इति वेणुर्वंशस्तस्य शलाका वेणुशलाकास्ताभि र्निर्वृत्ता वेणुशलाकिकी वेणुशलाकामयी सम्मार्जनी तां वा गृहीत्वा 'राजाङ्गणं वा राज्ञोऽन्तःपुरं वा देवकुलं वा सभं वा सन्तो भान्त्यस्यामिति सभा ग्रामप्रधानानां नगरप्रधानानां वा यथा सुखमास्थानहेतुर्मण्डपिका तां वा प्रपां वा पानीयशालामारामं चेति आगत्यागत्य भोगपुरुषा वरतरूणीभिः सह यत्र रमन्ते क्रीडन्ति स आरामो नगरान्नातिदूरवर्त्ती क्रीडाश्रयस्तरुखण्डस्तं वा 'उज्जाणं वे' ति ऊर्ध्वं विलम्बितानि प्रयोजनाभावाद् यानानि यत्र तदुद्यानं नगरात्प्रत्यासन्नवर्त्ती यानवाहनक्रीडागृहाद्याश्रयस्तरुखण्डस्तथा अत्वरितमचपलमसम्भ्रान्तत्वरायां चापल्ये सम्भ्रमे वा सम्यक्कचवराद्यपगमासम्भवान्निरन्तरं नत्वपान्तरालमोचनेन सुनिपुणं श्लक्ष्णस्याप्य चोक्षस्यापसारणेन सर्वतः सर्वासु दिक्षु समन्ततः सामस्त्येन सम्प्रमार्जयन् **'तहेव'** त्ति तथैव तेनैव प्रकारेणेत्यर्थः एता अपि अत्र योजनपरिमण्डले **'यत्तृणं वा'** किलिञ्चादि **'पत्रं वा'** निम्बाश्वत्थादि जातं **'काष्टं वा'** काष्टशलाकां **'कचवरं वा'** श्लक्ष्णतृणधूल्यादिपुञ्जरूपं कथंभूतमित्याह-**'अशुचि'**अशुचिसमन्वितमचोक्षमपवित्रं पूतिकूथितमतएव दुरभिगन्धं तत् सर्वं संवर्तकवातविकुर्वणेनाहत्याहत्यैकान्ते योजनपरिमण्डलात् क्षेत्रात् दवीयसि देशे **'एडयंति'** अपनयन्ति अपनीय च यत्रैव भगवांस्तीर्थकरस्तीर्थकरमाता च तत्रैवोपागच्छन्ति उपागत्य च भगवतस्तीर्थकरस्य तीर्थकरमातुश्च **'अदुरसामंते'**–अदुरासन्ने देशे **'आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति'** त्ति आगायन्त्यः परिगायन्त्यो जिनस्यासाधारणगुणगणमिति गम्यं तिष्ठन्ति, एकार्थकशब्दद्वयोपादानं तु गानप्रकर्षप्रतिपादनार्थमिति।।५।।

(६) तेणं कालेणं तेणं समएणं उड्ढलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरिआओ सएहिं २ कूडेहिं सएहिं २ भवणेहिं सएहिं २ पासायवडेंसएहिं पत्तेअं २ चउहिं सामाणिअसाहस्सीहिं एवं तं चेव पुव्ववण्णिअं [1]जाव विहरंति, तं जहा–

मेहंकरा १ मेहवई २, सुमेहा ३ मेहमालिनी ४।
[2]सुवच्छा ५ वच्छमित्ता य ६, वारिसेणा ७ बलाहका ।।१।।६।।

'तेणं कालेण' मित्यादि सर्वं: पूर्ववत्, नवरं 'उड्ढलोयवत्थव्वाओ' त्ति ऊर्ध्वलोकवास्तव्या नन्दनवनकूटनिवासिन्य इत्यर्थ: 'एवं तं चेव पुव्ववण्णियं जाव विहरंति' त्ति एवममुनाप्रकारेण तं चेव 'चउहिं महत्तरियाहिं' इत्यादि यदधोलोकवास्तव्यदिक्कुमारीवर्णनाधिकारे 'पूर्ववर्णितं' तदेवात्र ज्ञेयं 'यावद्' 'विहरंति' त्ति 'भोगभोगाइं भुंजमाणाओ विहरंती' ति पदमेता एवं नामत: प्राह- 'तं जहे' त्यादि तद्यथा- 'मेघङ्करा १ मेघवती २ सुमेधा ३ मेघमालिनी ४ सुवत्सा ५ वत्समित्रा च ६ वारिषेणा ७ बलाहका ८।।६।।

(७) तए णं तासिं उड्ढलोगवत्थव्वाणं अट्ठण्हं दिसाकुमारीमहत्तरिआणं पत्तेअं २ आसणाइं चलंति, एवं तं चेव पुव्ववण्णिअं भाणिअव्वं [3]जाव अम्हे णं देवाणुप्पिए! उड्ढलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरिआओ जण्णं भगवओ तित्थगरस्स जम्मणमहिमं करिस्सामो तण्णं तुब्भाहिं ण भाइअव्वंतिकट्टु उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति, २ त्ता जाव अब्भवद्दलए विउव्वंति, २ त्ता जाव तं निहयरयं णट्ठरयं [4]भट्ठरयं पसंतरयं उवसंतरयं करेंति, २ खिप्पामेव पच्चुवसमंति, एवं पुप्फवद्दलगंसि पुप्फवासं वासंति, वासित्ता जाव कालागुरुपवर जाव सुरवराभिगमणजोग्गं करेंति, २ त्ता जेणेव भयवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता जाव

१. द्र. ५/१।। २. स्था. ८/९९-१०० तोयधारा विचित्ता य, पुप्फमाना अणिंदिता-इति पाठ:।। ३.दृ. ५/२-५।।
४. भट्ठरयं - अकखबस नास्ति ।।

आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।।७।।

'तए णं तासि'मित्यादि प्राग्वत् **'तं चेव भाणियव्वं पुव्ववण्णियं जाव अम्हे ण'** मित्यादि, अत्रतदेवावधिप्रयोजनतीर्थकृद्वीक्षण परस्पराह्वानपरस्परतीर्थकृन्महिमाभ्युपगमा भियोगिकादेवाह्वानज्ञापनयान विमानारोहणतीर्थकरजन्मभवनप्रदक्षिणीकरणजिनजननी प्रणति स्तुत्यादिपूर्ववर्णितं भणनीयं यावत् 'अम्हे ण' मित्यादि वाक्यं व्यक्तं चेदं **'उत्तरपुरत्थिमदिसी भागं अवक्कमंति जाव'** त्ति इह यावत्करणात् 'वेउव्विय समुग्घाएणं समोहणं' ति इत्यादि द्रष्टव्यम् **'अब्भवद्दलए विउव्वंति जाव णिहयरयं'** अत्र यावत्करणात् 'से जहा णामए भइय दारए सिया तरुणे जाव सिप्पोवगए एगं महं दगवारगं वा दगथालगं वा दगकलसगं वा गहाय आरामं वा जाव पवं वा अतुरियं जाव सव्वओ समंता आवरिसेज्जा एवामेव ताओ वि अट्ठदिसाकुमारीओ अब्भवद्दलए विउव्वित्ता खिप्पामेव पतणतणायंति, २ त्ता खिप्पामेव पविज्झुयायंति, २ त्ता णच्च्योदगं नाइमट्टियं पविरलफुसियं रयरेणुविणसणं दिव्वं सुरभिगंधोदगं वासं वासंति वासेत्ता तित्थकरस्स भगवओ जम्मणभवणस्स सव्वओ समंता तं जोयणपरिमंडलं **'निहयरयं नट्ठरयं भट्ठरयं पसंतरयं उवसंतरयं करिंति'** इति दृष्टव्यं व्याख्या- **'अब्भवद्दलय विउव्वंति त्ति'** अभ्रवार्दलकानि विकुर्वंति वा: पानीयं तस्य दलानि वार्दलानि तान्येव वार्दलकानि मेघा इत्यर्थ:, अपो बिभ्रतीत्यभ्रणि मेघा अभ्राणि सन्ति अस्मिन्नित्यभ्र "मभ्रादिभ्य" इति मत्वर्थीयोऽप्रत्यय:, आकाशमित्यर्थोऽभ्रवार्दलकानि अभ्रवार्दलकानि तानि विकुर्व्वंति आकाशे मेघा विकुर्व्वतीत्यर्थ: 'से जहा णामए' इत्यादि स यथा नामको भृतिकदारको भृतिं करोतीति भृतिक: कर्मकरस्तस्य दारको भृतिकदारक: स्यात् 'तरुणे'त्यादि यावन्निउणसिप्पोवगए इति प्राग्वत्, 'एगं मह'मित्यादि, एकं महान्तं दकवारकं वा मृतिकामय भाजनविशेषं 'दककुम्भगं वा' इति दकघटं दकस्थालकं वा कांस्यादिमयमुदकभृतं भाजनं 'दककलसं वा' उदकभृतं भृङ्गारं गृहीत्वा 'आरामं वे' त्यादि प्राग्वत् 'आवरिसेज्जे' त्यादि आवर्षेदासमन्तात्सिञ्चेत् 'एवमेव' त्ति अनेनैव प्रकारेण ता

अप्यष्टौ दिक्कुमार्यो योजनपरिमण्डलमासिञ्चन्तीति गम्यं कथमासिञ्चन्तीत्याह-'अब्भवद्दलए विउव्वित्ते' त्ति अभ्रवार्दलकानि विकुर्व्य' खिप्पामेव पतणतणायंति' त्ति अनुकरणवचनमेतत् प्रकर्षेण स्तनितं कुर्वन्तीत्यर्थः 'पविज्जुयायंति' प्रकर्षेण विद्युतं विदधति नात्युदकं नाति मृत्तिकं यथा भवति एवं सुरभि गन्धोदकवर्षं वर्षन्ति किंभूतमित्याह-दिव्यं प्रधानं सुरभिगन्धोपेतत्वात्, पुनः कथंभूतमित्याह-'पविरलपफुसिय' मिति प्रकर्षेण यावद्रेणवः स्थगिता भवन्ति तावन्मात्रेणोत्कर्षेणेति भावः, विरलानि घनभावे कर्दमसम्भवात् प्रस्पृष्टानि प्रकर्षवन्ति स्पर्शानि मन्दस्पर्शनसम्भवे रेणुस्थगनासम्भवात्, यस्मिन् वर्षे तत्प्रविरलप्रस्पृष्टं अत एव 'रयरेणुविणासणं' ति श्लक्ष्णतररेणुपुद्गला रजस्त एव स्थूला रेणवो रजांसि च रेणवश्च रजोरेणवस्तेषां विनाशनं रजोरेणुविनाशनमेवंभूतं च सुरभिगन्धोदकवर्षं वर्षित्वा तद्योजनपरिमण्डलं क्षेत्रं निहतरजः कुर्व्वन्तीति योगः निहतं रजोभूय उत्थानासम्भवाद्यत्र तन्निहतरजस्तत्र निहतत्वं रजसः क्षणमात्रमुत्थानाभावेनापि सम्भवति तत आह-नष्टरजो नष्टं सर्वथाऽदृश्यीभूतं रजो यत्र तन्नष्टरजस्तथा भ्रष्टं वातोद्धुततया योजनमात्राद्दूरतः पलायितं रजो यस्मात्तद्भ्रष्टरजः एतदेवैकार्थिकद्वयेन प्रकटयति उपशान्तरजः प्रशान्तरजः कुर्व्वन्ति **'खिप्पामेव पच्चुवसमंति'** त्ति तत्क्षेत्रं तथाविधं कृत्वा क्षिप्रमेव प्रत्युपशाम्यन्ति प्रत्येकं ता दिक्कुमार्य उपशाम्यन्ति। गन्धोदकवर्षणान्निवर्त्तन्ते गन्धोदकवर्षमुपसंहरन्तीति भावः **'एवं पुप्फवद्दवलगंसि पुप्फवासं वासंति जाव'** इति एवममुनैव प्राकारेण पुष्पवार्दलके विकुर्विति सति इति गम्यं पुष्पवर्षं वर्षन्तीत्यत्र यावत्करणादयं पाठं खिप्पामेव पच्चुवसमिता दोण्हं वि वेउव्विय समुग्घाएणं समोहणंति संमोहित्ता जाव पुप्फवद्दलए विउव्वंति से जहा णामए मालागारदारए सिया तरुणे जाव सिप्पोवगए एगं महं पुप्फपडलगं वा पुप्फचंगेरियं वा पुप्पछज्जियं वा गहाय रायंगणं वा जाव सव्वओ समंता कयग्गहगहियकरतलपब्भट्ठ-विप्पमुक्केणं दसद्धवण्णेणं कुसुमेणं मुक्कपुष्फपुंजोवयारकलियं करेज्जा, एवामेव ताओ

दिसाकुमारीओ पुप्फवद्दलए विउवित्ता खिप्पामेव पतणतणायंति पतणतणित्ता जाव जोयणपरिमंडलंसि जलथलयभासुरप्पभूयस्स बिंटठाइस्स दसद्धवन्नस्स कुसुमस्स जण्णुस्सेहप्पमाणमित्तं ओह वासं वासंति २ त्ता तं जोयणपरिमंडलं कालागुरूपवरजाव सुरवराभिगमण जोग्गं करंती' ति व्याख्या-गन्धोदकवर्षणाच्छीघ्रमेव प्रत्युपशम्य द्वितीयमपि वारं वैक्रियसमुद्घातेन समवहन्यन्ते, इहाभ्रवार्दलकविकुर्व्वणार्थं यद्वैक्रियसमुद्घातेन समवहननं तत्किलैकमिदं तु पुष्पवार्दलकविकुर्व्वणार्थं द्वितीयमत उक्तं 'दोच्चं पी' त्यादि 'जावं पुप्फवद्दलए विउव्वंति' अत्र यावत्करणात् 'संखिज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरंती' त्यादि द्रष्टव्यं। यावत् **'पुप्फवद्दलए'** त्ति पुष्पवृष्टियोग्यानि वार्दलकानि पुष्पवर्षुकान् मेघान् विकुर्वन्तीति भावः, अथ पुष्पवृष्टिं यथा कुर्व्वन्ति तत्रार्थे द्रष्टान्तमाह-'से जहे' त्यादि प्राग्वन्नवरं मालाकारदारको वनपालक पुत्रः स यथानामको मालाकारदारकः **'एगं महं पुप्फछज्जियं वा'** इति एकां महतीं छाद्यते उपरि स्थग्यते इति छाद्या, छाद्यैव छाद्यिका पुष्पैः भृता छाद्यिका पुष्पछाद्यिका तां शेषं स्पष्टं 'कयग्गहे' त्यादि इह सुरतसंरम्भे मुखं चुम्बनाद्यर्थं यद्युवतेः केशेषु ग्रहणं स कचग्रहस्तेन गृहीतं कचग्रहगृहीतं तथा करतलाद्विप्रमुक्तं सत्प्रभृष्टं करतलप्रभ्रष्टं विप्रमुक्तं प्राकृतत्वात्पदव्यत्ययस्ततो विशेषणसमासस्तेन दशार्द्धवर्णेन कुसुमेन मुक्तं पुष्पपुञ्जोपचारकलितं कुर्यात्, एवमेव ता दिक्कुमार्यः पुष्पवार्दलकानि विकुर्व्य **'खिप्पामेवे'** त्यादि प्राग्वन्नवरं'जोयणपरिमंडलंसि' त्ति योजनपरिमण्डले क्षेत्रे 'कुसुमस्स' त्ति कुसुमस्य जातावेक वचनं तेन कुसुमजातस्य जानूत्सेधप्रमाणमात्रमोघेन-सामान्येन सर्वत्र योजनपरिमंण्डले क्षेत्रे वर्षमोघवर्षं वर्षन्ति किं विशिष्टस्य कुसुमस्येत्याह–'जलजथलज-भासुरप्पभूयस्स' त्ति जलजं च स्थलजं च जलस्थलजं जलजं पद्मादि स्थलजं विचिकिलादि भास्वरं दीप्यमानं प्रभूतमपि प्रचूरं ततः कर्मधारयः भास्वरं च तत्प्रभूतं च भास्वरप्रभूतं जलजस्थलजं च तद्भास्वरप्रभूतं च जलस्थलजभास्वरप्रभूतं तस्य पुनः कथंभूतस्येत्याह-'बिंटट्ठाइस्स' वृन्तेनाधोवर्त्तिनो तिष्ठतीत्येवं शीलं वृन्तस्थायि तस्य वृन्तस्थायिनो वृन्तमधो भागे

उपरि पत्राणीत्येवं स्थानशीलस्येत्यर्थः 'दसद्धवन्नस्स' दशानामर्द्धं पञ्च दशार्द्धवर्णा यस्य तद्दशार्द्धवर्णं पञ्च वर्णस्येत्यर्थः, इत्थंभूतस्य कुसुमजातस्य वर्षं वर्षित्वा तद्योजनपरिमण्डलं क्षेत्रं **'कालागुरुपवरजाव सुरवराभिगमणजोग्गं करिंति'** इह यावत्करणात् कालागुरु-पवरकुंदुरूक्कतुरूक्कधूवमघमघंतं गंधद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं' इति दृश्यं प्राग्वद्व्याख्येयं च सुरवराभिगमनयोग्यं कुर्वन्तीत्थं भूतं योजनपरिमण्डलं क्षेत्रं कृत्वा' **'जेणेव भयवं तित्थयरे'** इत्यादि यत्रैव भगवांस्तीर्थकरस्'**तीर्थकरमाता च तत्रैवोपागच्छन्ति यावदागायन्त्यः परिगायन्त्यस्तिष्ठन्ति।।७।।**

(८) तेणं कालेणं तेणं समएणं पुरत्थिमरुअगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरिआओ सएहिं २ कूडेहिं तहेव जाव विहरंति, तंजहा-

णंदुत्तरा य १, णंदा २, आणंदा ३, णंदिवद्धणा ४।
विजया य वेजयंती ६, जयंती ७, अपराजिआ ८।।१।।८।।

सेसं तहेव [1]जाव तुब्भाहिं ण भाइअव्वंतिकट्टु भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमायाए अ पुरत्थिमेणं आयंसहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।

'तेणं कालेण' मित्यादि सुगमं नवरं **'पुरत्थिमरुयगवत्थव्वाओ'** 'त्ति पौरस्त्यरुचक -वास्तव्या रुचकाभिधानस्य त्रयोदशद्वीपमध्यवर्त्तिनः प्राकाराकारेण मण्डलव्यवस्थितस्य पर्वतस्योपरि पूर्वदिग्व्यवस्थितेष्वष्टासु कूटेषु कृतनिवासा इत्यर्थः, अष्टौ दिक्कुमार्यः **'सएहिं कूडेहि'** मित्यादि सर्वं प्राग्वत्, एता एव नामतो दर्शयति **'तद्यथा-नन्दोत्तरा १, नन्दा २, आनन्दा ३, नन्दिवर्द्धना ४, विजया च ५, वैजयन्ती ६, जयन्ती ७, अपराजिता ८,** इति **'सेसं तहेव जाव तं तुम्हेहिं न भाइयव्वं तिकट्टु'** इत्यादि शेषमासनप्रकम्पादि तथैव

१.दृ. ५/२-५।।

प्राग्वदेववक्तव्यं यावद्युस्माभिर्नभेत्तव्यमिति कृत्वा तीर्थकरस्य **'तीर्थकरमातुश्च पूर्वस्यां दिशि आदर्शहस्तगता:'** करतलकलितादर्शा इत्यर्थ:, **'आगायन्तत्य: परिगायन्त्यस्तिष्ठन्ति।।८।।**

(९) तेणं कालेणं तेणं समएणं दाहिण रुयगवत्थव्वओ अट्ठ दिसाकुमारीमहत्तरियाओ तहेव जाव विहरंति, तं जहा-

समाहारा १, सुप्पइण्णा२, सुप्पबुद्धा ३, जसोहरा ४,
लच्छीमई ५, सेसवई ६, चित्तगुत्ता ७, वसुंधरा ८।।१।।

तहेव जाव तुब्भाहिं ण भाइयव्वं तिकट्टु भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए य दाहिणेणं भिंगारहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।।९।।

'तेणं कालेण' मित्यादि तस्मिन् काले तस्मिन् समये **'दाहिणरुयगवत्थव्वाओ'** त्ति दाक्षिणत्यरुचकवास्तव्या **'अष्टौ दिक्कुमार्यस्तथैव'** यावद्विहरन्ति एता एव नामग्राहमाह- **'तद्यथा-समाहारा १, सुप्रतिष्ठा २ सुप्रबुद्धा ३ यशोधरा ४, लक्ष्मीवती ५, शेषवती ६ चित्रगुप्ता ७ वसुंधरा'** ८, एतासामपि कार्यं दर्शयति **'तहेव'** त्यादि तथैव **'यावन्न भेत्तव्यमिति कृत्वा भगवतस्तीर्थकरस्य तीर्थकरमातुश्च दक्षिणेन दक्षिणस्यां दिशि भृङ्गारकहस्तगता आगायन्त्य: परिगायन्त्यस्तिष्ठन्ति।।९।।**

(१०) तेणं कालेणं तेणं समएणं पच्चत्थिमरुअगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारी - महत्तरिआओ सएहिं २ जाव विहरंति, तं०

इलादेवी १ सुरादेवी २, पुहवी ३ पउमावई ४।
एगणासा ५ णवमिआ ६, [1]भद्दा ७ सीआ य ८ अट्ठमा।।१।।

१.सीता भद्या-इति स्था. ८/३७।।

तहेव जाव तुब्भाहिं ण भाइअव्वंतिकट्टु जाव भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए अ पच्चत्थिमेणं तालिअंटहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।।१०।।

'तेणं कालेण तेणं समएणं' ति प्राग्वत् **'पच्चत्थिमरुअगवत्थव्वाओ'** त्ति पश्चिमरुचकवास्तव्या **'अष्टौ दिक्कुमार्यो महत्तरिका:'** **'सएहि'** मित्यादि प्राग्वद्वाच्यमेता एव नामतोऽभिधत्ते, **'तद्यथा-इलादेवी१, सुरादेवी २, पृथ्वी ३, पद्मावती ४, एकनासा ५, नवमिका ६, भद्रा ७, शीता ८,** अष्टमीति **'तहेव जावे '** त्यादि स्पष्टं **'यावद्भगवतस्तीर्थकरस्य तीर्थकरमातुश्च पश्चिमतस्तालवृन्तहस्तगता आगायन्त्य: परिगायन्त्यस्तिष्ठन्ति।।१०।।**

(११) तेणं कालेणं तेणं समएणं उत्तरिल्लरुअगवत्थव्वाओ जाव विहरंति, तं जहा-

अलंबुसा १ मिस्सकेसी २, पुण्डरीका य ३ वारुणी ४।
हासा ५ सव्वप्पभा ६ चेव, [1]सिरि ७ हिरि ८ चेव उत्तरओ।।१।।

तहेव जाव वंदित्ता भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए उत्तरेणं चामरहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।।११।।

'तेणं कालेण' मित्यादि प्राग्वन्नवरं **'उत्तररिल्लरुयगवत्थव्वाओ'** त्ति उत्तरकरूचक -वास्तव्या **'अष्टौ दिक्कुमार्यस्ता'** एव नामग्राहं निवेदयति-**'अलम्बुसा १, मिश्रकेशा २, पुण्डरीका च ३ वारूणी, ४, हासा ५, सर्वभा ६, श्री ७, ह्रीं ८,** चैव **'उत्तरओ'** त्ति रुचकस्योत्तरतो वसन्त्य: **'तहेव जाव वंदित्ता'** इति तथैवेति पूर्ववदेव तत्रागत्य यावद्वन्दित्वा **'जिनं जिनजननीं'** च नत्वा स्तुत्वा च **'जिनस्य जिनमातुश्चोत्तरस्यां चामरहस्तगता**

---

१. हिरि सिरि - अकखबस।।

आगायन्त्यः परिगायन्त्यस्तिष्ठन्ति।।११।।

(१२) तेणं कालेणं तेणं समएणं विदिसिरुअगवत्थव्वाओ चत्तारि दिसाकुमारीमहत्तरि -आओ जाव विहरंति, तंजहा-

चित्ता य १ चित्तकणगा २, [१]सतेरा ३ य सोदामिणी ४।

तहेव जाव ण भाइअव्वंतिकट्टु भगवओ तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए अ चउसु विदिसासु दीविआहत्थगयाओ आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंति।।१२।।

'तेणं कालेणं तेणं समएणं' ति स्पष्टं 'विदिसिरुयगवत्थव्वाओ' इत्यादि रुचकस्य विदिग्वास्त्व्याश्चतस्रो दिक्कुमार्यस्तथैव यावद्विहरन्ति, एता अपि नामतो निरूपयति 'तद्यथा चित्रा १, चित्रकनका २, शतेरा ३ सौदामिनी ४ ति। 'तहेवे'त्यादि सुगममेताश्च 'जिनजिनमात्रोश्चतसृषु विदिक्षु दिपिकहस्तगता आगायन्त्यः परिगायन्त्यस्तिष्ठन्ति।।१२।।

(१३) तेणं कालेणं तेणं समएणं मज्झिमरुअगवत्थव्वाओ चत्तारि दिसाकुमारीमहत्तरि -आओ सएहिं २ कूडेहिं तहेव जाव विहरंति, तंजहा-रुआ [२]रुयंसा सुरुआ रुअगावई। तहेव जाव तुब्भाहिं ण भाइयव्वंतिकट्टु भगवओ तित्थयरस्स चउरंगुलवज्जं [३]णाभिणालं कप्पेंति, कप्पेत्ता विअरगं खणंति, खणित्ता विअरगे णाभिं णिहणंति णिहणित्ता रयणाण य वइराण य पूरेंति,२ त्ता हरिआलिआए पेढं बंधंति, २ त्ता तिदिसिं तओ कयलीहरए विउव्वंति, तए णं तेसिं कयलीहरगाणं बहुमज्देसभाए तओ चाउस्सालए विउव्वंति, तए णं तेसिं चाउस्सालगाणं बहुमज्झदेसभाए तओ सीहासणे विउव्वंति, तेसि णं सीहासणाणं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते सव्वो वण्णगो

१. सओरा - अब । साओरा - त्रि । सुतेआ - ख।। २. रूआसिआ - प मु.। रूपासिका - शावृ.।। ३. नाभिं - अब आव. चू. पृ. १३९।।

[१]**भाणिअव्वो।।१३।।**

'तेणं कालेण' मित्यादि, सुबोधं नवरं **'मज्झिमरुयगवत्थव्वाओ'** त्ति मध्यमरुचक-वास्तव्या रुचकद्वीपस्याभ्यन्तरार्द्धवासिन्य इत्यर्थः, **'चतस्रोऽ'**पि **'दिक्कुमार्य'**स्ता एवं नामतः प्रतिपादयति **'तं जहे'** त्यादि तद्यथा- **'रूपा'** १, **रूपाशा** २, **सुरूपा** ३, **रूपकावती** ४ ति **'तहेवे'** त्यादि एता अपि तथैव तत्रागत्य **'यावद्युस्माभिर्न भेत्तव्यमिति कृत्वा भगवतस्तीर्थकरस्य चतुरङ्गुलवर्जं नाभिनालं'** **'कप्पंति'** त्ति छिन्दन्ति **'वियरगं खणंति'** त्ति विवरकं गर्त्तां खनन्ति **'विवरके नाभिनालं'** **'निहणंति'** त्ति निक्षिपन्तीत्यर्थः, नाभिनालं विवरके **'निधाय रयणाणं वयराण य पूरंति'** त्ति रत्नैर्वज्रैश्च पूरयन्ति तद्विवरकमितिगम्यं सूत्रे षष्टी प्राकृतत्वात् पूरयित्वा **'हरियालियाए पीढं बंधंति'** हरितालिकया दूर्वया पीठं बध्नन्ति रत्नवज्रपूरितविवरस्योपरीति गम्यं हरितालिकया पीठं **'बध्वा च'** **'तिदिसि'** मित्यादि त्रिदिशि पश्चिमावर्जदिक्त्रये एकैकस्यां दिशि एकैकस्य भावात् **'त्रीणि कदलीगृहाणि विकुर्व्वन्ति ततस्तेषां कदलीगृहाणां बहुमध्यदेशभागे त्रीणि चतुःशालकानि'** चतुःशालभवनानि **'विकुर्वन्ति ततस्तेषां चतुःशाल'** -भवनानां बहुमध्यदेशभागे त्रीणि सिंहसनानि विकुर्वन्ति **'तेसि ण'** मित्यादि, तेषां **'सिंहासनानामयमेतद्रूपो वर्णावासः प्रज्ञप्तः'** **'सव्वो वण्णगो भाणियव्वो'** त्ति सिंहासन-सम्बन्धी सर्वो वर्णको भणितव्यः स च पूर्ववद्वोद्धव्यः।।१३।।

(१४) तए णं ताओ रुअगमज्झवत्थव्वाओ चत्तारि [२]दिसाकुमारी महत्तरियाओ जेणेव भयवं तित्थयरे तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता भगवं तित्थयरं करयलपुडेणं गिण्हंति, तित्थयरमायरं च बाहाहिं गिण्हंति २ त्ता जेणेव दाहिणिल्ले कयलीहरए जेणेव चाउसालए जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च

---

१. द्र. राजप्र. सू. ३७-४०।। २. ०कुमारीमहत्तरियाओ - V।।

सीहासणे णिसीयावेंति, २ त्ता सयपाग-सहस्सपागेहिं तिल्लेहिं अब्भंगेंति, २ त्ता सुरभिणा [१]गंधवट्टएणं उव्वट्टेंति, २ त्ता भगवं तित्थयरं [२]करयलपुडेण तित्थयरमायरं च बाहासु गिण्हंति,२ त्ता जेणेव पुरत्थिमिल्ले कयलीहरए जेणेव चउसालए जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च सीहासणे णिसीआवेंति, २ त्ता तिहिं उदएहिं मज्जावेंति, तं जहा-गंधोदएणं १, पुप्फोदएणं २, सुद्धोदएणं, मज्जावित्ता सव्वालंकारविभूसिअं करेंति, २ त्ता भगवं तित्थयरं करयलपुडेणं तित्थयरमायरं व बाहाहिं गिण्हंति, २ त्ता जेणेव उत्तरिल्ले कयलीहरए जेणेव चउसालए जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च सीहासणे णिसीआविंति,२ त्ता आभिओगे देवे सद्दाविंति, २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! चुल्लहिमवंताओ वासहरपव्वयाओ (सरसाइं) गोसीसचंदणकट्ठाइं साहरह।।१४।।

(१५) तए णं ते आभिओगा देवा ताहिं रुयगमज्झवत्थव्वाहिं चउहिं दिसाकुमारीमहत्तरियाहिं एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा [३]जाव विणएणं वयणं पडिसुणंति, २त्ता खिप्पामेव चुल्लहिमवंताओ वासहरपव्वयाओ गोसीसचंदणकट्ठाइं साहरंति।।१५।।

'तए ण' मित्यादि 'ततस्ता' 'रुचकमध्यवास्तव्याश्चतस्रो दिक्कुमारी महत्तरिका यत्रैव भगवांस्तीर्थकरस्तीर्थकरमाता च तत्रैवोपागच्छन्ति भगवन्तं तीर्थकरं करतलपुटेन तीर्थकरमातरं च बाहुभिर्गृह्णन्ति गृहीत्वा यत्रैव दाक्षिणत्यं कदलीगृहं यत्रैव' तदन्तश्चतुशालभवनं यत्रैव' च तदन्तः 'सिंहासनं तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य भगवन्तं भगवन्मातरं च सिंहासने निसीयावेंति' त्ति उपवेशयन्ति

१. गंधट्ट एणं -V । द्र. स्था. ३।८७।। २. पुडेहिं - अकखत्रिबस । एवमग्रेऽपि।। ३. द्र. ३।८।।

'शतपाकसहस्रपाकैस्तैलैरभ्यङ्ग्यन्ति,' तत्र शतकृत्वो यत् पक्वमपरापरौषधीरसेन सह शतेन वा कार्षापणानां यत्पक्वं शतपाकमेवमितरदपि **'सुरभिणा गन्धवर्त्तकेनोद्वर्त्तयमुद्वर्त्तनं विदधति भगवन्तं तीर्थकरं करतलपुाटभ्यां भगवन्मातरं च बाह्वो गृहीत्वा यत्रैव पौरस्त्यं कदलीगृहं यत्रैव चतु:शाल'** मित्यादि प्राग्वत् **'तिहिं उदगेहि'** मित्यादि त्रिभिरूदकै**'र्मज्जनं कारयन्ति तद्यथा-गन्धोदकेन श्रीखण्डादि'**रसमिश्रेण **'पुष्पोदकेन'** पुष्परसमिश्रेण **'शुद्धोदकेन'** स्वाभाविकेन जलेनेत्यर्थ:, **'मज्जनं कारयित्वा' 'सर्व्वालङ्कारविभूषिते कुर्वन्ति'** जिन-जिनजनन्याविति भावस्ततश्च **'भगवन्तं तीत्थयरं करयले'** त्यादि **'सीहासणे निसीयावित्ता'** इत्यन्तं प्राग्वत् **'आभिओगे देवे सद्दावेंति'** इत्यादि यावत्' **'गोसीसचंदणकट्ठाइं साहरंति'** एतदन्तं सर्वं सुगमं नवरं **'साहरंति'** त्ति समानयन्ति।।१५।।

(१६) तए णं ताओ मज्झिमरुअगवत्थव्वाओ चत्तारि दिसाकुमारीमहत्तरिआओ सरगं करेंति, २ त्ता अरणिं घडेंति, अरणिं घडेत्ता सरएणं अरणिं [1]महिंति, २ त्ता अग्गि पाडेंति, २ त्ता अग्गिं संधुक्खंति, २ त्ता गोसीसचंदणकट्ठे पक्खिवंति, २ त्ता अग्गि उज्जालेंति, २ त्तासमिहाकट्ठाइं पक्खिविंति, २ त्ता अग्गिहोमं करेंति, २ त्ता भूतिकम्मं करेंति, २ त्ता रक्खापोट्टलिअं बंधंति, बंधेत्ता णाणामणिरयणभत्तिचित्ते दुविहे [2]पाहाणवट्टगे गहाय भगवओ तित्थयरस्स कण्णमूलंसि टिट्टिआविंति, भवउ भयवं पव्वयाउए २।।१६।।

'तए ण' मित्यादि **'ततस्ता मध्यरुचकवास्तव्याश्चतस्रो दिक्कुमार्यो महत्तरिका: सरगं करेंति'** त्ति शरकमरणिनिर्मथनयोग्यं कुर्व्वन्ति **'अरणिं घडेति'** त्ति अरणिरग्नेरुत्पादनार्थं निर्मथ्यते यद्दारु तं घटयन्ति **'शरकेणारणिं मथ्नन्ति'** शरकेणारणिं

---

१. मथिंति - अकखत्रिबस।। २. °पट्टगे - अब । °वट्टगोलए - त्रि. शावृ. हीवृ.।।

'प्रमथ्याग्निं पातयन्ति' ततः **'संधुक्षन्ति'** ततो **'गोशीर्षचन्दनकाष्टानि प्रक्षिपन्ति प्रक्षिप्याग्निमुज्वालयन्ति समिधःकाष्टानि प्रक्षिपन्ति प्रक्षिप्याग्निहोमं कुर्व्वन्ति कृत्वा' 'भूइकम्मं करिंति'** त्ति भूतिकर्म कुर्वन्ति **'रक्खापोटलियं बंधंति'** त्ति रक्षापोट्टलिकां बध्नन्ति जिन-जिनजनन्याः करे इति गम्यं **'बध्वा च नानामणिरत्नभक्तिचित्रौ द्वौ पाषाणवर्त्तकौ'** पाषाणगोलकौ **'गहाय'** गृहीत्वा **'तित्थयरकण्णमूलंसि'** त्ति जिनकर्णसमीपे **'टिट्टियाविंति'** त्ति आस्फालयन्ति महता शब्देन वादयन्तीतिभावः, ततश्च **'भवउ भयवं पव्वयाउय'** त्ति भवतु भवान् पर्वतायुरिति भणन्ति। ।१६।।

(१७) तए णं ताओ रुअगमज्झवत्थव्वाओ चत्तारि दिसाकुमारीमहत्तरिआओ भयवं तित्थयरं करयलपुडेणं तित्थयरमायरं च बाहाहिं गिण्हंति, गिण्हित्ता जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणे तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता तित्थयरमायरं सयणिज्जंसि णिसीआविंति, णिसीआवित्ता भयवं तित्थयरं माउए पासे ठवेंति, ठवित्ता आगायमाणीओ परिगायमाणीओ चिट्ठंती।।१७।।

'तते ण' मित्यादि कण्ठ्यं यावद्भगवन्तं तीर्थकरं मातुः पार्श्वे स्थापयन्ति स्थापयित्वाऽऽगायन्त्यः परिगायन्त्यस्तिष्ठन्ति।।१७।। इत्युक्तं षट्पञ्चाशद्दिक्कुमारीणां जिनजन्मविषयं कार्यमिदानीं यथेन्द्रादयस्तत्कुर्वन्ति तथा दर्शयन्नाह-

(१८) तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के णामं देविंदे देवराया वज्जपाणी पुरंदरे सयक्कऊ सहस्सक्खे मघवं [1]पागसासणे दाहिणड्ढलोकाहिवई बत्तीसविमाणावास - सयसहस्साहिवई एरावणवाहणे सुरिंदे अरयंबरवत्थधरे आलइयमालमउडे नवहेमचारुचित्तचंचलकुण्डलविलिहिज्जमाणगंडे[2] भासुरबोंदी पलंबवणमाले महिड्ढीए

---

१. आ. चूर्णौ अत्रैव पाठसङ्क्षेपोऽस्ति - पागसासणे जाव अद्धट्ठाहिं अच्छरा - कोडीहिं सद्धिं जाव विहरइ। इति V पृ. ५३२ टि. १।। २. ०गल्ले - V।।

महज्जुईए महाबले महायसे महाणुभागे महासोक्खे सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सक्कंसि सीहासणंसि [णिसण्णे][1]।।१८।।

(१९) से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणावाससयसाहस्सीणं चउरासीए सामाणिअसाहस्सीणं तायत्तीसाए [2]तायत्तीसगाणं चउण्हं लोगपालाणं अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणिआणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं, चउण्हं लोगपालाणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं सोहम्मकप्पवासीणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य →अण्णे पढंति अण्णेसिं च बहूणं देवाण य देवीण य आभिओगउववण्णगाणं ←आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसर सेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे महयाहय-णट्ट-गीय-वाइय-तंती-तल-ताल-तुडिअघण-मुइंग-पडुप्पडह-वाइअरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ।।१९।।

तेणं कालेणं तेणं समएणं ति प्राग्वत् **'सक्के देविंदे'** इत्यादि शक्रस्यासनविशेषस्याधिष्ठाता शक्र:**नाम'** ति नाम्ना देवानां मध्ये इन्दनात्परमैश्वर्ययुक्तत्वाद्**देवेन्द्रो** देवेषु कान्त्यादि गुणैरधिकं विराजमानत्वाद्**देवराजो** वज्रं पाणावस्येति वज्रपाणि: असुरादिपुराणां दारणात्**पुरन्दर**: शतं क्रतूनां कार्त्तिकश्रेष्ठिभवापेक्षयाऽभिग्रहविशेषाणां श्राद्धपञ्चमप्रतिमारूपाणां वा यस्यासौ **शतक्रतु: सहस्राक्ष**: इन्द्रस्य किल पञ्चमन्त्रिशतानि तदीयानां चाक्षणामिन्द्रप्रयोजनव्यापृततयेन्द्रसम्बन्धित्वेन विवक्षणात् मघो महामेघा देवविशेषा वा वशे सन्त्यस्य **मघवान्**, पाका बलवन्तो रयस्तान् पाकं वा दानवविशेषं शास्तीति **पाकशासनो दक्षिणार्द्धलोकाधिपतिर्मेरोर्दक्षिणत**: सर्वत्र तदैश्वर्याद् द्वात्रिंशतो विमानावासशतसहस्राणां विमानलक्षाणामित्यर्थ: स तथा, **ऐरावणो** गजरूप: सुरविशेषो **वाहनं**

---

१. सर्वेष्वपि आदर्शेषु 'सिंहासणंसि' एतत्पर्यवसान एव पाठो लभ्यते अर्थ विचारणया नैव पर्याप्तोऽस्ति क्रियापदं चापि नैव विद्यते। पज्जोसवणाकप्पे (८) अस्मिन्नेव प्रकरणे °सिंहासणंसि निसण्णे° इति पाठो विद्यते, अत्रापि तथैव युज्यते। इति V पृ. ५३२ टि. ४।। २. तावत्ती° V।।→← चिह्नद्वयम.व. पाठ: अकखत्रिब मध्ये अस्ति । मु.V. नास्ति।।

यस्य तथा, सुराणामिन्द्र आह्लाददायकः सुरेन्द्रोऽरजांसि निर्मलानि यान्यम्बरवस्त्राणि स्वच्छतयाऽऽकाशकल्पवसनानि तानि **धरति** यः स तथा, तथा **'आलगितौ** यथास्थानं निवेशितौ **मालामुकुटौ** येन स तथा **नवाभ्यामिव** नवीनाभ्यामिव **हेम्न**सत्काभ्यां **चारुभ्यां** मनोहराभ्यां **चित्राभ्यामाश्चर्यकृद्भ्यां चञ्चलाभ्यामितस्ततश्चलनपराभ्यां कुण्डलाभ्यां विलिख्यमानौ गल्लौ** कपोलौ यस्य स तथा तथा भासुरा दीप्तिमती वरा-प्रधाना **बोन्दिः** शरीरं यस्य स तथा, तथा **प्रलम्बवनमाला** भूषणविशेषः पदान्तलम्बिनी पञ्च वर्णा पुष्पमाला वा यस्य स त था **महर्द्धिको** विमानपरिवारादिसम्पदुपेतत्वात्, **महाद्युतिकः** शरीराभरणदिप्तियोगात् **महाबलः** पर्वताद्युत्पाटनसामर्थ्योपेतत्वात्, **महायशाः** सत् कीर्तियोगात् **महानुभागो** वैक्रियादि करणशक्तियुक्तत्वात्, **महासौख्यो** विशिष्टसुखयोगात् **सोहम्मकप्पे'** इत्यादि व्यक्तं **'से ण'** मित्यादि **'स इंद्रो ण'** मिति वाक्यालङ्कारे तत्र देवलोके **द्वात्रिंशतो विमानवासशतसहस्राणां** विमानलक्षाणामित्यर्थश्चतुरशीतेः **सामानिक-सहस्राणां** तत्र समानया इन्द्रतुल्यया ऋद्ध्या चरन्तीति सामानिकाः इन्द्रः समानायुष्कादिभावास्तेषां सहस्राणि तानि तथा तेषां, **त्रायस्त्रिंशानां** महत्तरकल्पानां तत्र पूज्यस्थानीयास्त्रयस्त्रिंशा मन्त्रिकल्पा वा तेषां, **चतुर्णां लोकपालानां** सोम-यम-वरुण-कुबेराणं दिक्पालनियुक्तानां**अष्टानामग्रमहिषीणां** प्रधानपत्नीनां पद्मा १ शिवा २ शची ३ अञ्जू ४ अमला ५ अप्सरा ६ नवमिका ७ रोहिणी ८ नाम्नीनां सपरिवाराणां **तिसृणां परिषदां** शक्रस्य हि तिस्रः परिषदो बाह्यमध्यमाभ्यन्तरा जघन्यमध्यमोत्कृष्ट-परिवारविशेषभूताः आसां च विशेषस्वरूपं भरतार्द्धकूटदेवावसरे व्याख्यातमिति तत एवावधार्यं **सप्तानामनीकानां** हस्त्य १ श्व २पदाति ३ रथ ४ वृषभ ५ नर्त्तक ६ गायकजनरूपाणामेतेषां मध्ये आद्यानि पञ्चानीकानि युद्धाय कल्पन्तेऽन्ये तु द्वे उपभोगायेति सप्तानामनीकाधिपतीनां हस्त्यनीकादिस्वामिनां **चतसृणां चतुरशीतीनामात्मरक्षकदेव-**

सहस्राणां शक्रस्य हि चतसृषु दिक्षु प्रत्येक चतुरशीतिसहस्रसङ्ख्यावेन सर्वाग्रेण षट् त्रिंशत्सहस्राधिकं लक्षत्रयमङ्गरक्षकाणां भवतीति शक्रस्यात्मानं रक्षतीति आत्मरक्षका: **कर्मणोऽणित्यण्प्रत्ययस्ते** च शिरस्त्राणकल्पा यथाहि-शिरस्त्राणं शिरस्याविद्धं प्राणरक्षकं भवति तथा तेऽप्यात्मरक्षका गृहीतधनुर्दण्डादिप्रहरणा: सप्तानामनीकाधिपतीनाम-ग्रतश्चावस्थायिन: शक्रस्य प्राणरक्षका: देवानामपायाभावात्तेषां तथावस्थानं निरर्थकमिति चेन्न, तत्र स्थितिमात्रपरि -पालनहेतुत्वात्प्रीतिप्रकर्षहेतुत्वाच्च, तथाहि-ते समंतत: सर्वासु दिक्षु गृहीतप्रहरणा ऊर्ध्वस्थिता -स्तिष्ठन्ति स्वनाथाङ्गरक्षणपरा: स्वनाथैकदत्तकदृष्टयोऽसहमानानां क्षोभमुत्पादयन्तो जनयन्ति स्वनाथस्य परं प्रीतिमिति, एते च नियतसंख्याका: शक्रस्य परिकरभूता देवा उक्ता ये तु तत्र सौधर्मकल्पे पौरजनपादस्थानीया ये चाऽभियोग्यास्तेऽतिबहव आस्थानमण्डल्यामपि चाहु नियतसंख्या इति तेषां सामान्यत: उपादानमाह–'**अण्णेसि**' मित्यादि प्राग्वत् '**अण्णे पढंती**' त्यादि प्रकारान्तरवर्णनमपि व्यक्तं नवरं '**आभिओगुववण्णगाणं**' आभियोगिकत्वेनोपपन्नानां इन्द्रस्यादेशविधयित्वेनोत्पन्ना-नामित्यर्थ: '**आहेवच्च**' मित्यादि आधिपत्यमधिपतिकर्म रक्षेत्यर्थ:, पुरपते: कर्म पौरपत्यं पौरोवर्त्त्यं वाऽग्रेसरत्वं स्वामित्वं नायकत्वं भर्तृत्वं पोषकत्वं गुरूतरत्वमाज्ञया ईश्वर: आज्ञेश्वर: सेनाया: पति: सेनापतिस्तत: कर्मधारयस्तस्य कर्म तथा '**कारेमाणे**' त्ति नियुक्तसुरै: कारयन् **पालयन्** स्वयमेव महत्तरेणेति योग:, **अहतमव्यवच्छिन्नं** यन्नाट्यं नाटकं तत्र **यद्गीतं** तं च ज्ञेयं यानि च **वादितानि तन्त्र्यादीनि** तत्र तन्त्री-वीणा तला-हस्तस्फोटा:, **ताला:** कंसिका: '**तुडिय**' त्ति शेषतूर्याणि **घनमृदङ्गो**-मेघध्वनिमर्दल: **पटुप्रवादितस्तत** एतेषां द्वन्द्वस्तेषां **रवेण दिव्यान्** देवजनोचितान् **भोगभोगानतिशयवद्भोगान् भुञ्जानो विहरत्यास्ते**।।१९।।

(२०) तए णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो आसणं चलइ। ।२०।।

(२१) तए णं से सक्के जाव आसणं चलिअं पासइ, २ त्ता ओहिं पउंजइ, पउंजित्ता भगवं तित्थयरं ओहिणा आभोएइ २ त्ता हट्ठतुट्ठचित्ते[१] आनंदिए नंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहिअए [२]धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइअ[३] -ऊसविअरोमकूवे विअसिअवरकमलनयण[४]-वयणे पचलिअवरकडग-तुडिअ-केऊर-मउडे कुण्डल-हारविरायंतवच्छे पालम्ब-पलम्बमाण-घोलंतभूसणधरे ससंभमं तुरिअं चवलं सुरिंदे सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, २ त्ता पाय पीढाओ पच्चोरुहइ २ त्ता वेरुलिअवरिट्ठ-रिट्ठ-अंजणनिउणोविअ-मिसिमिसिंत-मणि-रयणमंडिआओ पाउआओ ओमुअइ, २ त्ता एगसाडिअं उत्तरासंगं करेइ, २ त्ता अंजलिमउलियग्गहत्थे तित्थयराभिमुहे सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ, २ त्ता वामं जाणुं अंचेइ, २ त्ता दाहिणं जाणुं धरणीअलंसि साहट्ट[५] तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणियलंसि निवेसेइ[६], २ त्ता ईसिं पच्चुण्णमइ, २ त्ता कडगतुडिअथंभिआओ भुआओ साहरइ, २ त्ता करयलपरिग्गहिअं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-''णमोत्थु णं अरहंताणं भगवंताणं, आइगराणं तित्थयराणं सयंसंबुद्धाणं, पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुण्डरीआणं पुरिसवरगंध-हत्थीणं, लोगुत्तमाणं लोगणाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोअगराणं, अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं, धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं, दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा अप्पडिहयवरनाण दंसणधराणं विअट्टछउमाणं, जिणाणं जावयाणं तिण्णाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोअगाणं, सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिव-मयल-मरुअ-मणंत-मक्खय-

१. आव चूर्णौ (पृ. १४०) अतः परं एवं पाठसङेक्षपोऽस्ति - एवं जहा वद्धमाणस्सामिस्स अगहारद्दारे जाव सन्निसन्ने जीयकप्पं सरति सरिता तं गच्छामि। इति V पृ. ५३२ टि.१२।। २. धाराहय कयंब कुसुम° मु.प।। ३. चंचुमालइय तणुए - भग ११।३४ द्रश्यते। इति V पृ ५३३. टि. १२।। चंचुमालइयतणू - नाया० १।२०।। ४. कमलाणण वयणे - अकखब । कमलावयण णयणे - त्रि०। कमलाणणणयणे - हीवृ.।। ५. णिहट्टु - अकखत्रिबसपुवृ.हीवृ.।। ६. निवाडेइ - अकखत्रिबस पुवृ.हीवृ.।।

मव्वाबाह-मपुणरावित्तिसिद्धिगइणामधेयं ठाणं संपत्ताणं [1]णमो जिणाणं जिअभयाणं, णमोऽत्थु णं भगवओ तित्थगरस्स आइगरस्स जाव संपाविउकामस्स, वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए, [2]पासउ मे भयवं! तत्थगए इहगयं '' तिकट्टु वंदइ णमंसइ, २ त्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे।।२१।।

'तते ण' मित्यादि सुबोधं **'हट्ठ तुट्ठ चित्ते'** इत्यादि हृष्टतुष्टमतीव तुष्टमथवा हृष्टं विस्मितं तुष्टं तोषवच्चित्तं यस्य स तथा, **'आणंदिए'** त्ति आ-ईषन्मुखसौम्यतादिभावैर्नन्दितः समृद्धिमुपगतः आनन्दितो **नन्दितः** समृद्धतरतामुपगतः प्रीति र्मनसि यस्यासौ **प्रीतिमनाः** भगवति बहुमानपरायणमना इत्यर्थस्तत्क्रमेण बहुमानोत्कर्षवशात् **'परमसोमणस्सिए'** इति शोभनं मनो यस्यासौ सुमनास्तस्य भावः सौमनस्यं परमं च तत्सौमनस्यं च परमसौमनस्यं तत्सञ्जातमस्येति परमसौमनस्यित एतदेव व्यक्तीकुर्वन्नाह-**'हरिसवसविसप्पमाण हियये'** त्ति हर्षवशेन विसर्पद्विविस्तारयायि हृदयं यस्य स तथा, **'धाराहए'** इत्यादि धाराभि र्मेघवारिधाराभिराहतं **यन्नीपस्य** कदम्बस्य **सुरभि कुसुमं** तत्तथा तदिव **'चंचुमालइय'** त्ति पुलकितोऽत एवोच्छ्रितरोमकूपश्च यः स तथा, तथा विकसितानि जिनजननजनितान्दातिशयादुत्फुल्लानि **वरकमलवन्नयनवदनानि** यस्य स तथा, तथा **प्रचलितानि** भगवज्जन्मदर्शनोत्पन्न -सम्भ्रमातिरेकात्कम्पितानि वराणि **कटकानि** कङ्कणानि **त्रुटिका**श्च बाहुराक्षकाः **केयूराणि** वाङ्गदानि बाहुमूलविभूषणानि **मुकुटं** च **किरीटं कुण्डले** च प्रतीते यस्य स तथा **हारेण विराजच्छो**भमानं रतिदं सुखदं **वक्षो** यस्य स तथा ततः पदद्वयस्य कर्मधारयः**प्रालम्बो** मुक्तमयझुम्बनकं **प्रलम्बमानं घोलच्च'** दोलायमानं **यद्भूषणमाभरणं तद्धारयति** यः स तथा **ससम्भ्रमं** सादरं **त्वरितं** सौत्सुक्यं **चपलं** वेगवद्यथा भवत्येवं क्रियाविशेषणान्येतानि **सुरेन्द्रः सिंहासनादभ्युत्तिष्ठत्यभ्युत्थाय 'वेरूलिए'** त्यादि

---

१. णमो जिणाणं जिअभयाणं V भग. १।७ नास्ति, पसपुवृ. अस्ति। कखत्रिहीवृ. मध्ये णमो जिणाणं - अस्ति।। २. रायप°८ सूत्रे 'पासइ' इति पदं स्वीकृतमस्ति। अर्थ दृष्टया तत्समीचीनमस्ति किन्तु प्रयुक्तादर्शेषु 'पासइ' इति पदं क्वापि न दृश्यते इति V पृ. ५३३ टि. १२।।

वैडूर्येण मध्यवर्त्तिना **वरिष्टे** प्रधाने **रिष्टाञ्जनरत्न**विशेषौ ययोस्ते तथा **निपुणेन** शिल्पिना उपिते परिकर्मिते ये ते तथ, अत एव **'मिसिमिसिंत'** त्ति चिकचिकायमान**नैर्मणिभि**श्चन्द्रकान्तादिभी **रत्नैश्च** कर्केतनादिभि **मंण्डिते** भूषिते ये ते तथा, ततः पदचतुष्टयस्य कर्मधारयः **पादुकेऽवमुञ्चति अवमुच्य 'एगसाडियं'** ति एक खण्डशाटकमय**मुत्तरासङ्गं करोति कृत्वाऽञ्जलिना**ञ्जलि करणतो **मुकुलितौ** मुकुलाकृतीकृतौ **हस्तौ** येन स तथा **तीर्थकराभिमुखः सप्ताष्टानि पदान्यनुगच्छति अनुगम्य वामं जानुमञ्चति**-उत्पाटयति इत्यर्थः, **दक्षिणं जानुं धरणीतले निहट्टु'** त्ति निहत्य स्थापयित्वेत्यर्थस्त्रिः **कृत्वस्त्रीन्वारान् मुर्द्धानं धरणीतले निपातयति** लगयतीत्यर्थः। **इसि पच्चुन्नमइ'** त्ति ईषन्मनाक् प्रत्युन्नमति अवनतत्वं विमुञ्चतीत्यर्थः प्रत्युन्नम्य **कटकतुटिकस्तम्भितौ भुजौ साहरइ** त्ति ऊर्ध्वं नयति **'करयले'**त्यादि प्राग्वत् **'एवं वयासि'** त्ति एवमवादीत् **'नमोत्थुणं'** मित्यादि, नमोस्तु सर्वत्र सम्बध्यते णमिति वाक्यालङ्कारे **'अरहंताण'** ति देवादिभ्योऽतिशयपूजामर्हतीत्यर्हतस्तेभ्यः सूत्रे षष्टी **"छट्ठि विभत्तीइ भन्नइ चउत्थी"** इति प्राकृतलक्षणात् तथा **भगवद्भ्यः "भगोऽर्क ज्ञान २ माहात्म्यः ३ यशो ४ वैराग्य ५ मुक्तिषु ६ रूप ७ वीर्य ८ प्रयत्ने ९ च्छा १० श्री ११ धर्मै १२ श्वर्य १३ योनिष्विति"।** अर्कयोनिवर्जद्वादशार्थभगयुक्तेभ्यः। तथा **आदिकरेभ्यः** आदिधर्मस्य प्रथमा प्रवृत्तिस्तत्करणशीला आदिकरास्तेभ्यः **'तित्थगराण'** त्ति तीर्यते संसारसमुद्रोःऽननेति तीर्थं संघ आद्यगणधरो वा तत्करणशीलास्तीर्थकरास्तेभ्यस्तथा स्वयं परोपदेशं विना सम्यग्वरबोधिप्राप्त्या बुद्धा मिथ्यात्वनिद्रापगमसंबोधेन **स्वयं संबुद्धा**स्तेभ्यस्तथा पुरुषाणामुत्तमाः **पुरुषोत्तमा** भगवन्तो हि संसारमप्यावसन्तः सदा परार्थव्यसिनः उपसर्जनीकृतस्वार्थाः उचितक्रियावन्तोऽदीनभावाः कृतज्ञतापटयोऽनुपहतचित्ता देवगुरुबहुमानिन इति पुरुषोत्तमास्तेभ्य उत्तमत्वमेवोपमा त्रयेणाह तथा पुरुषाः सिंहा इव कर्मगजान् प्रति **पुरुषसिंहा**स्तेभ्यस्तथा पुरुषा वरपुण्डरीकाणीव संसारजलसङ्गादिना

कर्ममलाऽलेपेनेति **पुरुषवरपुण्डरीकाणि तेभ्य:**, यथाहि पुण्डरीकाणि पङ्के जातानि जलैर्वर्द्धितानि परं पङ्कजले न स्पृशन्ति तथा भगवन्तोऽपि कर्मपङ्केजाता दिव्यभोगजलै-र्वर्द्धितास्तथापि तद्द्वयं विहाय पुण्डरीकवत्तदस्पृष्टा भवन्तीति, तथा पुरुषा वरगन्धहस्तिन इव परचक्र-दुर्भिक्षमारिप्रभृतिक्षुद्रगजनिराकरणेनेति पुरुषवरगन्धहस्तिनस्तेभ्यस्तथा लोको भव्यसत्त्व लोकस्तस्य सकलकल्याणैकनिबन्धनतया भव्यसत्त्वभावेनोत्तमा **लोकोत्तमा** स्तेभ्य:, तथा लोकस्य नाथा योगक्षेमकृतो **लोकनाथास्तेभ्यस्तत्राप्राप्तस्य** सम्यग्दर्शनादेर्लम्भयनं योगो लब्धस्य तस्यैव तत्तदुपद्रवाभावापादनेन पालनं क्षेमं, तथा लोकस्यैकेन्द्रियादिप्राणिगणस्य पञ्चास्तिकायात्मकस्य चारक्षणोपदेशेन सम्यक्प्ररूपणया वा हिता **लोकहितास्तेभ्यस्तथा** लोकस्य देशानायोग्यस्य प्रदीपा देशनांशुभिर्यथावस्थितवस्तुप्रकाशका **लोकप्रदीपास्तेभ्य:**, इदं विशेषणं दृष्टृलोकमाश्रित्योक्तमथ दृश्यलोकमाश्रित्याह-लोकस्य लोकालोकरूपस्य समस्तवस्त्वात्म कस्य केवलालोकपूर्वकप्रवचनप्रभामण्डल प्रवर्त्तनेन प्रद्योतं प्रकाशं कुर्व्वन्ति **इति लोकप्रद्योतकरास्तेभ्य:**, अथवा लोकस्योत्कृष्टमतेर्गणधरादिभव्यसत्त्वलोकस्य प्रद्योतं विशिष्टज्ञानशक्तिं तत्क्षणद्वादशाङ्गविरचनानुमेयां कुर्वन्तीति लोकप्रद्योतकरास्तेभ्यस्तथा सप्तभयहरणादभयं दयन्त इति **अभयदया:**, अभया वा सर्वप्राणिभयपरिहारवती दया कृपा येषां तेऽभयदयास्तेभ्य:, न केवलममी प्राणिनामनर्थपरिहारमात्रं कुर्वन्त्यपित्वर्थप्राप्तिमपीति दर्शयन्नाह-चक्षुरिव चक्षु: श्रुतज्ञानं शुभाशुभार्थविभागो-पदर्शकत्वात्तद्दन्त इति चक्षुर्दयास्तेभ्यो, यथा हि लोके कान्तारगतानां चौरैर्विलुप्तधनानां बद्धचक्षुषां चक्षु र्दत्वा वाञ्छितमार्गदर्शनेनोपकारी भवत्येवमेतेऽपि संसारारण्यवर्त्तिनां रागादिचोरविलुप्तधर्मधनानां कुवासना ऽऽच्छादितसज्ज्ञानलोचनानां तदपनयनेन श्रुतचक्षुर्दत्वा निर्वाणमार्गं यच्छन्त उपकारिण इति दर्शयन्नाह-मार्गदयेभ्यो मार्गं सम्यग्दर्शनादिकं मोक्षपथं दयन्त इति

मार्गदयास्तेभ्यः यथाहि चक्षुरुद्घाटनं मार्गदर्शनं च कृत्वा चौरादिविलुप्तधनान्निरूपद्रवस्थानं प्रापयन् परमोपकारा भवन्त्येवमेतेऽपीति दर्शयन्नाह-**शरणदयेभ्यः** शरणं त्राणं नानाविधोपद्रवोपद्रुतानां रक्षास्थानं तच्च परमार्थतो निर्वाणं तद्दयन्ते दर्शनाद्यासेवनतः, तत्प्राप्तेस्तस्य च तेषां दायकत्वाच्छरणदयास्तेभ्यः, यथा हि लोके चक्षुमार्गशरणदानाद् दुस्थानां जीवितं ददात्येवमेतेऽपीति दर्शयन्नाह-**जीवदयेभ्यो** जीवनं जीवो भावप्राणधारणममरणधर्मत्वमित्यर्थस्तद्दयन्त इति जीवदयाः जीवेषु वा दया येषां ते जीवदयास्तेभ्यः, तथा बोधिर्जिनप्रणीत धर्मप्राप्तिस्तत्त्वार्थरूचिरूपा तां दयन्त इति **बोधिदया**स्तेभ्यः, तथा धर्मं चारित्ररूपं दयन्त इति **धर्मदया**स्तेभ्यः, कथं धर्मदा इत्याह धर्मं दिशन्ती ति धर्मदेशकास्तेभ्यस्तथा धर्मस्य नायकाः स्वामिनस्तद्वशीकरणात् तत्फलपरिभोगाच्च **धर्मनायका**स्तेभ्यस्तथा धर्मस्य सारथय इव सम्यक्प्रवर्त्तनयोगेन **धर्मसारथ**यस्तेभ्यस्तथा त्रयः समुद्राश्चतुर्थो हिमवान् एते चत्वारः पृथिव्यान्ताः पर्यन्तास्तेषु भवाः स्वामितयेति चातुरन्तास्ते च ते चक्रवर्त्तिनश्चातुरन्तचक्रवर्त्तिनो भवन्त्येवं भगवतोऽपि धर्मवरविषये शेष प्राणभृणां मध्ये सातिशयत्वात्तथोच्यन्ते तेभ्योऽथवा धर्म एव वरं प्रधानं नरकादिचतुर्गत्यन्तकरणाच्चतुरन्तचक्रमिव चक्रं मिथ्यात्वादिरिपुच्छेकत्वात्तेन वर्त्तितुं शीलं येषां ते **धर्मवरचतुरन्तचक्रवर्त्तिन**स्तेभ्यः, **'दीवो ताणं सरणगईपइट्ठ'** इत्येतानि भिन्नसम्बन्धानि चतुर्थ्यर्थं षष्ट्यंततया योज्यानि तत्र दीप इव दीपः समस्तवस्तुप्रकाशकत्वात्, द्वीपो वा संसारसागरान्तर्गताङ्गिवर्गस्य नानाविधदुःखकल्लोलाभिघातदुःस्थितस्याश्वास-हेतुत्वात्, तथा त्राणमनर्थप्रतिहननं तद्धेतुत्वात् त्राणं तथा शरणमर्थसम्पादनं तद्धेतुत्वाच्छरणं तथा 'गइ' त्ति गम्यते दुःस्थितैः सुस्थतार्थमाश्रीयते इति गतिः 'पइट्ठत्ति प्रतिष्ठन्त्यस्यामिति प्रतिष्ठा आधारः संसारगर्त्ते प्रपततः प्राणिवर्गस्येति तथा **'अप्पडिहये'** त्यादि, अप्रतिहते कटादिभिरस्खलितेऽविसंवादके वा **वरे** प्रधाने क्षायिकत्वात् **ज्ञानदर्शने** केवलाख्ये **धरन्तीति**

तथा तेभ्यः, तथा छादयत्यावारयतीति छद्म घातिकर्मचतुष्टयव्यावृत्तमपगतं छद्म येभ्यस्ते व्यावृत्तछद्मानस्तेभ्यः, तथा जयन्ति रागादीनिति **जिनास्तेभ्यः**, तथाऽन्यान् जापयन्तीति [[1]**जापकास्तेभ्यः**, तथा तरन्ति संसारसागरमिति **तीर्णास्तेभ्यः**, तथाऽन्यान् तारयन्तीति **तारकास्तेभ्यः**, तथा स्वयं बुध्यन्ति तत्त्वमिति **बुद्धास्तेभ्यः**, तथाऽन्यान् बोधयन्तीति] **बोधकास्तेभ्यः**, तथा बाह्याभ्यन्तर-ग्रन्थबन्धनात्कर्मबन्धनाद्वा मुक्तास्तेभ्यस्तथा परानपि तस्मान्मोचयितारो मोचकास्तेभ्य एतावन्ति विशेषणानि भवावस्थामाश्रित्योक्तानि। अथ सिद्धावस्थमाश्रित्योच्यन्ते **'सव्वन्नूण'** मित्यादि, सर्वं वस्तु विशेषरूपतया जानन्तीति सर्वज्ञास्तेभ्यः, तथा सर्वं वस्तु सामान्यरूपतया पश्यन्तीति **सर्वदर्शिनस्तेभ्यः** सिद्धावस्थायां हि पुरुषस्य कैश्चिज्ज्ञानं नाभ्युपगम्यते प्रकृतिविकारस्य बुद्धेरभावादित्येतन्मतव्यपोहार्थ-मित्थमुक्तं, तथा **शिवं** सर्वोपद्रवरहितत्वात्, **अचलं** स्वाभाविक-प्रायोगिकचलक्रियाव्यपोहात्, **अरुजं** मनः शरीरयोरभावेनाधिव्याध्यसम्भवात्, अनन्तमनन्तार्थविषयज्ञानस्वरूपत्वात्, अक्षयमनाशं साद्यपर्यवसितत्वात्, **अक्षतं** वा परिपूर्णत्वात्, **अव्याबाधं** परेषामपीडाकारित्वात् केनापि व्याबाधयितुमशक्यत्वाद्वा तथा न विद्यते पुनरावृत्तिर्भवेऽवतारो यस्मात्तदपुनरावृत्तिकं सिध्यन्ति निष्ठितार्था भवन्त्यस्यां प्राणिनः सा **सिद्धि**-र्लोकान्तक्षेत्रलक्षणा सा चासौ गम्यमानत्वाद्गतिश्च **सिद्धिगतिः** सैव नामधेयं नाम यस्य तत्**सिद्धिगतिनामधेयं** तिष्ठन्ति अस्मिन्निति स्थानं व्यवहारतः सिद्धिक्षेत्रं निश्चयतो यथावस्थितं स्वस्वरूपं स्थानस्थानिनोरभेदोपचारात्तु सिद्धिगतिनामधेयं तत्सम्प्राप्ताः सम्यगशेषकर्मविच्युत्या प्राप्तास्तेभ्यः जीवस्वरूपविशेषणानि तु लोकाग्रे उपचारादवसेयानि, आद्यन्तकृतो नमस्कारो मध्यव्यापीति पर्यन्ते पुनर्नमस्कारमाह-**नमो जिणाणं जियभयाणं'** ति नमो जिनेभ्यो राग-द्वेषादिभावारिजेतृभ्यो जितभयेभ्यो भवप्रापञ्चनिवृत्तेः क्षपितभयेभ्यो न चात्र

१. एष पाठो ह.लि.वृत्तौ केनचिदपि कारणेन पतितोऽस्ति तेनास्माभिः स्वप्रयत्नेन पुरितोऽस्ति।।

पौनरुक्त्यं दोषाय स्तुतित्वात्, यदुक्तं **"सज्झाय झाण तवोसहेसु, संतगुणकित्तणेसु य न हुंति पुणरुत्तदोसाओ"** इति क्वचिदिदं पदद्वयं न दृश्यते, इत्येवं सामान्येन सर्वभावार्हतोऽभिवन्द्य साम्प्रतं तत्कालोत्पन्नस्याधिकृतजिनस्य नमस्कृतिपूर्विकां स्तुतिमाह **'नमोत्थुण'** मित्यादि व्यक्तं यावत्करणात् **'तित्थगरस्स सयंसंबुद्धस्स'** इत्यादि सर्वं प्रागुक्तं षष्ट्येकवचनान्तं कृत्वा यावत् 'सिद्धिगइनामधेयं ठाणं मित्येतदन्तं दृश्यं' **'संपाविउकामस्स'** त्ति सम्प्राप्तुकामस्य यद्यपि भगवतो मोक्षगमनेऽभिलाषो नास्ति, **"मोक्षे भवे च सर्वत्र निः स्पृहो मुनिसत्तम"** इति वचनात्तथापि तदनुरूपचेष्टनात्मं प्राप्तुकाम इव सम्प्राप्तुकामस्तत्रासम्प्राप्त इत्यर्थस्तस्य **'वंदामि ण'** मित्यादि वन्देऽहं **भगवन्तं तत्रगतमिह गतः** सन् **पश्यतु स भगवान् मां तत्र गत इह गतमिति कृत्वा वन्दते** स्तौति **नमस्यति** कायेन मनसा प्रणमति **वन्दित्वा नमस्यित्वा च सिंहासनवरे पूर्वभिमुखः सन्निषण्णः** उपविष्टः।।२१।।

(२२) तए णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अयमेआरूवे जाव संकप्पे समुप्पज्जित्था उप्पण्णे खलु भो जम्बुद्दीवे दीवे भगवं तित्थयरे, तं जीयमेयं तीअपच्चुप्पण्णमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवराईणं तित्थयराणं जम्मणमहिमं करेत्तए, तं गच्छामि णं अहंपि भगवओ तित्थगरस्स जम्मणमहिमं करेमित्तिकट्टु एवं संपेहेइ, २ त्ता हरिणेगमेसिं पायत्ताणीयाहिवइं देवं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! सभाए सुहम्माए मेघोघरसियं [1]गंभीरमहुरयरसद्दं जोयणपरिमण्डलं सुघोसं सूसरं घंटं तिक्खुत्तो उल्लालेमाणे २ महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणे २ एवं वयाहि–''आणवेइ णं भो सक्के देविंदे देवराया, गच्छइ जम्बुद्दीवे २ भगवओ तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करित्तए, तं तुब्भेवि णं देवाणुप्पिआ! सव्विड्ढीए

---

१. °गंभीरमहुरतरसद्दं - अकखत्रिबस पुवृ.ह्रीवृ.। गंभीरतरमहुरसद्दं - आव-चू.पृ.१४०।।

सव्वजुईए सव्वबलेणं सव्वसमुदएणं सव्वायरेणं सव्वविभूईए सव्वविभूसाए सव्वसंभमेणं सव्वणाडएहिं सव्वोरोहेहिं[1] सव्वपुप्फगंधमल्लालंकारविभूसाए सव्वदिव्वतुडिअसद्दसण्णिणाएणं महया इड्ढीए [2]जाव दुंदुहिनिजोगरवेणं णिअयपरिआलसंपरिवुडा सयाइं २ [3]जाणविमाणवाहणाइं दुरूढा समाणा अकालपरिहीणं चेव सक्कस्स जाव अंतिअं पाउब्भवह।।२२।।

'तए णं तस्से' त्यादि, ततो निषदनानन्तरं तस्य **शक्रस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्यायमतेद्रुपो** यावत्सङ्कल्पो विकल्पः समुदपद्यते यावत्करणात् 'अब्भत्थिए चिंतिए मणोगए' इति दृश्यं कथंभूतः संकल्पः? आध्यात्मिक आत्माश्रयश्चिन्तितः स्मरणरूपः प्रार्थितो लब्धुमाशंसितो मनोगतो न बहिर्वचसा प्रकाशित इति संकल्पमेवाह-**'उप्पण्णे खलु भो जंबूद्दीवे भगवं तित्थयरे'** इत्यादि प्राग्वद्व्याख्येयं नवरं 'एवं संपेहेइ' त्ति सम्प्रेक्षते पर्यालोचयति **'हरिणेगमेसि '** मित्यादि हरिन्द्रिस्य नैगमेषी आदेशप्रतीच्छको हरिनैगमेषी तं **पदात्यनीकाधिपतिं देवं शद्बापयति शद्बापयित्वैवमवादीत् क्षिप्रमेव भो देवानुप्रिय! सभायां सुधर्मायां' मेघोघरसियगम्भीरतरमहुरतरसद्दं'** ति मेघौघस्य मेघवृन्दस्य यद्वरसिंत गर्जितं ततोऽपि गम्भीरतरो मधुरतरश्च शद्बो यस्याः सा तथा, योजन-परिमण्डलं योजनप्रमाणं परिमण्डलं गुणप्रधानोऽयं निर्देशः पारिमाण्डल्यं यस्याः सा योजनपारिमण्डलां तां सुघोषां सुघोषाभिधानां सुस्वराः शोभनस्वरां घण्टां **'तिक्खुत्तो'** त्ति त्रीन् वारानुल्लालयन्नुल्लालयन् ताडयन् ताडयन् **महता शद्बोनोद्घोषयनुद्घोषणां** कुर्वनुद्घोषणां कुर्वन् 'एवं वयहि' त्ति एवं वद, **आज्ञापयति भोः शक्रो देवेन्द्रो** यथागच्छति भोः शक्रो देवेन्द्रो देवराजो जम्बूद्वीपे द्वीपे भगवतस्तीर्थकरस्य जन्ममहिमानं कर्त्तुं तस्मात् **'तुब्भेवि य'** त्ति यूयमपि देवानुप्रियाः! **सर्वर्द्ध्या** परिवारादिकया **सर्वद्युत्या** यथा शक्तिविस्फारितेन सर्वेण शरीरतेजसा **सर्वबलेन**

---

१. सव्वरो° अका सव्वावरो° त्रि।। सव्वोवरोहेहिं - आव चूर्णि पृ.१४०।। २. द्र. ३।१२।। ३. जाणाइं वाहणविमाणाइं - अब। जाणवाहण विमाणाइं - कखत्रिस पु.वृ. हीवृ. आव. चू. पृ - १४०।।

समस्तेन स्वस्वहस्त्यादिसैन्येन **सर्वसमुदयेन** स्वस्वाभियोग्यादिसमस्तपरिवारेण **सर्वादरेण** समस्तयावच्छक्तितुल्येन **सर्वविभूत्या** स्वस्वाभ्यन्तरवैक्रियकरणादिबाह्यरत्नादिसम्पदा **सर्वविभूषया** यावच्छक्ति स्फारोदाशृङ्गार करणेन **'सव्वसंभमेणं'** ति सर्वोत्कृष्टेन सम्भ्रमेण सर्वोत्कृष्टसम्भ्रमो नामेह स्वनायकविषयबहुमानख्यापनपरा स्वनायककार्यसम्पादनाय यावच्छक्तित्वरित त्वरिताप्रवृत्तिः **सर्वनाटकै**र्नर्तकनाटयिंतुं तूर्यादि समुदायैः **'सव्वोरोहेहि'** ति सर्वावरोधैः सर्वान्तःपुरपरिवारैः सर्वपुष्पवस्त्रगन्धमाल्यालङ्कारविभूषया इह पुष्पाण्यग्रथितानि गन्धा वासा माल्यानि पुष्पदामानि अलङ्काराभरणानि शेषं व्यक्तं **'सव्वदिव्वतुडियसद्दसन्निनादेणं** ति सर्वाणि च तानि दिव्यत्रुटितानि च दिव्यतूर्याणि सर्वदिव्यत्रुटितानि तेषां शद्वाः सर्वदिव्यत्रुटितशद्वास्तेषामेकत्रमीलनेन यः सङ्गतो नितरां नादो महान् घोषः स सर्वदिव्यत्रुटितशद्वसन्निनादस्तेनेहाल्पेष्वपि सर्वशद्वो दृष्टो यथानेन सर्वं पीतं घृतमिति तत आह **'महया इड्ढिए'** इत्यादि महत्या यावच्छक्तितुलियया ऋद्ध्या-परिवारादिकया 'एवं महाजुईए' इत्याद्यपि यावत्करणाद्भावनीयं तथा महता स्फुर्तिमता चरण प्रधानानां त्रुटितानामातोद्यानां यमकसमकमेककालं पटुभिः पुरूषैः प्रवादितानां यो रवस्तेनैतदेव विशेषाचष्टे 'संखपणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुखमुइंगदुंदुभिनिग्घोसनाइयरवेणं' ति इत्यपि यावच्छद्वाद् द्रष्टव्यं शंखः प्रतीतः पणवो भाण्डानां **पटह**ः पटहः प्रतीतो भेरी ढक्का झल्लरी चर्मावनद्धा विस्तीर्णवलयरूपा खरमुखी काहला हुडक्कः प्रतीतो महाप्रमाणो मर्दलो मुरजः स एव लघुर्मृदङ्गो दुन्दुभि भैर्याकारा सङ्कटमुखी एतेषां द्वन्द्वस्तासां निर्घोषो महान्**ध्वानो** नादितं च घण्टायामिव वादनोत्तरकालभावी सततध्वनिस्तल्लक्षो यो रवस्तेन निजक-परिवार सम्परिवृत्ताः स्वकीयानि स्वकीयानि यानवाहनविमानानि यानानि रथादीनि वाहनानि गजादीनि विमानानि प्रतीतानि ततो द्वन्द्वस्तानि आरूढाः सन्तो **'अकालपरिहीणां चेव'** त्ति परिहानिः परिहीनं कालपरिहीनं कालविलम्ब इतिभावो न विद्यते कालपरिहीनं यत्र प्रादुर्भवने

तदकालपरिहीनं क्रियाविशेषणमेतत् **'अंतियं पाउब्भवह'** त्ति **शक्रस्यान्तिके** समीपे प्रादुर्भवत समागच्छतेति भावार्थः।।२२।।

(२३) तए णं हरिणेगमेसी देवे पायत्ताणीयाहिवई सक्केणं ३ जाव एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ [1]जाव एवं देवोत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, २ त्ता सक्कस्स ३ अंतिआओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता जेणेव सभाए सुहम्माए मेघोघरसिअगम्भीर-[2]महुरयरसद्दा जोअणपरिमण्डला सुघोसा घण्टा तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता तं मेघोघरसिअगंभीरमहुरयरसद्दं जोअणपरिमण्डलं सुघोसं घण्टं तिक्खुत्तो उल्लालेइ।।२३।।

(२४) तए णं तीसे मेघोघरसिअगंभीरमहुरयरसद्दाए जोअणपरिमण्डलाए सुघोसाए घण्टाए तिक्खुत्तो उल्लालिआए समाणीए सोहम्मे कप्पे अण्णेहिं एगूणेहिं बत्तीसविमाणावाससयसहस्सेहिं अण्णाइं एगूणाइं बत्तीसं घण्टासयसहस्साइं जमगसमगं कणकणारावं काउं पयत्ताइं हुत्था ।।२४।।

'तए णं स हरिणेगमेसी देवे' इत्यादि प्रकटार्थः **'तिखुत्तो उल्लालेइ'** त्ति त्रिस्ताडयति **'तए णं तीए'** इत्यादि ततो ण मिति वाक्यालङ्कारे तस्यां **मेघौघरसितगम्भीरमधुरशद्धायां योजनपरिमण्डलायां सुघोषाभिधानायां सुस्वरायां घण्टायां त्रिःकृत्वस्ताडितायां सत्यां सौधर्मकल्पे 'अण्णेहिं एगुणेहिं बत्तीसाए विमाणवाससयसहस्सेहिं'** त्ति अत्र सप्तम्यर्थे तृतीया ततोऽन्येषु एकोनेषु द्वात्रिंशति विमानवासशतसहस्रेष्वन्यानि **एकोनानि द्वात्रिंशद्घण्टा-लक्षाणि यमकसमक**मिति समकालमेव **कणकणर**वमित्यनुकरणवचनमेतत्तेन रणत्काररूपशद्धं **कर्तुं प्रवृत्तान्यभवन्।।२३-२४।।**

---

१. द्र. ३।८।। २. °यर° अकखत्रिबस पुवृ. हीवृ नास्ति। एवमग्रेऽपि।।

(२५) तए णं सोहम्मे कप्पे पासायविमाणनिक्खुडा[1]वडिअसद्दसमुट्ठिअघण्टापडें सुआसयसहस्ससंकुले जाए आवि होत्था।।२५।।

ततः सौधर्मः कल्पः प्रासादविमाननिष्कुटेषु च ये आपतिताः शब्दाः शब्दवर्गणा पुद्गलास्तेभ्यः **समुच्छलितानि** यानि **घण्टाप्रतिश्रुतां शतसहस्राणि घण्टाप्रतिशब्दलक्षाणि** तैः **सङ्कुलोऽपि जातोऽभूत्** किमुक्तं भवति? घण्टायां महता प्रयत्नेन ताडितायां ये विनिर्गताः शब्दपुद्गलास्तत्प्रतिघातवशतः सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च दिव्यानुभावतः समुच्छलितैः प्रतिशब्दैः सर्वोऽपि सौधर्मो देवलोकोऽसंख्येययोजनकोटीकाटीमानोऽपि बधिरित उपजात इत्येतेन द्वादशभ्यो योजनेभ्यः समागतः शब्दः श्रोत्रग्राह्यः स्यान्न परतस्ततः कथमेकत्र ताडितायां घण्टायां सर्वत्र तच्छब्दश्रुतिरुपजायत इति यदुच्यते तदपाकृतमवसेयं, सर्वत्र दिव्यानुभावतस्तथारूपप्रतिशब्दोच्छलनेन यथोक्तदोषासम्भवात् ।।२५।।

(२६) तए णं तेसिं सोहम्मकप्पवासीणं बहूणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य एगंतरइपसत्त-णिच्चप्पमत्त-विसयसुहमुच्छिआणं सूसरघण्टारसिअविउलबोल-[2]तुरिअचवलपडिबोहणे कए समाणे घोसणकोऊहलदिण्णकण्णएगग्गचित्त उवउत्तमाणसाणं से पायत्ताणीआहिवई देवे तंसि घण्टारवंसि [3]निसंतपडिसंतंसि समाणंसि तत्थ तत्थ तहिं २ देसे महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणे २ एवं वयासी-[4]हंत! सुणंतु भवंतो बहवे सोहम्मकप्पवासी वेमाणिअदेवा देवीओ अ सोहम्मकप्पवइणो इणमो वयणं हिअसुहत्थं-आणावइ णं भो सक्के तं चेव जाव अंतिअं पाउब्भवह।।२६।।

'तए ण' मित्यादि, ततो णमिति प्राग्वत्तेषां **सौधर्मकल्पवासिनां बहूनां वैमानिकदेवानां**

---

१. °डपडियसद्द - अब।। २. पूरिअ° मु. तरितु - अब । तरिय° कखस।। ३. पडि - V राजप्र. १५. नास्ति।।
४. हंदि - V। हंद - कत्रिह्रीवृ.।।

देवीनां चैकान्तेन सर्वात्मना रतौ **रमणे प्रसक्ता** एकान्तरतिप्रसक्तामत एव **नित्यं** सर्वकालं प्रमत्ता **नित्यप्रमत्ता**: कस्मादिति चेदत आह **'विसयसुहमुच्छिय'** त्ति विषयसुखेषु मूर्च्छितास्ततो नित्यप्रमत्तास्तत: पदत्रयस्य पदद्वयमीलनेन विशेषणसमासस्तेषां **'सुसरघंटारसिअविउलबोलतुरिअचवलपडिबोहणकए समाणे'** इति सुस्वराया: सुघोषाया घण्टाया रसितस्य य: सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च प्रतिशद्बोच्छलनेन विपुल: सकलकल्पविमानव्यापितया विस्तीर्णो बोल: कोलाहलस्तेन त्वरितं शीघ्रं चपलमाकुलं प्रतिबोधने कृते सति **घोसणाकोलाहलदिन्नकन्नएगग्गचित्तउवउत्तमाणसाण** मिति कीदृग्नामघोषणं भविष्यतीत्येवं घोषणाकूतुहलेन दत्तौ कर्णौ यैस्ते घोषणाकूतुहलदत्तकर्णास्तथा, एकाग्रं घोषणाश्रवणैकविषयं चित्तं येषां ते एकाग्रचित्ता:, एकाग्रचित्तत्वेऽपि कदाचिदनुपयोग: स्यादत आह-उपयुक्तमानसास्तत: पूर्वपदेन विशेषणसमासस्तेषां, स पदात्यनीकाधिपतिर्देवस्तस्मिन् घण्टारवे **'णिसंतपडिणिसंतंसी'** त्ति नितरां शान्तो निशान्तोऽत्यन्तं मन्दीभूतस्तत: प्रतीतप्रकर्षेण सर्वात्मना निशान्त: प्रति-निशान्तस्ततश्छिन्नप्ररूढ इत्यादाविव विशेषणसमासस्तस्मिन्:**'तत्थ तत्थ तहिं तहिं देसे'**त्ति तत्र तत्र त्रिक चतुष्कादौ तत्र तत्र देशे विमानासन्नप्रदेशे महता **महता शद्धेनोद्घोषयन्नेवमवादीत्' हन्त सुणंतु** इत्यादि. हन्ते ति हर्षे उक्तं च **"हन्त हर्षेऽनुकम्पायामि"**त्यादि हर्षश्च स्वामिनाऽऽदिष्टत्वाज्जिनजन्ममहोत्सवकरणार्थं प्रस्थानमारम्भात् **शृण्वन्तु भवन्तो बहव: सौधर्मकल्पवासिनो वैमानिका देवा देव्यश्च सौधर्मदेवेलोकाधिपतेरिदं वचनं 'हिय सुहत्थं'** ति हितार्थं सुखार्थं चेत्यर्थ:, तत्र हितं जन्मान्तरेऽपि कल्याणावहं तथाविधकुशलं सुखं तस्मिन् भवे निरुपद्रवता किं तद्वचनमित्याह-**'आणवेइ णं भो'** इत्यादि आज्ञापयति भो देवानुप्रिया: सौधर्मेन्द्रो यथा गच्छति भो: सौधर्मेन्द्रो जम्बूद्वीपे द्वीपे इत्यादि तदेव पूर्वोक्त यावदन्तिकं प्रादुर्भवत।।२६।।

(२७) तए णं ते देवा देवीओ अ एअमट्ठं सोच्चा हट्ठतुट्ठ जाव हिअआ अप्पेगइया वन्दणवत्तिअं एवं पूअणवत्तिअं सक्कारवत्तिअं सम्माणवत्तिअं दंसणवत्तिअं कोऊहलवत्तियं जिणभत्तिरागेणं[1] अप्पेगइया सक्कस्सवयणमणुवत्तमाणा अप्पेगइया अण्णमण्णमणुवत्तमाणा अप्पेगइया जीअमेअं एवमादित्तिकट्टु [2]जाव पाउब्भवंति।।२७।।

'तए णं ते' इत्यादि, ततस्ते सोधर्मदेवलोकवासिनो बहवो वैमानिका **देवा देव्यश्च** पदात्यनीकाधिपतेर्देवस्य समीपे **एनमनन्तरोक्तमर्थं श्रुत्वा 'हट्ठ तट्ठ जाव हियया'** अत्र यावत्करणात् 'हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया पीइमणा परमसोमणसिया हरिसवसविसप्पमाणहियया' इति द्रष्टव्यं **'अप्पेगइया वंदणवत्तियं अप्पेगइया पूयणवत्तियं अप्पेगइया सक्कारवत्तिय'** मित्यादि, अपिः सम्भावनायामेकका **एके केचन वन्दनप्रत्ययं** वन्दनमभिवादनं प्रशस्ते कायवाङ्-मनः प्रवृत्तिरूपं तत्प्रत्ययं तन्मया भगवतः श्रीमत्तीर्थकरस्य कर्त्तव्यमित्येवं निमित्तम्, **अप्येकका: पूजनप्रत्ययं** पूजनं गन्धमाल्यादिभिः समभ्यर्चनम्, **अप्येकका: सत्कारप्रत्ययं** सत्कारः स्तुत्यादिना गुणोन्नतिकरणम्, **अप्येकका: सन्मानप्रत्ययं** सन्मानो मानसप्रीतिविशेषः अप्येकका दर्शनप्रत्ययं दर्शनं स्वरूपतो दर्शनं कीदृश स भगवानिति, **अप्येकका: कूतुहलप्रत्ययं** कूतुहलं कौतुकं कीदृशो भगवान् कथं च तज्जन्ममहो भावीति चिन्तनम्, **अप्येकका जिनभक्तिरागेण** जिने भगवति भक्तिरागो भक्तिपूर्वको रागस्तेन, **अप्येकका: शक्रस्य** सौधर्मेन्द्रस्य **वचनभासामनुवर्त्तमाना:, अप्येकका अन्योऽन्यमनुवर्त्तमाना:, अप्येकका जीतमेतत्** कल्प एष **एवमादीनि कृत्वा यावत्प्रादुर्भवन्ति** यावत्करणात् **'सव्विड्ढीए'** इत्यादि पदपरिग्रहः।।२७।।

(२८) तए णं से सक्के देविंदे देवराया ते वेमाणिए देवे य देवीओ [3]अ अकालपरिहीणं

---

१. V नास्ति।। २. द्र. ५।२२।। ३. रायप० १७ अतः पर सव्विड्ढीए जाव अकालं इति पाठो दृश्यते। V पृ ५३५. टि. ८।।

चेव अंतिअं पाउब्भवमाणे पासइ, २ त्ता हट्ठ पालयं णामं आभिओगिअं देवं सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! अणेगखम्भसयसण्णिविट्ठं लीलट्ठियसालभंजिआकलिअं ईहामिअउसभतुरगणरमगरविहगकिण्णररुरु-सरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं [1]खंभुग्गयवइरवेइआपरिगयाभिरामं विज्जाहरजमलजुअलजंतजुत्तंपिव अच्चीसहस्समालिणीअं[2] रूवगसहस्सकलिअं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुल्लोअणलेसं सुहफासं सस्सिरीअरूवं घण्टावलिचलिअमहुरमणहरसरं सुहं कंतं दरिसणिज्जं णिउणोविअ-मिसिमिसिंत मणिरयण-घंटिआजालपरिक्खित्तं जोयणसहस्सवित्थिण्णं पंचजोअणसयमुव्विद्धं, सिग्घतुरिअ-जइण णिव्वाहि दिव्वं जाणविमाणं विउव्वाहि, २ त्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि ।।२८।।

'तए णं स सक्के' इत्यादि सर्वं कण्ठ्यं नवरं 'पालयं णामं' ति पालकमिति नाम्नाऽऽभियोगिकं देवं शद्बापयति शद्बापयित्वैवमवादीत् क्षिप्रमेव भो देवानुप्रिय! 'अेणेगखंभसयसंनिविट्ठं'ति अनेकेषु स्तम्भशतेषु सन्निविष्टं यत्तत्तथा 'लीलट्ठियसाल-भंजियाकलियं' ति लीलया स्थिता लीलास्थिता अनेन तासां पुत्रलिकानां सौभाग्यमावेदयति लीलास्थिता या: शालभिञ्जिका: पुत्तलिकास्ताभि: कलितं यत्तत्तथा, 'ईहामिय' त्ति विशेषणं प्राग्वत् 'अब्भुग्गयवइरवेइयाभिरामं' ति अभ्युद्गता वज्ररत्नमयी वेदिका तथाऽभिरामं यत्तत्तथां 'विज्जाहरजमलजंतजुत्तंपिव' त्ति विद्याधरयोर्यद्यमलयुगलं समश्रेणीकं द्वन्द्वं विद्याधरयमलयुगलं तच्च तद्यन्त्रं च सञ्चारिष्णु पुरुषप्रतिमाद्वयरूपं तेन युक्तमिव यत्त-त्तथा, तथाऽर्चिषां किरणानां सहस्रैर्मालनीयमर्चि:सहस्रमालनीयं तथा रूपकसहस्रकलितं 'भिसमाणं' त्ति दीप्यमानं 'भिब्भिसमाण'मतिशयेन दीप्यमानं 'चक्खुलोयणलेसं' ति चक्षु:

१. अब्भुग्गय° अकखबस।। २. °मालणी° V।।

कर्तुर्लोकनेऽवलोकने लिशतीव दर्शनीयत्वातिशयोच्छ्लष्यतीव यत्र तत्तथा, तथा **'सुहफासं'** ति शुभस्पर्शं सुख-स्पर्शं वा तथा **'सस्सिरीयरूवं'** ति सश्रीकानि सशोभानि रूपाणि रूपकानि यत्र तथा **'घंटावलिचलियमहुरमणहरसरं'** ति घण्टावलेर्घण्टापङ्क्तेर्वातवशेन चलिताया: कम्पिताया मधुर: श्रोत्रप्रियो मनोहरो मनोनिर्वृत्तिकर: स्वरो यत्र तत्तथा चलितशद्वस्य विशेष्यात्परनिपात: प्राकृतत्वात्, तथा **शुभं** यथोदितवास्तुलक्षणोपेतत्वात् **कान्तं** कमनीयमत एव दर्शनीयं तथा **'निउणोविअ मिसमिसंत मणिरयणं घंटियाजालपरिक्खित्त'** मिति 'निउण' मिति निपुणक्रियमोविय' त्ति उपचितानि मिसिमिसंत' त्ति देदीप्यमानानि मणिरत्नानि यत्र घण्टिकाजाले तत्तथा तेन तथा भूतेन घण्टिकाजालेन क्षुद्रघण्टिकासमूहेन परिसामस्त्येन क्षिप्तं व्याप्तं यत्तत्तथा **'जोयणसयसहस्सवित्थिण्णं'** त्ति योजनलक्षविस्तीर्णं **'पंचजोयणसय मुच्चिट्ठं'** ति पञ्चयोजनशतोच्चमित्यर्थ: **'सिग्घतुरिय जइणणिव्वाहिं'** ति शीघ्रं त्वरितं **'जइण'** त्ति जववत् अन्येषां जयनशीलं वा 'णिव्वाहिं ति' निर्वाहकं मनीषितस्थानप्रापण समर्थमिति भावस्तत: पदचतुष्टयकर्मधारय: **'दिव्व जाणविमाणं विउव्वाहि'** त्ति दिव्यं प्रधानं यानरूपं वाहनरूपं विमानं यानविमानं विकुर्वस्व वैक्रियं कुरुष्व।।२८।।

(२९) तए णं से पालए देवे सक्केणं देविंदेणं देवरण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ जाव वेउव्विअसमुग्घाएणं समोहणित्ता तहेव करेइ।।२९।।

'तए णं से पालए देवे' इत्यादि पाठसिद्धं यावत्तथैव प्रागुक्तवर्णकोपेतं यानविमानं करोति।।२९।।

(३०) तस्स णं दिव्वस्स जाणविमाणस्स तिदिसिं तओ तिसोवाणपडिरूवगा वण्णओ।।३०।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य णमिति प्राग्वत्, दिव्यस्य यानविमानस्य **'तिदिसं'** ति तिस्रो दिश: समाहृतास्त्रिदिकं तस्मिंस्त्रिदिशि तत्र **'तिसोवाणपडिरूवए'** त्ति त्रीण्येकैकस्यां दिशि

एकैकस्य भावात्त्रिसोपानप्रतिरूपकाणि प्रति विशिष्टं रूपं येषां तानि प्रतिरूपकाणि त्रयाणां सोपानानां समाहारस्त्रिसोपानानि च तानि प्रतिरूपकाणि चेति विशेषणसमासो विशेषणस्य परनिपातः प्राकृतत्वात् **'वण्णओ'** त्ति त्रिसोपानप्रतिरूपकाणां वर्णको वाच्यः स च **'वइरामय नेम्मा'** इत्यादिकः पूर्ववदेवावसेयः।।३०।।

(३१) तेसि णं पडिरूवगाणं पुरओ पत्तेअं २ तोरणे [1]वण्णओ जाव पडिरूवा१।।३१।।

'तेसि ण मित्यादि, तेषां त्रि-सोपान प्रतिरूपकाणां पुरतः प्रत्येकं तोरणं प्रज्ञप्तं **'वण्णओ जाव पडिरूवा'** इति वर्णकश्च तोरणानां तावद्वक्तव्यो यावत्प्रतिरूपाणीति पदं स च 'ते णं तोरणा णाणा मणिमया' इत्यादिरूपः प्राग्वद्बोद्धव्यः।।३१।।

(३२) तस्स णं जाणविमाणस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे, से जहा नामए आलिंगपुक्खरेइ वा [2]जाव दीविअचम्मेइ वा अणेगसंकुकीलकसहस्सविततते आवड-पच्चावड-सेढि-पसेढि-सोत्थिअ-सोवत्थिअ-पूसमाणव-वद्धमाण-[3]मच्छंडग-मगरंडग-जारमार-फुल्लावली-पउमपत्तसागरतरंग-वसंतलय-पउमलयभत्तिचित्तेहिं सच्छाएहिं सप्पभेहिं [4]समरीइएहिं सउज्जोएहिं णाणविहपंचवण्णेहिं मणीहिं उवसोभिए २ तेसि णं मणीणं वण्णे गंधे फासे अ भाणिअव्वे [5]जहा रायप्पसेणइज्जे।।३२।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य णमिति पूर्ववत् दिव्यस्य **यानाविमानस्यान्तर्मध्ये बहुसमः** सन् **रमणीयो भूमिभागः** प्रज्ञप्तः किं विशिष्ट इत्याह–**से जहाणामए**

---

१. द्र. राजप्र. १८।। २. राजप्र २४। ३. अच्छदामा मोराकुंडा जारा मंडा - अब। अच्छदाममारा अंडा जारामंडा - क। अच्छ दाम मोरा अंडा जारामारा - ख। मच्छंडग मरकंडा जारामारा - त्रि। मच्छंडा मरकंडा जारामारा - स। मच्छगसुसुमार अंडग जरामंडा - आव. चू. पृ १४२।। अच्छदाममाराअंडा जारामंडा - क। अच्छ दाम मोरा अंडा जारामारा - ख। मच्छंडग मरकंडा जारामारा - त्रि। मच्छंडा मरकंडा जारामारा - स। मच्छगसुसुमार अंडग जरामंडा - आव. चू. पृ १४२।। ४. समिरीएहिं - अबसपुवृ.। आव.चू.पृ-१४२।। ५. द्र. राजप्र. ३२।

आलिंगपुक्खरेइ वा जाव दीवियचम्मेइ वा अणेगसंकुकीलगसहस्सवितते' इह यावत् करणात् 'मुइंगपुक्खरइ वा सरतलेइ वा करतलेइ वा चंदमंगलेइ वा उरब्भचम्मेइ वा वराहचम्मेइ वा सहिचम्मेइ वा वग्घचम्मेइ वा छगलचम्मेइ वा' इति द्रष्टव्यं, व्याख्या सर्वापि प्राग्वत् नवरमुरभ्रादि चर्म्मणि 'अणेगसंकुकीलगसहस्सवितते' इति विशेषणयोगः कार्यः, ततश्च किंभूतमुरभ्रादिचर्म? अनेकैः शङ्कुप्रमाणैः कीलकसहस्रैर्महद्भिर्हि कीलकैस्ताडितं प्रायो मध्ये क्षामं भवति तथारूपताडासम्भवात्, अतः शङ्कुग्रहणं विततं विततीकृतं ताडितमिति भावः, अनेकशङ्कुकीलकसहस्रविततं यथाऽत्यंतं बहुसमं भवति, तथास्यापि यानविमानस्यान्तर्बहुसमो भूमिभागः पुनः कथंभूत इत्याह **नाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहिं उवसोभिए** नानाविधाजातिभेदान्नानाप्रकारा ये पञ्चवर्णमणयस्तैरुपशोभितः कथंभूतैरित्याह- **'आवडे'** त्यादि आवर्त्तादीनि मणीनां लक्षणानि तत्रावर्त्तः प्रतीत एकस्यावर्त्तस्य प्रत्यभिमुखावर्त्तः **प्रत्यावर्त्तः श्रेणिस्तथाविध** बिन्दुजातादेः पङ्क्तिस्तस्याश्च श्रेणेर्या च निर्गताऽन्या श्रेणिः सा **प्रश्रेणिः** स्वस्तिकः प्रतीतः **सौवस्तिकपुष्यमाणवौ** लक्षणविशेषौ लोकात् प्रत्येतव्यौ **वर्द्धमानकं** शरावसम्पूटं **मत्स्यकाण्डक मकराण्डके** प्रतीते **जारमारावपि** लक्षणविशेषौ सम्यग्मणिलक्षणवेदिनो लोकाद्वेदितव्यौ **पुष्पावलिपद्मपत्र-सागरतरङ्गवासन्तीलताः** प्रतीताः तासां **भक्त्या** विच्छित्या **चित्रमालेखो** येषु ते तथा तैः किमुक्तं भवति आवर्त्तादिलक्षणोपेतैस्तथा **सच्छायैः** सती शोभना छाया निर्मलत्वरूपा येषां ते सच्छायास्तैः सच्छायैस्तथा सती शोभना प्रभा कान्ति र्येषां ते **सत्प्रभास्तैः 'समिरीएहिं'** ति समरीचिकैर्बहिर्विर्निगतकिरणजालसहितैः सोद्योतै र्बहिर्व्यवस्थितप्रत्यासन्नवस्तुस्तोमप्रकाश-करोद्योतसहितैरेवंभूतैर्नानाजातीयैः **पञ्चवर्णैर्मणिभिरुपशोभितः 'तेसिं मणीण'** मित्यादि तेषां मणीनां **वर्णो गन्धः स्पर्शश्च** तथा **भणनीयो यथा राजप्रश्नीये वर्णितः।।३२।।**

(३३) तस्स णं भूमिभागस्स [१]बहुमज्झदेसभाए पिच्छाघरमण्डवे अणेगखम्भसय-

१. बहुं - V नास्ति।।

सण्णिविट्ठे वण्णओ [१]जाव पडिरूवे।।३३।।

'तस्स ण' मित्यादि तस्य यानविमानसम्बन्धिना **भूमिभागस्य बहुमध्यदेशभागे** प्रेक्षागृहमण्डपः स च किंभूत इत्याह **'अणेगखंभसयसन्निविट्ठे'** इत्यादि, अयं च प्रेक्षागृहमण्डपवर्णकः प्राग्वत्।।३३।।

(३४) [२]तस्स उल्लोए पउमलयभत्तिचित्ते [३]जाव सव्वतवणिज्जमए जाव पडिरूवे।।३४।।

'तस्स उल्लोए' त्ति तस्य प्रेक्षागृहमण्डपस्योल्लोक इत्युपरितनो भागः कीदृश इत्याह **'पउमलये'** त्यादि पद्मलता **भक्तिचित्रः, यावत्सर्वात्मना तपनीयमया यावत्प्रतिरूपः।।३४।।**

(३५) [४]तस्स णं मण्डवस्स बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स [५]बहुमज्झदेसभागंसि महेगा मणिपेढिआ अट्ठ जोअणाइं आयामविक्खम्भेणं, चत्तारि जोअणाइं बाहल्लेणं, सव्वमणिमयी [६]वण्णओ।।३५।।

'तस्स ण' मित्यादि, तस्य **मण्डपस्य** सम्बन्धिनो **बहुसमरमणीयस्स भूमिभागस्य बहुमध्य देशभागे महत्येका मणिपीठिका सा चाष्टौ योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां चत्वारि योजनानि बाहल्येन सर्वात्मना मणीमयी वर्णकः** प्राग्वत् ।।३५।।

(३६) तीए उवरिं महेगे सीहासणे वण्णओ।।३६।।

तस्या मणिपीठिकाया **उपरि एकं सिंहासनं** सर्वात्मना रत्नमयं **वर्णकः** प्राग्वदेव।।३६।।

---

१. राजप्र. ३२।। २. अतः पूर्वं रायप° ३३ मध्ये प्रेक्षागृमण्डपस्य भूमिभागसूत्रं विद्यते।। ३. जीवा. ३।२०६।। ४. अतः पूर्वं रायप्र - ३५, मध्ये अक्षपाटक सूत्रं विद्यते।। ५. बहु V नास्ति।। ६. राजप्र. ३६।।

(३७) तस्सुवरिं महेगे विजयदूसे सव्वरयणामए [1]वण्णओ ।।३७।।

तस्य सिंहासनस्योपरि **महदेकं विजयदूष्यं** वस्त्रविशेषस्तच्च **सर्वात्मना रत्नमयं** वर्णकोऽस्यापि पूर्ववत्

(३८) तस्स मज्झदेसभाए एगे वइरामए अंकुसे, एत्थ णं महेगे कुम्भिक्के मुत्ता दामे, से णं अन्नेहिं तदद्धुच्चत्तप्पमाणमित्तेहिं चउहिं अद्धकुंभिक्केहिं मुत्तादामेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, ते णं दामा तवणिज्जलंबूसगा सुवण्णपयरगमण्डिआ णाणामणि-रयण-विविहहार-द्धहारउवसोभिसमुदया ईसिं अण्णमण्णमसंपत्ता पुव्वाइएहिं वाएहिं मंदं २ एइज्जमाणा २ जाव निव्वुइकरेणं सद्देणं ते पएसे]सव्वओ समंता आपूरेमाणा २ जाव अईव २ उवसोभेमाणा २ चिट्ठंतित्ति।।३८।।

तस्य सिंहासनोपरिवर्त्तिविजयदूष्यस्य **बहुमध्यदेशभागे एको वज्रमयो** वज्ररत्नमयोऽङ्कुशो -ऽङ्शाकारो मुक्तादामावलम्बनाश्रय इत्यर्थः। **'एत्थणं'** ति अत्र वज्रमयेऽङ्कुशे **महदेकं कुम्भाग्रं** मध्यगन्धदेशप्रसिद्धं कुम्भपरिमाणं **मुक्तादाम** विकुर्वतीतिशेषः। **'से ण'** मित्यादि तत्कुम्भाग्रं मुक्तादामा**न्यैस्तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणमात्रै-श्चतुर्भिरर्द्ध कुम्भाग्रैरर्द्धकुम्भिकैर्वा मुक्तादामभिः सर्वतः** सर्वासु दिक्षु **समन्ततः** सामस्त्येन **सम्परिक्षिप्तं** व्याप्तं **'ते णं दामा'** इत्यादि तानि पञ्चापि **दामानि** कथंभूतानि **तपनीयमया लम्बुसका** आभरणविशेषरूपा अग्रभागे येषां ते प्रलम्बमानास्तानि तथा **'सुवण्णपयरगमंडिया'** इति पार्श्वतः सामस्त्येन सुवर्णप्रतरकेण सुवर्णपत्रकेण मण्डितानि सुवर्णप्रतरकमण्डितानि तथा **नानामणिरत्नानां विविधैर्विचित्रैर्हारैरर्द्धहारैश्चोपशोभितः** सामस्त्येन शोभितः **समुदयो** येषां तानि तथा, तथा **ईषन्मनागन्योऽन्यं** परस्परमसम्प्राप्तानि असंलग्नानि **पूर्वापरदक्षिणोत्तरागतैर्वातैः मंदायं** २ इति मन्दं मन्दं **'एज्जमाणाइं ति**

१. राजप्र. ३८।।

कम्प्यमानानि कम्प्यमानानि 'भृशाभीक्ष्ण विच्छेदे द्विः प्राप्तक्रवादेर्द्विवचनं यथा पचति पचत्यन्नमेवमुत्तरत्रापि **'जाव णिव्वुइकरेणं'** ति यावत्करणात् 'पलंबमाणा २ पझंझमाणा २ उरालेणं मणुण्णेणं मणहरेणं कण्णमणनिव्वुइकरेणं मिति दृश्यं तत्रेषत्कम्पनवशादेव प्रकर्षत इतस्ततो मनाक् चलनेन लम्बमानानि लम्बमानानि ततः परस्परं सम्पर्कवशतः 'पझंझजमाणाणी' ति शब्दायमानानि २ उदारेण स्फारेण शब्देनेति योगः स च स्फारशब्दो मनःप्रतिकूलोऽपि भवति तत आह मनोज्ञे मनोऽनुकूलेन तच्च मनोऽनुकूलत्वं लेशतोऽपि स्यादत आह मनोहरेण मनांसि श्रोतृणां हरति एकान्तेनात्मवशं नयतीति मनोहरो **'लिहादेराकृतिगणत्वादच्'** प्रत्यस्यतेन तदपि मनोहरत्वं कुत इत्याह-कर्णमनोनिर्वृत्तिकरेण **निमित्त कारण हेतुषु सर्वासां विभक्तीनां प्रायो दर्शनमिति** वचनाद्धेतोस्तृतीया ततोऽयमर्थः प्रतिश्रोतृकर्णयोर्मनसश्च निर्वृत्तिकरः सुखोत्पादकस्ततो मनोहरस्तेनेत्थंभूतेन शब्देन **तान्** प्रत्यासन्नान् **प्रदेशान् सर्वतो** दिक्षु **समन्ततो** विदिक्षु **आपूरयन्ति** २**'शत्रन्तस्य शाविदं रूपं'**, अत एव श्रिया शोभया यावदतीव उपशोभमानानि २ तिष्ठन्ति, अत्र यावत्करणात् 'सिरीए' ति दृश्यं।।३८।।

(३९) तस्स णं सीहासणस्स अवरुत्तरेणं उत्तरेणं उत्तरपुरत्थिमेणं एत्थ णं सक्कस्स चउरासीए सामाणिअसाहस्सीणं चउरासीइ भद्दासणसाहस्सीओ पुरत्थिमेणं अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं एवं दाहिणपुरत्थिमेणं अब्भिंतरपरिसाए दुवालसण्हं देवसाहस्सीणं दाहिणेणं [1]मज्झिमाए चउदसण्हं देवसाहस्सीणं दाहिणपच्चत्थिमेणं बाहिरपरिसाए सोलसण्हं देवसाहस्सीणं पच्चत्थिमेणं सत्तण्हं अणिआहिवईणं।।३९।।

'तस्स णं' मित्यादि तस्य सिंहासनस्यापरोत्तरस्यां वायव्यकोणे उत्तरस्यामुत्तर-पूर्वस्यामीशानकोणे' **एत्थ णं'** ति अथैतासु तिसृषु दिक्षु **शक्रस्य** देवेन्द्रस्य **चतुरशीतेः**

१. मज्झिमपरिसाए - V ।।

सामानिकसहस्राणां योग्यानि **चतुरशीतिं भद्रासनसहस्राणि** विकुर्वति **पूर्वस्यामाष्टानाम -ग्रमहिषीणामष्टौ** भद्रासनान्येवं **दक्षिणपूर्वस्यामभ्यन्तरपर्षदो** द्वादश देवसहस्राणां योग्यानि द्वादश भद्रासनसहस्राणि दक्षिणस्यां मध्यमपर्षदश्चतुर्दशानां देवसहस्राणां योग्यानि चतुर्दश भद्रासनसहस्राणि दक्षिणापरस्यां नैऋतकोणे बाह्यपर्षद: षोडशानां देवसहस्राणां योग्यानि षोडश भद्रासनसहस्राणि पश्चिमायां सप्तानामनीकाधिपतीनां सप्त भद्रासनानि विकुर्वति इति सर्वत्र गम्यम् ।।३९।।

(४०) तए णं तस्स सीहासणस्स चउद्दिसिं चउण्हं चउरासीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं एवमाई विभासिअव्वं सूरिआभगमेणं [1]जाव पच्चप्पिणंति।।४०।।

'तए ण' मित्यादि, ततो णमिति प्राग्वत्तस्य **सिंहासनस्य चतसृषु दिक्षु** अत्र सामानिकदेवयोग्यभद्रासनानां पृष्टत: सौधर्मेन्द्रस्य सम्बन्धिनां **चतसृणां चतुरशीतीनामात्मरक्षकदेवसहस्राणां** योग्यानि चतुरशीति भद्रासनसहस्राणि विकुर्वति तद्यथा–चतुरशीति भद्रासनसहस्राणि पूर्वस्यां चतुरशीति दक्षिणतश्चतुरशीति पश्चिमायां चतुरशीतिमुत्तरत: सर्वसंख्यया त्रीणि लक्षाणि षट्त्रिंशत्सहस्रोत्तराणि भद्रासनानां विकुर्वति **'एवमाइ विभासियव्वं सूरियाभगमेण'** मिति एवमाद्यनन्तरोदितं विमानवर्णकस्वरूपं **सूर्याभगमनेन** सूर्याभवक्तव्यताप्रकारेण विभाषितव्यं विशेषेण भणितव्यमिदमुक्तं भवति यथाहि श्रीमन्महावीरवन्दनार्थमागन्तुकामस्य सूर्याभदेवस्यादेशात्तदाभियोगिकदेवो यादृग् विमानं विचक्रे शक्रादिष्ट: पालकोऽपि ततोऽरिक्तस्वरूपं विमानं विकुर्वितवानिति **'जाव पच्चप्पिणति** यावदिमामाज्ञां शक्रसम्बन्धिनीं प्रत्यर्पयति सफलां विधाय निवेदयतीति भाव:।।४०।।

(४१) तए णं से सक्के जाव हट्ठहिअए दिव्वं जिणिंदाभिगमणजुग्गं

१. राजप्र. ४४-४६।।

सव्वालंकारविभूसिअं उत्तरवेउव्विअं रूवं विउव्वइ २ त्ता अट्ठहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं णट्टाणीएणं गंधव्वाणीएणं य सद्धिं तं विमाणं अणुप्पयाहिणीकरेमाणे २ पुव्विल्लेणं [1]तिसोवाणेणं दुरूहइ २ त्ता जाव सीहासणंसि पुरत्थामिमुहे सण्णिसण्णे।

'तए णं से सक्के' इत्यादि ततः स शक्रो यावत्करणाद्देवेन्द्रो देवराज इति दृश्यं, **दिव्यं** प्रधानं **जिनेन्द्रस्य तीर्थकृतोऽभिगमनायाऽभिमुखागमनाय योग्यमुचितं जिनेन्द्राभिगमन योग्यं सर्वालङ्कारविभूषितमुत्तरवैक्रियं रूपं विकुर्वति विकुर्व्याष्टभिरग्रमहिषीभिः सपरिवाराभिर्नाट्यानीकेन गन्धर्वानीकेन च सार्द्धं तद्विमानमनुप्रदक्षिणीकुर्वन्त** इत्यर्थः।।४१।।

(४२) [2]एवं चेव सामाणिआवि उत्तरेणं तिसोवाणेणं दुरूहित्ता पत्तेअं २ पुव्वण्णत्थेसु भद्दासणेसु णिसीअंति अवसेसा देवा य देवीओ अ दाहिणिल्लेणं तिसोवाणेणं दुरूहित्ता तहेव जाव णिसीअंति।।४२।।

सामानिका अपि 'उत्तरेणं' तिसोवाणेणं ति उत्तरदिग्वर्त्तिनां त्रिसोपान प्रतिरूपकेणा - **रूह्य** तथैव यावन्निषीदन्ति।।४२।।

(४३) तए णं तस्स सक्कस्स तंसि दुरूढस्स इमे अट्ठट्ठमंगलगा पुरओ अहापुव्वीए संपट्ठिआ, तयणंतरं च णं पुण्णकलसभिंगारं दिव्वा य छत्तपडागा सचामरा य दंसणरइ अआलोअदरिसणिज्जा वाउद्धुअविजयवेजयंती अ समूसिआ गगणतलमणुलिहंती पुरओ अहाणुपुव्वीए [3]संपट्ठिआ, तयणंतरं छत्तभिंगारं, तयणंतरं च णं वइरामयवट्ट[4] लट्ठसंठिअसुसिलिट्ठपरिघट्ठसुपइट्ठिए विसिट्ठे अणेगवरपंचवण्ण कुडभीसहस्स परिमण्डिआभिरामे वाउद्धुअविजयवेजयंती पडागाछत्ताइच्छत्तकलिए तुंगे गयणतलम

---

१. तिसोमाण° VJ १.२। एवमग्रेऽपि।। २. त एणं एवं - अकखत्रिबसपुवृ.हीवृ.।। ३. औप सू.६४।। ४. °लट्ठिय सं° अकखत्रिबस।।

णुलिहंतसिहरे[१] **जोअणसहस्समूसिए महइमहालए महिंदज्झए पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिएत्ति, तयणंतरं च णं** [२]**सरूवनेवत्थपरिअच्छिअसुसज्जा सव्वालंकारविभूसिआ पंच अणिआ पंच अणिआहिवईणो जाव संपट्ठिआ, तयणंतरं च णं बहवे आभिओगिआ देवा य देवीओ अ सएहिं सएहिं रूवेहिं जाव णिओगेहिं सक्कं देविंदं देवरायं पुरओ अ मग्गओ अ पासओ य अहा०, तयणंतरं च णं बहवे सोहम्मकप्पवासी देवा य देवीओ अ सव्विड्ढीए जाव दुरूढा समाणा मग्गओ अ जाव संपट्ठिआ।।४३।।**

'तए ण' मित्यादि इदं सूत्रं संक्षिप्तमतो **राजप्रश्नीया**नुसारेण किञ्चित्सविस्तरं व्याख्यायते **ततस्तस्य शक्रस्य** देवेन्द्रस्य **तथाविमानमारूढस्य** दूरत **इमान्यष्टावष्टमङ्गलकानि यथानुपूर्व्या** वक्ष्यामाणपाठक्रमेणेत्यर्थः सम्प्रस्थितानि तद्यथा **'सोत्थिय सिरिवच्छे'** त्यादि प्राग्वत्, **तदनन्तरं पूर्णकलशं भृङ्गारं दिव्याश्च छत्रपताकाः सचामराः** कथंभूता इत्याह-दर्शनरतिका दर्शनेऽवलोकनरतिर्यासु तास्तथा, इह दर्शनरतिकमपि किञ्चिदालोकदर्शनीयं न स्यादमङ्गलत्वात् यथा गर्भवतीस्त्री अत आह–आलोके बहिः प्रस्थानसमयभाविनि दर्शनीया द्रष्टुं योग्या माङ्गल्यत्वात्, अन्ये त्वाहुरालोके दर्शनीया न पुनरत्युच्चा आलोकदर्शनीया, तथा **वातोद्धूता विजयसूचिका वैजयन्ती** विजयवैजयन्ती **चोत्सृता** ऊर्ध्वीकृता **गगनतलमम्बरतलमनुलिखन्ती** अभिलङ्घयन्ती **पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थिता 'तयणंतरं च ण'** मित्यादि **'छत्तभिंगारं'** ति छत्रं च भृङ्गारश्चेति छत्रभृङ्गारमेत्वद्रद्वयमपि पूर्ववद्वर्णकयुक्तं पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितं तदनन्तरं **'वइरामये'** त्यादि वज्रमयो वज्ररत्नमयस्तथा **वृत्तं** वर्तुलं **लष्टं** मनोज्ञं संस्थितं संस्थानमाकारो यस्य स छत्रलष्टसंस्थितः क्वचिद् 'वइरामयवट्टलट्ठिसंट्ठिय' त्ति पाठस्तत्र वज्रमयवृत्तं यष्टि संस्थितस्तथा **सुश्लिष्टः** सुश्लेषापन्नावयवो मसृण इत्यर्थः **परिघृष्ट** इव

---

१. ०मभिकंखमाण सिहरे - अकखत्रिवसपुवृपा.।। २. °वत्थहत्थपरि°- अबकखसत्रिपुवृ.।।

परिघृष्टः खरशानया पाषाणप्रतिमावन् मृष्ट इव **मृष्टः** सुकुमारशानया पाषाणप्रतिमेव सुप्रतिष्ठितो नतु तिर्यक्पतिततया वक्रस्तत एतेषां पदानां पदद्वय २ मीलनेन कर्मधारयः, अत एव शेषध्वजेभ्यो **विशिष्टो**ऽतिशायी तथाऽ**नेक** -संख्याकानि **वराणि** प्रधानानि **पञ्चवर्णानि कुडभीसहस्राणि** तै **परिमण्डित**श्चासौ **अभिराम**श्च यः स तथा **वातोद्धूतविजय वैजयन्तीपताकाछत्रातिछत्रकलितस्तुङ्गो**ऽत्युच्चो योजनसहस्रमानोच्छ्रयत्वात्, तथा **गगनतलमनुलिखच्छिखरमग्रभागो** यस्य तथा क्वचित् 'गगनतलमभिकंख-माणसिहरे'तत्र गगनतलमभिकाङ्क्षद्वाञ्छन्मीलनाय शिखरं यस्य स तथा, तथा **योजनसहस्रमु-च्छ्रितो**ऽत एव **'महइमहालये'** इति अतिशयेन महान् **महेन्द्रध्वजः पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितस्तदनन्तरं सुरूवनेवत्थहत्थपरिवत्थियवेसा'** इति सुरूपनेपथ्येन 'हत्थं' ति शीघ्रं परिक्षिप्तः परिगृहितः परिवृत्तो वेषः सामान्यवेषो येषां ते तथा क्वचित् 'सुरूवनेवत्थपरिकच्छिया सुसजा' इति सुरूपं नेपथ्यं परिकाङ्क्षितं परिगृहीतं यैस्ते तथा, तथा सुष्टु अतिशयेन सजाः परिपूर्णस्वसामग्रीसमायुक्ततया प्रगुणीभूताः सर्वालङ्कारविभूषिताः क्वचित् 'महया भडचडगरपहकरेणं' ति तत्र महताऽतिशयेन भटचटकरपहकरेण विच्छर्दप्रधानभृटसमूहेन पञ्चानीकानि पञ्चानीकाधिपतयः पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितास्तदनन्तरं बहव आभियोगिकदेवा देव्यश्च 'सएहिं सएहिं रूवेहिं सएहिं जाव णिउएहिं' अत्र यावत्करणात् 'सएहिं सएहिं नेवत्थेहि' मित्यादिपदपरिग्रहो व्याख्या प्राग्वत् शक्रं देवेन्द्रं पुरतः पार्श्वतो मार्गतः पृष्टतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितास्तदनन्तरं बहवः सौधर्मकल्पवासिनो देवा देव्यश्च सर्वर्द्धया यावदारूढाः सन्तो यावत्सम्प्रस्थिताः।।४३।।

(४४) तए णं से सक्के ते णं पंचाणिअपरिक्खित्तेणं [1]जाव महिंदज्झएणं पुरओ पकड्ढिज्जमाणेणं चउरासीए सामाणिअ [2]जाव परिवुडे सव्विड्ढीए [3]जाव रवेणं

१. राजप्र. ५६।। २. राजप्र. ५६।। ३. द्र.३/१२।।

सोहम्मस्स कप्पस्स मज्झं मज्झेणं तं दिव्व देविड्ढिं जाव उवदंसेमाणे २ जेणेव सोहम्मस्स कप्पस्स उत्तरिल्ले निज्जाणमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जोअणसय-साहस्सीएहिं विग्गहेहिं ओवयमाणे २ ताए उक्किट्ठाए जाव देवगईए वीईवयमाणे २ तिरियमसंखिज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झंमज्झेणं जेणेव णंदीसरवरे दीवे जेणेव दाहिणपुरत्थिमिल्ले रइकरगपव्वए तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता एवं जच्चेव सूरिआभस्स वत्तव्वया णवरं सक्काहिगारो वत्तव्वो जाव तं दिव्वं देविड्ढिं जाव दिव्वं जाणविमाणं पडिसाहरमाणे २ जाव जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणनगरे जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणे तेणेव उवागच्छति, २ त्ता भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणं तेणं दिव्वेणं जाणविमाणेणं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, २ त्ता भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणस्स उत्तरपुत्थिमे दिसीभागे चतुरंगुलमसंपत्तं धरणियले तं दिव्वं जाणविमाणं ठवेइ, २ त्ता अट्ठहिं अग्गमहिसीहिं दोहिं अणीएहिं गंधव्वाणीएण य णट्टाणीएण य सद्धिं ताओ दिव्वाओ जाणविमाणाओ पुरत्थिमिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं [1]पच्चोरुहइ।।४४।।

'तए ण' मित्यादि ततः **स शक्रो** देवेन्द्रो देवराजस्तेन **पञ्चानीकपरिक्षिप्तेन** यथोक्तविशेषणविशिष्ट**महेन्द्रध्वजेन पुरतः प्रकृष्यमाणेन चतुरशीत्या सामानिकसहस्रै र्यावत् परिवृत्तो** यावत्करणात् 'अट्ठहिं अग्गमहिसीहिमित्यादि पदानि ग्राह्याणि **'सव्विड्ढीए जाव रवेणं'** इह यावत्करणात् 'सव्वजुइए सव्वबलेण' मित्यादि पदकदम्बकं ग्राह्यं **सौधर्मस्य कल्पस्य मध्यंमध्येन तां दिव्यां देवर्द्धिं** यावत्करणाद्दिव्यां देवद्युतिं दिव्यां देवानुभूति**मुपदर्शयन्** २ **जेणेव** त्ति **यत्रैव सौधर्मकल्पस्यौत्तराहो निर्याणमार्गो** निर्गमनमार्ग**स्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य** योजनशतसाहस्रिकैर्**योजनलक्षप्रमाणैर्विग्रहैः**

१. पच्चोरूभइ - अब । एवमग्रेऽपि।।

क्रमैरवपतनमधस्तादवतरन् व्यतिव्रजंश्च गच्छन् **'ताए उक्किट्ठाए'** इत्यादि प्राग्वत्, **तिर्यगसंख्येयानां द्वीप-समुद्राणां मध्यमध्येन 'जेणेव'** त्ति यस्मिन्नेव प्रदेशे **नन्दीश्वरो द्वीपो यस्मिन्नेव** च प्रदेशे तस्मिन्नंदीश्वरद्वीपे दक्षिणपूर्वआग्नेयकोणवर्ती **रतिकरनामा पर्वतस्तस्मिन्नुपागच्छति' एवं जच्चेवे'** त्यादि एवं यैव श्रीवीरजिनवन्दनार्थमुपगच्छतः **सूर्याभस्य वक्तव्यता** सैवावसेया **नवरमत्र शक्राधिकारो वक्तप्यो यावत्तां दिव्यां** देवर्द्धिं दिव्यां देवद्युतिं **दिव्यं देवानुभावं** दिव्यं यानविमानं शनैः शनैः **प्रति संहरन् यावद्यत्रैव भगवतस्तीर्थकरस्य जन्मनगरं** तत्र च नगरे **यत्रैव भगवतस्तीर्थकरस्य जन्मभवनं 'तेणेव'** त्ति तत्रैवोपागच्छति सर्वत्र तृतीया सप्तम्यर्थे द्रष्टव्या प्राकृतत्वात्, **उपागत्य च भगवतस्तीर्थकरस्य जन्मभवनं तेन** प्रागुक्तस्वरूपेण **दिव्येन यानविमानेन सह त्रिः** कृत्वस्त्रीन् वारान**ादक्षिणप्रदक्षिणीकरोति,** आदक्षिणप्रदक्षिणीकृत्य 'भगवओ तित्थगरस्से' त्यादि पाठसिद्धं भावार्थस्तु शक्रो देवेन्द्रो भगवज्जन्मभवनस्यैशानकोणे चतुर्भिरङ्गुलै र्भुवमप्राप्तं विमानं स्थापयित्वा पूर्वेण त्रिसोपानप्रतिरूपकेण प्रत्यवारोहति।।४४।।

(४५) तए णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो चउरासी सामाणिअसाहस्सीओ ताओ दिव्वाओ जाणविमाणओ उत्तरिल्लेणं तिसोणापडिरूवएणं पच्चोरुहंति, अवसेसा देवा य देवीओ अ ताओ दिव्वाओ जाणविमाणाओ दाहिणिल्लेणं तिसोवाणपडिरूव-एणं पच्चोरुहंति।।४५।।

शक्रस्य चतुरशीतिसामानिकसहस्राणि उत्तराहेण शेषा देवा दक्षिणेन त्रिसोपानप्रतिरूपकेण प्रत्यवतरन्तीति।।४५।।

(४६) तए णं से सक्के देविंदे देवराया चउरासीए सामाणिअसाहस्सीहिं [१]जाव सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए [२]जाव दुंदुभिणिग्घोसणाइयरवेणं जेणेव भगवं तित्थयरे

१. द्र. २।९०।। २. द्र. ३।१२।।

तित्थयरमाया य तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता आलोए चेव पणामं करेइ, २ त्ता भगवं तित्थयरं तित्थयरमायरं च तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ २ त्ता करयल जाव एवं वयासी-णमोत्थु ते रयणकुच्छिधारिए एवं जहा दिसाकुमारीओ जाव धण्णासि पुण्णासि तं कयत्थाऽसि, अहण्णं देवाणुप्पिए! सक्के णामं देविंदे देवराया भगवओ तित्थयरस्स जम्मणमहिमं करिस्सामि, तं णं तुब्भाहिं ण भाइयव्वंतिकट्टु ओसोवणिं दलयइ, २ त्ता तित्थयरपडिरूवगं विउव्वइ, २ त्ता तित्थयरमाउआए पासे ठवइ, २ त्ता पंच सक्के विउव्वइ, विउव्वित्ता एगे सक्के भगवं तित्थयरं करयलपुडेणं गिण्हइ, एगे सक्के पिट्ठओ आयवत्तं धरेइ, दुवे सक्का उभओ पासिं चामरुक्खेवं करेंति, एगे सक्के पुरओ वज्जपाणी पकड्ढइ।।४६।।

'तए णं से सक्के' इत्यादि, कण्ठ्यं नवरं **'आलोए चेव पणामं करोति'** त्ति आलोके दर्शने जिनस्य जिनमातुश्च जाते सति प्रणामं करोति तद्द्वयं प्रणमतीत्यर्थः, 'चेव' त्ति अवधारणे स च क्रियासङ्गत इति प्रणामं करोत्येवेति भावः, **'णमोत्थु ते रयणकुच्छिधारिए'** इत्यादि प्राग्वत् एवं **'जहा दिसा-कुमारीआ'** त्ति एवं यथा दिक्कुमार्य उक्तवत्यस्तथायमपि वक्तीति **यावद्धन्या सम्पूर्णाऽसि कृतार्थासीति** 'अहं णं **देवाणुप्पिए'** इत्यादि अहं णमिति वाक्यालङ्कारे देवानुप्रिये! **शक्रो नाम्ना देवेन्द्रो देवराजा भगवतस्तीर्थकरस्य जन्ममहिमां करिष्यामि तत्तस्मात्** णमिति प्राग्वत् **'तुब्भेहिं'** ति युस्माभिर्न **भेत्तव्यमिति कृत्वा 'ओसोवणिं दलयति'** त्ति अवस्वापनीं विद्यां ददाति भगवन्मातरं निन्द्रां नयतीत्यर्थः **'तित्थगरपडिरूवगं'** ति तीर्थकरप्रतिरूपकं तीर्थकृत्तुल्यं रूपान्तरं **विकुर्वति तीर्थकरमातुः पार्श्वे स्थापयति स्थापयित्वा पञ्चशक्रान् विकुर्वति** शक्रः स्वकीयानि पञ्चरूपाणि करोतीत्यर्थः, **विकुर्व्य** पञ्चानामपि पृथक् पृथक् कार्यमाह **'एगे सक्के'** इत्यादि एकः शक्रो **भगवन्तं तीर्थकरं करतलपुटेन गृह्णाति, एकः शुकः पृष्टतो** वर्त्तमानो **भगवत** उपरि

आतपत्रं छत्रं धारयति द्वौ शक्रौ भगवत उभयोः पार्श्वयोश्चामरोत्क्षेपं कुरुतः, एकः शुक्रः पुरतो वज्रपाणिः सन् 'पगट्ठइ ति प्रकर्षेन गच्छति इत्यर्थः क्वचित् 'पवट्टइ' त्ति पाठस्तत्र प्रवर्त्तते क्षुद्रोपद्रवविद्रावणार्थं करतले कुलिशमादाय पुरो गच्छतीत्यर्थः।।४६।।

(४७) तए णं से सक्के देविंदे देवराया अण्णेहिं बहूहिं भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि अ सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए [1]जाव णाइएणं ताए उक्किट्ठाए जाव वीईवयमाणे२ जेणेव मंदरे पव्वए जेणेव पंडगवणे जेणेव अभिसेअसिला जेणेव अभिसेअसिहासणे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे।।४७।।

'तए णं से सक्के' इत्यादि सुगमं 'जेणेव मंदरे' इत्यादि यत्रैव मन्दरो मेरुर्यत्रैव पाण्डुकवनं यत्रैवाभिषेकशिला यत्रैवाभिषेकसिंहासन' 'तेणेव' त्ति तस्मिन्नेवोपागच्छति उपागत्य सिंहासनवरगतः पूर्वाभिमुखः सन्निषण्ण उपविष्टः।।४७।।

अथेशानेन्द्रादिसमागमवक्तव्यतां बिभणिषुराह-

(४८) तेणं कालेणं तेणं समएणं ईसाणे देविंदे देवराया सूलपाणी वसभवाहणे सुरिंदे उत्तरड्ढलोगाहिवई अट्ठावीसविमाणावाससयसहस्साहिवई अरयंबरवत्थधरे एवं [2]जहा सक्के इमं णाणत्तं–महाघोसा घण्टा लहुपरक्कमो पायत्ताणियाहिवई पुप्फओ विमाणकारी [3]दक्खिणा निज्जाणभूमि उत्तरपुरत्थिमिल्लो रइकरपव्वओ मन्दरे समोसरिओ [4]जाव पज्जुवासइ ।।४८।।

'तेणं कालेणं' मित्यादि प्राग्वत्, नवरमीशानकल्पाधिपत्वादीशानः शूलं प्रहरणविशेषः पाणौ यस्य स शूलपाणिर्वृषभो वृषभरूपः सुरो वाहनं यस्य स वृषभवाहनस्तथो

---

१. द्र. ३।१२।। २. द्र. ५।१८-४६।। ३. दक्खिणे निज्जाणमग्गे - मु.।। ४. द्र. ५।५८।।

-त्तरार्द्धलोकाधिपतिर्मेरोरूत्तरतः सर्वस्व तथा भाव्यत्वादष्टाविंशतिविमानलक्षाधिपतिः **'एवं जहा सक्के'** एवं यथा शक्रवक्तव्यता प्राक् सविस्तरं भणिता तथास्यापि वक्तव्या **'इमं नाणत्तं'** त्ति नवरमिदं नानात्वं विशेषस्तदेव दर्शयति **'महाघोसे'** त्यादि अस्य महाघोषा घण्टा **लघुपराक्रमाभिधः पदात्यनीकाधिपतिः पुष्पको** नाम्ना विमानकारी **'दाहिणा निज्जाणभूमि'** त्ति दाहिणात्यो निर्गममार्ग इत्यर्थः **उत्तरपौरस्त्यो रतिकरपर्वतो** विमानहस्वीकरणस्थानं तत्र विमानं संक्षिप्य **मन्दरे समवसृतो** मेरावेव समायातो यावत्पर्युपास्ते यावत्करणात् 'जेणेव भगवं तित्थयरे तेणेव उवागच्छइ भगवं तित्थगरं' ति।।४८।।

(४९) एवं अवसिट्ठावि इंदा भाणिअव्वा [1]जाव अच्चुओ, इमं णाणत्तं-

चउरासीइ असीई बावत्तरि सत्तरी अ सट्ठी अ।
पण्णा चत्तालीसा, तीसा वीसा दस सहस्सा।।१।।

एए सामाणिआ णं,[2] बत्तीसट्ठावीसा बारसट्ठ चउरो सयसहस्सा।
पण्णा चत्तालीसा छच्च सहस्सा सहस्सारे।।२।।

आणयपाणयकप्पे चत्तारि सयाऽऽरणच्चुए तिण्णि।
एए विमाणा णं, इमे जाणविमाणकारी देवा।।३।।

तंजहा–

पालय १, पुप्फय २, सोमणसे ३, सिरिवच्छे]अ ४, णंदिआवत्ते ५।
कामगमे ६, [3]पीइगमे ७, मणोरमे ८, विमल ९, सव्वओभद्दे १०।। १।।

सोहम्मगाणं सणंकुमारगाणं बंभलोअगाणं महासुक्कगाणं [4]पाणयगाणं इंदाणं

१. द्र. ठाणं - १०।१४९।। २. णं इति वाक्यालङ्कारे हीवृ .।। ३. पीतिमणे-स्था० ८।१०३, १०। १५०।।
४. आण° - अब।।

सुघोसा घण्टा, हरिणेगमेसी पायत्ताणीआहिवई, उत्तरिल्ला णिज्जाणभूमी, दाहिणपुरत्थिमिल्ले रइकरगपव्वए, ईसाणगाणं माहिंदलंतगसहस्सारअच्चुअगाण य इंदाणं महाघोसा घण्टा, लहुपरक्कमो पायत्ताणीआहिवई, दक्खिणिल्ले णिज्जाणमग्गे, उत्तरपुरत्थिमिल्ले रइकरगपव्वए, परिसाओ णं [1]जहा जीवाभिगमे आयरक्खा सामाणिअचउग्गुणा सव्वेसिं जाणविमाणा सव्वेसिं जोअणसयसहस्सवित्थिण्णा उच्चत्तेणं सविमाणप्पमाणा महिंदज्झया सव्वेसिं जोअणसाहस्सिआ, सक्कवज्जा मन्दरे समोअरंति [2]जाव पज्जुवासंतित्ति।।४९।।

एवमवशिष्टाः सनत्कुमारादयोऽपीन्द्रा भणितव्याः यावदच्युतो द्वादशदेवलोकाधिपतिर्मेरौ समागत्य भगवन्तं पर्युपास्ते इति **'इमं नाणत्तं** इदं च वक्ष्यमाणं नानात्वं सामानिकादिकृतं विज्ञेयं शक्रादीनां दशानामपीन्द्राणां सामानिकसंख्यां गाथया प्राह–**'चउरासीई** त्यादि, दस पर्यन्तस्थः सहस्रशब्दः सर्वत्र सम्बध्यते ततश्चैवमर्थघटना शक्रस्य **चतुरशीतिः** सहस्राणि सामानिकाः ईशानेन्द्रस्याशीतिः सहस्राणि सनत्कुमारेन्द्रस्य द्वासप्ततिः सहस्राणि माहेन्द्रस्य सप्तति सहस्राणि ब्रह्मेन्द्रस्य **षष्टि**सहस्राणि लान्तकेन्द्रस्य **पञ्चाशत्**सहस्राणि महाशुक्रेन्द्रस्य **चत्वारिंशत्**सहस्राणि सहस्रारेन्द्रस्य **त्रिंशत्**सहस्राणि प्राणतेन्द्रस्य **विंशतिः** सहस्राणि अच्युतेन्द्रस्य **दश**सहस्राणीति गाथार्थः। **'एते सामाणियाणं'** ति एतानि चतुरशीत्यादीनि सहस्राणि क्रमेण शक्रादीन्द्रसम्बन्धिनां सामानिकानां ज्ञेयानीत्यर्थः। अथैषां प्रागुक्तक्रमेण विमानसंख्यां सार्द्धगाथया प्राह **'बत्तीसे'** त्यादि **द्वात्रिंशदष्टाविंशति द्वादशाष्टौ चत्वारिंशतसहस्राणि** लक्षाणि क्रमेणाद्येषु पञ्चसु कल्पेषु विमानानां ज्ञेयानि ततः **पञ्चाशच्चत्वारिंशच्च** सहस्राणि लान्तकशुक्रयोः **षट्सहस्राणि सहस्रारे आनत-प्राणत कल्पयो श्चत्वारिंशतानि आरणाच्युतयोस्त्रीणि** शतानि **'एते विमाणाणं'** ति एतानि

१. जीवा. ३।१०४०-५५।। २. द्र. ५।५०।।

शतसहस्रादीनि विमानानां ज्ञेयानीत्यर्थः, अथ विमानकारिणो नाम्ना दर्शयन्नाह - **'इमे'** इत्यादि इमे वक्ष्यमाणाः शक्रादीनां **यानविमानकारिणो देवास्तद्यथा पालकः १, पुष्पकः २, सोमनसः ३ श्रीवत्सो ४ नन्द्यावर्त्तः ५ कामगजः ६ प्रीतिगमो ७ मनोरमः ८ विमलः ९ सर्वतोभद्रः १०**। अथ शक्रादीनां घण्टादीनां सुविशेषमभिधित्सुराह- **'सोहम्मगाण'**मित्यादि, **सौधर्मकाणां १ सनत्कुमारकाणां २ ब्रह्मलान्तकानां ३ महाशुक्रकाणां ४ प्राणतकानामिन्द्राणां सुघोषा घण्टा हरिनैगमेषी पदात्यनीकाधिपतिः 'उत्तरिल्लनिज्जाणभूमि'** त्ति औत्तराहो निर्गममार्गो दक्षिणपौरस्त्यो रतिकरपर्वतो विमानहृस्वीकरणस्थानं' **ईसाणगण'** मित्यादि **ईशानकानां १ माहेन्द्रकानां २ लान्तकानां ३ सहस्रारकाणां ४ अच्यूतानां ५ चेन्द्राणां महाघोषा घण्टा लघुपराक्रमः पदात्यनीकाधिपतिः दाक्षिणात्यो निर्याणमार्गः उत्तरपौरस्त्यो रतिकरपर्वतो** विमानहृस्वीकरणस्थानं **'परिसाओ जहा जीवाभिगमे त्ति** पर्षदाभ्यन्तरमध्यमबाह्यरूपा यस्य यावद्देवसंख्योपेता यथा **जीवाभिगमे** उक्तास्तथाऽवसेयाऽत्र तु ग्रन्थगहनता प्रसक्तेर्नोच्यन्ते इति **'आयरक्खा'** इत्यादि सर्वेषामपीन्द्राणामात्मरक्षा देवाः सामानिकचतुर्गुणा यस्य यावन्तः **सामानिक**देवा उक्तास्तेभ्यश्चतुर्गुणास्तस्यात्मरक्षका इति भावः, **सर्वेषां** शक्रादीनां दशानामपीन्द्राणां **यानविमानानि योजनलक्षविस्तीर्णानि, ऊच्चैस्त्वेन च स्वविमानप्रमाणानि** स्वकीय स्वकीय सौधर्मावतंसकादिविमानसमानानि तथा **महेन्द्रध्वजाः सर्वेषां योजनसाहस्रिकाः** योजनसहस्रोच्चा इत्यर्थः **'सक्कवज्ज'** त्ति सौधर्मेन्द्रवर्जा सर्वेऽपीन्द्रा **मन्दरे** मेरौ **समवतरन्ति,** भगवज्जन्मनगरादौ नायान्तीति भावो **यावत्पर्युपास्ते** भगवन्तमिति गम्यम्।।४९।।

अथ चमरेन्द्रसमागमवक्तव्यतां निवेदयन्नाह-

(५०) तेणं कालेणं तेणं समएणं चमरे असुरिंदे असुरराया चमरचंचाए रायहाणीए

सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्ठीए [1]सामाणिअसाहस्सीहिं तायत्तीसाए तायत्तीसेहिं चउहिं लोगपालेहिं पंचहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं तिहिं परिसाहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं चउहिं चउसट्ठीहिं [2]आयरक्खसाहस्सीहिं अण्णेहि अ [3]जहा सक्के णवरं इमं णाणत्तं–दुमो पायत्ताणीआहिवई, ओघस्सरा घण्टा, विमाणं पण्णासं जोअणसहस्साइं, महिंदज्झओ पंचजोअणसयाइं, विमाणकारी आभिओगिओ देवो, अवसिट्ठं तं चेव जाव मंदरे समोसरइ पज्जुवासई।।५०।।

'तेणं कालेणं तेणं समएणं चमरे असुरिंदे' इत्यादि सर्वं सुबोधं **'जहा सक्के'** त्ति यथा शक्रो वर्णितस्तथाऽयमपि वर्णनीयः सकलयथोचिततत्कृत्यकरणादिना **'नवरी'**त्यादि केवलमिदं **नानात्वं द्रुमो** नाम्ना पदात्यनीकाधिपतिरोघस्वरा घण्टा विमानं पञ्चाशद्योजनसहस्राणि विस्तीर्णो **माहेन्द्रध्वजस्तु पञ्चयोजनशतान्युच्चैस्त्वेन विमानकारी आभियोगिको देवोऽवशिष्टं** शक्रस्तवभणन-घण्टावादनोद्घोषणकारणादि सर्वं **तदेव** द्रष्टव्यं **यावन्मन्दरं समवतरन्ति पर्युपास्ते** च भगवन्तमिति।।५०।।

एवं बलीन्द्रोप्यायातीति निवेदयति-

(५१) तेणं कालेणं तेणं समएणं बली असुरिंदे असुरराया एवमेव णवरं सट्ठी सामाणीअसाहस्सीओ चउगुणा आयरक्खा, महादुमो पायत्ताणीआहिवई, महाओहस्सरा घण्टा, सेसं [4]तं चेव परिसाओ जहा [5]जीवाभिगमे।।५१।।

'तेणं कालेण' मित्यादि **बलिर्नामाऽसुरेन्द्रः 'एवमेव'** त्ति चमरेन्द्र इवायमपि वर्णनीयो **नवरं षष्टीः सामानिकसहस्राणि** सामानिकचतुर्गुणाश्चात्मरक्षा अस्यावसेया

---

१. "सामाणियसाहस्सीहिं" इत्यादि पदेषु षष्ठि विभक्ते र्बहुवचनमपेक्षितमिस्त यथा शक्रप्रकरणे (५।१९) सामाणियसाहस्सीणं इत्यादि पदानि दृश्यन्ते अन्यथा जहा सक्के इति समर्पणस्य सार्थकता न स्यात्। तृतीयान्त पदानि घण्टावादनानन्तरं प्रयाणसमये निर्दिष्टानि सन्ति द्रष्टव्यं ५।४४ सूत्रम्। इति V पृ. ५४१ टि. ११.।। २. आयरक्खदेवसा° V।। ३. द्र. ५।११-४६।। ४. ५।५०।। ५. जीवा. ३।२३५-५०।।

महाद्रुमो नाम पदात्यनीकाधिपति र्महौघस्वरा घण्टा शेषं शक्रस्तवभणनादि **तदेव पर्षदश्च यथा जीवाभिगमे** उक्ता: सन्ति तथैव वाच्या:।।५१।।

शेष भवनपतिन्द्रसमागमवक्तव्यतामाह-

(५२) तेणं कालेणं तेणं समएणं धरणे तहेव णाणत्तं छ सामाणिअसाहस्सीओ, छ अग्गमहिसीओ, चउग्गुणा आयरक्खा, मेघस्सरा घण्टा, भद्दसेणो पायत्ताणीयाहिवई, विमाणं पणवीसं जोअणसहस्साइं, महिंदज्झओ अड्ढाइज्जाइं जोअणसयाइं, एवमसुरिन्दवज्जिआणं भवणवासिइंदाणं, णवरं असुराणं ओघस्सरा घण्टा, णागाणं मेघस्सरा, सुवण्णाणं हंसस्सरा, विज्जूणं कोंचस्सरा, अग्गीणं मंजुस्सरा, दिसाणं मंजुघोसा, उदहीणं सुस्सरा, दीवाणं महुरस्सरा, वाऊणं णंदिस्सरा, थणिआणं णंदिघोसा,

चउसट्ठी सट्ठी खलु छच्च सहस्सा उ असुरवज्जाणं।
सामाणिआ उ एए चउग्गुणा आयरक्खा उ।।१।।

दाहिणिल्लाणं पायत्ताणीआहिवई भद्दसेणो, उत्तरिल्लाणं दक्खो।।५२।।

'तेणं कालेण तेणं समएणं' ति प्राग्वत् **'धरणे तहेव'** त्ति धरणानामा नागकुमारेन्द्रस्तथैव चमरवदेव वर्णनीय: **'णाणत्तं'** त्ति नानात्वमिदं वक्ष्यमाणं ज्ञेयं तदेवाह-**'छ सामाणिय साहस्सीओ'** इत्यादि षट् सामानिकसहस्राणि **षडग्रमहिष्यश्चतुर्गुणा आत्मरक्षका** सामनिकेभ्य इति गम्यं **मेघस्वरा घण्टा भद्रसेन पदात्यनीकाधिपतिर्विमान** जिनेन्द्राभिगमनयोग्यं **पञ्चविंशतियोजनसहस्राणि** विस्तीर्णं **महेन्द्रध्वजस्त्वर्द्धतृतीयानि योजनशतानि** उच्चैस्त्वेन **'एवं असुरिंदवज्जियाण'** मित्यादि, एवमिति धरणेन्द्रवर्जितानां भवनवासीन्द्राणां सामानिकामहिष्यात्मरक्षकसंख्यादिवक्तव्यता प्रत्येतव्या **'णवरं'** ति अयं विशेष: **'असुराण'** मित्यादि,**असुराणामोघस्वरा घण्टा १ नागानां मेघस्वरा २ सुवर्णानां**

हंसस्वरा ३ विद्युतां क्रौंचस्वरा ४ अग्नीनां मञ्जुस्वरा ५ 'दिसाण' ति दिक्कुमाराणां मञ्जुघोषा ६ उदधीनां सुस्वरा ७ द्वीपानां मधुरस्वरा ८ वायूनां नन्दिस्वरा ९ स्तनितानां नन्दिघोषा १० घण्टा।

नामानि चात्र केषाञ्चिदानानुपूर्व्योक्तानि अनुक्रमस्तु " **असुरानाग सुवन्ना** " इत्यादि गाथयाऽवसेयः सर्वेषां भवनपतीन्द्राणां सामनिकात्मरक्षकसंख्यां गाथया दर्शयति **'चउसट्ठी गाहा' चतुषष्टिः** सामानिकसहस्राणि चमरेन्द्रस्य **षष्टिः सहस्राणि** बलीन्द्रस्य तथा **'असुरवज्जाणं' ति** चमरबलिवर्जितानामष्टादशानाम् भवनपतीन्द्राणां प्रत्येकं षट् षट् सहस्राणि **सामानिकाः 'चउगुणा आयरक्खाओ'** त्ति स्वस्वसामानिकेभ्यश्चतुर्गुणा आत्मरक्षका विज्ञेया **'दाहिणिल्लाण'** मित्यादि दाक्षिणात्यानां धरणादिनां चेन्द्राणां **पदात्यनीकाधिपति भद्रसेनः औत्तराहाणां** भूतानन्दादिनां चेन्द्राणां **दक्षो** नाम्ना पदात्यनीकाधिपतिः।।५२।।

(५३) वाणमंतरजोइसिआ णेअव्वा, एवं चेव, णवरं चत्तारि सामाणिअसाहस्सीओ, चत्तारि अग्गमहिसीओ, सोलस आयरक्खसहस्सा, विमाणं सहस्सं, महिंदज्झया पणवीसं जोअणसयं, घण्टा दाहिणाणं मंजुस्सरा, उत्तराणं मंजुघोसा, पायत्ताणी-आहिवई विमाणकारी अ आभिओगा देवा,जोइसिआणं सुस्सरा सुस्सरणिग्घोसा घण्टाओ, मंदरे समोसरणं जाव पज्जुवासंति।।५३।।

वाणमंतरजोइसिया णेयव्वा एवं चेवेत्ति व्यन्तरेन्द्रज्योतिष्केन्द्रा अपि **एवमेव** नेतव्याश्चमरेन्द्रादिवदेव सुमेरुशिखरे प्रापणीया **'नवरं'** ति अयं पुनर्विशेषः **'चत्तारी'** त्यादि सर्वेषामपि व्यन्तरेन्द्रज्योतिष्काणां प्रत्येकं **चत्वारिसामानिकसहस्राणि** प्रत्येकं **चतस्रोऽग्रमहिष्यः षोडशात्मरक्षकसहस्राणि 'विमाणा सहस्सं** त्ति जिनेन्द्राभिगमनयोग्यं विमानं सहस्रयोजनविस्तीर्णं **महेन्द्रध्वजाश्च** प्रत्येकं **पञ्चविंशतियोजनशतमुच्चैस्त्वेनेति** ज्ञेयं

'घंटा दाहिणाण' मित्यादि दाक्षिणात्यानां षोडशामपि व्यन्तरेन्द्राणां **मञ्जुस्वरा** घण्टा, **औत्तराहाणां तु मञ्जुघोषा** तथा **पदात्यनीकाधिपाति: विमानकारी चाभियोगिका देवा: 'जोइसियाणं सुसरनिग्घोसा -घंटाओ'** त्ति ज्योतिष्केन्द्रयो: सुस्वरा सुस्वरनिर्घोषा च **घण्टे 'मंदरे समोसरणं' जाव पज्जुवासंति'** त्ति एषा व्यन्तरज्योतिष्केन्द्राणामपि मंदरे समवसरणं वाच्यं यात्वपर्युपासत इति।।५३।।

अथाच्युतेन्द्रादयो यथा जिनजन्माभिषेकं कुर्वते तथा दर्शयन्नाह-

(५४) तए णं से अच्चुए देविंदे देवराया [१]महिंदे देवाहिवे [२]आभिओगे देवे सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! महत्थं महग्घं महरिहं विउलं तित्थयराभिसेअं उवट्ठवेह।।५४।।

'तए णं से अच्चुए' इत्यादि, तत: सकलेन्द्रमिलनानन्तरं सोऽच्चुतोऽच्युतनामा **देवेन्द्रो देवराजो 'महिंदो** त्ति सर्व्वेषामपीन्द्राणां मध्ये गरिष्टत्वान्महेन्द्रो देवाधिपो देवाधिपति: क्वचित् **'महं देवाहिये'** त्ति पाठस्तत्र महान् देवाधिप **अभियोगिकान् देवान् शद्बापयति शद्बापयित्वैवमवादीत् क्षिप्रमेव भो देवानुप्रिया महार्थं महाप्रयोजनं महार्ध्यं** महामूल्यं **महार्हं** महापूजं महतां वा योग्यं **तित्थयराभिसेयं'** ति तीर्थकाराभिषेकसामग्रीमुपस्थापयत सम्पादयत।।५४।

(५५) तए णं ते अभिओगा देवा हट्ठतुट्ठ [३]जाव पडिसुणित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति, २ त्ता वेउव्विअसमुग्घाएणं [४]जाव समोहणित्ता अट्ठसहस्सं सोवण्णिअकलसाणं एवं रुप्पमयाणं, मणिमयाणं सुवण्णरुप्पमयाणं, सुवण्णमणि-मयाणं रुप्पमणिमयाणं, सुवण्णरुप्पमणिमयाणं, अट्ठसहस्सं भोमिज्जाणं अट्ठसहस्सं वंदणकलसाणं, एवं भिंगाराणं, आयंसाणं, थालाणं, पाईणं, सुपईट्ठाणं चित्ताणं

१. कखस। महं- V शा.वृ.।। २. °ओग्गे देवे - V। °ओगिए त्रि। एवमग्रेऽपि। ३. द्र. ३।८।। ४. द्र.५/५।।

रयणकरंडगाणं (वायकरगाणं) पुप्फचंगेरीणं, एवं [1]जहा सूरिआभस्स सव्वचंगेरीओ सव्वपडलगाइं विसेसिअतराइ [2]भाणिअव्वाइं, सीहासण-छत्त-चामर-तेल्लसमुग्ग जाव सरिसवसमुग्गा तालिअंटा जाव अट्ठसहस्सं कडुच्छुगाणं विउव्वंति, विउव्वित्ता साहाविए विउव्विए अ कलसे जाव कडुच्छुए अ गिण्हित्ता जेणेव खीरोदए समुद्दे तेणेव आगम्म खीरोदगं गिण्हंति, २ त्ता जाइं तत्थ उप्पलाइं पउमाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं गिण्हंति, एवं पुक्खरोदाओ जाव भरहेरवयाणं मागहाइतित्थाणं उदगं मट्टिअं च गिण्हंति, २ त्ता एवं गंगाईणं महाणईणं जाव चुल्लहिमवंताओ सव्वतुअरे सव्वपुप्फे सव्वगंधे सव्वमल्ले जाव सव्वोसहीओ सिद्धत्थए य गिण्हंति २ त्ता पउमद्दहाओ दहोअगं उप्पलादीणि अ, एवं सव्वकुलपव्वएसु वट्टवेअड्ढेसु सव्वमहद्दहेसु सव्ववासेसु सव्वचक्कवट्टिविजएसु वक्खारपव्वएसु अंतरणईसु विभासिज्जा जाव उत्तरकुरुसु जाव सुदंसणभद्दसालवणे सव्वतुअरे जाव सिद्धत्थए अ गिण्हंति, एवं णंदणवणाओ सव्वतुअरे जाव सिद्धत्थए अ सरसं च गोसीसचंदणं दिव्वं च सुमणदामं गेण्हंति, एवं सोमणसपंडगवणाओ अ सव्वतुअरे जाव सुमणसदामं दद्दरमलयसुगंधे य गिण्हंति, २ त्ता एगओ मिलायंति, २ त्ता जेणेव सामी तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता महत्थं जाव तित्थयराभिसेअं उवट्ठवेंति।।५५।।

तएणं ते इत्यादि सर्वं प्राग्व्याख्यातार्थं सुगमं च केवलं विशुद्धपाठप्रतिपत्यर्थं संस्कृत्य लिख्यते ततस्ते हृष्ट तुष्टा यावत्प्रतिशृत्योत्तरपौरस्त्यं दिग्भागमपक्रामंति अपक्रम्य वैक्रियसमुद्घातेन यावत् समवहत्याष्टसहस्रमष्टाधिकं सहस्रं सौवर्णिकानां कलशानां १ एवं रूप्यमयानां २ मणिमयानां ३ सुवर्णरूप्यमयानां ४ सुवर्णमणिमयाना ५ रूप्यमणिमयानां ६ सुवर्णरूप्यमणिमयाना ७ मष्टसहस्रं भौमेयानामष्टसहस्रं

---

१. द्र. राजप्र. सू. २७९।। २. °इं विउव्वंति विउव्वित्ता सीहा° V।।

वन्दनकलशानामेवं भृङ्गाराणामादर्शानां स्थालानां पात्राणां सुप्रतिष्ठानां रत्नकरण्डकानां पुष्पचङ्गेरीणां 'एवं जहा सूरियाभस्स' त्ति एवं यथा सूर्याभस्येन्द्राभिषेकावसरे तथात्रापि केवलं **सर्वचङ्गेर्यः सर्वपटलकानि** उपलक्षणत्वादन्यानि चाभिषेकोपयोगीन्युपकरणानि **विशेषततराणि** सूर्याभाभिषेकाद् विशिष्टतराणि **भणितव्यानि तथा सिंहासनछत्रचामरतैलसमुद्गका यावत् सर्षपसमुद्गकास्तालवृन्तानि च यावदष्टसहस्रं धूपकडुच्छुकानां विकुर्व्य स्वाभाविकान् वैक्रियांश्च कलशान् यावत्कडुच्छुकान् गृह्णन्ति गृहीत्वा यत्रैव क्षीरोदः समुद्रस्तत्रैवागम्य क्षीरोदोदकं गृह्णन्ति यानि तत्रोत्पलानि पद्मानि यावत्सहस्रपत्राणि गृह्णन्ति एवं पुष्करोदाद्यावद्भरतैरावतानां मागधादीनां तीर्थानामुदकं मृत्तिकां च गृह्णाति एवं गङ्गादीनां महानदीनां यावत् क्षुल्लहिमवतः सर्वतुवरान् कषायान् सर्वपुष्पाणि सर्वगन्धान् सर्वमाल्यानि यावत्सर्वोषधीः सिद्धार्थकांश्च गृह्णन्ति गृहीत्वा पद्महदात् ह्रदोदकमुत्पलादीनि चैवं सर्वकुलपर्वतेषु वृत्तवैताढ्येषु सर्वमहाद्रहेषु सर्ववर्षेषु सर्वचक्रवर्त्तिविजयेषु वक्षस्कारपर्वतेषु अन्तरनदीषु विभाषेत** विविधतया भाषेत। **यावदुत्तरकुरुषु यावत्सुदर्शनभद्रशालवने** सुदर्शनाभिधभद्रशालवने इत्यर्थः, **सर्वतुवरान् यावत्सिद्धार्थकान् गृह्णन्ति, एवं नन्दनवनात् सर्वतुवरान् यावत्सिद्धार्थकान् सरसं च गोशीर्षचन्दनं दिव्यं च सुमनोदाम गृह्णन्ति, एवं सौमनसपण्डुकवनात् सर्वतुवरान् यावत्सुमनोदाम 'दद्दरमलयसुगंधिए'** त्ति दर्दरश्चीरवरावनद्धकुण्डिकादिभाजनमुखं तेन गालितं तत् पक्व वा यन्मलयोद्भवतया प्रसिद्धत्वान्मलयजं श्रीखण्डं येषु तान् सुगन्धिकान् परमगन्धोपेतान् गन्धान् **गृह्णन्ति गृहीत्वैकत्र मिलन्ति मिलित्वा यत्रैव स्वामी तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य तं महार्थं यावत्तीर्थकराभिषेकमुपस्थापयन्ति।।५५।।**

(५६) तए णं से अच्चुए देविंदे दसहिं सामाणिअसाहस्सीहिं तावत्तीसाए तायत्तीसएहिं

चउहिं लोगपालेहिं, तिहिं परिसाहिं, सत्तहिं अणिएहिं, सत्तहिं अणिआहिवईहिं, चत्तालीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीहिं सद्धिं [१]संपरिवुडे तेहिं साभाविएहिं विउव्विएहि अ वरकमलपइट्ठाणेहिं सुरभिवरवारिपडिपुण्णेहिं चंदणकयचच्चाएहिं आविद्धकण्ठे-गुणेहिं पउमुप्पलपिहाणेहिं [२]करयलसुमालपरिग्गहिएहिं अट्ठसहस्सेणं सोवण्णिआणं कलसाणं जाव अट्ठसहस्सेणं भोमेज्जाणं जाव सव्वोदएहिं सव्वमट्टिआहिं सव्वतुअरेहिं जाव सव्वोसहिसिद्धत्थएहिं सव्विड्ढीए जाव रवेणं महया २ तित्थयराभिसेएणं अभिसिंचति।।५६।।

'तए णं से अच्चुए' इत्यादि प्रकटार्थं 'तेहिं साभाविएहि मित्यादि तै र्देवजनप्रसिद्धैः स्वाभाविकै **वैंकुर्विकैश्च वरकमलप्रतिष्ठानैः सुरभिवरवारिप्रतिपूर्णैश्चन्दनकृत चर्चाकैराविद्धकण्ठे गुणैरिति** कण्ठारोपितरक्तसूत्रतन्तुभिः **पद्मोत्पलपिधानैः सुकुमारकरतलपरिगृहीतैः** कलशैरिति गम्यते, तानेव विभागतो दर्शयति- **'अट्ठसहस्सेण** मित्यादि प्राग्वद्व्याख्येयं **यावन्महता तीर्थकराभिषेकेणाभिषिञ्चन्ति।।५६।।**

(५७) तए णं सामिस्स महया २ अभिसेअंसि वट्टमाणंसि इंदाईआ देवा छत्त-चामर-कलसधूवकडुच्छुअ-पुप्फगंध [३]जाव हत्थगया हट्ठतुट्ठ [४]जाव वज्जसूलपाणी पुरओ चिट्ठंति पंजलिउडा एवं विजयाणुसारेण [५]जाव अप्पेगइआ देवा आसिअसंमज्जि-ओवलित्तं सित्त-सुइ-सम्मट्ठ-रत्थंतरावणवीहिअं [६]करेंति जाव गंधवट्टिभूअं, अप्पेग० हिरण्णवासं वासिंति एवं सुवण्ण-रयण-वइर-आभरण-पत्त-पुप्फ-फल-बीअ-मल्ल-गंध-वण्ण जाव चुण्णवासं वासंति, अप्पेगइआ हिरण्णविहिं भाएंति एवं जाव चुण्णविधिं भाएंति, अप्पेगइआ चउव्विहं वज्जं वाएंति तं जहा-ततं १ विततं २ घणं ३

---

१. °वुडे जाव तेहिं - अकखत्रिबस आव. चू. पृ १४८।। २. °सुकुमाल° कखत्रिपस।। ३. द्र. ५। ५५, ३। १०-११।। ४. द्र. ५। २७।। ५. द्र. जीवा. ३। ४४७।। ६. सुसिरं - अब।।

झुसिरं ४, अप्पेगइआ चउव्विहं गेअं गायंति, तं जहा-उक्खित्तं १ [१]पायत्तं २ मंदं[२] ३ रोइंदगं[३] ४, अप्पेगइआ चउव्विहं णट्टं णच्चंति, तं०-अंचिअं १ दुअं २ आरभडं ३ भसोलं ४, अप्पेगइआ चउव्विहं अभिणयं अभिणेंति, तं०-दिट्ठंतिअं [४]पाडिस्सुइअं [५]सामण्णोवणिवाइअं लोगमज्झावसाणिअं[६], अप्पेग० बत्तीसइविहं दिव्वं णट्टविहिं उवदंसेंति, अप्पेगइआ उप्पयनिवयं-[७]यपवत्तं संकुचिअपसारिअं जाव भंतसंभंतं णामं दिव्वं नट्टविहिं उवदंसेंतीति, अप्पेगइआ, पीणेंति, एवं बुक्कारेंति, तंडवेंति, लासेंति, अप्फोडेंति, वग्गंति सीहणायं णदंति अप्पे० सव्वाइं करेंति अप्पे० हयहेसिअं एवं हत्थिगुलगुलाइअं रहघणघणाइअं अप्पे० तिण्णिवि, अप्पे० उच्छालेंति अप्पे० पच्छोलेंति अप्पे० तिवइं छिंदंति अप्पे. तिन्निवि [८]पायदद्दरयं करेंति भूमिचवेडे दलयंति अप्पे० महया सद्देणं रावेंति, एवं संजोगा विभासिअव्वा, अप्पे० हक्कारेंति, एवं पुक्कारेंति थक्कारेंति ओवयंति उप्पयंति परिवयंति जलंति तवंति पयवंति गज्जंति [९]विज्जुआयंति वासिंति अप्पेगइआ देवुक्कलिअं करेंति एवं देवकहकहगं करेंति अप्पे० दुहुदुहुगं करेंति, अप्पे० विकिअभूयाइं, रूवाइं विउव्वित्ता पणच्चंति, एवमाइ विभासेज्जा [१०]जहा विजयस्स जाव सव्वओ समन्ता आहावेंति परिधावेंति।।५७।।

'तए ण' मित्यादि ततो णमिति प्राग्वत् स्वामिनो जिनस्य 'महया २' इति अतिशयेन महति तीर्थकराभिषेके वर्त्तमाने इन्द्राद्या देवाश्छत्र-चामर-कलश-धूपकडुच्छुक-पुष्पगन्धयावद्धस्तगता यावत्करणाच्छतपत्रसहस्रपत्रादिशङ्खपरिग्रहा हृष्टतुष्टा

---

१. पयत्तं - V। पत्तए - ठाणं ४। ६३४। पायंतं - राजप्र. सू. ११५। पाय तायं - राजप्र. २८१।। २. मन्दायईयं -मु.। मंदायं राजप्र सू. ११५, २८१। जीवा - ७.४४७।। ३. रोइया वसानं (णं.मु.) - मु.त्रिप पुवृ. रायप० सू.११५ - २८१। जीवा. ३।४४७। रोइयगं - कसशावृपा.।। ४. पाडियंतियं - V। प्रातिश्रुतिकं - पुवृ. शावृ.। प्रतिश्रुतिक - हीवृ.। ठाणं ४। ६३७ सूत्रं तत्पादटिप्पनं च द्रष्टव्यमिति V पृ. ५४४ टि. १।। ५. सामण्णओ वि° V ठाणं ४। ६३७, राजप्र. ११७, २८१। जीवा. ३। ४४७। सामंतो कतियं - अत्रिब।। ६. °वसियं - अकखबत्रिस । ० वसाणियं - राजप्र. ११७, २८१। जीवा. ३। ४४७।। ७. अकखबत्रिस पुवृ.हीवृ उप्पयनिवयं निवयउय्ययं -शावृ.।। ८. द्दरं - अकखत्रिबस आव. चू.- ५. पृ. १४८।। ९. विज्जुतापयंती - अखब।। १०. द्र. जीवा. ३। ४४७।।

यावद्वज्रशूलपाणय: पुरतो जिनस्याग्रत**स्तिष्ठन्ति प्राञ्जलिपुटा:** सन्त: कृतप्राञ्जलयो वा **एवं विजयानुसारेणं**' ति एवं विजयदेवानुसारेण' **जाव अप्पेगइया देवा आसियसमंजिउवलित्तंओजाव गंधवट्टिभूयं**' इह यावच्छब्दद्वयोपादानादेवं सम्पूर्ण: पाठो दृश्य:, 'अप्पेगइया देवा णच्चोयगं णाइमट्टियं पविरलफुसियं दिव्वं सुरभिरयरेणुविणासणं गंधोदगवासं वासंति अप्पेगतिया देवा णिहयरयं णट्ठरयं उवसंतरयं पसंतरयं करेंति अप्पेगतिया देवा पंडकवणं सब्भिंतरबाहिरियं आसियसम्मज्जिओवलित्तं **सित्तसुइसम्मट्ठरत्थंतरावणवीहियं करेंति** अप्पेगतिया मंचाइमंचकलियं करेंति अप्पेगतिया णाणाविहरागरंजिय-ऊसियझयविजयवेजयंतीपडागातिपडागमंडितं करेंति अप्पेगतिया लाउल्लोइयमहितं करेंति अप्पेगतिया पंडगवणगोसीसरसरत्तचंदणदद्दरदिणपंचंगुलितलं करेंति अप्पेगतिया उवचियवंदणकलसं वंदणघडसुकयं तोरणपडिदुवारदेसभागं करेंति अप्पेगइया आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावं करेंति अप्पेगइया पंचवण्णसुरभिपुप्फपुंजोवयारकलियं करेंति, अप्पेगइया कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरक्कडज्झंतधूवमघमघेंतगंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं' इति सर्वमिदं प्राग् व्याख्यातार्थम् नवरं 'सित्तसुइसंमट्ठरत्थंतरावणवीहियं करेंति' त्ति सिक्तानि जलेनात एव शुचीनि पवित्राणि सम्मृष्टानि कचवरापनयनेन रथ्यान्तराणि आपणवीथय इव हट्टमार्गा इव पणवीथयो रथ्याविशेषा यस्मिंस्तत्तथा कुर्वंति **'अप्पेगतिया हिरणवासं वरसंती'** त्यादि अप्येकका हिरण्यवर्षं वर्षन्त्येवं **सुवर्णरत्नवज्राभरणपत्रपुष्पफलबीजमाल्यगन्धवर्णयावच्चूर्णवर्षं वर्षन्ति** यावत्करणाद्वस्तुवर्षं वर्षन्तीत्यादिपदोपादानं कार्यं **'अप्पेगइया हिरण्णविहिं भाएंति'** त्ति अप्येकका देवा हिरण्यविधिं हिरण्यरूपं मङ्गलभूतं प्रकारं भाजयन्ति विश्राणयन्ति शेषदेवेभ्यो ददतीति भाव: एवं **यावच्चूर्णविधिं भाजयन्ति** यावत्करणात्सुवर्णरत्नाभरणपुष्पमाल्यगन्धवर्णवस्त्रविधिभाजनमपि भावनीयं **'अप्पेगइया देवा चउव्विहं वज्जं वाइंती'** त्यादि अप्येकका

देवाश्चतुर्विधं वाद्यं वादयन्ति **तद्यथा** ततं मृदङ्गपटहादि **विततं**-वीणादिकं **घनं**-कंसिकादि **शुषिरं**-काहलादि, अथवा तातादीनां स्वरूपमेवं ततं-वीणादिकं ज्ञेयं विततं-पटहादिकं घनं तु कांस्यतालादिकं वंशादि शुषिरं मतम्, **अप्येकका देवाश्चतुर्विधं गेयं गायन्ति तद्यथा-उत्क्षिप्तं** प्रथमतः समारभ्यमाणं **प्रवृत्तमु** -त्क्षेपावस्थातो विक्रान्तं मनाक् भारेण प्रवर्त्तमानं **मन्दं** पाठान्तरे मन्दायमिति वा मध्यभागे मूर्च्छादि गुणोपेततया मन्दं मन्दं घोलनात्मकं रोचितावसानमिति रोचितं यथोचितलक्षणोपेततया भावितं सत्यापितमिति यावदवसानं यस्य तद्रोचितावसानं **'रोइंदग'** मिति पाठो रोचितकमित्यर्थो **ऽप्येककाश्चतुर्विधं नाट्यं नृत्यन्ति, तद्यथ–अञ्चितं १ द्रुतं २ आरभटं ३ भसोल** ४ मिति, **अप्येककाश्चतुर्विधमभिनयमभिनयन्ति तद्यथा-द्राष्टान्तिकं १ प्रतिश्रुतिकं २ सासान्यता विनिपातिकं ३ लोकमध्यावसानिकं** ४ एतेन च नर्त्तनविधयोऽभिनयविधयश्च सम्यग् नाट्यकुशलेभ्यो वेदितव्याः **'अप्पेगइया बत्तीसइविह'** मित्यादि अप्येकका द्वात्रिंशद्विधं **दिव्यं नाट्यविधिमुपदर्शयन्ति,** द्वात्रिंशन्नाट्यविधयस्तु **राजपश्नीयादि**-शास्त्रेभ्योऽवसेया द्वात्रिंशन्नाट्यविधीनां मध्ये कांश्चननाट्यविधीनुपन्यस्यति **'अप्पेगइया'** इत्यादि अप्येकका **उत्पात-निपातप्रवृत्तं** उत्पातपूर्वो निपातस्तेनप्रवृत्तमुत्पातनिपातप्रवृत्तमेवं **सङ्कुचितं प्रसारितं यावत्करणात्** 'रियारियं ति गमनागमनं **भ्रान्तं सम्भ्रान्तं नाम नाट्यविधिमुपदर्शयन्ति' अप्पेगइया पीणंती'** त्यादि अप्येकका देवाः पीनयन्ति पीनमात्मानं कुर्वन्ति स्थूला भवन्तीति भावः, **'एवं'** त्ति अप्येकका इत्ययं शब्दः प्रतिक्रियं द्रष्टव्यमेत्येवं शब्दार्थः। **'बुक्कारेंति'** व्यूत्कारं कुर्वन्ति **अप्येककास्ताण्डवयन्ति** ताण्डवरूपं नृत्यं कुर्वन्ति, **अप्येकका लास्ययन्ति** लास्य रूपं नृत्यं कुर्वन्ति अप्येकका **आस्फोटयन्ति** भूम्यादिकमिति गम्यमप्येकका वलान्ति, अप्येककाः **सिंहनादं नन्दन्ति, अप्येककाः सर्वाण्यनन्तरोक्तानि कुर्वन्ति, अप्येकका हयहेषितं** कुर्वन्ति, **एवं हस्तिगडगडायितं रथघणघणायितं कुर्वन्ति अप्येकका देवास्त्रीण्यप्येतानि** कुर्वन्ति, **अप्येकका 'उच्छोलंति'** त्ति उन्मूलयन्ति

अप्येकका: प्रोच्छोलन्ति पाठान्तरे उच्छलन्ति प्रोच्छलन्ति एवं **त्रिपदिकां छिन्दन्ति, अप्येककास्त्रीण्यप्येतानि** कुर्वन्ति अप्येकका: **पाददर्दरं कुर्वन्ति** अप्येकका **भूमिचपेटां ददति** भूमिं चपेटयास्फालयन्तीति भावोऽप्येकका देवा **महता** महता शब्देन रवन्ते शब्दं कुर्वन्ति, **एवं संयोगा** अपि द्व्यादीनां **विभाषितव्या: अप्येककका देवा हेक्कारन्ति** हेक्कारं कुर्वन्ति, आप्येकका देवा **बुक्कारन्ति** मुखेन बुत्कारशब्दं कुर्वन्ति अप्येकका देवा **थक्कारेन्ति** थक्क इत्येवं महता शब्देन कुर्वन्ति **'ओवयंति'** त्ति अवपतन्ति उप्पयंति' त्ति उत्पतन्ति **'परिवयंति'** त्ति परिपतन्ति तिर्यग् निपतन्तीत्यर्थ: **ज्वलन्ति** ज्वालामालाकुला भवन्ति **'तपंति'** तप्ता भवन्ति **'पतवंति'** प्रतप्ता भवन्ति **'गज्जंति'** त्ति गर्जयन्ति **'विज्जुयाएंति'** त्ति विद्युतं कुर्वन्ति 'वासति' त्ति वर्षं वर्षन्ति **देवोत्कलिकां कुर्वन्ति** देवानां वातस्य चोत्कलिका ता कुर्वन्ति, एवं **'कहकहगंति'** प्रभूतानां देवानां प्रमोदवशत: स्वेच्छावचनैर्बोल: कोलाहलो **देवकहकहकस्तं कुर्वन्ति देवहुहुकं कुर्वन्ति** हुहुहुहुकमित्यनुकरणवचनमेतदप्येकका विकृतानि बिभत्सानि **भूतादिरूपाणि** विकृतभूतादिरूपाणि **विकुर्व्य प्रनृत्यन्ति 'एवमाइ विभासेज्ज'** त्ति एवमादि सर्वं विभाषेत विविधतया वदेत् धीमान् **'जहा विजयस्स'** त्ति यथा विजयदेवस्येन्द्राभिषेकावसरे सविस्तरमुक्तमस्ति तथात्रापि वक्तव्यं **यावत्सर्वत: समन्तत 'आधावंति'** इह यावत्करणात् 'अप्पेगइया चेलुक्खेवं करेंति अप्पेगइया उप्पलहत्थगया जाव सयसहस्सपत्तहत्थगया अप्पेगइया कलसहत्थगया जाव धूवकडूच्छूयहत्थगया हट्ठ तुट्ठ जाव हरिसवसविस्सप्पमाणहियया पंडगवणे सव्वओ समंता आधावंति' इति तत्र तु 'विजयाए रायहाणीए' इत्युक्तमस्ति परमत्र पण्डकवने जन्मोत्सवस्य प्रवर्त्तमानत्वादित्थमुक्तमिति सुगमं चेदम्।।५७।।

(५८) तए णं से अच्चुइंदे सपरिवारे सामिं तेणं महया महया अभिसेएणं अभिसिंचइ,

२ त्ता करयलपरिग्गहिअं जाव मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेइ, २ त्ता ताहिं इट्ठाहिं जाव जयजयसद्दं पउंजति, पउंजित्ता जाव पम्हलसूकुमालाए सुरभीए गंधकासाईए गायाइं लूहेइ, २ त्ता एवं [1]जाव कप्परुक्खगंपिव अलंकियविभूसिअं करेइ, २ त्ता जाव णट्टविहिं उवदंसेइ, २ त्ता अच्छेहिं [2]सण्हेहिं रययामएहिं अच्छरसातण्डुलेहिं भगवओ सामिस्स पुरओ अट्ठट्ठमंगलगे आलिहइ, तं जहा–

"दप्पण १ भद्दासणं २ वद्धमाण ३ वरकलस ४ मच्छ ५ सिरिवच्छा ६।
सोत्थिअ ७ णंदावत्ता ८ [3]लिहित्ता अट्ठट्ठमंगला।।१।।"

काऊण करेइ उवयारं, किंते?, पाडल-मल्लिअ-चंपग-असोग-पुन्नाग-चूअमंजरि-णवमालिअबउल-तिलय-कणवीर-वुंद-कुज्जग-कोरंट-पत्तदमणग-वरसुरभिगंध गंधिअस्स [4]कयग्गहिअकरयलपब्भट्ठविप्पमुक्कस्स दसद्धवण्णस्स [5]कुसुमणिगरस्स तत्थ चित्तं जण्णुस्सेहप्पमाणमित्तं ओहिनिकरं करेत्ता चंदप्पभ-रयण-वइर-वेरुलिअविमलदण्डं कंचण-मणि-रयणभत्तिचित्तं कालागुरु-पवर-कुंदुरुक्क-तुरुक्क-धूवगंधुत्तमाणुविद्धं च धूमवट्टिं विणिम्मुअंतं वेरुलिअमयं कडुच्छुअं पग्गहित्तु पयएणं धूवं दाऊण जिणवरिंदस्स सत्तट्ठ पयाइं ओसरित्ता दसंगुलिअं अंजलिं करिअ मत्थयंसि पयओ अट्ठसयविसुद्धगंथजुत्तेहिं महावित्तेहिं अपुणरुत्तेहिं अत्थजुत्तेहिं संथुणइ, २ त्ता वामं जाणुं अंचेइ, २ त्ता जाव करयलपरिग्गहिअं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-णमोऽत्थु ते सिद्धबुद्धणीरयसमणसामाहिअ-समत्तसमजोगि-सल्लगत्तण-णिब्भय-णीरागदोस-णिम्मम-णिस्संग-णीसल्ल-माणमूरण-गुणरयणसीलसागर-मणंत-मप्पमेयभविअ-धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी णमोऽत्थु ते [6]अरहओत्तिकट्टु एवं वंदइ णमंसइ, २ त्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे जाव पज्जुवासइ।।५८।।

---

१. द्र. ३। ४५१।। २. सण्हेहिं सतेहिं - इति ३। १२ सूत्रे।। ३. लिहित्ता - V ।। ४. कयग्गहियक° V । कयग्गाह° त्रिब।।
५. कुसुम - संचतस्स - आव.चू. पृ. १४९।। ६.अरहओ णमोत्थु ते भगवओ त्ति कट्टु - अबपुवृ.।।

'तए णं से अच्चुइंदे' इत्यादि सर्वं प्राग्वद्व्याख्येयमेवं' **'जाव कप्परूक्खगंपिव अलंकियविभूसियं करेति'** इह यावत्करणात् 'सरसेणं गोसीस-चंदणेणं गाताइं अणुलिंपइ 'इत्यादि सर्वं सूत्रं सव्याख्यानं यथा भरताभिषेकाधिकारे प्राक् प्रतिपादितं तथात्रापि वाच्यं ग्रन्थभूयस्त्वभयान्न भूयोऽभिधीयते **'अच्छेहिं सण्हेहि'** मित्यादि प्राग्व्याख्यातमपि भूयः किंञ्चिद् व्याख्यायते, अच्छैः-स्वभावेन निर्मलैः श्लक्ष्णै-मसृणैः रजतमयैः **'अच्छरसातंदुलेहिं'** ति अच्छो रसो येषु तेऽच्छरसाः प्रत्यासन्नवस्तुप्रतिबिम्बाधारभूता इवातिनिर्मला इत्यर्थः अच्छरसाश्च ते तन्दुलाश्चाच्छरस-तन्दुलास्तैर्दिव्यतन्दुलैरित्यर्थः पूर्वपदस्य दीर्घान्तता प्राकृतत्वात् **भगवतः स्वामिनः पुरतोऽग्रतोऽष्टावष्टौ मङ्गलकान्यालिखति, तद्यथा 'दप्पणे'** इत्यादि गाथा प्राग्व्याख्यातार्थैव- **'काऊणे'** त्यादि अष्टमङ्गलकान्यालिखितानि कृत्वा **करोत्युपचारमिति** पुष्पोपचारं किंति (किरंति)' त्ति तद्यथा- **पाटलामल्लिकाचम्पकाशोकपुन्नागचूतमञ्जरी नवमालिकाबकुलतिलककण वीरकुन्दकुब्जककोरेंटकपत्रदमनकवरसुरभिसुगन्धगन्धिकस्य कचग्रहगृहीतकरतल प्रभ्रष्टविमुक्तस्य दशार्द्धवर्णस्य कुसुमनिकरस्य तत्र** जिनस्याग्रे **चित्रं जानूत्सेधप्रमाणमात्रं 'ओहनियरं'** ति ओघेन-सामान्येन निकरं-पुञ्जमोघनिकरं करोति कृत्वा **'चंदप्पभे'** त्यादि **चन्द्रप्रभरत्नवैडूर्यमयो विमलो दण्डो** यस्य स तथा **काञ्चनमणिरत्नभक्तिचित्रं कालागुरु-प्रवरकंदुरूक्कतुरुक्कसत्केन धूपेनोत्तमगन्धेनानुविद्धा** या सा तथा प्राकृतत्वात्पदव्यत्ययस्तां **धूपवर्त्तिं विर्निमुञ्चन्तं वैडूर्यमयं धूपकडुच्छुकं प्रगृह्य प्रयत्नेन धूपं दत्त्वा जिनेन्द्राय सप्ताष्टौपदानि पश्चादपसृत्य दशाङ्गुलिकमञ्जलिं कृत्वा मस्तके प्रयतः** सन् **अट्ठसयविसुद्धगंथजुत्तेहि** मित्यादि विशुद्धो निर्मलो लक्षणदोषरहित इति भाव एष **'संस्तौति' वामंजाणु** मित्यादि प्राग्वत् **'एवं वयासी'** ति एवमवादीत् **'नमोत्थु ते सिद्धे** इत्यादि नमोस्तु ते नमस्कारोऽस्तु ते तुभ्यं सिद्धादीनि सम्बोधनान्तानि पदानि ततो हे **सिद्ध**

कृतार्थ! हे बुद्ध केवलज्ञानेनावगतसमस्तवस्तुतत्त्व! हे **नीरज**:! बध्यमानकर्मरहित! अथवा हे नीरय! निर्गतोत्सुका! हे **श्रमण** तपस्विन् **'श्रमूच् खेदतपसो'** रिति वचनात्, शमयति वा क्रोधानलमिति शमन: सह मनसा वा प्रस्तावात्प्रशस्तेन वर्त्तते य: स समनास्तत: सर्वत्र समबोधनान्ततां वाच्या हे **समाहित**! समाधियुक्त! **'समत्तसमजोगि'** त्ति समस्तेषु सर्वेष्वपि प्राणिषु समा रागद्वेषरहिता योगा मनोवाक्कायलक्षणा यस्य स तथा तस्यामन्त्रणं हे समस्तसमयोगिन्! यदिवा समे सर्वेऽहिता: शत्रव: समाप्ता क्षयंगता यस्य तत्तथा तदामन्त्रणं हे समाहितसमाप्त:! क्तान्तस्य परनिपात: प्राकृतत्वात् समयोगिन्निति प्राग्वत् शमेन वा योग: सम्बन्धो यस्य स तथा तदामन्त्रणं हे शमयोगिन्, **हे शल्यकर्त्तन्** मायादिशल्यछेदक! हे **निर्भय**! हे **निरागद्वेष**! हे **निर्मम** इति व्यक्तं हे **निस्सङ्ग**! सुहृत्सुतयोषिद्धन-धान्यरजतहेमादिसकलसमबन्धविकल! हे **नि:शल्य**! हे **मानमूरण**! सर्वगर्वोद्दलन! हे **गुणरत्नशीलसागर**! हे **अनन्त**! अनन्त ज्ञानात्मकत्वादनन्तस्तस्यामन्त्रणं हे अनन्त! मकार: प्राकृतशैल्या हे **अप्रमेय**! प्राकृतज्ञानापरिछेद्य! अशरीर जीवस्वरूपस्य छद्मस्थै: परिछेत्तुमशक्यत्वादिति हे **भव्य धर्मवर चातुरन्तचक्रवर्त्तिन्निति** स्पष्टं **नमोस्तु तेऽर्हते** नमोस्तु ते भगवते **'इति कट्टु'** इति कृत्वा **'वंदेइ नमंसेइ'** इत्यादि प्राग्वत् ।।५८।।

(५९) एवं जहा अच्चुअस्स तहा जाव ईसाणस्स भाणिअव्वं, एवं भवणवइवाणमंतर-जोइसिआ य सूरपज्जवसाणा सएणं २ परिवारेणं पत्तेअं २ अभिसिंचंति।।५९।।

'एवं जहा अच्चुयस्से' त्यादि, एवं यथाच्युतेन्द्रस्य नाम्ना भगवज्जन्माभिषेकवर्णनं प्रोक्तं **तथा** पश्चानुपूर्व्या **यावदीशानस्य** नाम्ना **भणितव्यं**, तथा **'भवणपति वाणमंतर जोइसिय'** त्ति भवनपत्यादीनामिन्द्रा: **सूर्यपर्यवसाना: स्वकीयेन स्वकीयेन परिवारेण** सहिता: **प्रत्येकं प्रत्येकमभिषिञ्चन्ति** प्राग्वदेव भगवन्तमिति गम्यं,।।५९।। पञ्चशक्रवर्जै: सर्वैरपीन्द्रैर्जिनाभिषेके कृते सर्वान्ते च शक्रेन तस्मिन् विधीयमाने ईशानेन्द्र: किं करोतीत्याह-

(६०) तए णं से ईसाणे देविंदे देवराया पञ्च ईसाणे विउव्वइ, २ त्ता एगे ईसाणे भगवं तित्थयरं करयलसंपुडेणं[१] गिण्हइ, २ त्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे, एगे ईसाणे पिट्ठओ आयवत्तं धरेइ, दुवे ईसाणा उभओ पासिं चामरुक्खेवं करेंति, एगे ईसाणे पुरओ सूलपाणी चिट्ठइ।।६०।।

'तए णं से ईसाणे देविंदे देवराया पञ्च ईसाणे विउव्वतिं इत्यादि प्रकटार्थम्।।६०।।

(६१) [२]तए णं से सक्के देविंदे देवराया आभिओगे देवे सद्दावेइ, २ त्ता एसोवि [३]तह चेव अभिसेआणत्तिं देइ तेऽवि तह चेव उवर्णेति।।६१।।

'तए णं से सक्के' इत्यादि ततः स शक्रो **देवेन्द्रो देवराज अभियोग्यान् देवान् शद्धयति शद्धयित्वैषोऽपि** शक्रस्तथैवाच्युतेन्द्रप्रकारेणेवाभिषेकाज्ञप्तिं **ददाति,** तेऽप्याभियोगिकास्तथैव प्राग्वदेवोपनयन्ति अभिषेकसामग्रीमुपस्थापयन्तीति भावः।।६१।।

(६२) तए णं से सक्के देविंदे देवराया भगवओ तित्थयरस्स चउद्दिसिं चत्तारि धवलवसभे विउव्वेइ, सेए [४]संखतलविमलनिम्मलदधिघणगोखीरफेणरयणिगर-प्पगासे पासाईए दरसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।।६२।।

'तए ण' मित्यादि, ततोऽभिषेकसामग्रीसम्पादनान्तरं **स शक्रो देवेन्द्रो देवराजो भगवतस्तीर्थकस्य चतुर्दिशि चतुरो धवलवृषभान् विकुर्वति,** किं विशिष्टानित्याह-**श्वेतान्** शूचान् श्वेतत्वमेवोपमया दर्शयति **'संखतले'** त्यादि प्राग्वद्व्याख्येयम्।।६२।।

(६३) तए णं तेसिं चउण्हं धवलवसभाणं [५]अट्ठहिं सिंगेहिंतो अट्ठ तोअधाराओ

---

१. °लपु° V ।। २. एतत् ६१ तम सूत्रं - अब नास्ति।। ३. द्र. ५।५४ - ५५।। ४. ०दल० संखदलसन्निगासे - आव चू. पृ. १५०।। ४. अट्ठसु - अकखत्रिबस ।।

णिग्गच्छंति।।६३।।

'तए णं तेसिं' मित्यादि. ततस्तेषां चतुर्णां धवलवृषभाणामष्टभ्यः शृङ्गेभ्य एकैकस्माच्छृङ्गदेकैकस्यास्तोयधारायाविनिर्गमादष्टौ तोयधारा वारिधारा निर्गच्छन्ति।।६३।।

(६४) तए णं ताओ अट्ठ तोअधाराओ उड्ढं वेहासं उप्पयंति, २ त्ता एगओ मिलायंति, २ त्ता भगवओ तित्थयरस्स मुद्धाणंसि निवयंति।।६४।।

ततस्ता अष्टौ तोयधारां ऊर्ध्वं विहायसि आकाशे उत्पतन्ति-ऊर्ध्वं गच्छन्ति उत्पत्यैकत्र मिलन्ति मिलित्वा भगवतस्तीर्थकरस्य मूर्ध्नि निपतन्ति।।६४।।

(६५) तए णं से सक्के देविंदे देवराया चउरासीईए सामाणिअसाहस्सीहिं एअस्सवि तहेव अभिसेओ भाणिअव्वो [1]जाव णमोऽत्थु ते अरहओत्ति कट्टु वंदइ णमंसइ जाव पज्जुवासइ ।।६५।।

(६६) तए णं से सक्के देविंदे देवराया पंच सक्के विउव्वइ, २ त्ता एगे सक्के भयवं तित्थयरं करयलपुडेणं गिण्हइ, एगे सक्के पिट्ठओ आयवत्तं धरेइ, दुवे सक्का उभओ पासिं चामरुक्खेवं करेंति, एगे सक्के वज्जपाणी पुरओ पगड्ढइ।।६६।।

(६७) तए णं से सक्के चउरासीईए सामाणिअसाहस्सीहिं [2]जाव अण्णेहि अ बहूहिं भवणवइ वाणमंतर जोइस वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि अ सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए [3]जाव णाइअरवेणं ताए उक्किट्ठाए जेणेव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणणयरे जेणेव जम्मणभवणे जेणेव तित्थयरमाया तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता भगवं तित्थयरं माऊए पासे ठवेइ, २ त्ता तित्थयरपडिरूवगं पडिसाहरइ, २ त्ता ओसोवणिं पडिसाहरइ, २ त्ता एगं

---

१. द्र. ५।५६-५८।। २. द्र. २।९०।। ३. द्र. ३।१२।।

महं खोमजुअलं कुंडलजुअलं च भगवओ तित्थयरस्स [1]उस्सीसगमूले ठवेइ, २ त्ता एगं महं सिरिदामगंडं तवणिज्जलंबूसगं सुवण्णपयरगमंडिअं णाणामणिरयण-विविहहारद्धहारउवसोहिअसमुदयं भगवओ तित्थयरस्स उल्लोअंसि निक्खिवइ तण्णं भगवं तित्थयरे अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणे २ सुहंसुहेणं अभिरममाणे २ चिट्ठइ।।६७।।

तए णं से सक्के' इत्यादि, सुगमं यावदवस्वापणी निद्रां **प्रतिसंहरति 'एगं महक्खोमजुयलमित्यादि** एकं महत्क्षौमयुगलं च **भगवतस्तीर्थकरस्योच्छीर्षकमूले स्थापयन्ति एकं महत् श्रीदामकाण्डं तपनीयमयलम्बूसकं** तपनीयमयझुम्बनकसहितं **सुवर्णप्रतरकमण्डितं नानामणिरत्नविविधहारार्द्धहारसमुदयोपशोभितं** पदव्यत्ययार्षत्वाद् **भगवतस्तीर्थकरस्योल्लोके** दृष्टिनिपातनिमित्तं **निक्षिपति 'जं णं'** ति यच्छ्रीदामकाण्डकं णमिति प्राग्वत्, **भगवांस्तीर्थकरोऽनिमिषया दृष्ट्या 'देहमाणे'** त्ति पश्यन् पश्यन् **सुखं सुखेनाभिरममाणस्तिष्ठति।।६७।।**

(६८) तए णं से सक्के देविंदे देवराया वेसमणं देवं सद्दावेइ, २ त्ता एवं वदासी-''खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! बत्तीसं हिरण्णकोडीओ, बत्तीसं सुवण्णकोडीओ बत्तीसं णंदाइं बत्तीसं भद्दाइं सुभगे [2]सुभगरूवजुव्वणगुणलावण्णे अ भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणंसि साहराहि, २ त्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि।।६८।।

'तए णं से सक्के' इत्यादि, ततः स शक्रो **देवेन्द्रो देवराजो वैश्रमणं** धनदं देवं शब्दयति शब्दयित्वेवमवादीत्क्षिप्रमेव भो देवानुप्रिय! द्वात्रिंशतं हिरण्यकोटी द्वात्रिंशतं सुवर्णकोटीर्द्वात्रिंशतं नन्दानि द्वार्तिशतं भद्राणि द्वेऽप्यासनविशेषौ तथा **सुभागसौभाग्यरूपयौवनगुणलावण्यानि च भगवतस्तीर्थकरस्य जन्मभवने संहर**

१. ऊसी° अब।। २. सोभग्गं° V ।।

समानय संहृत्यैतामाज्ञाप्तिं प्रत्यर्पय सफलीकृत्य निवेदय।।६८।।

(६९) तए णं से वेसमणे देवे सक्केणं [1]जाव विणएणं वयणं पडिसुणेइ, २ त्ता जंभए देवे सद्दावेइ, २ त्ता एवं वदासि-''खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! बत्तीसं हिरण्णकोडीओ जाव भगवओ तित्थयरस्स जम्मणभवणंसि साहरह, साहरित्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणह''।।६९।।

(७०) तए णं ते जंभगा देवा वेसमणेणं देवेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ [2]जाव खिप्पामेव बत्तीसं हिरण्णकोडीओ जाव च भगवओ तित्थगरस्स जम्मणभवणंसि साहरंति, २ त्ता जेणेव वेसमणे देवे तेणेव जाव पच्चप्पिणंति।।७०।।

(७१) तए णं से वेसमणे देवे जेणेव सक्के देविंदे देवराया जाव पच्चप्पिणइ।।७१।।

ततः सः वैश्रमणो देवः 'सक्केण जाव' त्ति इह यावत्करणात् 'देविंदे देवरण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठ तुट्ठे' त्यादि दृश्यं विनयेन वचनमिन्द्र सत्कंश्रृणोत्यङ्गीकरोति प्रतिश्रृत्य जृम्भकान् देवान् शद्बयति शद्बयित्वैवमवादीत् 'खिप्पामेवे त्यादि कण्ठ्यं तएणं से सक्के आभियोगे देवे' इत्यादि।।७१।।

(७२) तए णं से सक्के देविंदे देवराया ३ अभिओगे देवे सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी-''खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! भगवओ तित्थयरस्स जम्मणणयरंसि सिंघाडगजाव-महापहपहेसु महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणा २ एवं वदह–हंदि सुणंतु भवंतो बहवे भवणवइ वाणमंतरजोइसवेमाणिया देवा या देवीओ अ जे णं देवाणुप्पिआ! तित्थयरस्स तित्थयरमाऊए वा असुभं मणं पधारेइ तस्स णं अज्जगमंजरिआ इव [3]सयधा मुद्धाणं फुट्टउत्तिकट्टु घोसणं घोसेह, २ त्ता एअमाणत्तिअं

---

१. द्र. ५।२३।। २. द्र. ३।८।। ३. सत्तहा - अत्रिबसपुवृ - हीवृ.। सतहा - V ।।

पच्चप्पिणह''।।७२।।

ततः स शक्र आभियोगिकान् देवान् शब्दयति शब्दयित्वैवमवादीत् क्षिप्रमेव भो देवानुप्रियाः! भगवतस्तीर्थकरस्य जन्मनगरे शृङ्गाटकयावन्महापथपथेषु महता महत्ता शब्देनोद्घोषयन्त उद्घोषयन्त एवं वदत हन्देत्यादि हंते' ति हर्षे शृण्वन्तु भवन्तो! भवनपतिव्यन्तर ज्योतिष्क वैमानिकादेवादेव्यश्च' जे णं ति यो देवानुप्रियाः! तीर्थकरस्य तीर्थकरमातु र्वोपरीति गम्यमशुभं मनः प्रधारयति' तस्सण मिति प्राग्वत्, आर्यकमञ्जरीव सप्तधा मूर्द्धा स्कुटत्विति कृत्वा 'घोसणं घोसेहं त्ति घोषणां कुरुत एनामाज्ञप्तिं प्रत्यर्पयत।।७२।।

(७३) तए णं ते आभिओगा देवा जाव एवं [1]देवोत्ति आणाए पडिसुणंति, २ त्ता सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतिआओ पडिणिक्खमंति, २ त्ता खिप्पामेव भगवओ तित्थगरस्स जम्मणणगरंसि सिंघाडग जाव एवं वयासी–''हंदि सुणंतु भवंतो बहवे भवणवइ जाव जे णं देवाणुप्पिआ! तित्थयरस्स जाव फुट्टिहीति'' त्तिकट्टु घोसणं घोसंति, २ त्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणंति।।७३।।

'तएणं ते अभियोगा देवा' इत्यादि स्पष्टम्-

(७४) तए णं ते बहवे भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिआ देवा भगवओ तित्थगरस्स जम्मणमहिमं करेंति, २ त्ता जेणेव णंदीसरदीवे तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता अट्ठाहियाओ महामहिमाओ करेंति, २ त्ता जामेव दिसिं पाउब्भूआ तामेव दिसिं पडिगया ।।७४।।

'तए णं ते बहवे' इत्यादि, ततस्ते बहवो भवनपति-वानमन्तर-ज्योतिष्क-वैमानिका देवा भगवतस्तीर्थकरस्य जन्ममहिमां कुर्वन्ति कृत्वा यत्रैव नन्दीश्वरो द्वीपस्तत्रैवोपागच्छन्ति उपागत्याष्टहिका महामहिमाः कुर्वन्ति कृत्वा 'जामेव दिसि'

---

१. ५।२३।।

मित्यादि यामेव दिशमवलम्ब्य किमुक्तं भवति यतो दिशः सकाशान्प्रादुर्भूताः प्रकटीभूता नन्दीश्वरद्वीपे समागतास्तामेव दिशं प्रतिगताः स्वस्वस्थानं जग्मुरिति भावः, इत्युक्ता जम्बूद्वीपादिभाविजिनजन्मकृत्यवक्तव्यता सम्प्रति क्षेत्राधिकारादेवेदमाह-जम्बूद्वीपे द्वीप केवइया महद्दहा पण्णत्ता' इत्यादि जम्बूद्वीपे द्वीपे कियन्तो महाह्रदाः प्रज्ञप्ताः? भगवानाह-गौतम! षोडश महाह्रदाः प्रज्ञप्तास्तत्र षट् पद्मादयो ह्रदा दश च नीलवदाधाः शीताशीतोदाविद्धा उत्तर कुरु देवकुरूमध्यवर्त्तिनि इत्येवं षोडश महाह्रदाः।।७४।।

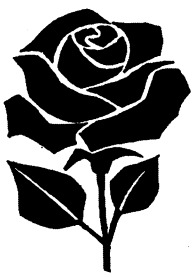

अथ षष्ठ वक्षस्कार:

(१) जंबुद्दीवस्स णं भंते! दीवस्स पदेसा लवणसमुद्दं पुट्ठा?, हंता पुट्ठा।।१।।

'जंबुद्दीवस्स पदेसा' इत्यादि जम्बूद्वीपस्य णमिति प्राग्वत् **भदन्त! द्वीपस्य प्रदेशा:** स्वसीमागतचरमरूपा **लवणाब्धिं स्पृष्टा:** कर्त्तरिक्तप्रत्यय: स्पृष्टवन्त: काक्वा पाठ इति प्रश्नार्थत्वादवगति: पृच्छतश्चायमभिप्रायो यदि स्पृष्टास्तर्हि' वक्ष्यामाणं पृच्छ्यते नो चेत्तर्हि नेति भाव: स्वाम्याह' **'हंते'** त्यादि हन्तेति प्रत्यवधारणे **स्पृष्टा,** ।।१।।

एवमुक्ते भूय: पृच्छति-

(२) ते णं भंते! किं जंबुद्दीवे दीवे लवणसमुद्दे?, गोअमा? जंबुद्दीवे णं दीवे णो खलु लवणसमुद्दे।।२।।

'ते ण' मित्यादि, भो **भदन्त**! स्वसीमागतचरमरूपा: प्रदेशा: **किं जम्बूद्वीपो द्वीप**: ? किं वा **लवणसमुद्र**: ? इह यद्येन स्पृष्टं तत्किञ्चित्तद्व्यपदेशमस्तु वा तमुपलब्धं यथा सुराष्ट्रेभ्य: सङ्क्रान्तो मागधदेशं मागध इति किञ्चित्पुर्न तद्व्यपदेशभाक् यथा तर्जन्या संस्पृष्टां ज्येष्ठाङ्गुलि र्ज्येष्ठेवेति, इहापि जम्बूद्वीपचरमप्रदेशा लवणाब्धिं स्पृष्टवन्तस्ततो व्यपदेशचिन्तायां संशय इति प्रश्नं स्वाम्याह **गौतम! जम्बूद्वीप एव** णमिति निपातस्यावधारणार्थत्वात् ते चरमप्रदेशा जम्बूद्वीपो जम्बूद्वीपसीमवर्त्तित्वात्, **न खलु** ते जम्बूद्वीपचरमप्रदेशा जम्बूद्वीपसीमानमतिक्रम्य लवणसमुद्रसीमानमुपगता: किन्तु स्वसीमां गता एव लवणसमुद्रं स्पृष्टवन्तस्तेन तटस्थतया संस्पर्शभावात्, तर्जन्या स्पृष्टा ज्येष्ठाङ्गुलिरिव ते स्वव्यपदेशं भजन्ते न व्यपदेशान्तरं, तथा चाह नो खलु ते जम्बूद्वीप चरम प्रदेशा **लवणसमुद्र**:।।२।।

(३) एवं लवणसमुद्दस्सवि पएसा जंबुद्दीव दीवे पुट्ठा [१]भाणिअव्वा।।३।।

'एवं लवण समुद्दस्स वि पएसा' इत्यादि, एवं लवणसमुद्रस्यापि प्रदेशा **जम्बूद्वीपं द्वीपं** स्पृष्टा इत्यादि सर्वं **भणितव्यं** यावन्नो **'खलु ते जंबुद्दीवे'** इति।।३।।

(४) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे जीवा उद्दाइत्ता २ लवणसमुद्दे पच्चायंति?, गोयमा अत्थेगइआ पच्चायंति, अत्थेगइआ नो पच्चायंति।।४।।

जंबूद्दीपे णं भंते' इत्यादि जम्बूद्वीपे भदन्त! **द्वीपे** ये **जीवास्ते 'उद्दाइत्ता'** इति अवद्रायावद्राय मृत्वा मृत्वा **लवणसमुद्रे प्रत्यायान्ति**-आगच्छन्ति? भगवानाह-**गौतम**! अस्तीति निपातोऽत्र बहुवर्थ: सन्त्येकका जीवा ये अवद्रायावद्राय लवणसमुद्रं **प्रत्यायान्ति** सन्त्येकका ये **न प्रत्यायान्ति** जीवानां तथा स्वस्वकर्मवशतया गतिवैचित्र्यसम्भवात्।।४।।

(५) एवं लवणस्सवि जंबुद्दीवे दीवे [२]णेअव्वं।।५।।

'एवं लवणसमुद्दस्स वि जंबूद्दीवे णेयव्व' मिति, एवममुनैव प्रकारेण लवणसमुद्रस्यापि जीवा किं जम्बूद्वीपे प्रत्यायान्ति न वेत्यादि सर्वं ज्ञेयं तच्चैवं 'लवणसमुद्दे णं भंते समुद्दे जीवा उदाइत्ता २ जंबूद्दीवे पच्चायंति? गो० अत्थेगइया पच्चायंति अत्थेगइया नो पच्चायंति' इति व्याख्या व्यक्ता।।५।।

अथ जम्बूद्वीपमाश्रित्य वक्ष्यमाणार्थविशेषाणां संग्रहणि गाथामाह -

(६) ''खंडा १ जोअण २ वासा ३ पव्वय ४ कूडा ५ य तित्थ ६ सेढीओ।
७ विजय ८ द्दह ९ सलिलाओ य १० पिंडए होइ संगहणी।।१।।''६।।

खंडा जोयणवासा 'इत्यादि **'खंड'** त्ति जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रप्रमाणानि कियन्ति खण्डानि स्यात्? **'जोयण'** त्ति जम्बूद्वीप: कियन्ति योजनप्रमाणानि खण्डानि स्यात् गणितपदेन? **'वास'**

१. द्र. जीवा. ३।५७३ - ७४।। २. द्र. जीवा. ३।५७६।।

त्ति जम्बूद्वीपे इति सर्वत्र ज्ञेयं वर्षाणि वाच्यानि? **'पव्वय'** त्ति पर्वता: **कूटानि 'तित्थ'** तीर्थानि मागधादीनि **'सेढीओ'** त्ति श्रेणयो विद्याधरसत्का अभियोगिकसत्त्काश्च **'विजय'** त्ति चक्रवर्त्तिविजेतव्या: क्षेत्रविशेषा: उपलक्षणाद् राजधानीगुहादयश्च **'दह'** त्ति ह्रदा: सलिलमस्यास्तीति **सलिला** नद्योऽर्श आदित्वादप्रत्यक्ष: **'पिण्ड़ए होइ संगहणी'** ति पिण्डके खण्डादि समुदाये वा ये इयं सङ्ग्रहणीगाथा भवतीति भाव:।।१।६।।

सम्प्रति सङ्ग्रहणिगाथोक्त क्रमेणैव खण्डादीनां सङ्ख्यां पिपृच्छिषुरिदमाह-

(७) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे भरहप्पमाणमेत्तेहिं खंडेहिं केवइअं खंडगणिएणं पं०? गो०! णउअं खंडसयं खंडगणिएणं पण्णत्ते।।७।।

'जंबुद्दीवे णं भंते दीवे' इत्यादि जम्बूद्वीपो भदन्त! द्वीपो **भरतप्रमाणमात्रैर्भरतक्षेत्रतुल्य-परिमाणै: खण्डै: 'केवइयं'** ति कियान् **खंडगणितेन प्रज्ञप्त:**? भगवानाह-**गौतम! नवत्यधिकं खण्डशतं खण्डगणितेन प्रज्ञप्त:**, इह खण्डानां प्रमाणादि सर्वं **बृहत्क्षेत्रसमासटीकात:** प्रत्येतव्यं विस्तरभिया नात्र प्रपञ्च्यते।।७।।

(८) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइअं [१]जोअणगणिएणं पण्णत्ते?, गोअमा!

सत्तेव य कोडिसया णउआ छप्पण्ण सयसहस्साइं।
चउणवइं च सहस्सा सयं दिवड्ढं च गणिअपयं।।१।।८।।

'जंबुद्दीव' इत्यादि जम्बूद्वीपो भदन्त! **द्वीप: कियान् योजनगणितेन प्रज्ञप्त:**? भगवानाह-**गौतम!** **'सत्तवे य कोडिसया'** इत्यादि **सप्तकोटीशतानि नवत्यधिकानि षट्पञ्चाशतसहस्राणि लक्षाश्चतुर्नवतिश्च सहस्राणि शतं द्व्यर्द्धं च सार्धयोजनानां** च शब्दात् पादोनक्रोशद्वयं सार्द्धद्वाषष्टिहस्ताश्च ७९०५६९४१५० क्रोश १, १/३ हस्ता:

---

१. °णभाइएणं - अब ।

६२/१/२ एतद्गणितपदं जम्बूद्वीपस्य, किमुक्तं भवति? जम्बूद्वीपे योजनप्रमाणान्येतावन्ति चतुरस्राणि खण्डानि यथोक्तसङ्ख्यगव्यूताद्यधिकानि ४ भवतीति। इह गणितपदसङ्ख्यापरिज्ञानार्थं गणितपदकरणं **क्षेत्रसमासादृश्यते**-तद्यथा-" **विक्खंभपायगुणिओ परिरओ तस्स गणियपयं**" विष्कम्भपादो विस्तारचतुर्थांशस्तेन परिरयो गुण्यते गणितपदं भवति तच्च जम्बूद्वीपस्यैव दर्श्यते, यथा जम्बूद्वीपस्य परिधिर्लक्षत्रयं षोडशसहस्राणि द्वे शते सप्तविंशत्यधिके योजनानां ३१६२२७ विष्कम्भपादः पञ्चविंशति सहस्राणि २५००० तेन परिधिर्गुण्यते जातं सप्तको नवक शून्यं पञ्चकः षट्कः सप्तकः पञ्चकः शून्यत्रयं चेति ७९०५६७५००० तथा क्रोशत्रयस्य पञ्चविंशतिसहस्रगुणने जातं पञ्चसप्ततिक्रोशसहस्राणि ७५००० तथाष्टाविंशत्यधिकशतरूपस्य घनराशेः पञ्चविंशतिसहस्रगुणने जातं द्वात्रिंशद्धनुर्लक्षाणि ३२००००० तथाङ्गुलत्रयोदशस्यापि पञ्चविंशतिसहस्रगुणाने जातं त्रीणि लक्षाणि पञ्चविंशतिसहस्राण्यङ्गुलानां ३२५००० तथार्द्धाङ्गुलस्य पञ्चविंशतिसहस्रगुणने जातं सार्द्धद्वादशसहस्राण्यङ्गुलानां १२५०० मिति स्थापना -

जम्बूद्वीपस्यपरिधि	विष्कम्भपादगुणने	जात	
३१६२२७	२५०००	७९०५६७५०००	योजनानि
३	२५०००	७५०००	क्रोशाः
१२८	२५०००	३२०००००	धनुषः
३	२५०००	३२५०००	अङ्गुलानि
$^{१}/_{२}$	२५०००	१२५००	अर्द्धाङ्गुला

ततः क्रोशराशेश्चतुर्भिभागे कृते लब्धानि योजनान्यष्टादशसहस्राणि सप्तशतानि पञ्चाशदधिकानि १८७५० ततो धनुराशेरप्यष्टसहस्रे भागे लब्धानि योजनानि चत्वारि

शतानि, उभयमीलने जातमेकोनविंशतिसहस्राण्येकं शतं पञ्चाशदधिकं १९१५० तच्च मूल योजनराशौ क्षिप्यते जातं सप्तकोटिशतानि नवतिश्च कोटयः षट्पञ्चाशल्लक्षाश्चतुर्णवतिसहस्राणि शतमेकं सार्द्धं चेति ७९०५६९४१५० ततोऽङ्गुलोर्द्धाऽङ्गुलोभयराशिमीलने जातं ३३७५००० तस्य षण्णवत्या भागे हृते लब्धानि धनूंषि पञ्चत्रिंशच्छतानि पञ्चदशाधिकानि शेषाऽङ्गुलषष्टिश्च ३५१५ शेषाऽङ्गुल ६० तेषां मध्यात् पञ्चत्रिंशच्छतधनुषा जातं पादोनक्रोशद्वयशेषमिदमुद्गिरति पञ्चदशधनूंषि षष्ट्यङ्गुलानि च, तेषां हस्ताः क्रियन्ते जातं धनुषां षष्टिहस्ताः अङ्गुलानां सार्द्धहस्तद्वयमिति जाता हस्तानां सार्द्धा द्वाषष्टिः ६२ $^{१}/_{२}$ एवं जम्बूद्वीपस्य गणितपदं सूत्रोक्तं भवतीति इषुजीवादीनां विचारः **क्षेत्रसमासटीकातः** परीभावनीयः।।८।।

(९) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे कति वासा पण्णत्ता?, गोअमा! सत्त वासा पण्णत्ता तंजहा–भरहे एरवए, [१]हेमवए, हिरण्णवए, हरिवासे, रम्मगवासे, महाविदेहे।।९।।

'जंबूद्दीवेण' मित्यादि जम्बूद्वीपे **भदन्त! द्वीपे कति वर्षाणि प्रज्ञप्तानि?** भगवानाह- **गौतम! सप्तवर्षाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-भरत १ मैरवतं २ हैमवन्तं ३ हैरण्यवन्तं ४ हरिवर्षं ५ रम्यकं ६ महाविदेहं ७** चेति उक्तं च-**"भरहेरवयति दुगं दुगं च हेमवयरन्नवयरूवं। हरिवासरम्मय दुगं मझि विदेह त्ति सग वासा"**।।१।।, एतेषां च स्वरूपं प्रागेवाभ्यधायि।।९।।

(१०) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइआ वासहरा पण्णत्ता? केवइआ मंदरा पव्वया पण्णत्ता? केवइआ चित्तकूडा? केवइआ विचित्तकूडा? केवइया [२]जमगपव्वया? केवइआ कंचणगपव्वया? केवइआ वक्खारा? केवइआ दीहवेअड्ढा? केवइआ वट्टवेअड्ढा पण्णत्ता? गोअमा! जंबुद्दीवे, छ वासहरपव्वया, एगे मंदरे पव्वए, एगे

१. एर°- अकखत्रिब।। २. जवग ° अब, एवमग्रेऽपि।।

चित्तकूडे, एगे विचित्तकूडे, दो जमगपव्वया, दो कंचणगपव्वयसया, वीसं वक्खारपव्वया, चोत्तीसं दीहवेअड्ढा, चत्तारि वट्टवेअड्ढा, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे दुण्णि अउणत्तरा पव्वयसया भवंतीतिमक्खायं।।१०।।

'जम्बूद्वीवेणं भंते दीवे केवइया वासहरपव्वया' इत्यादीनि नवापि प्रष्टव्यानि कण्ठ्यानि। भगवानाह-गौतम! **जम्बूद्वीपे जम्बूद्वीपे षट् वर्षधरपर्वता** हिमवदादयो यदुक्तं- **"हिमंव १ सिहरी २ महहिमवं ३ रूप्पि ४ निसढो य ५ नीलवंतो य ६ बाहिरओ दु दु गिरिणो उभओ वि सवेइया सव्वे"** इति **एको मन्दरो** मेरू: सुदर्शनाभिध: **एकश्चित्रकूट: एको विचित्रकूट** एतौ च द्वावपि देवकुरुषु व्यवस्थितौ ज्ञेयौ **द्वौ यमक पर्वतावेतौ** चोत्तरकुरुषु ज्ञेयौ द्वेशते काञ्चनगिरय: एते च शीता शीतोदयोरूभयपार्श्वर्त्तिनी **विंशतिवक्षस्कारपर्वतास्तत्र** षोडश चित्रकूटादयो महाविदेहवर्त्तिनश्चत्वारश्च गजदन्तगिरय उभयमीलने विंशतिर्वक्षस्कारगिरयो भवन्तीति चतुस्त्रिंशद्दीर्घवैताढ्यास्ते चैव द्वात्रिंशद्विजयेषु व्यवस्थिता: द्वौ च भरतैरावतयो: सर्वमीलने **चतुस्त्रिंशद्दीर्घवैताढ्या** भवन्तीति, **चत्वारो वृतवैताढ्या:** शद्वापाति प्रमुखा: **'एवमेवे'** त्यादि एवेमवानेनैव प्रकारेण **सपूर्वापरेण** पूर्वापरसमुदायेनेत्यर्थ: **जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वेशते एकोनसप्तत्यधिके पर्वता भवन्तीत्ति आख्यातं** मया शेषैश्च तीर्थकृद्भिरिति भाव:।।१०।।

(११) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइआ वासहरकूडा? केवइआ वक्खारकूडा? केवइआ वेअड्ढकूडा? केवइआ मंदरकूडा पं०?, गो०! छप्पण्णं वासहरकूडा, छण्णउइं वक्खारकूडा तिण्णि छलुत्तरा वेअड्ढकूडसया, नव मंदरकूडा पण्णत्ता, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे चत्तारि सत्तट्ठा कूडसया भवंतीतिमक्खायं।।११।।

'जंबूद्दीवे ण' मित्यादि **जम्बूद्वीपे द्वीपे कियन्ति वर्षधरकूटानि कियन्ति वक्षस्कारकूटानि कियन्ति वैताढ्यकूटानि कियन्ति मन्दरकूटानि प्रज्ञप्तानि?** भगवानाह-

गौतम! षट्पञ्चाशद्वर्षधरकूटानि षण्णवतिर्वक्षस्कारकूटानि त्रीणि शतानि षडुत्तराणि वैताढ्यकूटानि चतुस्त्रिंशद्वैताढ्येषु नव नव कूटसद्भावात् नव मन्दरकूटानि, एवमेव सूपर्वापरेण-पूर्वापरसमुदायेन **जम्बूद्वीपे द्वीपे 'चत्तारि सत्तट्ठा कूड सय'** त्ति चत्वारि शतानि सप्तषष्ट्यधिकानि कूटानि **भवन्तीति आख्यातानि** मयाऽन्यैश्चार्हद्भिरिति।।११।।

(१२) जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे भरहे वासे कति तित्था पं० ?, गो० ! तओ तित्था पं०, तं०–मागहे, वरदामे पभासे।।१२।।

'जंबूद्दीवे' इत्यादि जम्बूद्वीपे **द्वीपे भारते वर्षे कति तीर्थानि प्रज्ञप्तानि ?** स्वाम्याह-**गौतम! त्रीणि तीर्थानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-मागधं १ वरदामं २ प्रभासम् ३।।१२।।**

(१३) जंबुद्दीवे २ एरवए वासे कति तित्था पं० ?, गो० ! तओ तित्था पं० तं०–मागहे, वरदामे, पभासे एवामेव सपुव्वावरेणं।।१३।।

'जंबुद्दीवे' इत्यादि, जम्बूद्वीपे **द्वीपे ऐरावते वर्षे कति तीर्थानि प्रज्ञप्तानि ?** स्वाम्याह-**गौतम! त्रीणि तीर्थानि, तद्यथा मागधं १ वरदामं २ प्रभासम्।।१३।।**

(१४) जंबुद्दी० महाविदेहे वासे एगमेगे चक्कवट्टिविजए कति तित्था पं० ?, गो० तओ तित्था पं०, तं०–मागहे, वरदामे, पभासे, एवामेव सपुव्वावरेणं। जंबुद्दीवे २ एगे बिउत्तरे तित्थसए भवतीतिमक्खायं।

जंबूद्दीवे दीवे महाविदेहे' इत्यादि जम्बूद्वीपे द्वीपे महविदेहे **वर्षे एकैकस्मिंश्चक्रवर्त्ति -विजये कति तीर्थानि प्रज्ञप्तानि ?** भगवानाह-**गौतम! त्रीणि तीर्थानि प्रज्ञप्तानि-तद्यथा-मागधं १ वरदामं २ प्रभासं ३ एवमेव सूपर्वापरेण** पूर्वापरसमुदायेन **'जम्बूद्वीपे एगे बिउत्तरे तित्थसए'** त्ति एकं शतं द्व्युत्तर तीर्थानां **भवतीत्याख्यातं** मया शेषैश्चार्हद्भिरिति।।१४।।

(१५) जंबुद्दीवे णं! दीवे केवइआओ विज्जाहरसेढीओ? केवइआओ आभिओगसेढीओ पं०?, गो०! जंबुद्दीवे दीवे अट्ठसट्ठी विज्जाहरसेढीओ, अट्ठसट्ठी आभिओगसेढीओ पण्णत्ताओ, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे छत्तीसे सेढिसए भवंतीतिमक्खायं।।१५।।

जम्बूद्वीपे द्वीपे कियन्त्यो विद्याधरश्रेण्यः कियन्त्यः आभियोगिकश्रेण्यः प्रज्ञप्ताः? भगवानाह-गौतम! जम्बूद्वीपे द्वीपे अष्टषष्टिर्विद्याधरश्रेण्यः प्रज्ञप्ताः अष्टषष्टिराभियोगिकश्रेण्यः प्रज्ञप्ताश्चतुस्त्रिंशति दीर्घवैताढ्येषु प्रत्येकं द्वयोर्विद्याधरश्रेण्योर्द्वयोराभियोगिकश्रेण्योश्च सद्भावादिति। एवमेव सपूर्वापरेण पूर्वापरसमुदायेन जम्बूद्वीपे 'छत्तीसे सेठिसए' त्ति षट्त्रिंशदधिकशतं श्रेणीना भवतीत्याख्यातम्।।१५।।

(१६) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइआ चक्कवट्टिविजया? केवइआओ रायहाणीओ? केवइआओ तिमिसगुहाओ? केवइआओ खंडप्पवायगुहाओ? केवइआ कयमालया देवा? केवइया णट्टमालया देवा? केवइआ उसभकूडा पव्वया पं०?, गो०! जंबुद्दीवे दीवे चोत्तीसं चक्कवट्टिविजया, चोत्तीसं रायहाणीओ, चोत्तीसं तिमिसगुहाओ, चोत्तीसं खंडप्पवायगुहाओ, चोत्तीसं कयमालया देवा, चोत्तीसं णट्टमालया देवा, चोत्तीसं उसभकूडा पव्वया पं०।।१६।।

'जंबूद्दीव दीवे केवइया चक्कवट्टिविजया' इत्यादि इह चक्रवर्त्तिविजयादीनि सप्तप्रष्टव्यानि सुगमान्येव भगवानाह-गौतम! जम्बूद्वीपे द्वीपे चतुस्त्रिंशच्चक्रवर्त्तिविजयाः द्वात्रिंशन्महाविदेहान्तर्गतो विजया द्वौ च भरतैरावतौ सर्वमीलने भवन्ति चतुस्त्रिंशच्चक्रवर्त्तिविजया इति। प्रतिचक्रवर्त्ति विजयं चैकैकं राजधान्यादि सद्भावाच्चतुस्त्रिंशद्राजधान्यश्चतुस्त्रिंशत्तिमिस्रागुहाश्चतुस्त्रिंशत्खण्डप्रपाता

गुहाश्चतुस्त्रिंशत्कृतमालकास्तिमिस्रगुहाधिपा देवाश्चतुस्त्रिंशन्नृमतमालकाः खण्डप्रपात गुहाधिपा देवाश्चतुस्त्रिंशद्वृषभकूटा यत्र चक्रिणः स्वनाम लिखन्ति।।१६।।

(१७) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइआ महद्दहा पं०?, गोअमा! सोलस महद्दहा पण्णत्ता।।१७।।

'जंबूद्दीवे दीवे केवइया महद्दहा पण्णत्ता' इत्यादि जम्बूद्वीपे द्वीपे कियन्तो महाह्रदाः प्रज्ञप्ताः? भगवानाह-**गौतम! षोडश महाह्रदाः प्रज्ञप्तास्तत्र** षट् पद्मादयो ह्रदा दश च नीलवदाद्याः शीता शीतोदाविद्धाः उत्तरकुरु-देवकुरुमध्यवर्त्तिन इत्येवं षोडश महाह्रदाः।।१७।।

(१८) जंबुद्दीवे णं भंते! केवइआओ महाणईओ वासहरपवहाओ? केवइयाओ महाणईओ कुंडप्पवहाओ पण्णत्ताओ? गोयमा! जंबुद्दीवे दीवे चोद्दस महाणईओ वासहरपवहाओ छावत्तरिं महाणईओ कुंडप्पवहाओ एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे णउइं महाणईओ भवंतीतिमक्खायं।।१८।।

जम्बूद्वीपे द्वीपे कियन्त्यो महानद्यो वर्षधरप्रवहा हिमवदादिवर्षधरप्रभवा इत्यर्थः, **कियन्त्यो महानद्यः कुण्डप्रवहाः कुण्डोद्भवाः**? स्वाम्याह- **गौतम! जम्बूद्वीपे चतुर्दश महानद्यो गङ्गाद्या वर्षधरप्रवहाः षट्सप्ततिर्महानद्यः कुण्डप्रवहास्तत्र** चतुष्षष्टिर्विजयानां महानद्यो द्वादश चान्तरनद्य इत्येवं षट्सप्ततिः **'एवमेवे'** त्यादि, एवमेव **सपूर्वापरेण जम्बूद्वीपे द्वीपे नवति र्महानद्यो भवन्तीत्याख्याताः।।१८।।**

(१९) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे भरहेरवएसु वासेसु कइ महाणईओ पण्णत्ताओ? गोयमा! चत्तारि महाणईओ पण्णत्ताओ, तं०–गंगा, सिंधू, रत्ता, रत्तवई, तत्थ णं एगमेगा महाणई चउद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ,

एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे भरहएरवएसु वासेसु छप्पण्णं सलिलासहस्सा [1]भवंतीतिमक्खायं।।१९।।

अथ भरतादिवर्षेषु नदीसङ्ख्यां प्रश्नयन्नाह-

'जंबूद्दीवे भरहेरवएसु' इत्यादि जम्बूद्वीपे भरतैरावतयोः **कति महानद्यः प्रज्ञप्ताः?** प्रभुराह-**गोतम! चतस्रो महानद्यः प्राप्तास्तद्यथा-गङ्गासिन्धूरक्तारक्तवती तत्र** चतसृषु महानदीषु मध्ये **एकैका महानदी चतुर्दशभिश्चतुर्दशभि र्नदीसहस्रैः समग्रा पूर्वस्यां पश्चिमायां लवणाब्धिं प्रविशति** तत्र गङ्गारक्ते पूर्वाब्धिं सिन्धुरक्तवत्यौ तु पश्चिमाब्धिमिति विवेकः **'एवमेवे'** त्यादि एवमेव **सपूर्वापरेण जम्बूद्वीपे भरतैरावतयो वर्षयोः षट्पञ्चाशत्सलिलासहस्राणि भवन्तीत्याख्यातम्।।१९।।**

(२०) जंबुद्दीवे णं भंते! [2]हेमवयहेरण्णवएसु वासेसु कति महाणईओ पण्णत्ताओ?, गो०! चत्तारि महाणईओ पण्णत्ताओ, तं जहा–रोहिता, रोहिअंसा, सुवण्णकूला, रुप्पकूला, तत्थ णं एगमेगा महाणई अट्ठावीसाए अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे २ हेमवयहेरण्णवएसु वासेसु बारसुत्तरे सलिलासयसहस्से भवंतीतिमक्खायं।।२०।।

'जंबुद्दीवे हेमवएरण्णवएसु वासेसु' इत्यादि, सूत्रसिद्धं एवमेवे त्यादि **एवमेव सपूर्वापरेण जम्बूद्वीपे हैमवतैरण्यवतवर्षयोः 'बारसुत्तरे सलिलासयसहस्से'** त्ति द्वादशोत्तरं नदीलक्षं **भवतीति**।।२०।।

(२१) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे हरिवासरम्मगवासेसु कइ महाणईओ पण्णत्ताओ?, गोयमा! चत्तारि महाणईओ पण्णत्ताओ, तंजहा–हरी, हरिकंता, नरकंता, णारिकंता

---

१. °क्खाया - अकखत्रिबस।। २. हेमवएरण्ण° अकखबत्रिस। एवमग्रेऽपि।।

तत्थ णं एगमेगा महाणई छप्पण्णाए २ सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे २ हरिवासरम्मागवासेसु दो चउवीसा सलिलासयसहस्सा भवंतीतिमक्खायं।।२१।।

'जंबूद्दीवे द्दीवे हरिवासरम्मगवासेसु' इत्यादि सुगमं **'नवरं दो चउवीसा सलिलासयसहस्स'** त्ति चतुर्विंशत्यधिके द्वे सलिलालक्षे इत्यर्थः।। २१।।

(२२) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे महाविदेहे वासे कइ महाणईओ पण्णत्ताओ?, गोयमा! दो महाणईओ पण्णत्ताओ, तं जहा–सीआ य सीओआ य, तत्थ णं एगमेगा महाणई पंचहिं २ सलिलासयसहस्सेहिं बत्तीसाए अ सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ, एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे दस सलिलासयसहस्सा चउसट्ठिं च सलिलासहस्सा भवन्तीतिमक्खायं।।२२।।

जंबुद्दीवे महाविदेहे वासे कति महानदिओ पण्णत्ताओ' इति व्यक्तं, स्वाम्याह- **गौतम! द्वे महानद्यौ प्रज्ञप्ते तद्यथा-शीता शीतोदा** च **तत्र चैकेका महानदी पञ्चभिः सलिलाशतसहस्रै र्द्वाविंशता सलिलासहस्रैश्च समग्रा 'पुरत्थिमपच्चत्थिमं लवणसमुद्दं'** ति शीता पूर्वलवणाब्धिं शीतोदा पश्चिमवलणाब्धिं **प्रविशतीत्यर्थः। 'एवामेवे'** त्यादि एवमेव **पूर्वापरेण** पूर्वापरसमुदायेन **महाविदेहे वर्षे दशसलिलाशतसहस्राणि चतुःषष्टिश्च सहस्राणि** च **भवन्तीत्याख्यातानि** यतश्चतुःषष्ठेर्विजयादीनां द्वादशानामन्तरनदीनां च महानदीषु गणितत्वे मात्र गणनात् प्रागुक्तसङ्ख्या एव महाविदेहे नद्यो भवन्तीति।।२२।।

(२३) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे [1]मंदरस्स पव्वयस्स दक्खिणेणं केवइया सलिलासयसहस्सा पुरत्थिमपच्चत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्दं समप्पेंति?, गो०! एगे छण्णउए सलिलासयसहस्से पुरत्थिमपच्चत्थिमाभिमुहे लवणसमुद्दं समप्पेंति।।२३।।

---

१. मंदि° अब एवमग्रेऽपि।।

'जंबुद्दीवे मंदरपव्वयस्से'त्यादि, जम्बूद्वीपे मन्दरपर्वतस्य दक्षिणतः कियन्ति सलिलाशतसहस्राधिकं यथायोगं पूर्वपश्चिमाभिमुखं लवणसमुद्रं समवाप्नोति? प्रभुराह-गौतम! एक षण्णवतिसलिलाशतसहस्राणि पूर्व-पश्चिमाभिमुखानि लवणसमुद्रं समवाप्नोति।।२३।।

(२४) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं केवइया सलिलासयसहस्सा पुरत्थिमपच्चत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्दं समप्पेंति?, गो०! एगे छण्णउए सलिलासयसहस्से पुरत्थिमपच्चत्थिमाभिमुहे जाव समप्पेइ।।२४।।

'जंबूद्दीवे मंदरपव्वयस्स उत्तरेण' मित्यादि अनन्तरोक्तं सूत्रं च भावनीयम्।।२४।।

(२५) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइआ सलिलासयसहस्सा पुरत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्दं समप्पेंति?, गो०! सत्त सलिलासयसहस्सा अट्ठावीसं च सहस्सा जाव समप्पेंति।।२५।।

'जंबूद्दीवे' इत्यादि जम्बूद्वीपे कियन्ति सलिलाशतसहस्राणि पूर्वाभिमुखानि लवणसमुद्रं प्रविशन्ति? प्रभुराह-गौतम! सप्ततिसलिताशतसहस्राणि अष्टाविंशतिश्च सहस्राणि यावत्समावप्नुवन्ति।।२५।।

(२६) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइआ सलिलासयसहस्सा पच्चत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्दं समप्पेंति?, गोअमा! सत्त सलिलासयसहस्सा अट्ठावीसं च सहस्सा जाव समप्पेंति, एवामेव सपुव्ववावरेणं जंबुद्दीवे दीवे चोद्दस सलिलासयसहस्सा छप्पण्णं च सहस्सा भवंतीतिमक्खायं।।२६।।

'जंबुद्दीवे' इत्यादि, जम्बूद्वीपे कियन्ति सलिलाशतसहस्राणि पश्चिमाभिमुखानि

लवणसमुद्रं प्रविशन्ति? स्वाम्याह-**गौतम! सप्तसलिलाशतसहस्राणि अष्टाविंशतिश्च सहस्राणि यावत् प्रविशन्ति 'एवमेवे'** त्यादि, एवमेव पूर्वोक्तप्रकारेण **सपूर्वापरेण** पूर्वापरसमुदायेन **जम्बूद्वीपे द्वीपे चतुर्दशसलिलाशतसहस्राणि षट्पञ्चाशच्चसहस्राणि भवन्तीत्याख्यातानि** सर्वनदीसङ्ख्यायन्त्रकं चेदम् -

गङ्गादीनां चतसृणां परिकरः	५६०००
रोहितांशदीनां चतसृणां परिकरः	११२०००
हरिकान्तादीनां चतसृणां परिकरः	२२४०००
शीताशीतोदयोः परिकरः	१०६४०००
सर्वेषामेकीकरणेन जातं	१४५६०००

एताः परिकरनद्यो नवतिश्चान्या नद्यः, उक्तं च-**"अडसयरि महानईओ बारस अंतरनईओ सेसाओ परियरनईओ चउदस लक्ख छप्पन्नसहस्सा य"**।। इति, इत्थं व्याख्यातानि सङ्ग्रहणि गाथोक्तानि द्वाराणि।। २६।।

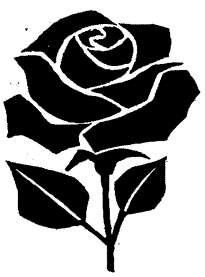

१. सोभं - मु. कखत्रिपस नास्ति।।

अथ सप्तम वक्षस्कारः

अथ जम्बूद्वीपगत चन्द्रादिसंख्याप्रतिपादनार्थमाह-

(१) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे कइ चंदा पभासिंसु पभासंति पभासिस्संति? कइ सूरिआ तवइंसु तवेंति तविस्संति? केवइया णक्खत्ता जोगं जोइंसु जोअंति जोइस्संति? केवइआ महग्गहा चारं चरिंसु चरंति चरिस्संति? केवइआओ तारागणकोडाकोडीओ [१]सोभं सोभिंसु सोभंति सोभिस्संति?, गोअमा! दो चंदा पभासिंसु ३, दो सूरिआ तवइंसु ३, छप्पण्णं णक्खत्ता जोगं जोइंसु ३, छावत्तरं महग्गहसयं चारं चरिंसु ३,

'एगं च सयसहस्सं, तेत्तीसं खलु भवे सहस्साइं।
णव य सया पण्णासा, तारागणकोडिकोडीणं।।१।।१।।

'जंबुद्दीवे णं भंते दीवे 'इत्यादि जम्बूद्वीपे णमिति वाक्यालङ्कारे भदन्त! द्वीपे **कति चन्द्राः प्रभासितवन्तः प्रभासन्ति प्रभासिष्यन्ते? कति सूर्यास्तापितवन्तस्तापयन्ति तापयिष्यन्ति? कियन्ति नक्षत्राणि योगं युक्तवन्ति युञ्जन्ति योक्ष्यन्ति? कियन्तो महाग्रहाश्चारं चरितवन्त -चरन्तिश्चरिष्यन्ति च कियन्त्यस्तारागणकोटिकोट्यः शोभितवन्त्यः शोभन्ते शोभिष्यन्ते? स्वाम्याह-गौतम! जम्बूद्वीपे द्वौ चन्द्रौ प्रभासितवन्तौ प्रभासेते प्रभासिष्येते,** द्रव्यास्तिकनयमतेन सकलकालमेवंविधाया जगत्स्थितेः सद्भावात्तथा **द्वौ सूर्यौ तापितवन्तौ तापयतस्तापयिष्यतस्तथैकैकस्य** शशिनोऽष्टाविंशति र्नक्षत्राणिपरिवारो **जम्बूद्वीपे च द्वौ शशिनौ** ततः **षट्पञ्चाशन्नक्षत्राणि** जम्बूद्वीपे चन्द्रसूर्याभ्यां **योगं युक्तवन्ति युञ्जन्ति योक्ष्यन्ति** तथैवैकैकस्य शशिनोऽष्टाशीतिर्ग्रहाःपरिवारस्ततः शशिद्वयसत्कग्रहमीलने सर्वसङ्ख्यया

---

१. सोभं - मु. कखत्रिपस नास्ति।

षट्सप्तत्यधिकं ग्रहशतं भवति तज्जम्बूद्वीपे **चारं चरितवत् चरति चरिष्यति** तथा चोक्तं दो चंदा **"दो सूरा नक्खत्ता खलु हवंति छप्पन्ना। छावत्तरं गहसयं जंबूद्दीवे वियारीए"**। ति तथैकैकस्य शशिनस्तारापरिवार: कोटीकोटीनां षट्षष्टि: सहस्राणि नवशतानि पञ्चसप्तत्यधिकानि जम्बूद्वीपे च द्वौ शशिनौ तत एतत्ताराप्रमाणं द्वाभ्यां गुणितं यावद्भवति तावद्गाथया प्राह -**एगं च सयसहस्सं तेत्तीसं खलु भवे सहस्साइं। नव य सया पण्णसा तारागण कोडिकोडीणं।।१।।** एकं शत सहस्रं लक्षं त्रयस्त्रिंशत् सहस्राणि नवशतानि पञ्चाशदधिकानि १३३९५० तारागणकोटिकोटीनां भवन्तीति गाथार्थ:। एतावत्प्रमाणास्तारा **जम्बूद्वीपे शोभितवन्त्य: शोभन्ते शोभिष्यन्त** इति।।१।।

अथ प्रथमतो बहुवक्तव्यत्वात्सूर्यवारप्ररूपणामभिधित्सु: सूर्यमण्डलवक्तव्यतामाह-

(२) कइ णं भंते! सूरमंडला पण्णत्ता?, गोअमा! एगे चउरासीए मंडलसए पण्णत्ते।।२।।

'कइ णं भंते' इत्यादि, कति भदन्त! **सूर्यमण्डलानि प्रज्ञप्तानि** प्रभुराह-**गौतम! एगे चउरासीए मंडलसए'** त्ति एकं शतं चतुरशीत्यधिकं सूर्यमण्डलानां प्रज्ञप्तम्।।२।।

अथैतानि कियन्ति कियन्ति सन्तीति पृच्छन्नाह-

(३-४) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइअं ओगाहित्ता केवइआ सूरमंडला पण्णत्ता?, गोअमा! जंबुद्दीवे २ असीअं जोअणसयं ओगाहित्ता एत्थ णं पण्णट्ठी सूरमंडला पण्णत्ता, लवणे णं भंते! समुद्दे केवइअं ओगाहित्ता केवइआ सूरमंडला पण्णत्ता ?, गोअमा! लवणे णं समुद्दे तिण्णि तीसे जोअणसए ओगाहित्ता एत्थ णं एगूणवीसे सूरमंडलसए पण्णत्ते, एवमेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे लवणे अ समुद्दे एगे चुलसीए सूरमंडलसए भवतीति अक्खायंति१।।३-४।।

'जंबुद्दीवे णं' मित्यादि, जम्बूद्वीपे **भदन्त! द्वीपे कियदवगाह्य कियन्ति सूर्यमण्डलानि**

प्रज्ञप्तानि? स्वाम्याह-**गौतम! जम्बूद्वीपे द्वीपेऽशीत्यधिकं]योजन शतमवगाह्य 'एत्थ णं'** ति अत्रान्तरे **पञ्चषष्टि: सूर्यमण्डलानि प्रज्ञप्तानि,** अत्र चैवं 'वृद्धवादो' यथा मेरो: पूर्वतो निषधमूर्द्धनि त्रिषष्टिर्मण्डलानि, हरिवर्ष**जीवा** कोट्यां च द्वे तथा मेरोरपरतोऽपि नीलवत्पर्वते त्रिषष्टि:, रम्यक जीवा कोट्यां च द्वे इति। **'लवणे णं भंते'** इत्यादि, लवणे भदन्त! **समुद्रे कियन्ति सूर्यमण्डलानि प्रज्ञप्तानि**?, स्वाम्याह-**गौतम! लवणे समुद्रे त्रीणि योजनशतानि त्रिंशदधिकान्यवगाह्यात्रैकोनविंशत्यधिकं मण्डलशतं प्रज्ञप्तं 'एवमेवे'** त्यादि एवमेव **पूर्वापरेण** पूर्वापरमण्डलमीलनेन **जम्बूद्वीपे द्वीपे लवणे च समुद्रे एकं चतुरशीत्यधिकं मण्डल शतं भवतीत्याख्यातं** मया शैषेश्च जिनैरिति, इह चन्द्रयोस्सूर्ययो र्वा दक्षिणोत्तरायणे कुर्व्वतो: प्रतिदिनं भूमिक्षेत्रलक्षणानि निजबिम्बप्रमाणविष्कम्भानि मण्डलान्युच्यन्ते तेषां चान्तरालसहितानां सामान्येन क्षेत्र विष्कम्भमानं योजनानां पञ्चशतानि दशाधिकानि अष्टचत्वारिंशच्चैकषष्टि र्भागा योजनस्य ५१० ४८/६१ तथाहि-सूर्यस्य चतुरशीत्यधिकशतमण्डलानामन्तराणि त्र्यशीत्यधिकं शतमेषां च विष्कम्भमानं द्वे द्वे योजने अतस्ते त्र्यशीत्यधिकशतेन गुण्येते जातानि त्रीणि योजनशतानि षट् षष्ट्यधिकानि ३६६ चैव सूर्यमण्डलविष्कम्भसम्बन्धिनोऽष्टचत्वारिंशदेकषष्टिभागास्ते चतुरशीत्यधिकशतेन गुण्यन्ते जातान्यष्टाशीति शतानि द्वात्रिंशदधिकानि ८८३२ तेषां योजनान्यनयनार्थमेकषष्ट्या भागे कृते लब्धं चतुश्चत्वारिंशं योजन-शतमष्टाचत्वारिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य १४४, ४८/६१ एतत्पूर्वराशौ प्रक्षिप्यते जातं यथोक्तं क्षेत्रमानं यदातु सर्वाभ्यन्तरान्मण्डलात्परतो यावत् सर्वबाह्यमण्डलपर्यन्त: सर्व बाह्याद्वा मण्डलादर्वाक् यावत्सर्वाभ्यन्तरमण्डलान्त इत्यर्थ चारस्याध्वा चिन्त्यते तदा पूर्णानि पञ्चयोजनशतानि दशोत्तराणि तथाहि-यदि सूर्यस्यैकेनाहोरात्रेण द्वे योजने एकस्य च योजनस्याष्टाचत्वारिंशदेकषष्टिभागाश्चारक्षेत्रं लभ्यते ततस्त्र्यशीत्यधिकेनाहोरात्रशतेन किं लभ्यते? राशित्रय स्थापना। १-२ ४८/६१ - १८३

अत्र सवर्णनार्थं द्वयोर्योजनयोरेकषष्ट्या गुणने १२२ उपरितनाष्टाचत्वारिंशद्भागप्रक्षेपे च जातं सप्तत्यधिकं शतं १७० एतदन्त्यराशिना [त्र्य] शीत्यधिकशतेन गुण्यते जातान्येकत्रिंशत्सहस्राणि शतमेकं दशोत्तरं ३१११० ततोऽस्य राशे योजनानयनार्थमेकषष्ट्या भागे हृते लब्धानि पञ्चयोजनशतानि दशोत्तराणि ५१० एतावती सूर्यस्य विष्कम्भक्षेत्रकाष्टा। कृतं प्रसङ्गेन।।३-४।।

अथ प्रकृतमनुसराम-

(५) सव्वब्भंतराओ णं भंते! सूरमंडलाओ [1]केवइयं अबाहाए सव्वबाहिरए सूरमंडले पं०?, गोयमा! पंचदसुत्तरे जोअणसए अबाहाए सव्वबाहिरए सूरमंडले पण्णत्ते २।।५।।

'सव्वब्भंतराओ ण' मित्यादि **सर्वाभ्यन्तराद्भदन्त! सूर्य मण्डलात् कियदबाधया** कियदपान्तरालं मुक्त्वा **सर्व बाह्यं सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तं?**, भगवानाह-**गौतम! पञ्चयोजनशतानि दशोत्तराणि अबाधया सर्वबाह्यसूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तमे**तत्प्रमाणमाद्यमन्त्यं वा मण्डलं विहाय प्रत्येयं तच्चेतदन्तर्गण्यते तदा मण्डलसत्का अष्टचत्वारिंशद्भागाः समधिकाः स्युरेत्तच्च प्रागेव भावितमिति।।५।।

सम्प्रति सूर्यमण्डलानां परस्परमन्तरं प्रतिपादयिषुरिदमाह-

(६) सूरमंडलस्स णं भंते! सूरमंडलस्स य केवइयं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ?, गोअमा! [2]दो दो जोअणाइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ३।।६।।

'सूरमंडलस्य णं भंते' इत्यादि सूर्यमण्डलस्य भदन्त! **सूर्यमण्डलस्य कियदबाधयान्तरं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! द्वे २ योजनेऽबाधयान्तरं प्रज्ञप्त्।।६।।**

---

१. जे. १, जे.२। केवइयाए - मु.। एवमग्रेऽपि।। २. दो - मु. पशावृ नास्ति एवमग्रेऽपि।।

अथ सूर्यमण्डलस्य प्रमाणं पृच्छन्नाह-

(७) सूरमंडले णं भंते! केवइअं आयामविक्खंभेणं केवइअं परिक्खेवेणं केवइअं बाहल्लेणं पण्णत्ते?, गोअमा! अडयालीसं एगसट्ठिभाए जोअणस्स आयाम- विक्खंभेणं, तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं, चउवीसं एगसट्ठिभाए जोअणस्स बाहल्लेणं पण्णत्ते इति४।।७।।

'सूरमंडलेणं भंते' इत्यादि सूर्यमण्डलं भदन्त! **कियदायाम-विष्कम्भाभ्यां** तदेवायाम-विष्कम्भमानं त्रिगुणं सविशेषं परिक्षेपेण-परिरयेणं चतुर्विंशतिमेकषष्टिभागान् योजनस्य बाहल्येन।।७।।

सम्प्रति मन्दरान्मण्डलाबाधाबोद्धुकाम इदमाह-

(८) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयं अबाहाए सव्वब्भंतरे सूरमंडले पण्णत्ते?, गोअमा! चोआलीसं जोअणसहस्साइं अट्ठ य वीसे जोअणसइ अबाहाए सव्वब्भंतरे सूरमंडले पण्णत्ते।।८।।

'जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्से' त्यादि जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य **पर्वतस्य कियद्बाधया** कियदपान्तरालं मुक्त्वा **सर्वाभ्यन्तरं मण्डलं प्रज्ञप्तम्?** प्रभुराह-**गौतम! चतुश्चत्वारिंशद्योजनसहस्राणि अष्टौ च योजनशतानि विंशत्यधिकानि अबाधया सर्वाभ्यन्तरं सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तं,** तथाहि-सर्वाभ्यन्तरमण्डलं सर्वतो जम्बूद्वीपेऽशीत्यधिकं योजनशतमवगाह्य व्यवस्थितं तत एकतोऽप्यशीत्यधिकं योजनशतं जम्बूद्वीपविष्कम्भ परिमाणाद्योजनलक्षरूपादपनीयतेऽपरतोऽपितत: स्थितानि शेषाणि योजनानां नवनवतिसहस्राणि षट् च शतानि चत्वारिंशदधिकानि ९९६४० मेरुविष्कम्भश्च दशयोजन सहस्रप्रमाणो यद्यपि च नाम मण्डलसमश्रेणिमेरो र्विष्कम्भो दशयोजनसहस्रप्रमाणात्मको न

लभ्यते किन्तूनस्तथापि धरणितले दशयोजनसहस्रप्रमाणात्मकः प्राप्यत इति। तत्रापि स तावान् व्यवहारतो विवक्ष्यते ततो मेरुगतानि दशयोजनसहस्राणि पूर्वराशेरपनीयन्ते जातः पूर्वराशि र्नवाशीतिसहस्राणि षट्शतानि चत्वारिंशदधिकानि एतेषामर्द्धे लब्धानि चतुश्चत्वारिंशत्सहस्राणि अष्टौ शतानि विंशत्यधिकानि ४४८२० एतावन्मेरोः सर्वाभ्यन्तरमण्डलस्य चान्तरम्।।८।।

(९) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइअबाहाए [1]अब्भंतराणंतरे सूरमंडले पण्णत्ते?, गो० ! चोआलीसं जोअणसहस्साइं अट्ठ य बावीसे जोअणसए [2]अडयालीसं च एगसट्ठिभागे जोअणस्स अबाहाए अब्भंतराणंतरे सूरमंडले प०।।९।।

जंबुद्दीवेण' मित्यादि, जम्बूद्वीपे **द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य कियदबाधयाभ्यन्तरानन्तरं द्वितीयं सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तम्?**, प्रभुराह-**गौतम! चतुश्चत्वारिंशद्योजनसहस्राण्यष्टौ च योजनशतानि द्वाविंशत्यधिकानि अष्टचत्वारिंशतं चैकषष्टिभागान् योजनस्य ४४८२२ ४८/६१ अबाधयाऽभ्यन्तरानन्तरं सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तम्।।९।।**

(१०) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयं अबाहाए अब्भंतरतच्चे सूरमंडले पण्णत्ते,?, गो० ! चोआलीसं जोअणसहस्साइं अट्ठ य पणवीसे जोअणसए पणतीसं च एगसट्ठिभागे जोअणस्स अबाहाए अब्भंतरतच्चे सूरमंडले पण्णत्ते, एवं खलु एतेणं उवाएणं णिक्खममाणे सूरिए तयणंतराओ[3] मंडलाओ तयणंतरं मंडलं संकममाणे २ दो दो जोअणाइं अडयालीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगमेगे मंडले अबाहावुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।१०।।

'जंबूद्दीवे ण' मित्यादि जम्बूद्वीपे **द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य कियदबाधयाभ्यन्तरं तृतीयं सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तम्?, स्वाम्याह-गौतम! चतुश्चत्वारिंशद्योजनसहस्राण्यष्टौ योजनशतानि**

१. सव्वब्भं - मु. त्रि प.।। २. एगट्ठि° अकखबस । एवमग्रेऽपि।। ३. तदणंतराओ तदणंतरं मंडलाओ मंडलं - अकखत्रिबस, एवमग्रेऽपि।।

पञ्चविंशत्यधिकानि पञ्चत्रिंशच्चैकषष्टिभागान् योजनस्य ४४८२५ ३५/६१ एवं प्रतिमण्डलं द्वे योजनेऽष्टचत्वारिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य परिवर्द्धमानाः परिवर्द्धमानास्तावद्वक्तव्या यावत्सर्वबाह्यं मण्डलमेतदेव दर्शयति, एवंखल्वित्यादि, एवमुक्तप्रकारेण **खलु** निश्चितमेतेनोपायेन **निष्क्रमन् द्वे द्वे योजनेऽष्टचत्वारिंशतं चैकषष्टि भागान् योजनस्यैकैकस्मिन् मण्डलेऽबाधावृद्धिमभिवर्द्धयन्नभिवर्द्धयन् सर्वबाह्यं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति,।।१०।।**

एतच्च मेरोः कियत्याऽबाधया स्थितमित्याह–

(११) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयं अबाहाए सव्वबाहिरे सूरमंडले प०?, गो०! पणयालीसं जोअणसहस्साइं तिण्णि अ तीसे जोअणसए अबाहाए सव्वबाहिरे सूरमंडले प०।।११।।

'जंबुद्दीवे ण' मित्यादि, **जम्बूद्वीपे [द्वीपे] मन्दरस्यय पर्वतस्य कियत्याबाधया सर्व बाह्यं सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तम्?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चचत्वारिंशद्योजनसहस्राणि त्रीणि च योजनशतानि त्रिंशदधिकानि ४५३३० अबाधया सर्वबाह्यं सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तम्।।११।।**

(१२) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयं अबाहाए [1]बाहिराणंतरे सूरमंडले पण्णत्ते?, गोअमा! पणयालीसं जोअणसहस्साइं तिण्णि अ सत्तावीसे जोअणसए तेरस य एगसट्ठिभाए जोअणस्स अबाहाए बाहिराणंतरे सूरमंडले पण्णत्ते।।१२।।

'जंबुद्दीवे' इत्यादि, जम्बूद्वीपे **मन्दरस्य पर्वतस्य कियदबाधया सर्वबाह्यानन्तरं**

१. सव्वबा°।।

सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तम्? स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चचत्वारिंशद्योजनसहस्राणि त्रीणि च योजनशतानि सप्तविंशत्यधिकानि त्रयोदश चैकषष्टिभागान् योजनस्य** ४५३२७ १३/६१ **अबाधया सर्वबाह्यनन्तरं** सर्वबाह्यादर्वाक्तनं द्वितीयं **सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तम्**।।१२।।

(१३) जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयं अबाहाए बाहिरतच्चे सूरमंडले पण्णत्ते?, गो०! पणयालीसं जोअणसहस्साइं तिण्णि अ चउवीसे जोअणसए छव्वीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स अबाहाए बाहिरतच्चे सूरमंडले पण्णत्ते, एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे सूरिए तयणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे संकममाणे दो दो जोअणाइं अडयालीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगे मंडले अबाहावुड्ढिं [1]णिवड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइं ५।।१३।।

'जंबुद्दीवे' इत्यादि, जम्बूद्वीपे **मन्दरात्किय्दबाधया 'बाहिरतच्चं'** ति सर्वबाह्यान् मण्डलादर्वाक्तनं तृतीयं **सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तम्?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चचत्वारिंशं योजनसहस्राणि त्रीणि य योजनशतानि चतुर्विंशत्यधिकानि षड्विंशति चैकषष्टिभागान् योजनस्य ४५३२४ २६/६१ अबाधया बाह्यं तृतीयं सूर्यमण्डलं प्रज्ञप्तम् एवं खलु 'एएण'** मित्यादि एवमुक्तनीत्या खल्वेतेनानन्तरोदितेनोपायेन **प्रविशन् सूर्यस्तदनन्तरान्मण्डलात्तदनन्तरं मण्डलं सङ्क्रामन् द्वे द्वे योजनेऽष्टाचत्वारिंशतं चैकषष्टिभागान् योजनस्याबाधावृद्धिं प्रागुक्तां 'निव्विड्ढमाणे'** त्ति [2]निवेष्टयन्निवेष्टयन्-हापयन् **सर्वाभ्यन्तरं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति**। इत्युक्ता मेरुमधिकृत्य प्रतिमण्डलमबाधाप्ररूपणा।।१३।।

साम्प्रतं मण्डलानामायामविष्कम्भादिस्वरूपं निरूपयन्नाह–

---

१. णिवुड्ढे° अकखपबस।। निवर्द्धयन् २ इदं समवायाङ्गवृत्त्यानुसारेण ... निवर्द्धयन् २ इदं स्थानाङ्गवृत्त्यानुसारेण ...सूर्यप्रज्ञाप्तिवृत्तौ तु निवेष्टयन्.... इति शा. वृ.।।

(१४) जंबुद्दीवे दीवे सव्वब्भंतरे णं भंते! सूरमंडले केवइअं आयामविक्खंभेणं केवइअं परिक्खेवेणं पण्णते?, गो०! णवणउइं जोअणसहस्साइं छच्च चत्ताले जोअणसए आयामविक्खंभेणं, तिण्णि य जोअणसयसहस्साइं पण्णरस य जोअणसहस्साइं एगूणणउइं च जोअणाइं किंचिविसेसाहियाइं[१] परिक्खेवेणं।।१४।।

'सव्वंब्भंतरेण' मित्यादि, सर्वाभ्यन्तरं **भदन्त! सूर्यमण्डलं कियत्प्रमाणमायाम-विष्कम्भाभ्यां कियत्परिक्षेपेण परिरयेण प्रज्ञप्तम्**? प्रभुराह-**गौतम! नवनवतिं योजनसहस्राणि षट्शतानि चत्वारिंशदधिकानि** ९९६४० **आयाम-विष्कम्भाभ्यां** तथा ह्येकतोऽपि सर्वाभ्यन्तरमण्डलमशीत्यधिकं योजनशतं जम्बूद्वीपमवगाह्य स्थितमपरतोऽपि ततोऽशीत्यधिकं योजनशतं द्वाभ्यां गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि षष्ट्यधिकानि ३६० एतानि जम्बूद्वीपविष्कम्भपरिमाणाल्लक्षरूपाच्छोध्यन्ते ततो यथोक्तमायाम विष्कम्भपरिमाणं भवति **त्रीणि योजनशतसहस्राणि पञ्चदशयोजनसहस्राणि एकोननवतिं च योजनानि किञ्चिद्विशेषाधिकानि परिक्षेपेण** ३१५०८९ तथा चोक्तं **ज्योतिष्करण्डके**।

''तिन्ने व सयसहस्सा पण्णरसय होंति जोयण सहस्सा।
अउणा नउइ परिरओ अब्भिंतरमंडले रविणो।।"

एष च परिरयो 'विक्खंभवग्गदहगुणे' त्यादिना करणेन स्वयमानेतव्य: **सूर्यप्रज्ञप्टिटीकातो** वाऽवसेयो ग्रन्थगहनताभावान्नेहोक्तो यदिवा-यदेकतोऽपि जम्बूद्वीपविष्कम्भादशीत्यधिकयोजनशतमपरतोऽपि तेषां त्रयाणां शतानां षष्ट्यधिकानां परिरयपरिमाणमेकादशशतान्यष्टाविंशत्यधिकानि ११२८ तानि जम्बूद्वीपपरिरयाच्छोध्यन्ते ततो यथोक्तं सर्वाभ्यन्तर -मण्डलस्य परिरयपरिमाणं भवति।।१४।।

(१५) अब्भंतराणंतरे णं भंते! सूरमंडले केवइअं आयामविक्खंभेणं, केवइअं

१. ०हिए-अकखित्रबस।।

परिक्खेवेणं पण्णत्ते?, गोअमा! णवणउइं जोअणसहस्साइं छच्च पणयाले जोअणसए पणतीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स आयामविक्खंभेणं, तिण्णिय जोअणसयसहस्साइं पण्णरस य जोअणसहस्साइं एगं च सत्तुत्तरं जोअणसयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते ।।१५।।

'अब्भंतराणंतरे णं भंते' इत्यादि, अभ्यन्तरानन्तरं द्वितीयमित्यर्थः भदन्त! **सूर्यमण्डलं कियदायामविष्कम्भेन कियत्परिक्षेपेण प्रज्ञप्तम्**? स्वाम्याह-**नवनवतिं योजनसहस्राणि षट् च योजनशतानि पञ्चचत्वारिंशदधिकानि पञ्चत्रिंशतं चैकषष्टिभागान् योजनस्यायामविष्कभाभ्यां** ९९६५४ ३५/६१ तथाह्येकतोऽपि सर्वाभ्यन्तरानन्तरमण्डलगतानष्टचत्वारिंशत्संख्याकान् एकषष्टिभागान् द्वे च योजनेऽपान्तराले विमुच्य स्थितमपरतोऽपि ततः पञ्चयोजनानि पञ्चत्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य पूर्वमण्डल विष्कम्भादस्य मण्डलस्यविष्कम्भे परिवर्द्धते तथा **त्रीणि योजनशतसहस्राणि पञ्चदंश च सहस्राणि एकं च योजनशतं सप्तोत्तरं परिक्षेपेण परिरयेण प्रज्ञप्तम्** ३१५१०७ तथाहि पूर्वमण्डलविष्कम्भादस्य मण्डलस्य विष्कम्भे पञ्चयोजनानि पञ्चत्रिंशच्चैकैषष्टिभागा योजनस्य परिवर्द्धन्ते पञ्चानां योजनानां पञ्चत्रिंशच्चैकषष्टिभागाधिकानां परिरयः सप्तदशयोजनान्यष्टत्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य समधिका एतन्निश्चयनयमतेन परं सूत्रकृता व्यवहारनयमवलम्ब्य परिपूर्णान्यष्टादशयोजनानि विवक्षितानि व्यवहारनयमतेन हि लोके किञ्चिदूनमपि परिपूर्णं विवक्ष्यते, ततः पूर्वमण्डलपरिरयराशौ अष्टादशयोजनान्यधिकत्वेन प्रक्षिप्यन्ते तदा यथोक्तं द्वितीयमण्डलपरिरयपरिमाणं भवतीति।।१५।।

(१६) अब्भंतरतच्चे णं भंते! सूरमंडले केवइअं आयाम-विक्खंभेणं, केवइअं परिक्खेवेणं प० ?, गो० ! णवणउइं जोअणसहस्साइं छच्च एकावण्णे जोअणसए णव य एगसट्ठिभाए जोअणस्स आयाम-विक्खंभेणं, तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइं

पण्णरस जोअणसहस्साइं एगं च पणवीसं जोअणसयं परिक्खेवेणं, एवं खलु एतेणं उवाएणं णिक्खममाणे सूरिए तयणंतराओ मंडलाओ तयणंतरं मंडलं संकममाणे २ पंच पंच जोअणाइं पणतीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगमेगे मंडले विक्खंभवुड्ढिं अभिवड्ढमाणे २ अट्ठारस २ जोअणाइं परिरयवुड्ढिं अभिवड्ढमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।१६।।

'अब्भितरतच्चे ण' मित्यादि अभ्यन्तरतृतीयं, **भदन्त! सूर्यमण्डलं कियदायाम विष्कम्भेन कियत्परिक्षेपेण प्रज्ञप्तम्?** स्वाम्याह-**गौतम! नवनवतियोजनसहस्राणि षट् च योजनशतान्येकपञ्चाशद-धिकानि नव चैकषष्टिभागा योजनस्य** ९९६५१ ९/६१ **आयाम विष्कम्भेन** तथाहि प्रागिव चात्रापि पूर्वमण्डलविष्कम्भायामपरिमाणात् पञ्चयोजनानि पञ्चत्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्याधिकत्वेन प्राप्यन्ते ततो यथोक्तमायामविष्कम्भपरिमाणं भवति। तथा **त्रीणि योजनशतसहस्राणि पञ्चदश च योजन सहस्राण्येकं च योजनशतं पञ्चविंशं पञ्चविंशत्यधिकं परिक्षेपेण प्रज्ञप्तम**त्रापि निश्चयव्यवहारनयाभ्यां भावना प्राग्वद्विधेया। **'एवं खल्वि'** त्यादि एवमुक्तप्रकारेण खलु निश्चितमतिनोपायेन प्रत्यहोरात्रमेकैकमण्डलमोचनरूपेणनिष्क्रामन् सूर्यस्तदनन्तरान्मण्डलात्तदनन्तरं मण्डलं सङ्क्रामन् सङक्रामनेकैकस्मिन्मण्डले पञ्च पञ्च योजनानि पञ्चत्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्येत्येवं परिमाणं विष्कम्भवृद्धिमभिवर्द्धयन्नभिवर्द्धयन्नेकैकस्मिन्नेव मण्डलेऽष्टादशाष्टा दशयोजनानि परिरयवृद्धिमभिवर्द्धयन्नभिवर्द्धयन्नि -हाष्टादशाष्टादशेति व्यवहारत उक्तं, निश्चयनयमतेन तु सप्तदश सप्तदश योजनानि अष्टत्रिंशतं चैकषष्टि भागान् योजनस्येति द्रष्टव्यमेतच्च प्रागेव भावितं। न चैतत्स्वमनीषिकाविजृम्भितं यत उक्तं तद्विचारप्रक्रमे एव करणं विभावनीयं **'सत्तरस जोयणाइं अट्ठतीसं च एगट्ठिभागा १७ ३८/६१ एयं निच्छएणं संववहारेणं पुण अट्ठारस जोयणाइं'** इति। प्रथम षण्मासपर्यवसान-

भूतेऽशीत्यधिकशततमेऽहोरात्रे सर्वबाह्यं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।।१६।।

अथ सर्वबाह्यमण्डलमायामादिभिः परिज्ञातुं प्रश्नमाह–

(१७) सव्वबाहिरए णं भंते! सूरमंडले केवइअं आयाम-विक्खंभेणं, केवइअं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?, गो०! एगं जोयणसयसहस्सं छच्च सट्ठे जोअणसए आयाम-विक्खंभेणं, तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइं अट्ठारस य सहस्साइं तिण्णि अ पण्णरसुत्तरे जोअणसए परिक्खेवेणं,।।१७।।

'सव्वबाहिरएणं भंते' इत्यादि सर्वबाह्यं भदन्त! **सूर्यमण्डलं कियत् प्रमाणमायाम-विष्कम्भाभ्यां कियत्परिक्षेपेण प्रज्ञप्तम्?** स्वाम्याह-**गौतम! एकं योजन शतसहस्रं षट्शतानि षष्ट्यधिकानि** १००६६० **आयामविष्कम्भेन,** तथा हि सर्वाभ्यन्तरा न्मण्डलात्परतः सर्वबाह्यं मण्डलं पर्यवसानीकृत्य त्र्यशीत्यधिकं मण्डलशतं भवति। मण्डले मण्डले च विष्कम्भं परिवर्द्धन्ते पञ्च पञ्च योजनानि पञ्चत्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य ततः पञ्चयोजनानि त्र्यशीत्यधिकेन शतेन गुण्यन्ते। जातानि नवशतानि पञ्चदशोत्तराणि ९१५। येऽपि च पञ्चत्रिंशदेकषष्टिभागा योजनस्य तेऽपि त्र्यशीत्यधिकेन शतेन गुण्यन्ते जातानि चतुःषष्टिशतानि पञ्चोत्तराणि ६४०५। तेषामेकषष्ट्या भागे हृते लब्धं पञ्चोत्तरं योजन शतं १०५, एतत्पूर्वस्मिन् राशौ प्रक्षिप्यते जातानि दश शतानि विंशत्यधिकानि १०२०। एतानि सर्वाभ्यन्तरमण्डलविष्कम्भायामपरिमाणेऽधिकत्वेन प्रक्षिप्यन्ते, ततो यथोक्तं सर्वबाह्यमण्डलगतविष्कम्भायामपरिमाणं भवति। तथा त्रीणि योजनशतसहस्राणि अष्टादशसहस्राणि त्रीणि च योजनशतानि पञ्चदशोत्तराणि ३१८३१५ परिक्षेपेण नवरं पञ्चदशोत्तराणि किञ्चिन्न्यूनानि द्रष्टव्यानि। तथाह्यस्य मण्डलस्य विष्कम्भो योजनलक्षं षट्योजनशतानि षष्ट्यधिकानि १००६६०। अस्य वर्गो विधीयते जात एककः शून्यमेककस्त्रिको द्विकश्चतुष्कस्त्रिकः पञ्चकः षट्को द्वे शून्ये १०१३२४३५६००। ततो

दशभिर्गुणने जातमेकमधिकं शून्यं १०१३२४५६०००। अस्य वर्गो विधीयते, लब्धानि त्रीणि योजनशतसहस्राणि अष्टादशसहस्राणि त्रीणिशतानि चतुर्दशोत्तराणि ३१८३१४ शेषमुद्धरति पञ्चकः पञ्चकस्त्रिकश्चतुष्कः शून्यं चतुष्कः ५५३४०४, छेदराशिः षट्क स्त्रिकः षट्कः षट्को द्विकोऽष्टकः ६३६६२८। तत एतेन पञ्चदशयोजनं किञ्चिदूनं किल लभ्यते इह व्यवहारत सूत्रकृता परिपूर्णं विविक्षित्वा(क्ष्य) पञ्चदशोत्तराणीत्युक्तमथवा मण्डले मण्डले पूर्वपूर्वमण्डलात्परिरयवृद्धौ सप्तदश सप्तदश योजनानि अष्टात्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य लभ्यन्ते। ततः सप्तदशयोजनानि त्र्यशीत्यधिकेन शतेन गुण्यन्ते, जातानि एकत्रिंशच्छतान्येकादशोत्तराणि ३१११। येऽपि चाष्टात्रिंशदेकषष्टिभागास्तेऽपि त्र्यशीत्यधिकेन शतेन गुण्यन्ते, जातान्येकोनसप्तति शतानि चतुष्पञ्चाशदधिकानि ६९५४। तेषां योजनानयनार्थमेकषष्ट्या भागो ह्रियते लब्धं चतुर्दशोत्तरं योजशतं ११४। तच्च पूर्वराशौ प्रक्षिप्यते, जातानि द्वात्रिंशच्छतानि पञ्चविंशत्यधिकानि ३२२५। एतानि सर्वाभ्यन्तर-मण्डलपरिरयपरिमाणे त्रीणिलक्षाणि पञ्चदशसहस्राणि नवाशीत्यधिकानि ३१५०८९ इत्येवं रूपोऽधिकत्वेन प्रक्षिप्यन्ते, जातानि त्रीणिलक्षाणि अष्टादशसहस्राणि त्रीणिशतानि चतुर्दशोत्तराणि ३१८ ३१४। तथा सप्तदशानां योजनानामष्टात्रिंशतश्चैकषष्टिभागानामुपरि यानि त्रीणिशतानि पञ्चसप्तत्यधिकानि ३७५ शेषाण्युद्धरन्ति, तानि त्र्यशीत्यधिकेन शतेन गुण्यन्ते। जातान्यष्टषष्टिसहस्राणि षट्शतानि पञ्चविंशत्यधिकानि ६८६२५। तेषां छेदराशिना पञ्चा शदधिकैकविंशति शतरूपेण २१५० भागो ह्रियते, लब्धा एकत्रिंशदेकषष्टि भागा योजनस्य। शेषं स्तोकत्वात्त्यक्तं, परं व्यवहारतः परिपूर्णं योजनं विवक्षितमिति पञ्चदशोत्तराणीत्युक्तम्।।१७।।

अथ सर्वबाह्यानन्तरमण्डलवक्तव्यतां पिपृच्छिषुरिदमाह-

(१८) बाहिराणंतरे णं भंते! सूरमंडले केवइअं आयाम-विक्खंभेणं, केवइअं

परिक्खेवेणं पण्णत्ते?, गोअमा! एगं जोअणसयसहस्सं छच्च चउपण्णे जोअणसए छव्वीसं च एगसट्ठिभागे जोअणस्स आयाम-विक्खंभेणं, तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइं अट्ठारस य सहस्साइं दोण्णि य सत्ताणउए जोअणसए परिक्खेवेणांति।।१८।।

'बाहिराणंतरे णं भंते सूरमंडले 'इत्यादि बाह्यनन्तरं सर्वबाह्यादर्वाक्तनं द्वितीयं भदन्त! मण्डलं **कीयदायाम-विष्कम्भाभ्यां, कियत्परिक्षेपेण प्रज्ञप्तम्**?, स्वाम्याह **गौतम! एकं योजनशतसहस्रं षट् च योजनशतानि चतुष्पञ्चाशदधिकानि षड्विंशति चैकषष्टिभागान् योजनस्य** १००६५४ २६/६१ **आयामविष्कम्भेन**। तथा ह्येकतोऽपि तन्मण्डलं सर्वबाह्यमण्डलगतानष्टचत्वारिंशतमेकषष्टिभागान् योजनस्यापरे च द्वे योजने विमुच्याभ्यन्तरमवस्थितमपरतोऽपि ततो योजनद्वयस्याष्टाचत्वारिंशतश्चैकषष्टिभागानां द्वाभ्यां गुणने पञ्चयोजनानि पञ्चत्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्येति, एतसर्वं बाह्यमण्डलगतविष्कम्भा यामपरिमाणाच्छोध्यते। ततो यथोक्तमधिकृतमण्डलविष्कम्भायामपरिमाणं भवति तथा त्रीणि योजनाशतसहस्राणि आष्टादश च सहस्राणि द्वे च योजन शते सप्त नवत्यधिके ३१८२९७ परिक्षेपत: प्रज्ञप्तम्। तथाहि पूर्वमण्डलादस्य मण्डलस्य विष्कम्भायामपरिमाणे पञ्च योजनानि पञ्चत्रिंशच्चैकषाष्टिभागा योजनस्येति त्रुट्यन्ति, पञ्चानां योजनानां पञ्चत्रिंशतश्चैकषष्टि भागानां परिरये सप्तदशयोजनानि अष्टत्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य भविन्त। परं सूत्रकृता व्यवहारनयमतेन परिपूर्णान्यष्टादशयोजनानि विवक्षितानि प्रागुक्तात्सर्वबाह्यमण्डल परिरयप्रमाणात् त्रीणिलक्षाण्यष्टादशसहस्राणि त्रीणिशतानि पञ्चदशोत्तराणि इत्येवं रूपादष्टादश योजनानि शोध्यन्ते, ततो यथोत्तमधिकृतमण्डलपरिरयपरिमाणं भवति।।१८।।

अथ बाह्यतृतीयमण्डलवक्तव्यता पृच्छन्नाह-

(१९) बाहिरतच्चे णं भंते! सूरमंडले केवइअं आयाम-विक्खंभेण, केवइयं

परिक्खेवेणं पण्णत्ते? गोयमा! एगं जोयणसयसहस्सं छच्च अडयाले जोयणसए बावण्णं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयाम-विक्खंभेणं, तिण्णि जोयण सयसहस्साइं अट्ठारस य सहस्साइं दोण्णि य अउणसीए जोयणसए किंचिविसाहिए परिक्खेवेणं। एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे सूरिए तयणंतराओ मंडलाओ तयणंतरं मंडलं संकममाणे संकममाणे पंच पंच जोयणाइं पणतीसं च एगसट्ठिभाऐ जोयणस्स एगमेगे मंडले विक्खंभवुड्ढिं णिवड्ढमाणे २ अट्ठारस २ जोयणाइं परिरयवुड्ढिं णिवड्ढमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।१९।।

बाहिरतच्चेण' मित्यादि वाक्यं। तृतीयं **भदन्त! मण्डलं कियदायाम-विष्कम्भेन कियत्परिक्षेपेण प्रज्ञप्तम्**? स्वाम्याह-**गौतम! एकं योजनशतसहस्रं षष्ट् च योजनशतानि अष्टचत्वारिंशदधिकानि द्विपञ्चाशत् चैकषष्टिभागान् योजनस्य** १००६४८ ५२/६१ **आयाम-विष्कम्भेन** तथाहि-पूर्वस्मान्मण्डलादिदं मण्डलमायामे विष्कम्भे च पञ्चभि र्योजनै: पञ्चत्रिंशंता चैकषष्टिभागैर्योजनस्य हीनं तत: पूर्वमण्डलविष्कम्भायामपरिमाणादेकं योजनशतसहस्रं षट्शतानि चतुष्पञ्चाशदधिकानि षड्विंशतिश्चैकषष्टिभागा योजनस्येत्येवं-रूपात्पञ्चयोजनानि पञ्चत्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य शोध्यन्ते। ततो यथोक्तमधिकृत मण्डलविष्कम्भायामपरिमाणं भवति तथा। **त्रीणियोजनशतसहस्राणि अष्टादशसहस्राणि द्वे शते एकोनाशीत्यधिके** ३१८२७९ **किञ्चिद्विशेषाधिके परिक्षेपत:** प्रज्ञप्तम्। तथाहि-प्राक्तनमण्डलादिदं मण्डलं पञ्चभिर्योजनै: पञ्चत्रिंशता चैकषष्टिभागैर्योजनस्य विष्कम्भतो हीनं पञ्चानां योजनानां पञ्चत्रिंशतश्चैकषष्टिभागानां परिरयपरिमाणं व्यवहारतोऽष्टादश योजनानि, ततस्तानि पूर्वमण्डलपरिमाणाच्छोध्यन्ते ततो यथोक्तमधिकृतमण्डलपरिरयपरिमाणं भवति। **'एवं खल्वि'** त्यादि। एतत्सूत्रं प्रागुक्तव्याख्यानुसारेण स्वयं परिभावनीयं नवरं: **निव्विड्ढमाणे २'** इति निवेष्टयन् २ हापयन्नित्यर्थ:, ।।१९।।

साम्प्रतं मण्डले मण्डले प्रतिमुहूर्त्तं सूर्यस्य गतिप्रमाणमाह-

(२०) [1]जया णं भंते! सूरिए सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ, तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गो० ! पंच पञ्च जोअणसहस्साइं दोण्णि अ एगावण्णे जोअणसए एगूणतीसं च सट्ठिभाए जोअणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणूसस्स सीआलीसाए जोअणसहस्सेहिं दोहि अ तेवट्ठेहिं जोअणसएहिं एगवीसाए अ जोअणस्स सट्ठिभाएहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, से णिक्खममाणे सूरिए नवं संवच्छरं अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि अब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।२०।।

'जया णं भंते' इत्यादि, यदा भदन्त! **सूर्यः सर्वाभ्यन्तरं मण्डलमुपसम्पद्य चारं चरति, तदैकैन मुहूर्त्तेन कियत्क्षेत्रं गच्छति?,** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्च पञ्च योजनसहस्राणि द्वे द्वे च योजनशते एकपञ्चाशदधिके एकोनत्रिंशतं च षष्टिभागान् योजनस्य** ५२५१ २९/६० **एकैकेन मुहूर्त्तेन गच्छति।** कथमेतदवसीयत इति चेदुच्यते- इह द्वाभ्यां सूर्याभ्यामेकं मण्डलमेकेनाहोरात्रेण परिसमाप्यते, अहोरात्रश्च त्रिंशन्मुहूर्त्तप्रमाणः प्रतिसूर्यं चाहोरात्रगणने परमार्थतो द्वाभ्यामहोरात्राभ्यां मण्डलपरिभ्रमणतः परिसमाप्यते। द्वयोश्चाहोरात्रयोर्मुहूर्ताः षष्टिर्भवन्ति। ततो मण्डलपरिरयस्य षष्ट्या भागं हारयेत् यद्भागलब्धं भवति तन्मुहूर्त्तगतिपरिमाणं, तत्र सर्वाभ्यन्तरे मण्डले परिरयपरिमाणं त्रीणिलक्षाणि पञ्चदशसहस्राणि नवाशीत्यधिकानि ३१५०८९। अस्य षष्ट्या भागे कृते लब्धं यथोक्तं मुहूर्त्तगतिपरिमाणमिति। अत्रास्मिन् सर्वाभ्यन्तरे मण्डले कियति क्षेत्रे व्यवस्थिते उदयमानः सूर्य इहगतानां मनुष्याणां चक्षुर्गोचरमायातीति प्रश्नावकाशमाशङ्क्याह **'तया ण'** मित्यादि तदा सर्वाभ्यन्तरमण्डलचारचरणकाले उदयमानः सूर्य इहगतस्य मनुष्यस्यात्र जातावेकवचनं

---

१. तुला - सू. प्र. २।१।।

ततोऽयमर्थः **इहगतानां** भरतक्षेत्रस्थानां **मनुष्याणां सप्तचत्वारिंशता योजनसहस्रैर्द्वाभ्यां त्रिषष्ट्यधिकाभ्यां योजनशताभ्यामेकविंशत्या च षष्टिभागै र्योजनस्य चक्षुःस्पर्शं 'हव्वं' ति शीघ्रमागच्छति** । कात्रोपपत्तिरिति चेदुच्यते - इह दिवसस्यार्द्धेन यावन्मात्रं क्षेत्रं व्याप्यते तावति व्यवस्थिते उदयमानः सूर्य उपलभ्यते, सर्वाभ्यन्तरे च मण्डले दिवसोऽष्टादशमुहूर्त्तप्रमाणस्तेषामर्द्धे नवमुहूर्त्ता एकैकस्मिन्मुहूर्त्ते सर्वाभ्यन्तरमण्डले चारं चरन् पञ्च पञ्च योजनसहस्राणि द्वे च योजनशते एक पञ्चाशदधिके एकोनत्रिंशत च षष्टिभागान् योजनस्य गच्छति तत एतावन्मुहूर्त्तगतिपरिमाणं नवभिमुहूर्त्ते गुण्यते ततो भवति यथोक्तं दृष्टिपथप्राप्ततविषये परिमाणमिति। **'से णिक्खममाणे'** इत्यादि ततः सर्वाभ्यन्तरमण्डलान्निष्क्रामन् **सूर्यो नवं संवत्सरमाददानो** नवसंवत्सरस्य **प्रथमेऽहोरात्रे 'अब्भिंतराणंतरं'** ति सर्वाभ्यन्तरमण्डलस्यानन्तरं द्वितीयं मण्डल**मुपसंङ्क्रम्य चारं चरति।।२०।।**

(२१) जया णं भंते! सूरिए अब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरति, तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गोअमा! पंच पंच जोअणसहस्साइं दोण्णि अ एगावण्णे जोअणसए सीआलीसं च सट्ठिभागे जोअणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुसस्स सीआलीसाए जोअणसहस्सेहिं एगूणासीए जोअणसए [१]सत्तावण्णाए अ सट्ठिभाएहिं जोअणस्स सट्ठिभागं च [२]एगसट्ठिधा छेत्ता एगूणवीसाए चुण्णिआभागेहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, से णिक्खममाणे सूरिए दोच्चंसि अहोरत्तंसि अब्भंतरतच्चं मंडलं [३]उवसंकमित्ता चारं चरइ।।२१।।

तदा णमिति प्राग्वत् ! **एकैकेन मुहूर्त्तेन कियन्मात्रं क्षेत्रं गच्छति?** स्वाम्याह-**गौतम! तदा पञ्च पञ्च योजनसहस्राणि द्वे योजनशते एकपञ्चाशदधिके सप्तचत्वारिंशत् च**

१. ०वण्णं - अखत्रिबस।। २. एगट्ठिधा - अकखबस। एवमग्रेऽपि।। ३. उवसंपज्जित्ता -अखबस ।।

षष्टिभागान् योजनस्य ५२५१ ४७/६० **एकैकेन मुहूर्त्तेन गच्छति** तथाहि-अस्मिन् सर्वाभ्यन्तरानन्तरे द्वितीये मण्डले परिरयपरिमाणं त्रीणियोजनलक्षाणि पञ्चदशसहस्राणि शतमेकं व्यवहारत: परिपूर्णं सप्तोत्तरं, निश्चयमतेन तु किञ्चिन् न्यूनं ३१५१०७। ततोऽस्य प्रागुक्तयुक्तिवशात् षष्ट्या भागो ह्रियते, लब्धं यथोक्तमत्र मण्डले मुहूर्त्तगतिपरिमाणमथवा पूर्वमण्डलपरिरयपरिमाणादस्य मण्डलस्य परिरयपरिमाणे व्यवहारत: परिपूर्णान्यष्टादश-योजनानि वर्द्धन्तेनिश्चयमते किञ्चिदूनानि अष्टादशानां च योजनानां षष्ट्या भागे हृते लब्धा अष्टादशषष्टिभागा योजनस्य। ते प्राक्तनमण्डलगतमुहूर्त्तगतिपरिमाणमिति। अत्रापि दृष्टिपथप्राप्ततायाविषये परिमाणमाह-**'तया ण'** मित्यादि, तदा सर्वाभ्यन्तरानन्तरं द्वितीयमण्डलचारकाले **इहगतस्य मनुष्यस्य** जातावेकवचनमिहगतानां मनुष्याणां **सप्तचत्वारिंशता योजनसहस्रैरेकोनाशीत्यधिकेन योजनशतेन सप्तपञ्चाशता षष्टिभागैरेकं च षष्टिभागमेकष्टिधा छित्वा तस्य सप्तैरेकोनविंशत्या चूर्णिकाभागै: सूर्यश्चक्षुस्स्पर्शमागच्छति।** तथाह्यस्मिन् मण्डले मुहूर्त्तगतिपरिमाणं पञ्चयोजनसहस्राणि द्विशते एकपञ्चाशदधिके सप्तचत्वारिंशच्च षष्टिभागा योजनस्य ५२५१ ४७/६० दिवसोऽष्टादशमुहूर्त्तप्रमाणो द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यामूनस्तस्यार्द्धे नवमुहूर्त्ता: एकेन मुहुर्त्तैकषष्टिभागेन हीनास्तत: सकलैकषष्टिभागकरणार्थं नवमुहूर्त्ता एकषष्ट्या गुण्यन्ते, गुणयित्वा तत एकं रूपमपनीयते जातानि पञ्चशतान्यष्टचत्वारिंशदधिकानि ५४८। ततोऽस्य द्वितीयमण्डलस्य यत्परिरयपरिमाणं त्रीणिलक्षाणि पञ्चदशसहस्राणि शतमेकं सप्तोत्तरमिति ३१५१०७ तत्पञ्चभि: शतैरष्टाचत्वारिंशदधिकैर्गुण्यते, ततो जात एकक: सप्तको द्विक: षट्क: सप्तकोऽष्टक षट्कस्त्रिक: षट्क: १७२६७८६३६। ततो योजनानायनार्थमेकषष्टे: षष्ट्या गुणिताया यावान् राशिर्भवति तेन भागो ह्रियते । एकषष्ट्यां च षष्ट्या गुणितायां षट्त्रिंशच्छतानि षष्ट्यधिकानि भवन्ति ३६६०। तैर्भागे हृते लब्धं

सप्तचत्वारिंशत्सहस्राणि शतमेकोनाशीत्यधिकं योजनानां शेषमुद्धरति चतुस्त्रिंशच्छतानि षण्णवत्यधिकानि ३४९६ ततोऽस्माद्योजनानि यान्तीति षष्टिभागानयनार्थं छेदराशिरेकषष्टि-र्ह्रियते तेन भागे हृते लब्धाः सप्तपञ्चाशत्षष्टिभागाः ५७/६०। एकस्य च षष्टिभागस्य सत्का एकोनविंशतिरेकषष्टिभागा इति। **'से णिक्खममाणे'** इत्यादि द्वितीयस्मादपि मण्डलात्स सूर्यः प्रागुक्तप्रकारेण निष्क्रामन् नवस्य संवत्सरस्य सत्के द्वितीयेऽहोरात्रे **'अब्भिंतर तच्चं'** त्ति सर्वाभ्यन्तरान्मण्डलात्तृतीय**मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।।२१।।**

(२२) जया णं भंते! सूरिए अब्भंतरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गोअमा! पंच पंचजोअणसहस्साइं दोण्णि अ बावण्णे जोअणसए पंच य सट्ठिभाए जोअणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुसस्स सीआलीसाए जोअणसहस्सेहिं छण्णउइए जोअणेहिं तेत्तीसाए सट्ठिभागेहिं जोअणस्स सट्ठिभागं च एगसट्ठिधा छेत्ता दोहिं चुण्णिआभागेहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छति। एवं खलु एतेणं उवाएणं णिक्खममाणे सूरिए तयणंतराओ मंडलाओ तयणंतरं मंडलं संकममाणे संकममाणे अट्ठारस २ सट्ठिभागे जोअणस्स एगमेगे मंडले मुहुत्तगइं अभिवड्ढमाणे अभिवड्ढमाणे चुलसीइं २ [1]सीआइं जोअणाइं पुरिसच्छायं णिव्वड्ढमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।२२।।

'जया णं भंते सूरिए' इत्यादि, यदा भदन्त! **सूर्योऽभ्यन्तरमण्डलात्तृतीयं मण्डलमुपसम्पद्य चारं चरति, तदैकैकेन मुहूर्त्तेन कियत् प्रमाणं क्षेत्रं गच्छति?**, स्वाम्याह-**गौतम! यदा सर्वाभ्यन्तरान्मण्डलात्तृतीयमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति, तदा पञ्चयोजन सहस्राणि द्वे योजनशते द्विपञ्चाशदधिके पञ्च च षष्टिभागान् योजनस्य** ५२५२ ५/६० **एकैकेन मुहूर्त्तेन गच्छति।** तथाह्यस्मिन् मण्डले परिरयपरिमाणं

१. V। सआइं - मु.। सताइं - ब। सूर्यप्रज्ञप्त्यामपि - (२१३) 'सीताइं' इति पाठो विद्यते। इति V पृ. ५५५ टि. १०।।

त्रीणियोजनलक्षाणि पञ्चदशसहस्राणि शतमेकं पञ्चविंशत्याधिकं ३१५ १२५। ततोऽस्य प्रागुक्तयुक्तिवशात्षष्ट्या भागो ह्रियते लब्धं यथोक्तमत्र मण्डले मुहूर्त्तगतिपरिमाणमथवा पूर्वमण्डलमुहूर्त्तगतिपरिमाणादस्मिन् मण्डले मुहूर्त्तगतिपरिमाणचिन्तनायां प्रागुक्तयुक्तिवशा-दष्टादशएकषष्टिभागा योजनस्याधिकाः प्राप्यन्ते, ततस्तत्प्रक्षेपे भवति यथोक्तमत्र मण्डले मुहूर्त्तगतिपरिमाणमत्रापि दृष्टिपथप्राप्तताविषयपरिमाणमाह-**'तया ण'** मित्यादि, तदा सर्वाभ्यन्तरानन्तरतृतीयमण्डलचारकाले **इहगतस्य मनुष्यस्य** जातावेकवचनस्य भावादिह गतानां मनुष्याणां **सप्तचत्वारिंशता योजनसहस्रैः षण्णवत्या च योजनैस्त्रयस्त्रिंशता च षष्टिभागैर्योजनस्यैकं च षष्टिभागमेकषष्टिधा छित्वा तस्य सत्काभ्यां द्वाभ्यां चूर्णिकाभागाभ्यां** ४७०९६ ३३/६० २/६१ **सूर्यश्चक्षुस्पर्शमागच्छति।** तथाह्यस्मिन् मण्डले दिवसोऽष्टादशमुहूर्त्तप्रमाणश्चतुर्भि र्मुहूर्त्तैकषष्टिभागै -रूनस्तस्यार्द्धं नवमुहुर्त्ता द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यां हीनास्ततः सामस्त्येनैकषष्टिभागकरणार्थं नवापिमुहूर्त्ता एकषष्ट्या गुण्यन्ते, गुणयित्वा च द्वावेकषष्टिभागौ तेभ्योऽपनीयते ततो जाताः एकषष्टिभागाः पञ्चशतानि सप्तचत्वारिंशदधिकानि ५४७ ततोऽस्य तृतीयमण्डलस्य परिरयपरिमाणं त्रीणियोजनलक्षाणि पञ्चदशसहस्राणि शतमेकं पञ्चविंशत्यधिकमिति ३१५ १२५। तत्पञ्चभिः शतैः सप्तचत्वारिंशदधिकैर्गुण्यते जाताः सप्तदशकोटयस्त्रयोविंशति शतसहस्राणि त्रिसप्ततिसहस्राणि त्रीणि शतानि पञ्चसप्तत्यधिकानि १७२३७३३७५। एतेषामेकषष्ट्या गुणितया ३६६० भागो ह्रियते लब्धानि सप्तचत्वारिंशत्सहस्राणि षण्णवत्यधिकानि ४७०९६ शेषमुद्धरति विंशतिशतानि पञ्चदशोत्तराणि २०१५। तत्तस्माद्योजनानि नायातीति षष्टिभागानयनार्थं छेदराशिरकषष्टि र्ह्रियते तेन भागे कृते लब्धास्त्रयस्त्रिंशत्षष्टिभागाः ३३/६० एकस्य च षष्टिभागस्य सत्कौ द्वावेकषष्टिभागौ २/६१। सम्प्रति चतुर्थादिषु मण्डलेष्वतिदेशमाह**'एवं खल्वि'** त्यादि, एवमुक्तेन प्रकारेण, खलु

निश्चितमेतेनानन्तरोदितेनोपायेन शनैः शनैस्तत्तद्बाहिर्मण्डलाभिमुखगमनरूपेण **निष्क्रामन् सूर्यस्तदनन्तरान्मण्डलात्तदनन्तरं मण्डलं** प्रागुक्त प्रकारेण **सङ्क्रामन् सङ्क्रामन्नै-कैकस्मिन्मण्डले** मुहूर्त्तगतिमित्यत्र सूत्रे द्वितीया सप्तम्यर्थे प्राकृतत्वाद्भवति। प्राकृतलक्षणवशात्सप्तम्यर्थे द्वितीया यथा **"कत्तो रत्तिं मुद्घे पाणिय सद्धा च सउणयाण"** मित्यत्र ततोऽयमर्थ मुहूर्त्तगतैरष्टादशाष्टादशषष्टिभागान् योजनस्य व्यवहारतः परिपूर्णान्निश्चयतः किञ्चिदूना**नभिवर्द्धयमानोऽभिवर्द्धयमानः 'पुरिसच्छाय'** मिति पुरुषस्य छाया यतो भवति सा पुरुषछाया, सा चेह प्रस्तावात्प्रथमतः सूर्यस्योदयमानस्य दृष्टिपथप्राप्तता। अत्रापि द्वितीया सप्तम्यर्थे, ततोऽयमर्थ**स्तस्यामेकैकस्मिन्मण्डले चतुरशीति चतुरशीति 'सीयाइ'** इति शीतानि किञ्चिन्न्यूनानीत्यर्थो **योजनानि निर्वेष्टयन्निर्वेष्टयन्** हापयन्नित्यर्थः इह च स्थूलत उक्तं। परामार्थतःपुनरिदं द्रष्टव्यं त्र्यशीतिर्योजनानि त्र्यशीतिर्योजनानि त्रयोविंशतिश्च षष्टिभागा योजनस्यैकस्य षष्टिभागस्यैकषष्टिधा छिन्नस्य सत्का द्विचत्वारिंशद्भागाश्चेति दृष्टिपथप्राप्ततावि षये हानौ ध्रुवं, ततः सर्वाभ्यन्तरान्मण्डलात्तृतीये मण्डले एकेन चतुर्थे द्वाभ्यां पञ्चमे त्रिभिर्यावत्सर्वबाह्यमण्डले द्व्यशीत्यधिकेन शतेन गुणायित्वा च ध्रुवराशिमध्ये प्रक्षिप्यते, प्रक्षिप्ते सति यद्भवति तेन हीना पूर्वमण्डलगता दृष्टिपथप्राप्तता, तस्मिन् तस्मिन् विवक्षिते मण्डले दृष्टिपथप्राप्तता द्रष्टव्या। अथ त्र्यशीतियोजननानीत्यधिकस्य ध्रुवराशेः कथमुत्पत्तिः? उच्यते-इह सर्वाभ्यन्तरे मण्डले दृष्टिपथप्राप्तपरिमाणं सप्तचत्वारिंशत्सहस्राणि द्वे शते त्रिषष्ट्यधिकेयोजनाना मेकविंशतिश्च षष्टिभागा योजनस्य ४७२६३ २१/६० एतच्च नवमुहूर्त्तगम्यं तत एकस्मिन् मुहूर्त्तैकषष्टिभागे किमागच्छतीति चिन्तायां नवमुहूर्त्ता एकषष्ट्या गुण्यन्ते जातानि पञ्चशतान्येकोनपञ्चाशदधिकानि ५४९ तैर्भागो ह्रियते लब्धानि षडशीति योजनानि पञ्चषष्टिभागा योजनस्यैकस्य च षष्टिभागस्यैकषष्टिधा छिन्नस्य सत्काश्चतुर्विंशतिर्भागा

८६ ५/६० २४/६१। पूर्वस्मात्पूर्वस्माच्च मण्डलादनन्तरानन्तरे मण्डले परिरयपरिमाण-चिन्ता यामष्टादशाष्टादशयोजनानि व्यवहारतः परिपूर्णानि वर्द्धन्ते त तः पूर्वपूर्वमण्डलगत-मुहूर्त्तगतिपरिमाणादनन्तरानन्तरे मण्डले मुहूर्त्तगति पारिमाणचिन्तायां प्रतिमुहूर्त्तमष्टादशाष्टा-दशषष्टिभागा योजनस्य प्रवर्द्धमाना द्रष्टव्याः। प्रतिमुहूर्त्तैकषष्टिभागं वाष्टादशैकस्य षष्टिभागस्य सत्का एकषष्टिभागाः सर्वाभ्यन्तरानन्तरे च द्वितीये मण्डले सूर्यो दृष्टिपथप्राप्तो भवति। नवभिर्मुहूर्तैरेकेन मुहूर्त्तैकषष्टिभागेनोनैर्यावन्मात्रं क्षेत्रं व्याप्यते तावति स्थितस्ततो नवमुहूर्त्ता एकषष्ट्या गुण्यन्ते, गुणयित्वा च तेभ्य एकं रूपमपनीयते जातानि पञ्चशतानि अष्टचत्वारिंशदधिकानि ५४८। तैरष्टादश गुण्यते जातान्यष्टानवतिशतानि चतुःषष्टिसहितानि ९८६४ तेषां षष्टिभागानयनार्थमेकषष्ट्या भागो ह्रियते लब्धमेकषष्ट्य धिकं शतं षष्टिभागानां त्रिचत्वारिंशदेकस्य षष्टिभागस्य सत्का एकषष्टिभागा १६१ ४३/६१। तत्र विंशत्यधिकेन षष्टिभागशतेन द्वे योजने लब्धे पञ्चाशदेकचत्वारिंश त्षष्टिभागा अवतिष्ठन्ते एतच्च द्वे योजने एकचत्वारिंशत्षष्टिभागा योजनस्यैकषष्टिभागस्य सत्कास्त्रिचत्वारिंशदेकषष्टिभागा। इत्येवं रूपं प्रागुक्तात्षडशीर्तियोजनानि पञ्चषष्टिभागा योजनस्यैकस्य षष्टिभागस्य सत्काश्चतुर्विंशतिरेकषष्टिभागा इत्येतस्माच्छोध्यते, शोधिते च तस्मिन् स्थितानि पश्चात् त्र्यशीतिर्योजनानि त्रयोविंशतिः षष्टिभागा योजनस्यैकस्य षष्टिभागस्य सत्का द्विचत्वारिंशदेकषष्टिभागाः ८३ २३/६० ४२/६१। एतावद् द्वितीये मण्डले दृष्टिपथप्राप्ततविषये सर्वाभ्यन्तरमण्डलगतादृष्टिपथप्राप्तपरिमाणाद्धानौ प्राप्यते किमुक्तं भवति सर्वाभ्यन्तरमण्डलगतद्दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणाद् द्वितीये मण्डले दृष्टिपथप्राप्तता-परिमाणमेतावता हीनं भवतीति एतच्चोत्तरोत्तरमण्डलविषयदृष्टिपथप्राप्ततचिन्तायां हानौ ध्रुवमत एव ध्रुवराशिरिति ध्रुवराशेरुत्पत्तिस्ततो द्वितीयस्मान्मण्डलादनन्तरे तृतीये मण्डले एष एव ध्रुवराशिरेकस्य षष्टिभागस्य सत्कैः षट्त्रिंशतैकषष्टिभागैः सहितः सन् यावान् भवति,

तद्यथा-त्र्यशीतिर्योजनानि चतुर्विंशतिः षष्टि- र्भागा योजनस्य सप्तदशैकस्य षष्टिभागस्य सत्का एकषष्टिभागा इति एतावान् द्वितीयमण्डलगता दृष्टिपथप्राप्तता परिमाणाच्छोध्यते ततो भवति यथोक्तं तस्मिंस्तृतीये मण्डले दृष्टिपथप्राप्ततावि षयपरिमाणं। चतुर्थे मण्डले स एव ध्रुवराशिर्द्वासप्तत्या सहितः क्रियते। चतुर्थं हि मण्डलं तृतीयापेक्षया द्वितीयं ततः षट्त्रिंशद् द्वाभ्यां गुण्यते गुणिते च सती द्विसप्ततिर्भवति तया च सहितः सन्नेवं रूपो जातस्त्र्यशीतिर्योजनानि चतुर्विंशतिः षष्टिभागा योजनस्य त्रिपञ्चाशदेकषष्टिभागस्य सत्का एकषष्टिर्भागाः ७८३ २४/६० ५३/६१। एतावांस्तृतीयमण्डलगतादृष्टिपथप्राप्तता परिमाणाच्छोध्यते। ततो यथावस्थितं चतुर्थमण्डले दृष्टिपथप्राप्तता परिमाणं भवति। तच्चेदं सप्तचत्वारिंशद्योजनसहस्राणि त्रयोदशोत्तराणि अष्टौ च षष्टिभागा योजनस्यैकस्य च षष्टिभागस्य सत्का दश एकषष्टि भागाः ४७०१३८/६० १०/६१। सर्वान्तिमे तु मण्डले तृतीयमण्डलापेक्षया द्व्यशीत्यधिकशततमे यदा दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणं ज्ञातुमिष्यते तदा षट्त्रिंशद् द्व्यशीत्यधिकेन शतेन गुण्यते जातानि पञ्चषष्टिशतानि द्विपञ्चाशदधिकानि ६५५२। ततः षष्टिभागानयनार्थमेकषष्ट्या भागो ह्रियते लब्धं सप्तोत्तरशतं षष्टिभागानां १०७, शेषाः पञ्चविंशतिरेकषष्टिभागा उद्धरन्ति २५/६१ एतद् ध्रुवराशौ प्रक्षिप्यते ततो जातमिदं पञ्चाशीतियोजनान्येकादशषष्टिभागा योजनस्यैकषष्टिभागसत्काः षडेकषष्टिभागाः ८५,११/६०, ६/६१। इह षट्त्रिंशत एवमुत्पत्तिः पूर्वस्मात् पूर्वस्मान्मण्डलादनन्तरेऽनन्तरे मण्डले दिवसो द्वाभ्यां द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यां हीनो भवति। प्रतिमुहूर्त्तैकषष्टिभागं चाष्टादशैकस्य षष्टिभागस्य सत्का एकषष्टिभागा हीयन्ते तत उभयमीलने षट्त्रिंशद्भवति, ते चाष्टादश एकषष्टिभागाः कलया न्यूना लभ्यन्ते न परिपूर्णाः, परं व्यवहारतः परिपूर्णा विवक्षितास्तच्च कलया न्यूनत्वं प्रतिमण्डलं भवेत्, यथा द्व्यशीत्यधिकशततमे मण्डले एकत्र पिण्डितं सच्चिन्त्यते, तदाष्टषष्टिरेकषष्टिभागास्त्रुट्यन्ति, एतदपि व्यवहारत उच्यते परमार्थतः पुनः किञ्चिदधिकमपित्रुट्यदवसेयं ततोऽप्यष्टषष्टि रेकषष्टिभागा अपसार्यन्ते

तदपसारणे पञ्चाशीति योजनानि नव षष्टिभागा योजनस्यैकस्य षष्टिभागसत्काः षष्टिरेकषष्टिभागा ८५९/६० ६०/६१ इति जातम्। ततः सर्वबाह्यमण्डलानन्तरावर्वाक्तनद्वितीयमण्डलगतदृष्टिपथप्राप्तता परिमाणादेकत्रिंशत्सहस्राणि नवशतानि षोडशोत्तराणि योजनानामेकोनचत्वारिंशत्षष्टिभागा योजनस्यैकस्य षष्टिभागसत्काः षष्टिरेकषष्टिभागाः ३१९१६, ३९/६०। ६०/६१ इत्येवंरूपाच्छोध्यते ततो यथोक्तं सर्वबाह्ये मण्डले दृष्टिपथप्राप्तता परिमाणं भवति। तथाग्रे स्वयमेव सूत्रकृद्वक्ष्यति। तत एवं पुरुषछायायां दृष्टिपथप्राप्ततारूपायां द्वितीयादिषु केषुचिन् मण्डलेषु चतुरशीति चतुरशीति किञ्चिन्न्यूनानि योजनानि उपरितनेषु तु मण्डलेषु अधिकानिअधिकतराण्युक्तप्रकारेण निर्वेष्टयन्निर्वेष्टयंस्तावदवसेयो यावत्सर्वबाह्यमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।।२२।।

(२३) जया णं भंते! सूरिए सव्वबाहिरमंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गोअमा! पंच पंचजोअणसहस्साइं तिण्णि अ पंचुत्तरे जोअणसए पण्णरस य सट्ठिभाए जोअणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुसस्स एगतीसाए जोअणसहस्सेहिं अट्ठहि अ एगत्तीसेहिं जोअणसएहिं तीसाए अ सट्ठिभाएहिं जोअणस्स सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, एस णं पढमे छम्मासे, एस णं पढमस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे, से पविस्समाणे सूरिए दोच्चे छम्मासे [1]अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि बाहिराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।२३।।

'जया णं भंते सूरिए' इत्यादि यदा भदन्त! सूर्यः **सर्वबाह्यमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदैकैकेन मुहूर्त्तेन कियत्प्रमाणं क्षेत्रं गच्छति?,** स्वाम्याह-**गौतम! तदा पञ्चयोजन सहस्राणि त्रीणि च शतानि पञ्चोत्तराणि पञ्चदशषष्टिभागान् योजनस्यैकैकेन मुहूर्त्तेन गच्छति** ५३०५ १५/६०। तथाहि-अस्मिन् मण्डले परिरयपरिमाणं त्रीणियोजनशत-

१. अयमीणे - अकब। एवमग्रेऽपि।।

सहस्राणि अष्टादशसहस्राणि त्रीणि शतानि पञ्चदशोत्तराणि ३१८ ३१५। तत एतस्य प्रागुक्तयुक्ति -वशात् षष्ट्या भागो ह्रियते ततो लब्धं यथोक्तमत्र मुहूर्त्तगतिपरिमाणमित्यत्रैव दृष्टिपथप्राप्तता परिमाणमाह'-**तदा ण**' मित्यादि तदा सर्वबाह्यमण्डलं चारकाले **इहगतस्य मनुष्यस्य** जातावेकवचनमिहगातानां मनुष्याण**मेकत्रिंशता योजनसहस्रैरष्टभिरेकत्रिंशदधिकै र्योजनशतैस्त्रिंशता च षष्टिभागैर्योजनस्य** ३१८३१ ३०/६० **सूर्यश्चक्षु:स्पर्शं 'हव्व' शीघ्रमागच्छति** ताह्यस्मिन् मण्डले चारं चरति सूर्ये द्वादशमुहूर्त्तप्रमाणो दिवसो भवति दिवसस्य चार्द्धेन यावन् मात्रं क्षेत्रं व्याप्यते तावति व्यवस्थित उदयमानः सूर्य उपलभ्यते द्वादशानां च मुहूर्त्तानामर्द्धे षट् मुहूर्त्तास्ततो यदत्र मण्डले मुहूर्त्तगतिपरिमाणं पञ्चयोजनसहस्राणि त्रीणि शतानि पञ्चोत्तराणि पञ्चदश षष्टिभागा योजनस्य ५३०५ १५/६० तत्र षडभिर्गुण्यते, ततो यथोक्तमत्र दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणं भवति' **एस णं पढमे छम्मासे**' इत्यादि एतत्प्रथमं षण्मासमेतत्प्रथमस्य षण्मासस्य **पर्यवसानं 'स सूरिए दोच्चे**' इत्यादि स सूर्यः सर्वबाह्यमण्डलादुक्तक्रमेणाभ्यन्तरं **प्रविशन् द्वितीयं षण्मासमाददानो** द्वितीयस्य षण्मासस्य **प्रथमेऽहोरत्रे 'बाहिराणंतरं'** ति सर्वबाह्यमण्डलादनन्तरमर्वाक्तनं द्वितीयं **मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति**।।२३।।

(२४) जया णं भंते! सूरिए बाहिराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गोअमा! पंच पंच जोअणसहस्साइं तिण्णि अ चउरुत्तरे जोअणसए सत्तावण्णं च सट्ठिभाए जोअणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुसस्स एगत्तीसाए जोअणसहस्सेहिं णवहि अ सोलसुत्तरेहिं जोअणसएहिं [1]इगुणालीसाए अ सट्ठिभाएहिं जोअणस्स सट्ठिभागं च एगसट्ठिधा छेत्ता सट्ठीए चुण्णिआभागेहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, से पविसमाणे सूरिए

१. ऊणा० अब। ऊगुता० कख। उगुणता० त्रिस।।

दोच्चंसि अहोरत्तंसि बाहिरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।२४।।

'जया णं भंते' इत्यादि, यदा भदन्त! **सूर्यः सर्वबाह्यानन्तरमर्वाक्तनं द्वितीयं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति, तदैकैकेन मुहूर्त्तेन कियत्प्रमाणं क्षेत्रं गच्छति?**, स्वाम्याह- **गौतम! पञ्च पञ्चयोजनसहस्राणि त्रीणि चतुरुत्तराणि योजनशतानि सप्तपञ्चाशतं च षष्टिभागान् योजनस्य** ५३०४ ५७/६०। **एकैकेन मुहूर्त्तेन गच्छति।** तथाह्यस्मिन् मण्डले परिरयपरिमाणं तिस्रो लक्षा अष्टादशसहस्राणि द्वे शते सप्तनवत्यधिके योजनानां ३१८२९७ ततोऽस्यप्रागुक्तयुक्तिवशात्षष्ट्या भागो ह्रियते, हृते च भागे लब्धं यथोक्तमत्र मण्डले मुहूर्त्तगतिपरिमाणमत्रापि दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणमाह-**'तया ण'** मित्यादि **तदेहगतस्य मनुष्यस्य** जातावेकवचनमिहगतानां मनुष्याणा**मेकत्रिंशता योजनसहस्रैर्नवतिः षोडशोत्तरै-र्योजनशतैरेकोनचत्वारिंशता च षष्टिभागैर्योजनस्यैकं च षष्टिभागमेकषष्टिधा छित्वा तस्य सत्कैः षष्ट्या चूर्णिकाभागैः सूर्यश्चक्षुःस्पर्शमागच्छति** तथाहि-अस्मिन् मण्डले सूर्ये चारं चरति दिवसो द्वादशमुहूर्त्तप्रमाणो द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यामधिकस्तेषां चार्द्धे षट् मुहूर्त्ता एकेन मुहूर्तैकषष्टिभागेनाभ्यधिकास्ततः सामस्त्येनैकषष्टिभागकरणार्थं षडपि मुहूर्त्ता एकषष्ट्या गुण्यन्ते, गुणयित्वा चैकषष्टिभागस्तत्राधिकः प्रक्षिप्यते ततो जातानि त्रीणि शतानि सप्तषष्ट्यधिकानि एकषष्टिभागानां ३६७ ततः सर्वबाह्यादर्वाक्तने तस्मिन् द्वितीयमण्डले यत्परिरयपरिमाणं त्रीणि लक्षाण्यष्टादशसहस्राणि द्वे शते सप्तनवत्यधिके ३१८२९७ तदेभिस्त्रिभिः शतैः सप्तषष्ट्यधिकै र्गुण्यते जाता एकादशकोटयोऽष्टषष्टिर्लक्षा श्चतुर्दशसहस्राणि नवशतानि नवनवत्यधिकानि ११६८१४९९९। तस्यैकषष्ट्या गुणितया षष्ट्या ३६६० भागो ह्रियते, हृते च भागे लब्धान्येकत्रिंशत्सहस्राणिं नवशतानि षोडशोत्तराणि ३१९१६, शेषमुद्धरति चतुर्विंशतिशतानि एकोनचत्वारिंशदधिकानि २४३९ न चातो योजनान्यायान्ति, ततः षष्टिभागानयनार्थमेकषष्ट्या भागो ह्रियते, लब्धा एकोनचत्वारिंश-

त्यष्टिभागाः ३९ एकस्य च षष्टिभागस्य सत्काः षष्टिरेकषष्टिभागाः ६०/६१। **'से पविसमाणे'** इत्यादि, ततः सर्वबाह्यादनन्तरार्वाक्तनद्वितीयस्मादपि मण्डलादुक्तप्रकारेण प्रविशन् **सूर्यो द्वितीयस्य षण्मासस्य द्वितीयेऽहोरात्रे 'बाहिरतच्चं'** ति **सर्वबाह्यान्मण्डलादर्वाक्तनं तृतीयं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।।२४।।**

(२५) जया णं भंते! सूरिए बाहिरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गोअमा! पंच पंच जोअणसहस्साइं तिण्णि अ चउरुत्तरे जोअणसए इगुणालीसं च सट्ठिभाए जोअणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छइ, तया णं इहगयस्स मणुसस्स एगाहिएहिं बत्तीसाए जोअणसहस्सेहिं एगूणपण्णाए अ सट्ठिभाएहिं जोअणस्स सट्ठिभागं च एगसट्ठिधा छेत्ता तेवीसाए चुण्णिआभाएहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइत्ति, एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे सूरिए तयणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे २ अट्ठारस २ सट्ठिभाए जोअणस्स एगमेगे मंडले मुहुत्तगइं निवड्ढेमाणे २ सातिरेगाइं पंचासीतिं २ जोअणाइं पुरिसच्छायं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ, [1]एस णं दोच्चे छम्मासे, एस णं दोच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे, एस णं आइच्चे संवच्छरे, एस णं आइच्चस्स संवच्छरस्स पज्जवसाणे पण्णत्ते।।२५।।

'जया णं भंते' इत्यादि, यदा णमिति वाक्यालङ्कारे भदन्त! **सूर्यः सर्वबाह्यान्मण्डलादर्वाक्तनं तृतीयं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदैकेन मुहूर्त्तेन कियत् प्रमाणं क्षेत्रं गच्छति?** स्वाम्याह-**गौतम! तदा पञ्च योजनसहस्राणि त्रीणि चतुरुत्तराणि येजनशतान्येकोनचत्वारिंशतं च षष्टिभागान् योजनस्य** ५३०४ ३९/६० **एकैकेन मुहूर्त्तेन गच्छति** तस्मिन् हि मण्डले परिरयपरिमाणं तिस्रो लक्षा अष्टादशसहस्राणि द्वेशते

१. द्र. सू. प्रज्ञप्ति सूत्र.।।

एकोनाशीत्यधिके ३१८२७९। अस्य षष्ट्या भागो ह्रियते, ह्रते च भागे लब्धं यथोक्तमत्र मण्डले मुहूर्त्तगतिपरिमाणमत्रापि हि दृष्टिपथप्राप्ततात्रिषयपरिमाणमाह **तया ण**' मित्यादि, **तदेहगतस्य** जातावेकवचनमिहगतानां मनुष्याणा**मेकाधिकैर्द्वात्रिंशता सहस्रैरेकोनपञ्चाशता च षष्टिभागैरेकं षष्टिभागमेकषष्टिधा छित्वा** तस्य **सत्कैस्त्रयोविंशत्या चूर्णिकाभागै: सूर्यश्चक्षु:स्पर्शमागच्छति**, तथाह्यस्मिन्मण्डले दिवसो द्वादशमुहूर्त्तप्रमाणश्चतुर्भिरे-कषष्टिभागैरधिकस्तस्यार्द्धं षट् मुहूर्त्ता द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यामधिकास्तत: सामस्त्येनैकषष्टिभागकरणार्थं षडपि मुहूर्त्ता एकषष्ट्या गुण्यन्ते, गुणयित्वा च द्वावेकषष्टिभागौ प्रक्षिप्येते, ततो जातानि त्रीणि शतान्यष्टषष्ट्यधिकान्येकषष्टिभागानां ३६८। ततोऽस्मिन्मण्डले यत्परिरयपरिमाणं त्रीणि लक्षाण्यष्टादशसहस्राणि द्वेशते एकोनाशीताधिके ३१८२७९ तदेभिस्त्रिभि: शतैरष्टषष्ट्यधिकैर्गुण्यन्ते जाता एकादशकोट्य एकसप्ततिशतसहस्राणि षड्विंशति सहस्राणि षट्शतानि द्विसप्तत्यधिकानि ११७१२६६७२। एतस्य षष्ट्या एकषष्ट्या गुणितया ३६६० भागानयनार्थमेकषष्ट्या भागो ह्रियते, लब्धा एकोनपञ्चाशत्षष्टिभागा: ४९/६० त्रयोविंशतिश्चैकस्य षष्टिभागास्य सत्का एकषष्टिभागा: २३/६१, इति सम्प्रति सर्वबाह्यान्यमण्डलादर्वाक्तनेषु चतुरादिषु मण्डलेष्वतिदेशमाह-'**एवं खल्वि**' त्यादि एवमुक्तेन प्रकारेण खलु निश्चितमे**तेनोपायेन शनै**: शनैस्तत्तदभ्यन्तरानन्तरमण्डलाभिमुखगमनरूपेणाभ्यन्तरं **प्रविशन् सूर्यस्तदनन्तरा-न्मण्डलात्तदनन्तरं मण्डलं सङ्क्रामन् सङ्क्राम**नेकैकस्मिन् मण्डले मुहूर्त्तगतिमित्यत्र द्वितीया सप्तम्यर्थे। ततोऽयमर्थ: **पुरुषच्छायायां** दृष्टिपथप्राप्ततारूपायां **सातिरेकाणि पञ्चाशीतिं पञ्चाशीतिं योजनानि अभिवर्द्धय**न्निदं च सर्वबाह्यान्मण्डला-दर्वाक्तनानि कतिपयानि प्रथमद्वितीयादिमण्डलापेक्ष्य स्थूलत उक्तं, परमार्थत: पुनरेवं द्रष्टव्यमिह येनैव क्रमेण सर्वाभ्यन्तरान्मण्डलात्परतो दृष्टिपथप्राप्ततां ह्रापयन् विनिर्गतस्तेनैव क्रमेण

सर्वबाह्यान्मण्डलादर्वाक्तनेषु मण्डलेषु दृष्टिपथप्राप्ततामभिवर्द्धयन् प्रविशति। ततः सर्वबाह्यमण्डलादर्वाक्तनद्वितीयमण्डलगता दृष्टिपथप्राप्तता। परिमाणात्सर्वबाह्ये मण्डले पञ्चाशीतिं योजनानि नवषष्टिभागान् योजनस्यैक च षष्टिभागमेकषष्टिधा छित्वा तस्य सत्कान् षष्टिभागान् हापयति एत्तच्च प्रागेव भावितं ततस्तस्मात्सर्व बाह्यान्मण्डलादर्वाक्तने द्वितीये मण्डले प्रविशन् तावद्भूयोऽपि दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणेऽभिवर्द्ध -यत्येतच्च ध्रुवं ततोऽर्वाक्तनेषु मण्डलेषु यस्मिन् यस्मिन् मण्डले दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणं तत्र तत्र मण्डले द्रष्टव्यं तथा तृतीयमण्डले षड्विंशदे(त्रिंशदै)केन गुण्यते एकेन च गुणितं तदेव भवतीति जाताः षड्विंशदे(त्रिंशदे)व सा ध्रुवराशेरपनीयते जातं शेषमिदं पञ्चाशीति योजनानि नवषष्टिभागा योजनस्यैकषष्टिभागस्य सत्का एकषष्टिभागाश्चतुर्विंशतिः ८५ ९/६० २४/६१ एतेन सहितं पूर्वमण्डलगतं दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणमेकत्रिंशत्सहस्राणि नवशतानि षोडशोत्तराणि योजनानामेकोनचत्वारिंशत्षष्टिभागा योजनस्यैकस्य षष्टिभागस्य सत्काः षष्टिरेकषष्टिभागाः ३१९१६ ३९/६० ६०/६१ इत्येवं रूपं क्रियते, ततोऽधिकृते तृतीय -मण्डले यथोक्तं दृष्टिपथ प्राप्ततापरिमाणं भवति तच्च प्रागेवोपदर्शितं। चतुर्थे मण्डले षट्त्रिंशद् द्वाभ्यां गुण्यते गुणयित्वा च ध्रुवराशेरपनीय शेषेण ध्रुवराशिना तृतीयमण्डलगतं दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणं सहित क्रियते तत इदं तत्र मण्डले दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणं भवति द्वात्रिंशत्सहस्राणि षडशीत्यधिकानि योजनानामष्टपञ्चाशच्च षष्टिभागा योजनस्यैकषष्टिभागस्य सत्का एकादशैकषष्टिभागाः ३२०८६ ५८/६० ११/६१ एवं शेषेष्वपि मण्डलेषु भावनीयं यदा तु सर्वाभ्यन्तरे मण्डले दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणं ज्ञातुमिष्यते षड्त्रिंशद् द्व्यशीत्यधिकेन शतेन गुण्यते तृतीयमण्डलादारभ्य सर्वाभ्यन्तरमण्डलस्य द्व्यशीत्यधिकशतनमत्वात् ततो जातानि पञ्चषष्टिशतानि द्विपञ्चाशदधिकानि ६५५२ तेषामेकषष्ट्या भागे हृते लब्धं सप्तोत्तरं शतं षष्टिभागानां शेषं पञ्चविंशति १०७/६० २५/६१ एतत्पञ्चाशीति-योजनानि नव षष्टिभागा योजनस्यैकस्य षष्टिभागस्य सत्काः षष्टिरेकषष्टिभागाः ८५९/६०

६०/६१इत्येवं रूपाद् ध्रुवराशेः शोध्यते। जातानि पश्चात् त्र्यशीति र्योजनानि द्वाविंशतिः षष्टिभागा योजनस्यैकस्य षष्टिभागस्य सत्काः पञ्चत्रिंशदेकषष्टिभागा इह षट्त्रिंशत् षट्त्रिंशदेकषष्टिभागाः कलया न्यूनाः परमार्थतो न्यूना लभ्यन्ते, एतच्च प्रागेवोक्तं तच्च कलान्यूनत्वं प्रतिमण्डलं भवेद्यदा द्व्यशीत्यधिकशततमे मण्डले एकत्रपिण्डितं सञ्चिन्त्यते तदाष्टषष्टिरेकषष्टिभागा लभ्यन्ते तेततस्ते भूयः प्रक्षिप्यन्त ततो जातमिदं त्र्यशीति र्योजनानि त्रयोविंशतिः षष्टिभागा ८३ २३/६० ४२/६१। एतेषु सर्वाभ्यन्तरानन्तरद्वितीयमण्डलगतं दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणं सप्तचत्वारिंशत्सहस्राणि शतमेकमेकोनाशीत्यधिकं योजनानां सप्तपञ्चाशत्षष्टिभागा योजनस्यैकस्य षष्टिभागस्य सत्का एकोनविंशतिरेकषष्टिभागाः ४७१७९ ५७/६० १९/६१। इत्येवं रूपं सहितं क्रियते। ततो यथोक्तं सर्वाभ्यन्तरे मण्डले दृष्टिपथप्राप्ततापरिमाणं भवति, तच्च सप्तचत्वारिंशत्सहस्राणि द्वे शते त्रिषष्ट्यधिके योजनानामेकविंशतिश्च षष्टिभागा योजनस्य ४७२६३ २१/६० एवं दृष्टिपथप्राप्ततायां कतिपयेषु मण्डलेषु **सातिरेकाणि पञ्चाशीतिं पञ्चाशीतिं योजनानि** अग्रेतनेषु चतुरशीतिं चतुरशीतिं पर्यन्ते यथोक्ताधिकसहितानि अशीतियोजनान्यभिवर्द्धयन्न **भिवर्द्धयंस्तावद्वक्तव्यो यावत्सर्वाभ्यन्तरं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति। 'एस ण'** मित्यादि असौ **द्वितीया षण्मासी, द्वितीयषण्मासस्य पर्यवसानो** यदिवैतद् द्वितीयषण्मासं सूत्रे च पुंस्त्वनिर्देश आर्षत्वादेषोऽशीत्यधिकशततमोऽहोरात्रो द्वितीयस्य षण्मासस्य पयर्वसानं **'एस ण'** मित्यादि णमिति प्राग्वदादित्याभिधानः **संवत्सरोऽसावादित्य संवत्सरस्य पर्यवसानः प्रज्ञप्तः**।। २५।।

अथ प्रतिमण्डलं दिवसरात्रिप्रमाणं पिपृच्छिषुरिदमाह-

(२६) जया णं भंते! सूरिए सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं

केमहालए दिवसे [1]केमहालिया राई भवइ?, गोअमा! तया णं उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, जहण्णिआ दुवालसमुहुत्ता राई भवइ, से णिक्खममाणे सूरिए णवं संवच्छरं अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि अब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।२६।।

'जया णं भंते सूरिए' इत्यादि, यदा णमिति प्राग्वत्, भदन्त! कल्याणरूप! सूर्यः **सर्वाभ्यन्तरमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति, तदा णं प्राग्वत्' के महालए'** त्ति कियान् महाल इति उत्कृष्टप्रमाणो **दिवसः कियती महालया रात्रिश्च भवति**? स्वाम्याह-**गौतम! यदा सूर्यः सर्वाभ्यन्तरं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा णमिति** प्राग्वत्, **उत्तमकाष्टाप्राप्तोऽत्र** काष्टा शब्दः प्रकर्षवाची परमप्रकर्षप्राप्तो यतः परमन्योऽधिको न भवति स इत्यर्थः **'उक्कोस'** त्ति उत्कर्षात्युकर्षः उत्कर्ष एवोत्कर्षकः उत्कृष्ट इत्यर्थः **अष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो** भवति तस्मिन्नेव सर्वाभ्यन्तरमण्डले सूर्ये चारं चरति, **जघन्या सर्वलघ्वी द्वादशमुहूर्त्ता रात्रिः** एषोऽहोरात्रः पाश्चात्यस्य सूर्यसंवत्सरस्य पर्यवसानं ततः **स सूर्यस्तस्मात्सर्वाभ्यन्तरान्मण्डलान्निष्क्रामन्नवं सूर्यसंवत्सरमाददानः** प्रवर्त्तमानः **प्रथमेऽहोरात्रे 'अब्भिंतराणंतरं'** ति सर्वाभ्यन्तरान्मण्डलाद नन्तरं द्वितीय**मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।।२६।।**

अथ यदा सूर्यः सर्वाभ्यन्तरान्मण्डलादनन्तरं द्वितीयं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा कियान् महालयो दिवसः कियती महालया च रात्रि र्भवतीति पृच्छति-

(२७) जया णं भंते! सूरिए अब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?, गो०! तया णं अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे दुवालसमुहुत्ता राई भवइ दोहि अ एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं

---

१. के महलया - V। एवमग्रेऽपि।।

अहिआ, से णिक्खममाणे सूरिए दोच्चंसि अहोरत्तंसि जाव चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?, गोयमा! तया णं अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे दुवालसमुहुत्ता राई भवइ चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहिआ, एवं खलु एएणं उवाएणं निक्खममाणे सूरिए तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे दो दो एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं मंडले दिवसखित्तस्स निवड्ढेमाणे २ रयणिखित्तस्स अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ, जया णं सूरिए सव्वब्भंतराओ मंडलाओ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं सव्वब्भंतरमंडलं पणिहाय एगेणं तेसीएणं राइंदिअसएणं तिण्णि छावट्ठे एगसट्ठिभागमुहुत्तसए दिवसखेत्तस्स [1]निवड्ढेत्ता रयणिखेत्तस्स अभिवड्ढेत्ता चारं चरइ।।२७।।

'जया णं भंते' इत्यादि स्वाम्याह-**गौतम!** तदा णमिति पूववर्त्, **अष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यामूनो भवति द्वाभ्यां च मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यामाधिका द्वादश मुहूर्त्ता रात्रि:** कथमतेदवसीयते इति चेदुच्यते, इहैकं मण्डलमेकेनाहोरात्रेण द्वाभ्यां सूर्याभ्यां परिसमाप्यते एकैकश्च सूर्य: प्रत्यहोरात्रं मण्डलस्य त्रिंशदधिकाष्टादशशत सङ्ख्याकान् भागान्परिकल्यैकैकं भागं दिवसक्षेत्रस्य रात्रिक्षेत्रस्य वा यथायोग्यं ह्रापयिता वर्द्धयिता वा भवति स चैको मण्डलगतस्त्रिंशदधिकान्यष्टादशशतानि भागानां द्वाभ्यां सूर्याभ्यामेकेनाहोरात्रेण गम्यते अहोरात्रश्च त्रिंशन्मुहूर्त्तप्रमाणस्तत: सूर्यद्वयापेक्षया षष्टि र्मुहूर्त्ता लभ्यन्ते ततस्त्रैराशिकक्रमावकाशो यदि षष्ट्या मुहूर्त्तैरष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि मण्डलस्य भागानां गम्यते तत एकेन मुहूर्त्तेन किं गम्यते? राशित्रयस्थापना ६०-१८३०-१ अत्रान्त्येन राशिना एकलक्षणेन मध्यस्य राशे र्गुणनाज्जातानि तान्येवाष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि

---

१. अभिणिवड्ढेत्ता - अब।।

तेषामाद्येन राशिना षष्टिलक्षणेन भागो ह्रियते लब्धाः सार्द्धास्त्रिंशद्भागाः, एतावन्मुहूर्त्तेन गम्यते मुहूर्त्तश्चैकषष्टिभागीक्रियतेऽत आगतमेको भागो द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यां यदिवा यत्र्यशीत्यधिकेनाहोरात्रशतेन षट् मुहूर्त्ता हानौ वा वृद्धौ वा प्राप्यते तत एकेनाहोरात्रेण किं प्राप्यते? राशित्रय स्थापना १८३-६-१। अत्रान्त्येन राशिना एक लक्षणेन मध्यराशिर्गुण्यते जातास्त एव षट्, तेषां त्र्यशीत्यधिकेन शतेन भागहरणमत्रोपरितनराशेः स्तोकत्वाद्भागो न लभ्यते ततश्छेदकराश्यास्त्रिकेनापवर्तनाज्जात उपरितनो राशि र्द्विकरूपोऽधस्तन एकषष्टिरूपः, आगतं द्वावेकषष्टिभागौ मुहूर्त्तस्यैकस्मिन्नन्होरात्रे वृद्धो हानौ वा प्राप्येते इति **'से णिक्खममाणे सूरिए** 'इत्यादि तस्मान्मण्डलान्निष्क्रामन् सूर्यो द्वितीयेऽहोरात्रे सर्वाभ्यन्तरमण्डलमपेक्ष्य तृतीयमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति। यदा भदन्त! सूर्योऽभ्यन्तरमण्डलात्तृतीयं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा कियान्महालयो दिवसः कियती महालया च रात्रि र्भवति? स्वाम्याह-गौतम! तदा णमिति प्राग्वत् **'अट्ठारस मुहुत्ते'** इत्यादि चतुर्भि र्मुहुर्त्तस्यैकषष्टिभागैर्हीनोऽष्टादशमुहूर्त्तप्रमाणो दिवसो चतुर्भिर्मुहूर्त्तस्यैकषष्टि भागैरधिका द्वादशमुहूर्त्तप्रमाणा रात्रिः। सम्प्रति सर्वाभ्यन्तरादर्वाक्तनेषु चतुरादिषु मण्डलेष्वतिदेशमाह **'एवं खल्वि'** त्यादि एवमुक्तनीत्या खलु निश्चितमेतेनानन्तरोदिते **नोपायेन** प्रतिमण्डलं दिवसरात्रिविषयमुहूर्त्तैकषष्टिभागद्वयहानिरूपेण **निष्क्रामन्** मण्डलपरिभ्रमणगत्या शनैः शनै र्दक्षिणाभिमुखं गच्छन् सूर्यः **'तयाणंतराओ'** इति तस्माद्विवक्षितानन्तरान्मण्डलात् **'तयाणंतर'** मिति तद्विवक्षितमनन्तरं **मण्डलं सङ्क्रामन् सङ्क्रामन्नैकैकस्मिन्** मण्डले मुहूर्त्तस्य **द्वौ द्वावेकषष्टिभागौ दिवसक्षेत्रस्य निर्वेष्टयन्निर्वेष्टयन्**-हापयन् हापयन् **रजनिक्षेत्रस्य** प्रतिमण्डलं द्वौ द्वौ मुहूर्त्तस्यैकषष्टिभागौ **अभिवर्द्धयन्नभिवर्द्धयन्**नशीत्यधिकशततमेऽहोरात्रे प्रथमषण्मासीपर्यवसानभूते **सर्वबाह्य मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति 'जदा ण'** मिति पूर्ववत्, यदा यस्मिन् कालेऽहोरात्ररूपे णमिति प्रागिव **सूर्यः सर्वाभ्यन्तरान्मण्डला**न्मण्डलपरिभ्रमणगत्या शनैः शनैर्निष्क्रम्य

सर्वबाह्यामण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा सर्वाभ्यन्तरं मण्डलं प्रणिधाय मर्यादीकृत्य द्वितीयान्मण्डलादारभ्येत्यर्थः, **एकेन त्र्यशीत्यधिकेन रात्रिंदिवशतेन त्रीणि षट्षष्टानि** षट्षष्ट्यधिकानिर्मुहूर्त्तस्यैकषष्टिभागशतानि दिवसक्षेत्रस्ययिनर्वेष्ट्यरात्रिक्षेत्रस्य च अभिवर्द्धय चारं चरति।।२७।।

(२८) जया णं भंते! सूरिए सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?, गोअमा! तया णं उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिआ अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ, एस णं पढमे छम्मासे एस णं पढमस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे। से पविसमाणे सूरिए दोच्चं छम्मासं अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि बाहिराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।२८।।

'जया णं भंते' इत्यादि, यदा णमिति वाक्यालङ्कारे भदन्त! **सूर्यः सर्वबाह्यं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति 'तदा ण'** मिति प्राग्वत् **कियान् महालयोा दिवसो भवति कियती महालया च रात्रि र्भवति?** स्वाम्याह-**गौतम!** तदा णमिति पूर्ववत्, **उत्तमकाष्टा प्राप्ता**-परमप्रकर्षप्राप्ता **उत्कर्षिका**-उत्कृष्टाष्टादशमुहूर्त्तप्रमाणा **रात्रि र्भवति जघन्यश्च द्वादशमुहूर्त्तप्रमाणो दिवसः 'एस ण'** मिति प्राग्वत्, एषा **प्रथमा षण्मासी** यदिवा, एतत्प्रथमं षण्मासं सूत्रे च पुंस्त्वनिर्देश आर्षत्वात् **एष** त्र्यशीत्यधिकशततमोऽहोऽरात्रः **प्रथमस्य षण्मासस्य पर्यवसानम्।।**

'स पविसमाणे' इत्यादि स **सूर्यः** सर्व बाह्यान्मण्डलादभ्यन्तरं प्रविशन् **द्वितीयं षण्मासमाददानः** प्रतिपद्यमानो द्वितीयस्य षण्मासस्य **प्रथमेऽहोरात्रे** सर्व**बाह्यान्मण्लादर्वाग नन्तरं** द्वितीयं **मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति** ।।२८।।

(२९) जया णं भंते! सूरिए बाहिराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे [१]भवइ केमहालिया राई भवइ?, गो०! अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ दोहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ दोहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहिए, से पविसमाणे सूरिए दोच्चंसि अहोरत्तंसि बाहिरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।२९।।

'जया णं भंते' इत्यादि यदा भदन्त! **सूर्यः सर्वबाह्यान्मण्लादर्वागनन्तरं** द्वितीयं **मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा कियान्महालयो दिवसो भवति कियती महालया च रात्रि र्भवति?** स्वाम्याह-**गौतम! तदा** णमिति प्राग्वत्, **द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यामूनाऽष्टा- दशमुहूर्त्ता रात्रि र्भवति द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यामधिको द्वादशमुहूर्त्तप्रमाणो** दिवसस्ततस्ततोऽपि द्वितीयान्मण्डलादभ्यंन्तरं **सूर्यः प्रविशन्** द्वितीयस्य षण्मासस्य **द्वितीयेऽहोरात्रे 'बाहिरतच्चं'** ति सर्वबाह्यान्मण्डलादर्वाक्तनं तृतीयमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।।२९।।

(३०) जया णं भंते! सूरिए बाहिरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं केमहालए दिवसे केमहालिया राई भवइ?, गो०! तया णं अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा, दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहिए, एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे सूरिए तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे संकममाणे दो दो एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं एगमेगे मंडले रयणिखेत्तस्स निवड्ढेमाणे २ दिवसखेत्तस्स अभिवड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ! जया णं [२]भंते! सूरिए सव्व बाहिराओ मंडलाओ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं [३]सव्वबाहिरं मंडलं पणिहाय एगेणं तेसीएणं

१. भवइ V नास्ति। अकखत्रिपबस - अस्ति।। २. भंते - V नास्ति । अखत्रिपबस - अस्ति।। ३. सव्वब्भंतरं - अकबस । सव्वब्भंतरं बाहिरं - ख।।

राइंदिअसएणं तिण्णि छावट्ठे एगसट्ठिभागमुहुत्तसए रयणिखेत्तस्स णिव्वड्ढेत्ता दिवसखेत्तस्स अभिवड्ढेता चारं चरइ, एस णं दोच्चे छम्मासे एस णं दुच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे एस णं आइच्चे संवच्छरे एस णं आइच्चस्स संवच्छरस्स पज्जवसाणे पण्णत्ते ।।३०।।

'जया णं भते' इत्यादि, यदा भदन्त! **सूर्यः सर्वबाह्यान्मण्डलादर्वाक्तनं तृतीयं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा कियान् महालयो दिवसो भवति कियती महालया च रात्रि र्भवति?**, स्वाम्याह **गौतम! तदा ण** मिति प्राग्वत्, **अष्टादशमुहूर्त्तारात्रिश्चतुर्भिः 'एगट्ठिभागमुहुत्तेहि'** त्ति प्राकृतत्वाद् व्यत्यासने पदोपन्यासः, एवं तु यथास्थितपदनिर्देशो द्रष्टव्यो मुहूर्त्तैकषष्टिभागैरूना भवति **चतुर्भिर्मुहूर्त्तैकषष्टिभागैरधिको द्वादशमुहूर्तो दिवसः 'एवं खलु एतेण'** मित्यादि, एवमुक्तनीत्या खल्वेतेनानान्तरोदितेनोपायेन प्रतिमण्डलं रात्रिदिवसविषयमुहूर्त्तैकषष्टिभागद्वयहानिवृद्धिरूपेण **प्रविशन्मण्डलं** परिभ्रमणगत्या शनैः शनैरुत्तराभिमुखं गच्छन् **'तयाणंतराओ'** त्ति तस्माद्विवक्षितान्मण्डलात् **'तयाणंतर'** मिति तद्विवक्षितमनन्तरं मण्डलं सङ्क्रामन् **सङ्क्रामन्नेकैकस्मिन्मडले मुहूर्त्तस्य द्वौ द्वावेकषष्टिभागौ रजनिक्षेत्रस्य निर्वेष्टयन् दिवसक्षेत्रस्य** प्रतिमण्डलं **द्वौ द्वौ मुहूर्त्तस्यैकषष्टिभागाव-भिवर्द्धयन्नभिवर्द्धयन्** त्र्यशीत्यधिकशततमेऽहोरात्रे द्वितीयषण्मास पर्यवसानभूते **'सव्वब्भंतरं'** ति सर्वाभ्यन्तरं **मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।** ' **जया ण'** मित्यादि यदा यस्मिन् काले णमिति पूर्ववत् **सूर्यः सर्वबाह्यान्मण्डलान्** मण्डलपरिभ्रमणगत्या शनैः शनैरभ्यन्तरं प्रविश्य **सर्वाभ्यन्तरमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा सर्वबाह्यमण्डलं प्रणिधाय**-मर्यादीकृत्य तदर्वाक्तनाद् द्वितीयान् मण्डलादारभ्येत्यर्थः **एकेन त्र्यशीत्यधिकेन रात्रिंदिवशतेन त्रीणि षट्षष्टानि** षट्षष्ट्यधिकानि **मुहूर्त्तस्यैकषष्टिभागशतानि रजनिक्षेत्रस्य निर्वेष्ट्य**-हापयित्वा

दिवसक्षेत्रस्य च तान्येव त्रीणि षट्षष्टानि मुहूर्त्तस्यैकषष्टिभागशतान्यभिवर्द्धय **चारं चरति** तदोत्तमकाष्टाप्राप्तः परमप्रकर्षप्राप्त उत्कर्षक उत्कृष्टो अष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति जघन्या च द्वादशमुहूर्त्ता रात्रिः, **एतद् द्वितीयं षण्मासं** यदिवैषा द्वितीया षण्मासी सूत्रे पुंस्त्वनिर्देश आर्षत्वाद्, **एष** षट्षष्ट्यधिकत्रिंशत्तमोऽहोरात्रो **द्वितीयस्य षण्मासस्य पर्यवसानभूतः एष** एवं प्रमाण **आदित्यसंवत्सर एष** षट् षष्ट्यधिकत्रिंशत्तमोऽहोरात्र **आदित्यस्यादित्यसम्बन्धिनः संवत्सरस्य पर्यवसानं प्रज्ञप्तम्**।।३०।।

अथ प्रकाशयुक्तक्षेत्रसंस्थितिविषयप्रश्नमाह-

(३१) जया णं भंते! सूरिए सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं किंसंठिआ तावखित्तसंठिई पण्णत्ता?, गो० [1]उड्ढीमुहकलंबुआपुप्फसंठाणसंठिआ तावखेत्तसंठिई पण्णत्ता अंतो संकुआ बाहिं वित्थडा, अंतो वट्टा बाहिं पिहुला, अंतो अंकमुहसंठिआ बाहिं [2]सगडुद्धीमुहसंठिआ, उभओपासे णं तीसे दो बाहाओ अवट्ठिआओ हवंति पणयालीसं २ जोअणसहस्साइं आयामेणं, दुवे अ णं तीसे बाहाओ अणवट्ठिआओ हवंति, तं जहा–सव्वब्भंतरिआ चेव बाहा सव्वबाहिरिआ चेव बाहा, तीसे णं सव्वब्भंतरिआ बाहा मंदरपव्वयंतेणं णवजोअणसहस्साइं चत्तारि छलसीए जोअणसए णव य दसभाए जोअणस्स परिक्खेवेणं, एस णं भंते! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएति वएज्जा?, गोअमा! जे णं मंदरस्स परिक्खेवे तं परिक्खेवं तिहिं गुणेत्ता दसहिं छेत्ता दसहिं भागे हीरमाणे एस णं परिक्खेवविसेसे आहिएति वएज्जा?, तीसे णं सव्वबाहिरिआ बाहा [3]लवणसमुद्दंतेणं चउणवइ जोअणसहस्साइं [4]अट्ठय [5]अट्ठसट्ठे

---

१. उड्ढं मुह °अब।। २. सत्थीमुह° अबस। सूर्य प्रज्ञप्तौ चन्द्र प्रज्ञप्तौ (४। ४) च सत्थी मुहं° इति पाठो विद्यते। तद्वृत्त्योश्च 'स्वस्तिकः' इति पदं व्याख्यातमस्ति। किन्तु प्रस्तुत सूत्रस्य ३२ सूत्रेऽपि 'सगडद्धी' इत्यवे पाठो दृश्यते। तेनाऽत्र एतदेवपदं स्वीकृतम्। असौ वाचनाभेदः स्यादथवा केनापि कारणेन लिपिभेदोऽपि जातः स्यात्? इति V पृ. ५५८ टि. ४।। ३. °समुद्देणं - अब।। ४. V। अट्ठय मु. नास्ति।। ५. अट्ठट्ठे - अकखत्रिबस।।

जोअणसए चत्तारि अ दसभाए जोअणस्स परिक्खेवेणं, से णं भंते! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएति वएज्जा?, गो०! जे णं जंबुद्दीवस्स दीवस्स परिक्खेवे तं परिक्खेवं तिहिं गुणेत्ता दसहिं छेत्ता दसहिंभागे हीरमाणे एस णं परिक्खेवविसेसे आहिएति वएज्जा इति।।३१।।

'जया णं भंते सूरिए' इत्यादि, यदा भदन्तः सूर्यः **सर्वाभ्यन्तरमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा** णमित्युभयत्रापि प्राग्वत् **किं संस्थिता** किं संस्थानरूपा **तापक्षेत्रस्य संस्थितिः प्रज्ञप्ता?** स्वाम्याह-**गौतम! उड्डीमुहकलंबुकापुप्फसंठिया'** इत्यादि ऊर्ध्वमुखकलम्बुकपुष्पसंस्थिता-ऊर्ध्वमुखस्य कलम्बुका पुष्पस्येव संस्थितं संस्थानं यस्याः सा तथा **तापक्षेत्रसंस्थितिः प्रज्ञप्ता** मया शेषैश्चार्हद्भि सा च कथं भूतेत्यत आह **अंतर्मेरूदिशि सङ्कुचा** सङ्कुचिता **बहिर्लवणदिशि विस्तृता** तथान्तर्मेरुदिशि **वृत्ता,** वृत्तार्द्धवलयाकारा सर्वतो मेरुगतांस्त्रीन् द्वौ वा दशभागानभिव्याप्य तस्या व्यवस्थितत्वात्, **बहिर्लवणदिशि पृथुला** -मुत्कर्षभावेन विस्तारमुपगता। एतदेव संस्थानकथनेन स्फुटं स्पष्टयति-**अंतो अंकमुहसंठिया'** इति अन्तर्मेरुदिशि अङ्कः पद्मासनोपविष्टस्योत्सङ्गरूपआसनबन्धस्तस्य मुखमग्रभागोऽर्द्ध वलयाकारस्तस्यैव संस्थितं संस्थानं यस्याः सा तथा **'उभओ पासे ण'** ति उभयपार्श्वेन मेरुपर्वतस्योभयोः पार्श्वयोस्तस्यास्तापक्षेत्रसंस्थितेः सूर्यभेदेन द्विधा व्यवस्थितयोः प्रत्येकमेकैकभावेन ये **द्वे बाहे** ते आयामेन जम्बूद्वीपगतमायाममाश्रित्या**वस्थिते भवतः** सा चैकैकायामतः किं प्रमाणा इत्याह-**पञ्चचत्वारिंशत् पञ्चचत्वारिंशद्योजन सहस्राणि** ४५००० **आयामतः 'दुवे य णं तीसे'** इत्यादि तस्यास्तापक्षेत्र संस्थितेरेकैकस्य द्वे च **बाहेऽनवस्थिते भवतस्तद्यथा सर्वाभ्यन्तरा सर्वबाह्या च तत्र या मेरुसमीपे** विष्कम्भमधिकृत्य बाहा सा सर्वाभ्यन्तरा या तु लवणदिशि जम्बूद्वीपपर्यन्ते विष्कम्भमधिकृत्य बाहा सा सर्वबाह्या आयामश्च दक्षिणोत्तरायततया प्रतिपत्तव्यो विष्कम्भश्च पूर्वापरायततया

'तीसे ण' मित्यादि, तस्यास्तापक्षेत्रसंस्थितेः **सर्वाभ्यन्तरबाहा मेरुपर्वतान्ते**-मेरुपर्वतसमीपे सा च परिक्षेपेण मन्दरपरिक्षेपगतया **नवयोजनसहस्राणि चत्वारियोजनशतानि षडशीतानि** षडशीत्यधिकानि **नव च दशभागा योजनस्य** ९४८६ ९/१० एवमुक्ते भगवान् गौतमः प्रश्नयति **'एस ण'** मित्यादि एष णमिति प्राग्वत्, तापक्षेत्रसंस्थितेः **परिक्षेपविशेषो** मन्दरस्य परिरयपरिक्षेपणविशेषः **कुतः** कस्मात्कारणादेवं प्रमाण **आख्यातो** नोनोऽधिको वेति **भवेत्**? प्रभुराह-गौतम! **'जे ण'** मित्यादि यो णमिति वाक्यालङ्कारे मन्दरस्य मेरोः पर्वतस्य परिक्षेपः परिरयगणितप्रसिद्धस्तं परिक्षेपं त्रिभि - र्गुणयित्वा तदनन्तरं च दशभिः छित्वा विभज्य। अथ कस्मादेवं क्रियत इति चेदुच्यते-इह सर्वाभ्यन्तरे मण्डले वर्त्तमानः सूर्यो जम्बूद्वीपगतस्य चक्रवालस्य यत्र तत्र प्रदेशे तत्र चक्रवालक्षेत्रप्रमाणानुसारेण त्रीन् दशभागान् प्रकाशयति, एतच्च **सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तौ** विशेषत उक्तं तत एवात्रावसेयं। सम्प्रति च मन्दरस्य समीपे तापक्षेत्रे चिन्ता क्रियमाणा वर्त्तते। ततो मन्दरपरिरयः सुखावबोधार्थं प्रथमतस्त्रिभिर्गुण्यते गुणयित्वा च दशभिर्विभज्यत इति। दशभिश्च भागे ह्रियमाणे यथोक्तं मन्दरसमीपे तापक्षेत्रपरिमाणमागच्छति, तथाहि-मन्दरपर्वतस्य विष्कम्भो दशसहस्राणि १०००० तेषां वर्गो दशकोट्यः १००००००० तासां दशभिर्गुण्यते कोटिशतं १००००००००० अस्य वर्गमूलानयने लब्धानि एकत्रिंशत्सहस्राणि षट्शतानि किञ्चिन्न्यूनत्रयोविंशत्यधिकानि परं व्यवहारतः परिपूर्णानि विवक्ष्यन्ते ३१६२३ एष राशिस्त्रिभिर्गुण्यते जातानि चतुर्नवतिसहस्राण्यष्टौ शतानि एकोनसप्तत्य धिकानि ९४८६९ एषां दशभिर्भागहारे लब्धानि नवयोजनसहस्राणि चत्वारिंशतानि षडशीत्यधिका नव च दश भागा योजनस्य ९४८६ ९/९०तत एष एतावाननन्तरोदितप्रमाणः परिक्षेपविशेषो मन्दरपरिरयपरिक्षेपविशेषस्तापक्षेत्रसंस्थितेराख्यात इति वदेत् स्वशिष्येभ्योऽयं चार्थोऽन्यत्राप्युक्तो **'मंदरपरिरयरासी तिगुणे दसभाइयंमि लद्धं जं होइ तावखेत्ते अब्भिंतरमंडले रविणो**।।१।। तदेवं सर्वाभ्यन्तरे मण्डले वर्त्तमाने

सूर्ये मन्दरसमीपे तापक्षेत्रसंस्थितिः सर्वाभ्यन्तरबाहाया विष्कम्भपरिमाणमुक्तमिदानीं लवणसमुद्रदिशि जम्बूद्वीपपर्यन्ते या सर्वबाह्या बाहा तस्या विष्कम्भ परिमाणमाह-**'तीसे णं** मित्यादि तस्यास्तापक्षेत्रसंस्थितेर्**लवणसमुद्रान्ते**-लवणसमुद्रसमीपे **सर्वबाह्या बाहा** सा परिक्षेपेण जम्बूद्वीपपरिरयपरिक्षेपेण **चतुर्णवतियोजनसहस्राण्यष्टौ चाष्टषष्ट्यधिकानि योजनशतानि चतुरश्च दशभागान् योजनस्य** ९४८६८ ४/१० अत्रैवं स्पष्टावबोधाय प्रश्नं करोति **'से णं भंते'** इत्यादि से ण मिति प्राग्वत् तापक्षेत्रसंस्थितेः **परिक्षेपविशेषः कुतः** कस्मात्कारणादाख्यातो नोनोऽधिको वेति **वदेत्**? स्वाम्याह-गौतम! **'जे णमित्यादि** यो णमिति प्राग्वत्, **जम्बूद्वीपस्य परिक्षेपः** परिरयगणितः सिद्धस्तं **परिक्षेपं त्रिभिर्गुणयित्वा** तदनन्तरं च **दशभिश्छित्वा** दशभिर्विभज्यात्रार्थे कारणं प्रागुक्तमेवानुसरणीयं दशभिर्भागे ह्रियमाणे यथोक्तं जम्बूद्वीपपर्यन्ते तापक्षेत्रपरिमाणमागच्छति तथाहि-जम्बूदीपस्य परिक्षेपस्त्रीणि लक्षाणि षोडशसहस्राणि द्वे शते सप्तविंशत्यधिके वेदितव्ये ३१६२२७ त्रीणि ३गव्यूतान्यष्टाविंशं धनुःशतं १२८ त्रयोदशाङ्गुलानि १३ एकमर्द्धाङ्गुलं १ एतावता प्रयोजनमेकं किल किञ्चिन्न्यूनमिति व्यवहारतः परिपूर्णं विवक्ष्यते ततो द्वे शतेऽष्टाविंशत्यधिके वेदितव्ये ३१६२२८ एतत्त्रिभिर्गुण्यते जातानि नवलक्षाण्यष्टाचत्वारिंशत्सहस्राणि षट्शतानि चतुरशीत्यधिकानि ९४८६६४ एतेषां दशभि र्भागो ह्रियते लब्धं यथोक्तं जम्बूद्वीपपर्यन्ते सर्वबाहाया विष्कम्भपरिमाणं **'एस ण'** मित्यादि एष एतावानन्तरोदितप्रमाणः **परिक्षेपविशेषो** जम्बूद्वीपपरिरयपरिक्षेपविशेषस्तापक्षेत्रसंस्थितेर**ाख्यात इति वदेद्** उक्तं चैतदन्यत्रापि **"जंबूद्वीवपरिरये तिगुणे दस भाइयंमि जं लद्धं तं होइ तावखित्तं अब्भिंतरमंडले रविणो"**।।१।। तदेवं जम्बूद्वीपे तापक्षेत्रसंस्थितेः सर्वाभ्यन्तरायाः सर्वबाह्यायाश्च बाहाया विष्कम्भपरिमाणमुक्तम्।।३१।।

सम्प्रति सामस्त्येनायामतस्तापक्षेत्रपरिमाणं जिज्ञासुस्तद्विषयं प्रश्नसूत्रमाह -

(३२) तया णं भंते! तावखित्ते केवइअं आयामेणं पं० ?, अट्ठहत्तरिं जोअणसहस्साइं तिण्णि अ तेत्तीसे जोअणसए जोअणस्स तिभागं च आयामेणं पण्णत्ते,

मेरुस्स मज्झयारे जाव य लवणस्स रुंदछब्भागो।
तावायामो एसो सगडुद्धीसंठिओ नियमा।।१।।३२।।

'तया णं भंते' इत्यादि तदा णमिति प्राग्वत्, भदन्त! **तापक्षेत्रं कियत्किंप्रमाणमायामत:** सामस्त्येन दक्षिणोत्तरायततया प्रज्ञप्तं? स्वाम्याह-**गौतम!** **'अट्ठत्तरि'** मित्यादि, **अष्टसप्तति- योजनसहस्राणि त्रीणि योजनशतानि** त्रयस्त्रिंशानि त्रयस्त्रिंशदधिकानि **योजनत्रिभागं** च यावद**ायामेन** दक्षिणोत्तरायततया **प्रज्ञप्तं** तथाहि सर्वाभ्यन्तरे मण्डले वर्त्तमानस्य सूर्यस्य तापक्षेत्रं दक्षिणोत्तरायततया मेरोरारभ्य तावद्वर्द्धते यावल्लवणसमुद्रस्य षष्टो भाग:, एतदेवाह-**'मेरुस्स मज्झयारे'** इत्यादि अत्र **'एसो** इत्यादि **एष तापो नियमाच्छकटोद्धिसंस्थित:** शेषं स्पष्टं तत्र मेरोरारभ्य जम्बूद्वीपपर्यन्तं यावत् पञ्चचत्वारिंशद्योजनसहस्राणि लवणस्य विस्तारो द्वे योजनलक्षे तयो: षष्टो भागस्त्रयस्त्रिंशद्योजनसहस्राणि त्रीणियोजनशतानि त्रयस्त्रिंशदधिकानि योजनस्य त्रिभागस्तत उभयमीलने यथोक्तमायामप्रमाणं भवति। इह सर्वाभ्यन्तरे मण्डले वर्त्तमानस्य सूर्यस्य लेश्याऽभ्यन्तरं प्रविशता मेरुणा प्रतिस्खल्यते यदि पुन र्न प्रतिस्खल्यते ततो मेरो: सर्वमध्यभागगतं प्रदेशमवधीकृत्यायामतो जम्बूद्वीपस्य पञ्चाशतयोजनसहस्राणि प्रकाशयेत्, अत एवेत्थं जम्बूद्वीपस्य पञ्चाशतं योजन सहस्राणि प्रकाश्यानि सम्भाव्य सर्वाभ्यन्तरेऽपि मण्डले वर्त्तमाने सूर्ये तापक्षेस्यायामप्रमाणं [१]**ज्योतिष्करण्डकमूलटीकायां श्री पादलिप्तसूरिभिस्त्र्यशीति** योजनसहस्राणि शतानि त्रयस्त्रिंशदधिकानि योजनस्य च त्रिभाग इत्युक्तं चैतत्सम्भावनायां तापक्षेत्रायामपरिमाणमन्यथा जम्बूद्वीपमध्ये तापक्षेत्रस्य पञ्चचत्वारिंशत्सहस्रमात्रपरिमाणाभ्युपगमे यथा सूर्यो बहिर्निष्क्रामति तथा तत्प्रतिबद्धं

१. द्र.अस्मत्कृत ज्योतिषकरण्डके।।

तापक्षेत्रमपि ततो यदा सूर्यः सर्वबाह्यं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा सर्वथा मन्दरसमीपे प्रकाशो नाप्नोति। अथ च तदापि तत्र मन्दरपरिरयपरिक्षेपणविशेषपरिमाणं **सूर्यप्रज्ञप्तिटीकादौ** प्रतिपादितं तस्मात्**पादलिप्तसूरिव्याख्यानमप्यभ्युपगंतव्यमिति**। तदेवं सर्वाभ्यन्तरमण्डलमधिकृत्य तापक्षेत्र संस्थितिरूक्ता।।३२।।

सम्प्रति तदेव सर्वाभ्यन्तरमण्डलमधिकृत्यान्धकारसंस्थितिं प्रतिपादयिषुस्तद्विषयं प्रश्नसूत्रमाह-

(३३) तया णं भंते! किंसंठिआ अंधकारसंठिई पण्णत्ता?, गोअमा! उड्ढीमुहकलंबुआ -पुप्फसंठाणसंठिआ अंधकारसंठिई पण्णत्ता, अंतोसंकुआ बाहिं वित्थडा तं चेव जाव तीसे णं सव्वब्भंतरिआ बाहा मंदरपव्वयंतेणं छज्जोअणसहस्साइं तिण्णि अ चउवीसे जोअणसए छच्च दसभाए जोअणस्स परिक्खेवेणंति, से णं भंते! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएतिवएज्जा? गो०! जे णं मंदरस्स पव्वयस्स परिक्खेवे तं परिक्खेवं दोहिं गुणेत्ता दसहिं छेत्ता दसहिं भागे हीरमाणे, एस णं परिक्खेवविसेसे आहिएति वएज्जा, तीसे णं सव्वबाहिरिआ बाहा लवणसमुद्दंतेणं तेसट्ठी[1] जोअणसहस्साइं दोण्णि य पणयाले जोअणसए छच्च दसभाए जोअणस्स परिक्खेवेणं, से णं भंते! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएतिवएज्जा?, गो०! जे णं जंबुद्दीवस्स परिक्खेवे तं परिक्खेवं दोहिं गुणेत्ता जाव तं चेव।।३३।।

'तया ण' मित्यादि, तदा सर्वाभ्यन्तरमण्डलचारकाले **'किं संठिय'** त्ति किं संस्थितं-संस्थानं यस्याः सा यदिवा कस्येव संस्थितं-संस्थानं यस्याः सा किं संस्थिता **अन्धकारसंस्थितिः प्रज्ञप्ता**? भगवानाह-**गौतम! 'उद्धीमुहे'** त्यादि ऊर्ध्वमुखीकृत **कलम्बुकापुष्पसंस्थिताऽन्धकारसंस्थिति प्रज्ञप्ता** सा चान्तर्मेरुदिशि विष्कम्भमधिकृत्य

१. तेवट्ठी - अकखबस।।

सङ्कुचा सङ्कुचिता बहिर्लवणदिशि **विस्तृता 'तं चेव जाव'** त्ति इह यावत्करणात् 'अंतोवट्टा बाहि पिहुला अंतोंकमुहसंठिया बाहि सत्थीमुहसंठिया उभओ पासेण तीसे दो दो बाहाओ अवट्ठियाओ भवंति पणयालीसं जोयणसहस्साइं आयामेणं दुवे य णं तीसे बाहाओ अवट्ठियाओ भवंति तं सव्वब्भंतरिय च्चेव सव्वबाहिरिय च्चेव बाहा' इति दृश्यं प्राग्वद्व्याख्येयं च तत्र सर्वाभ्यन्तराया बाहाया विष्कम्भमधिकृत्य प्रमाणमभिधित्सुराह- **'तीसे ण'** मित्यादि तस्या अन्धकारसंस्थितेः **सर्वाभ्यन्तरा** या **बाहा मन्दरपर्वतान्ते**-मन्दरपर्वतसमीपे सा च **षट् योजनसहस्राणि त्रीणि शतानि चतुर्विंशानि** चतुर्विंशत्यधिकानि ६३२४ **षट् च दशभागान् योजनस्य** यावत्**परिक्षेपेणा**मुमेवार्थं स्पष्टावबोधार्थं पृच्छति **'से णं भंते'** इत्यादि तस्या अन्धकारसंस्थितेः स यथोक्तप्रमाण**परिक्षेपविशेषो** मन्दरपरिरयपरिक्षेपणविशेषः **कुतः** कस्मात्कारणा**दाख्यातो** नोनाधिको चेति? तदेवं प्रश्ने कृते भगवानाह-गौतम! **'जे ण** मित्यादि यो णमिति प्राग्वत्, **मन्दरस्य पर्वतस्य परिक्षेपः** प्रागुक्तप्रमाणस्तं **परिक्षेपं द्वाभ्यां गुणयित्वा,** कस्माद् द्वाभ्या गुणनमिति चेदुच्यते-इह सर्वाभ्यन्तरे मण्डले चारं चरतोः सूर्ययोरेकस्यापि सूर्यस्य त्रयः प्रकाश्य दशभागादिति दशभिर्भागहरणं **दशभिश्छित्वा** दशभिर्विभज्य **दशभिर्भागे क्रियमाणे** यथोक्तमन्धकारसंस्थितमन्दरे परिक्षेपेण परिमाणमागच्छति, तथाहिमेरुपर्वतपरिमाणमेकत्रिंशद्योजनसहस्राणि षट्शतानि त्रयोविंशत्य धिकानि ३१६२३ एतद् द्वाभ्यां गुण्यते जातानि त्रिषष्टिः सहस्राणि द्वे शते षट् चत्वारिंशदधिके ६३२४६ एतेषां दशभिर्भागे हृते लब्धानि षट् योजनसहस्राणि त्रीणि शतानि चतुर्विंशत्यधिकानि षट् दश भागा योजनस्य ६३२३, ६/१० तत एष एतावाननन्तरोदितप्रमाणोऽन्धकारसंस्थितेः **परिक्षेपविशेषो** मन्दरपरिरयपरिक्षेपणविशेष **आख्यात इति वदेत्,** तदेवमुक्तमन्धकारसंस्थितेः सर्वाभ्यन्तराया बाहाया विष्कम्भपरिमाणमधुना सर्वबाह्याया बाहाया आह **'तीसेण'** मित्यादि तस्या अन्धकार संस्थितेः

सर्वबाह्या बाहा लवणसमुद्रान्ते लवणसमुद्रसमीपे जम्बूद्वीपपर्यन्ते सा च परिक्षेपेण परिरयपरिक्षेपणेनाख्याता त्रिषष्टिर्योजनसहस्राणि द्वे च पञ्चचत्वारिंशे योजनशते षट् च दशभागान् योजनस्य ६३२४५ ६/१० एतदेव स्पष्टं स्वशिष्यानवबोधयितुं भगवान् गौतमः पृच्छति' **से ण**' मित्यादि तस्या अन्धकारसंस्थितेः स तावान् **परिक्षेपविशेषो** जम्बूद्वीपपरिक्षेपण विशेषः **कुतः** कस्मात्कारणा**दाख्यातो** नोनोऽधिको वेति **वदेद्**? भगवान् वर्द्धमानस्वाम्याह-गौतम! **'जे ण'** मित्यादि **यो** णमिति वाक्यालङ्कारे **जम्बूद्वीपस्य परिक्षेपः** प्रागुक्तप्रमाण**स्तं परिक्षेपं द्वाभ्यां गुणयित्वा 'जाव तं चेव'** त्ति यावत्तदेव प्रागुक्तं वाच्यं वर्णितं स्यात्तावद्वक्तव्यमिति भावस्तच्चैवं **'दसहिं छेत्ते'** त्यादि दशभिश्छित्वा दशभि र्विभज्यात्र कारणं प्रागेवोक्तं दशभि र्भागे ह्रियमाणे यथोक्तमन्धकारसंस्थिते र्जम्बूद्वीपपरिरयपरिक्षेपपरिमाणमागच्छति। तथाहि जम्बूद्वीपस्य परिक्षेपपरिमाणं त्रीणि लक्षाणि षोडशसहस्राणि द्वे शतेऽष्टाविंशत्यधिके ३१६२२८ एतच्च द्वाभ्यां गुण्यते जातानि षट् लक्षाणि द्वात्रिंशत्सहस्राणि चत्वारिशतानि षट्पञ्चाशदधिकानि ६३२४५६ तेषां दशभिर्भागे ह्रते लब्धानि त्रिषष्टिर्योजनसहस्राणि द्वे शते पञ्चचत्वारिंशदधिके षट् च दशभागा योजनस्य ६३२५४,६/१० तत एष एतावाननन्तरोदित प्रमाणोऽन्धकारसंस्थितेः परिक्षेपविशेषो जम्बूद्वीपपरिरयपरिक्षेपणविशेष आख्यात इति वदेत्, तदेवमुक्तं सर्वबाह्यया अपि बाहाया विष्कम्भपरिमाणम्।।३३।।

सम्प्रति सामस्त्येनान्धकारसंस्थितेरायामप्रमाणमाह–

(३४) तया णं भंते! अंधयारे केवइए आयामेणं पं०?, गो०! अट्ठहत्तरिं जोअणसहस्साइं तिण्णि अ तेत्तीसे जोअणसए जोयणतिभागं च आयामेणं प०।।३४।।

तया णं अंधकारे' इत्यादि, इदं चायामप्रमाणं तापक्षेत्रसंस्थितिगतायामपरिमाणवत्परिभावनीयं समानभावनीकत्वात्।।३४।।

तदेवं सर्वाभ्यन्तरे मण्डले तापक्षेत्रसंस्थितिमन्धकारसंस्थितिं चाभिधाय सम्प्रति सर्वबाह्यमण्डले तामभिधित्सुराह-

(३५) जया णं भंते! सूरिए सव्वबाहिरमंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं किंसंठिआ तावक्खित्तसंठिई पं०?, गो०? उड्ढीमुहकलंबुआपुप्फसंठाणसंठिआ पण्णत्ता, तं चेव सव्वं णेअव्वं णवरं णाणत्तं जं अंधयारसंठिइए पुव्ववण्णिअं पमाणं तं तावखित्तसंठिईए [1]णेअव्वं, जं ताव खित्तसंठिईए पुव्ववण्णिअं पमाणं तं [2]अंधयारसंठिईए [3]णेअव्वं।।३५।।

'जया ण' मित्यादि, यदा **भदन्त! सूर्यः सर्वबाह्यमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदा किं संस्थिता तापक्षेत्रसंस्थितिः प्रज्ञप्ता?** स्वाम्याह-गौतम! **'उड्ढीमुहे'** त्यादि, **ऊर्ध्वमुखकलम्बुका पुष्पसंस्थिता तापक्षेत्रसंस्थितिः प्रज्ञप्ता 'तं चेव सव्वं णेयव्वं** ति तदेवं पूर्वोक्तं सर्वमत्र ज्ञातव्यं **'णवरि णाणत्तं'** ति केवलमिहेदं नानात्वं विशेषस्तदेवाह **'जं अंधकारसंठितीए'** इत्यादि यदभ्यन्तरमण्डलगते सूर्येऽन्धकारसंस्थितेः **पूर्ववर्णितप्रमाणं तद्बाह्यमण्डलगते सूर्येऽन्धकारसंस्थितेः** प्रमाणं **ज्ञातव्यमिति।।३५।।**

तदेवमुक्तं तापक्षेत्रसंस्थितेरन्धकारसंस्थितेश्च परिमाणं पुनः सूर्यवक्तव्यतामेवाह-

(३६) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिआ उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे अ मूले अ दीसंति? मज्झंतिअमुहुत्तंसि मूले अ दूरे अ दीसंति? अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे अ मूले अ दीसंति?, हंता गो०! तं चेव जाव दीसंति।।३६।।

जंबुद्दीवेणं भंते दीवे सूरिया' इत्यादि जम्बूद्वीपे भदन्त! द्वीपे सूर्यो **उद्गमनमुहूर्त्ते** उदयवेलायां 'दूरे य मूले य दीसंति' त्ति **दूरे च मूले च दीसंति'** त्ति दूरे च दृष्टस्थानापेक्षया व्यवहिते देशे मूले वासन्ने द्रष्टृप्रतीत्यपेक्षया सूर्यो दृश्यते द्रष्टा हि स्वरूपतो बहुभिर्योजनसहस्रै

१. द्र. ७। ३३-३४।। २. अंधकारस्स - अकखत्रिबस।। ३. द्र. ७। ३१.३२।।

-व्यवहितमुद्गमास्तमययोः सूर्यं पश्यति आसन्नं पुनर्मन्यते सद्भूतं तु विप्रकर्षं सन्तमपि न प्रतिपद्यत इति **'मज्झंतियमुहूत्तंसि मूले य दूरे य दिसंति'** त्ति मध्यो मध्यमोऽन्तो विभागो गगनस्य दिवसस्य वा मध्यान्तः स यस्य मुहूर्त्तस्यास्ति स मध्यान्तिकः स चासौ मुहूर्त्तश्चेति मध्यान्तिकमुहूर्त्तस्तत्र मूले वासन्ने देशे दृष्टस्थानापेक्षया दूरे व्यवहिते देशे दृष्टप्रतीत्यपेक्षया सूर्यो दृश्यते। द्रष्टा हि मध्याह्नोदयास्तमयदर्शनापेक्षयासन्नं रविं पश्यति योजनशताष्टकेनैव तदा तस्य व्यवहितत्वान्मन्यते पुनरुदयास्तमयप्रतीत्यपेक्षया व्यवहितमिति **'अत्थमणमुहुत्तं सि'** त्ति अस्तमयवेलायां **दूरे च मूले च दृश्यते** इति काक्वा प्रश्नः **'हंते'** ति एवमेव **गौतम! 'तं चेवं** त्ति यथा प्रश्नसूत्रं तथैव निर्वचनसूत्रमपि **यावद् दृश्यते**।।३६।।

अथोच्चत्वविषयप्रश्नमाह –

(३७) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिआ उग्गमणमुहुत्तंसि या मज्झंतिअमुहुत्तंसि या अत्थमणमुहुत्तंसि या सव्वत्थ समा उच्चत्तेणं? हंता तं चेव जाव उच्चत्तेणं ।।३७।।

'जंबूद्दीवे ण' मित्यादि, जम्बूद्वीपे **भदन्त! द्वीपे सूर्यावुद्गमनमुहूर्त्ते मध्यान्तिकमुहूर्त्ते च सर्वत्र समावूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन** समभूतलापेक्षया सर्वत्रोच्चत्वमष्टौ योजनशतानीति कृत्वेति काक्वा प्रश्नः स्वाम्याह- **'हंते'** त्यादि प्राग्वत्।।३७।।

अथ पूर्वापरवाक्ययोः किंचिद्विरोधमुद्भाव्य भूयो गौतमः पृच्छति-

(३८) जइ णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे सूरिआ उग्गमणमुहुत्तंसि या मज्झं० अत्थ० सव्वत्थ समा उच्चत्तेणं, कम्हा णं भंते! जम्बुद्दीवे दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे अ मूले अ दीसंति०, गोयमा! लेसापडिघाएणं उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे अ मूले अ दीसंति लेसाहितावेणं मज्झंतिअमुहुत्तंसि मूले अ दूरे य दीसंति लेसापडिघाएणं अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे अ मूले अ दीसंति, एवं खलु गोअमा! तं चेव जाव दीसंति

१०।।३८।।

'**जइ णं भंते**-इत्यादि, यदि भदन्त! **जम्बूद्वीपे द्वीपे** सूर्यावुद्गमनमुहूर्त्ते मध्यान्तिक मुहूर्त्तेऽस्तमयमुहूर्त्ते च सर्वत्र समावुच्च्त्वेन तर्हि **कम्हा णं**' ति कस्माद्धेतोर्णमिति वाक्यालङ्कारे **भदन्त! जम्बूद्दीवे**' इत्यादि प्राग्वत्, अथ विरोधं निरस्यन्प्रभु:प्राह-**गौतम! 'लेसा पडिघाएणं**' ति लेश्याप्रतिघातेन तेजस: प्रतिघातेन दूरतरत्वात्तद्देशस्य तदपसरणेनेत्यर्थ:। लेश्याप्रतिघाते हि सुखदृश्यत्वेन दूरस्थोऽपि स्वरूपेणसूर्य आसन्नप्रतीतिं जनयति। अत **उद्गमनमुहूर्त्ते दूरे मूले च दृश्यते' लेसाहिं तावेणं**' ति तेजसोऽभितापेन मध्याह्ने ह्यासन्नतरत्वात्सूर्य स्तेजसाधस्तपति तेज: प्रतापे च दुर्दृश्यत्वेन प्रत्यासन्नोऽप्यसौ दूर प्रतीतिं जनयतीति। अतो मध्यान्तिक**मुहूर्त्ते मूले च दूरे च** सूर्यो **दृश्यते 'लेसा पाडिघाएण** मित्यादि प्राग्वत्।।३८।।

(३९) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिआ किं तीअं खेत्तं गच्छंति पडुप्पण्णं खेत्तं गच्छंति अणागयं खेत्तं गच्छंति?, गो०! णो तीअं खेत्तं गच्छन्ति पडुप्पण्णं खेत्तं गच्छंति णो अणागयं खेत्तं गच्छंतित्ति।।३९।।

'**जंबूद्दीवे**' इत्यादि जम्बूद्वीपे **भदन्त! द्वीपे सूर्यो किमतीतमतिक्रान्तक्षेत्रं गच्छत**: उत **प्रत्युत्पन्नं** वर्त्तमानकाले गम्यमानमेव **क्षेत्रं गच्छत**: आहोस्विदनागत **क्षेत्रं गच्छत**:? स्वाम्याह-**गौतम! नोऽतीतक्षेत्रं गच्छतोऽतीतक्षेत्रस्यातिक्रान्तत्वात्' पडुप्पन्नं गच्छंति**' त्ति प्रत्युत्पन्नं वर्त्तमानं गम्यमानमित्यर्थ: क्षेत्रं गच्छतस्तौ **अनागतं क्षेत्रं** गच्छत: उत्तरकाले तस्य गमिष्यमाणत्वादिति।।३९।।

(४०-४८) तं भंते! किं पुट्ठं गच्छन्ति जाव नियमा छद्दिसिं।।४०-४८।।

(४९) एवं ओभासेंति।।४९।।

एवं ओभासंति' ति एवमितिगमनसूत्रवदवभासनसूत्रमपि वाच्यं तच्चैवं ' **जंबूद्दीवे णं भंते**

दीवे सूरिया किं अतीतं खेत्तं ओभासंति' इति एतच्च प्रागुक्तसूत्रवद् भावनीयमिह च यदाकाशखण्डमादित्यः स्वतेजसा व्याप्नोति तत्क्षेत्रमुच्यते।।४०-४९।।

(५०) तं भंते! किं पुट्ठं ओभासेंति? एवं आहारपयाइं णेअव्वाइं पुट्ठोगाढमणंतर-अणुमहआदिविसयाणुपुव्वी अ जाव णिअमा छद्दिसिं।।५०।।

'तं भंते किं पुट्ठं उभासंति अपुट्ठं' तद्भदन्त! क्षेत्रं 'किं पुट्ठं' ति तेजसा स्पृष्टमवभासयतः ईषदुद्योतयतेऽस्पृष्टं वा? **'एवं आहारपयाइं नेयव्वाइं'** ति यथाह्याहारमाश्रित्य स्पृष्टादीनि पदानि सन्ति तथात्रापि ज्ञातव्यानि तान्येव दर्शयति **पुट्ठो गाढमणंतरे'** त्यादि स्पष्टं जाव **नियमं छद्दिसि'** ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं 'गोयमा! पुट्ठं उभासइ नो अपुट्ठं तं भंते किं ओगाढं ओभासइ अणोगाढं ओभासइ? गोयमा! ओगाढं ओभासइ नो अणोगाढं, एवं अणंतरोगाढं ओभासइ णो परोगाढं। तं भंते किं अणुं ओभासइ बायरं ओभासइ? गोयमा! अणुं पि ओभासइ बायरं पि ओभासइ, तं भंते! किं उड्ढं ओभासेइ तिरियं ओभासेइ अहे ओभासेइ? गोयमा! ओड्ढंपि अहे वि तिरियं वि। तं भंते! आइं ओभासइ मज्झे ओभासइ अंते ओभासइ? गोयमा! आई पि ओभा०, तं भंते! सविसए ओभासइ अविसए ओभासइ? गोयमा! सविसए ओभासइ नो अविसए। तं भंते! आणुपुव्विं ओभासइ अणाणुपुव्विं ओभासइ? गोयमा! आणुपुव्विं ओभासइ णो अणाणुपुव्विं। तं भंते! कइ दिसिं ओभासइ? गोयमा! नियमा छद्दिसि' मित्येतच्च व्यक्तार्थम्। य 'एवं ओभासेइ' इत्यनेन।।५०।।

सह सूत्र प्रपञ्च उक्तः 'स एव उज्जायइ' इत्यादिनापि पदत्रयेण वाच्य इति दर्शयन्नाह-

(५१) एवं उज्जोवेंति तवेंति पभासेंति ११।।५१।।

एवं उज्जोविंती' त्यादि, तत्रोद्यातयतो भृशं प्रकाशयतो यथा स्थूलमेव दृश्यते **'तवंति'** त्ति तापयतोऽपनीतशीतं कुरुतः उष्णरश्मित्वात्तयोर्यथा वा सूक्ष्मपिपीलिकादि दृश्यते तथा

कुरुत: **प्रभासय**तोऽतितापयोगाद्विशेषतोऽपनीतशीतं विधत्तो यथा वा सूक्ष्मतरं वस्तु दृश्यते तथा कुरुत: शोभयतो वा इति।।५१।।

उक्तमेवार्थं शिष्यहिताय प्रकारान्तरेणाह-

(५२) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिआणं किं तीते खित्ते किरिआ कज्जइ पडुप्पण्णे० अणागए०?,गो०! णो तीए खित्ते किरिआ कज्जइ, पडुप्पण्णे कज्जइ, णो अणागए।।५२।।

'जंबूद्दीवे' इत्यादि, जम्बूद्वीपे **भदन्त**! द्वीपे **सूर्ययो: किमतीते क्षेत्रे 'किरिया कज्जइ'** त्ति अवभासनादिका क्रिया भवतीत्यर्थ: **प्रत्युत्पन्नेऽनागते** वा? प्रभुराह-**गौतम! नोऽतीते क्षेत्रे क्रिया भवति प्रत्युत्पन्ने प्रकाश्यमानतया वर्त्तमाने भवति नोऽनागते।।५२।।**

(५३) सा भंते! किं पुट्ठा कज्जइ०?, गोअमा! पुट्ठा णो अणापुट्ठा कज्जइ जाव णिअमा छद्दिसिं।।५३।।

'सा भंते' इत्यादि सा भदन्त! अवभासनादिका क्रिया **किं स्पृष्टा** उतास्पृष्टा **'कज्जइ'** त्ति भवति? स्वाम्याह-**गौतम! स्पृष्टा** तेजसा स्पृष्टात्स्पर्शनाद्या सा स्पृष्टा **नोऽस्पृष्टा भवति जाव नियमा छद्दिसि'** ति इह यावत्करणादवगाढानन्तरादिपदजातं दृश्यं प्राग्वत्परिभावनीयं च।।५३।।

(५४) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिआ केवइअं खेत्तं उड्ढं तवयंति अहे तिरिअं च?, गोअमा! एगं जोअणसयं उड्ढं तवयंति, अट्ठारससयजोअणाइं अहे तवयंति, सीआलीसं जोअणसहस्साइं दोण्णिं अ तेवट्ठे जोअणसए एगवीसं च सट्ठिभाए जोअणस्स तिरिअं [१]तवयंति१३।।५४।।

---

१. तवंति - अब ।।

'जंबूद्दीवे' इत्यादि जम्बूद्वीपे **भदन्त! सूर्यो कियत्क्षेत्रमूर्ध्वं तापयत**: प्रकाशयतस्तथा **कियदध**: **कियत्तिर्यक्** च तापयत:? स्वाम्याह-**गौतम! एकं योजनशतमूर्ध्वं तापयत**: प्रकाशयत: स्वविमानस्योपरि योजनशतं प्रमाणस्यैव तापक्षेत्रस्य **भावादष्टादशयोजनशतान्यधस्तापयतो** यत: सूर्यादष्टासु योजनशतेषु भूतलं भूतलाच्च योजनसहस्रेऽधोलोकग्रामास्तांश्च यावदुद्योतनादष्टादशयोजनशतानि भवन्तीति **सप्तचत्वारिशंद्योजनसहस्राणि द्वे च योजनशते त्रिषष्टे** त्रिषष्ट्यधिके **एकविंशति च षष्टिभागान् योजनस्य** ४७२६३ २१/६० **तिर्यक् तापयत**: एतच्च सर्वोत्कृष्टदिवसे चक्षु: स्पर्शापेक्षयावसेयमिति।।५४।।

सम्प्रति मनुजक्षेत्रान्तवर्त्तिचन्द्रादीनां स्वरूपं बोद्धुकाम: पृच्छति -

(५५) अंतो णं भंते! माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जे चंदिमसूरिअगहगणणक्खत्ततारारूवा णं भंते! देवा किं उड्ढोववण्णगा कप्पोववण्णगा विमाणोववण्णगा चारोववण्णगा चारट्ठिईआ गइरइआ गइसमावण्णगा?, गोअमा! अंतो णं माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जे चंदिमसूरिअ जाव तारारूवा ते णं देवा णो उड्ढोववण्णगा, णो कप्पोववण्णगा, विमाणोववण्णगा, चारोववण्णगा, णो चारट्ठिईआ, गइरइआ, गइसमावण्णगा, उड्ढीमुहकलंबुआपुप्फसंठाणसंठिएहिं जोअणसाहस्सिएहिं तावखेत्तेहिं साहस्सिआहिं [1]वेउव्विआहिं बाहिराहिं परिसाहिं महयाहय-णट्ट-गीअ-वाइअ-तंती-तल-ताल-तुडिअ-घण-मुइंग-पडुप्पवाइअरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा महया [2]उक्किट्ठिसीहणायबोलकलकलरवेणं अच्छं पव्वयरायं पयाहिणावत्तमण्डलचारं मेरुं अणुपरिअट्टंति १४।।५५।।

'अंतो णं भंते' इत्यादि, अन्तर्मध्ये णमिति वाक्यालङ्कारे भदन्त! **मानुषोत्तरस्य पर्वतस्य**

१. बाहिरियाहिं वेउव्वियाहिं - जीवा. ३। ८४२, १९। २३।। २. उक्किट्ठि° मु.स । उक्कीट्ठि° अब।।

ये चन्द्रसूर्यग्रहगणनक्षत्रतारारूपा देवास्ते भदन्त! देवाः **किमूर्ध्वोपपन्नाः** सौधर्मादिभ्यो द्वादशकल्पेभ्य ऊर्ध्वमुपपन्नाः ऊर्ध्वोपपन्नाः कल्पेषु सौधर्मादिषूपपन्नाः **कल्पोपन्ना** विमानेषु सामान्यरूपेषूपपन्ना **विमानोपपन्नाः** चारामण्डलगत्या परिचरणं तमुपपन्नाः आश्रिता**श्चारोपपन्ना**श्चारस्य यथोक्तरूपस्य स्थितिरभावो येषां ते **चारस्थितिका** अपगतचारा इत्यर्थः, गतौ रतिरासक्तिः प्रीतिर्येषां ते **गतिरतिकाः** एतेन गतौ रतिमात्रमुक्तं। सम्प्रति साक्षाद्गतिं प्रश्नयति **गतिसमापन्नाः** गतियुक्ता एवं गौतमेन प्रश्ने कृते भगवानाह-**गौतम! अन्त** मर्ध्ये णं वाक्यालङ्कृतौ **मानुषोतरस्य पर्वतस्य चन्द्रसूर्यग्रहगणनक्षत्रतारारूपास्ते देवा** णमिति पूर्ववत्, **नोर्ध्वोपपन्नाः नापि कल्पोपपन्नाः** किन्तु **विमानोपपन्नाश्चारोपपन्ना**श्चारसहिता **नो चारस्थितिका**स्तथा स्वभावतोऽपि **गतिरतिकाः** साक्षाद्गतियुक्ताश्च। ऊर्ध्वमुखीकृतकलम्बुकापुष्पसंस्थानसंस्थितैर्योजनसाहस्रिकैरनेकयोजनसहस्रप्रमाणैस्तापक्षेत्रैः साहस्रिकैरनेकसहस्रसङ्ख्याभिर्बाह्याभिः **पर्षद्भिरत्र** बहुवचनं व्यक्त्यपेक्षया **वैकुर्विकाभि**र्विकुर्वितनानारूपधारिणीभिः **'महया हय नट्टगीयवाइय-तंती-तल-ताल-तुडिय-घण-मुइंग-पडुप्पवाइयरवेणं'** ति प्राग्वाद्दिव्यान् प्रधानान् भोगार्हा भोगाः शब्वादयो **भोगभोगास्तान् भुञ्जानास्तथा** च स्वभावतो गतिरतिकै बाह्यपर्षदन्तर्गतैर्दीर्ववैर्वेगेन गच्छत्सु विमाने**षूत्कृष्टत** उत्कर्षवशेन ये मुञ्च्यते **सिंहनादादयो** यश्च क्रियते **बोलो** नाम मुखे हस्तं दत्त्वा महता शब्देन पूत्करणं यश्च **कलकलो** व्याकुलशब्वसमूहस्तद्रवेण महता समूहरवभूतमिव कुर्वाणा मेरुमिति योगः। किं विशिष्टमित्याह-**अच्छ**मतीवस्वच्छमतिनिर्मलं जाम्बूनदमयत्वात् रत्नबहुलत्वाच्च **पर्वतराजं** पर्वतेन्द्रं **प्रदक्षिणावर्त्तमण्डलचारं** यथा भवति तथा **मेरुमनु**लक्षीकृत्य **परियन्ति**-पर्ययन्ति ।।५५।।

पुनः प्रश्नयति-

(५६) तेसि णं भंते! देवाणं जाहे इंदे चुए भवइ से कहमियाणिं पकरेंति?, गो०! [१]ताहे चत्तारि पंच [२]वा सामाणिआ देवा तं ठाणं उवसंपज्जित्ता णं विहरंति जाव [३]तत्थ अण्णे इंदे उववण्णे भवइ।।५६।।

'तेसि णं भंते' त्यादि, तेषां भदन्त! ज्योतिष्कदेवानां **यदा इन्द्रश्च्यूतो** भवति तदा ते देवा **इदानीमिन्द्रविरहकाले कथं प्रकुर्व्वन्ति**? स्वाम्याह-**गौतम!** यावच्चत्वार: **पञ्च वा सामानिका देवा:** समुदितीभूय **तत्स्थानमिन्द्रस्थानमुपसम्पद्य विहरन्ति** तदिन्द्रस्थानं परिपालयन्ति। सञ्जातौ शुक्लस्थानादिकं पञ्चकुलवत्' कियन्तं कालं **यावदिन्द्रस्थानं** परिपालयन्तीति चेदत आह - **यावदन्यस्तत्रेन्द्र** उत्पन्नो भवति।५६।।

(५७) इंददाणे णं भंते! केवइ[४]अं कालं उववाएणं विरहिए?, गो०! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं छम्मासे [५]उववाएणं विरहिए।।५७।।

'इंददाणे ण' मित्यादि, इन्द्रस्थानं **भदन्त! कियन्तं कालमुपपातेन विरहितं** प्रज्ञप्तं? स्वाम्याह-**गौतम! जघन्येनैकं समयं यावदुत्कर्षत: षण्मासान्।।५७।।**

(५८) बहिआ णं भंते! माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जे चंदिम जाव तारारूवा तं चेव णेअव्वं णाणत्तं विमाणोववण्णगा णो चारोववण्णगा चारठिईआ णो गइरइआ णो गइसमावण्णगा [६]पक्किट्ठगसंठाणसंठिएहिं जोअणसयसाहस्सिएहिं तावखित्तेहिं सयसाहस्सिआहिं वेउव्विआहिं बाहिराहिं परिसाहिं महयाहयणट्ट जाव भुंजमाणा सुहलेसा मंदलेसा मंदातवलेसा चित्तंतरलेसा अण्णोण्णसमोगाढाहिं लेसाहिं कूडाविव ठाणठिआ सव्वओ समंता ते पएसे ओभासेंति उज्जोवेंति पभासेंति।।५८।।

(५९-६०) तेसि णं भंते! देवाणं जाहे इंदे चुए भवइ से कहमियाणिं पकरेंति जाव

---

१. जाव अकखत्रिबसपुवृ.।। २. वा - अकखत्रिपबस - नास्ति।। ३. तत्थण्णे - V। तत्थ णं इंदे - त्रि. हीवृ.।।
४. °अं - अकखत्रिस - नास्ति।। ५. विरहिए उववाएणं - अकखत्रिबस।। ६. वंकिट्ट° अकखत्रिबसहीवृ.।।

जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं छम्मासा १५ ।।५९-६०।।

'बहि ण' मित्यादि बहिर्भदन्त! **मानुषोत्तरस्य पर्वतस्य ये चन्द्रसूर्यग्रहनक्षत्रतारारूपास्ते** भदन्त! देवाः किमूर्ध्वोपपन्ना इत्यादि प्राग्वत्? स्वाम्याह-गौतम! नोर्ध्वोपपन्नका नापि कल्पोपपन्नाः किंतु **विमानोपपन्नास्तथा न चारोपपन्नाश्चारयुक्ताः** किन्तु **चारस्थितिकाः**, अत एव **नो गतिरतयो नापि गतिसमापन्नकाः** **'पक्किट्ठगसंठाणसंठिएहिं'** ति पक्वेष्टकासंस्थानसंस्थितै **र्योजनशतसाहस्रिकैरातपक्षेत्रै**र्यथा पक्वेष्टका आयामतो दीर्घा भवन्ति विस्तारतस्तु स्तोकाश्चतुरस्राश्च तथा तेषामपि मनुष्यक्षेत्राद्बहिव्यवस्थितानां चन्द्रसूर्याणामातपक्षेत्राणि आयामतोऽनेकयोजनशतसहस्रप्रमाणानि विस्तारतस्तु योजनशतसहस्राणि चतुरस्राणि वेति। तैरिच्छं भूतैरातपक्षेत्रैः साहस्रिकाभिरनेकसंख्याभि**र्बाह्याभिः** पर्षद्भिरत्रापि बहुवचनं व्यक्त्यपेक्षया **'महया हये'** त्यादि समुद्रवभूतमिव कुर्व्वन्तीति प्राग्वत् कथं भूता इत्याह-**शुभलेश्याः** सुखलेश्या वा। एतच्च विशेषणं चन्द्रमसः प्रवितेन शीतकाले मनुष्यलोक इव नातिशीततेजसः किन्तु सुखोत्पादहेतुपरमलेश्याका इत्यर्थः, **मन्दलेश्या** एतच्च विशेषणं सूर्यात्प्रति तथा चैतदेव व्याचष्टे **मन्दातपलेश्याः** मन्दा नात्युष्णस्वभावा निदाघसमय इव मनुष्यलोके आतपरूपलेश्या रश्मिसङ्घातो येषां ते तथाह च **तत्वार्थटीकाकृत् हरिभद्रसूरि**र्नात्यन्तशीतश्चन्द्रमसो नाप्यत्यन्तोष्णाः सूर्याः किन्तु साधारणा द्वयोरपीति पुनः कथं भूताश्चन्द्रादित्या इत्याह-**चित्रान्तरलेश्याश्चित्रमन्तरं लेश्या** च प्रकाशरूपा येषां ते तथा तत्र चित्रमन्तरं चन्द्राणां सूर्यान्तरितत्वात् सूर्याणां चन्द्रान्तरितत्वात् चित्रा लेश्या च चन्द्रमसात्शीतरश्मित्वात् सूर्याणामुष्णरश्मित्वात् ते इत्थं भूताश्चन्द्रादित्याः परस्परमवगाढाभि र्लेश्याभिस्तथाहि-चन्द्रमसां सूर्याणां च प्रत्येकं लेश्या योजनसहस्रप्रमाणविस्ताराश्चद्रसूर्याणां च सूचीपङ्क्त्या व्यवस्थितान् परस्परमन्तरं पञ्चाशोजन सहस्राणि, ततश्चन्द्रप्रभासन्मिश्राः

सूर्यप्रभाः सूर्यप्रभासन्मिश्राश्चन्द्रप्रभाः इतीत्थं परस्परमवगाढाभिर्लेश्याभिः कूटानीव पर्वतोपरिव्यवस्थितशिखराणीव स्थानस्थिताः सदैवैकत्र स्थाने स्थितास्तान् तान् प्रदेशान् स्वस्वप्रत्यासन्नान् उद्योतयन्ति-अवभासयन्ति तापयन्ति-प्रकाशयन्ति।।६०।।

इत्युक्ता सूर्यवक्तव्यता। इदानीं चन्द्रचारवक्तव्यतामभिधित्सुः पूर्वं तन्मण्डलसङ्ख्यादिकमाह-

(६१) कइ णं भंते! चंदमण्डला पं०?, गो०! पण्णरस चंदमण्डला पण्णत्ता।।६१।।

कति णं भंते चंदमंडला' इत्यादि **कति भदन्त! चन्द्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चदश चन्द्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि।।६१।।**

(६२) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइअं ओगाहित्ता केवइआ चंदमंडला पं०?, गो०! जम्बुद्दीवे २ असीयं जोअणसयं ओगाहित्ता पंच चंदमंडला पण्णत्ता।।६२।।

'जम्बुद्दीवे णं भंते! जम्बूद्वीपे भदन्त! द्वीपे कियदवगाह्य कियन्ति चन्द्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि? स्वाम्याह-गौतम! अशीति योजनशतमवगाह्य पञ्च चन्द्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि।।६२।।

(६३) लवणे णं भंते! पुच्छा, गो०! लवणे णं समुद्दे तिण्णि तीसे जोअणसए ओगाहित्ता एत्थ णं दस चंदमंडला पण्णत्ता, एवामेव सपुव्वावरेणं जम्बुद्दीवे दीवे लवणे य समुद्दे पण्णरस चंदमंडला भवंतीतिमक्खायं १ ।।६३।।

'लवणे णं भंते पुच्छा' लवणे समुद्रे भदन्त! कियन्ति चन्द्रमण्डलानीत्येवं पृच्छा कार्या, स्वाम्याह-**गौतम! लवणसमुद्रे त्रीणि शतानि** त्रिंशदधिकान्यवगाह्यात्रान्तरे **दशचन्द्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि' एवमेव पुव्वावरेणं'** ति पूर्वापरमण्डलमिलनेन **जम्बूद्वीपे द्वीपे लवणे च समुद्रे पञ्चदश चन्द्रमण्डलानि भवन्तीत्याख्यातानि** ।।६३।।

(६४) सव्वब्भंतराओ णं भंते! चंदमंडलाओ णं केवइअं अबाहाए सव्वबाहिरए चंदमंडले पं०?, गोअमा! पंचदसुत्तरे जोअणसए अबाहाए सव्वबाहिरए चंदमंडले पण्णत्ते २।।६४।।

'सव्वब्भंतराओ ण' मित्यादि सर्वाभ्यन्तराद्भदन्त! **चन्द्रमण्डलात्कियदबाधया** सर्वबाह्यचन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं? स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चयोजनशतानि दशोत्तराण्यवबाधया कृत्वा सर्वबाह्यं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं**। यद्येषां सर्वेषामापि मण्डलानामन्तरसहितानां विष्कम्भश्चिन्त्यते तदा पञ्चयोजनशतानि दशोत्तराणि अष्टचत्वारिंशदेकषष्टिभागा योजनस्य ५१०/ ४८/६१ भवन्ति तथाहि सर्वसङ्ख्यया चन्द्रस्य मण्डलानि पञ्चदश। एकैकस्य च मण्डलस्य विष्कम्भः षट् पञ्चाशदेकषष्टिभागा योजनस्य ततः पञ्चदश षट्पञ्चाशता गुण्यन्ते जातान्यष्टौ शतानि चत्वारिंशदधिकान्येकषष्टिभागानां ८४० तत एतेषां योजनानयनार्थमेकषष्ट्या भागो ह्रीयते हृते च भागे लब्धानि त्रयोदशयोजनानि १३ शेषा अवशिष्यन्ते सप्तचत्वारिंशत् ४७ पञ्चदशानां च मण्डलानामपान्तरालानि चतुर्दशैकैकस्य चापान्तरालस्य प्रमाणं पञ्चत्रिंशद्योजनानि त्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्यैकस्य चैकषष्टिभागस्य सप्तधाछिन्नस्य सत्काश्चत्वारो भागाः। ततः पञ्चत्रिंशच्चतुर्दशभिर्गुण्यन्ते जातानि चत्वारि योजनशतानि नवत्यधिकानि ४९० त्रिंशदेकषष्टिभागाश्चतुर्दशभिर्गुण्यन्ते, जातान्येकषष्टिभागानां चत्वारिशतानि विंशत्यधिकानि ४२० एतेषां योजनानयनार्थमेकषष्ट्या भागो क्रियते लब्धानि षट्योजनानि शेषाश्चतुष्पञ्चाशदेकषष्टिभागास्तिष्ठन्ति ये चैकस्यैकषष्टिभागस्य सत्काश्चत्वारः सप्त भागास्तेऽपि चतुर्दशभिर्गुण्यन्ते जाताः षट्पञ्चाशत् सप्तभिर्भागे हृते लब्धा अष्टावेकषष्टिभागा स्तेऽनन्तरमुक्तायां चतुःपञ्चाशति प्रक्षिप्यन्ते जाता द्वाषष्टिः ६२ तत्रैकषष्टिभागैर्योजनमेकं लब्धं तच्च योजनं राशौ प्रक्षिप्यते एकश्चैकषष्टिभाग उद्धरितः स प्रागुक्तायां सप्तचत्वारिंशति

प्रक्षिप्यते तत आगतं मण्डलक्षेत्रस्य परिमाणं पञ्चयोजनशतानि दशोत्तराणि अष्टचत्वारिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य ५१०, ४८/६१।।६४।।

अथ चन्द्रमण्डलानां परस्परमन्तरं प्रतिपादनायाह-

(६५) चंदमंडलस्स णं भंते! चंदमंडलस्स व एस णं केवइअं केवइआए अबाहाए अंतरे पं०?, गो०! पणतीसं २ जोअणाइं तीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णिआभाए चंदमंडलस्स चंदमंडलस्स अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ३।।६५।।

'चंदमंडलस्स ण' मित्यादि चन्द्रमण्डलस्य **भदन्त! चन्द्रमण्डलस्य कियदबाधयान्तरं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चत्रिंशत् पञ्चत्रिंशद्योजनानि** त्रिंशच्चैकषष्टिभागा योजनस्य एकषष्टिभागं च सप्तधा छित्वा तस्य चत्वारश्चूर्णिका भागाश्चन्द्रमण्डलस्य चन्द्रमण्डलस्याबाधयान्तरं प्रज्ञप्तम् ३५ ३०/६१ ४/७।।६५।।

अथ चन्द्रमण्डलस्य प्रमाणमाह-

(६६) चंदमंडले णं भंते! केवइअं आयाम-विक्खंभेणं केवइअं परिक्खेवेणं केवइअं बाहल्लेणं पण्णत्ते?, गोअमा! छप्पण्णं एगसट्ठिभाए जोअणस्स आयाम-विक्खम्भेणं तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं अट्ठावीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स बाहल्लेणं ४।।६६।।

'चंदमंडलेण' मित्यादि, **चन्द्रमण्डलं भदन्त! कियदायामविष्काम्भेन कियत्परिक्षेपेण**-परियेण कियद्बाहल्येन प्रज्ञप्तं? स्वाम्याह-**गौतम! षट्पञ्चाशतमे कषष्टिभागान् योजनस्यायामविष्कम्भेन तदेव त्रिगुणं सविशेषं परिक्षेपेणाष्टाविंशति मेकषष्टिभागान् योजनस्य बाहल्येन।।६६।।**

सम्प्रति मेरोश्चन्द्रमण्डलस्य चान्तरं जिज्ञासिषु: पृच्छति-

(६७) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइअं अबाहाए सव्वब्भंतरए चंदमंडले पण्णत्ते?, गोअमा! चोआलीसं जोअणसहस्साइं अट्ठ य वीसे जोअणसए अबाहाए सव्वब्भंतरे चंदमंडले पण्णत्ते।।६७।।

'जंबुद्दीवे' इत्यादि **जम्बूद्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य कियदबाधया** कियदपान्तरालं मुक्त्वेत्यर्थ:। **सर्वाभ्यन्तरं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! चतुश्चत्वारिंशद्योजन-सहस्राण्यष्टौ च योजनशतानि विंशत्यधिकानि ४४८२०अबाधया सर्वाभ्यन्तरं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं।** तथाहि-सर्वाभ्यन्तरं चन्द्रमण्डलं सर्वतो जम्बूद्वीपेऽशीत्यधिकं योजनशतमवगाह्य स्थितं तत एकतोऽप्यशीत्यधिकं योजनशतं जम्बूद्वीपविष्कम्भाद्योजन लक्षरूपादपनीयतेऽपरतोऽपि तत: स्थितानि शेषाणि योजनानां नवनवति सहस्राणि षट्शतानि चत्वारिंशदधिकानि ९९६४० मन्दरविष्कम्भश्च दशयोजनसहस्रप्रमाणस्ततो दशयोजन सहस्राणि पूर्वराशेरपनीयन्ते जात: पश्चात्पूर्वराशिर्नवाशीतिसहस्राणि षट्शतानि चत्वारिंशदधिकानि ८९६४० एतेषामर्द्धे लब्धानि चतुश्चत्वारिंशत्सहस्राण्यष्टौ शतानि विंशत्यधिकानि ४४८२० एतावन्मेरोरभ्यन्तरचन्द्रमण्डलस्य चान्तरम्।।६७।।

(६८) जम्बुद्दीवे २ मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए अब्भंतराणंतरे चंदमंडले पण्णत्ते?, गो०! चोआलीसं जोअणसहस्साइं अट्ठ य छप्पण्णे जोअणसए पणवीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णिआभाए अबाहाए अब्भंतराणंतरे चंदमंडले पण्णत्ते।।६८।।

'जंबूद्दीवे ण' मित्यादि जम्बूद्वीपे **भदन्त! द्वीपे कियदबाधयाभ्यन्तरान्तरं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! चतुश्चत्वारिंशद्योजनसहस्राण्यष्टौ च योजनशतानि षट्पञ्चाशदधिकानि पञ्चविंशति चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकषष्टिभागं सप्तधा छित्वा**

तस्य चतुरश्चूर्णिकाभागान् ४४८५६, २५/६१, ४/७ अबाधयाभ्यन्तरान्तरं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तम्।।६८।।

(६९) जम्बुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइआए अबाहाए अब्भंतरतच्चे चंदमंडले पं० ?, गो० ! चोआलीसं जोअणसहस्साइं अट्ठ य बाणउए जोअणसए एगावण्णं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगं चुण्णिआभागं अबाहाए अब्भंतरतच्चे चंदमंडले पण्णत्ते, एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे चंदे तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे २ छत्तीसं छत्तीसं जोअणाइं पणवीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णिआभाए एगमेगे मंडले अबाहाए वुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।६९।।

'जंबूद्दीवे' इत्यादि जम्बूद्वीपे मन्दरस्य कियदबाधयाभ्यन्तरं तृतीयं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं? स्वाम्याह-गौतम! चतुश्चत्वारिंशद्योजनसहस्राण्यष्टौ च योजन शतानि द्विनवत्यधिकानि एकपञ्चाशतं चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकं चैकषष्टिभागं सप्तधा छित्वा तस्यैकं चूर्णिका भागं ४४८९२ ५१/६१, १/७ अबाधयाभ्यन्तरतृतीयं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं 'एवं खल्वि' त्यादि एवममुनाप्रकारेण खलु निश्चितमेतेनोपायेन निष्क्रामंश्चन्द्रस्तदनन्तरान्मण्डलात्तदनन्तरं चतुर्थार्दिकं मण्डलं सङ्क्रामन् षट्त्रिंशतं योजनानि पञ्चविंशति चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकषष्टिभागं सप्तधा छित्वा तस्य चतुरश्चुर्णिकाभागानेकैकस्मिन्मण्डलेऽबाधावृद्धिमभिवर्द्धयन् २ सर्वबाह्यं मण्डल मुपसङ्क्रम्य चारं चरति।।६९।।

(७०) जम्बुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइआए अबाहाए सव्वबाहिरे चंदमंडले पं० ?, पणयालीसं जोअणसहस्साइं तिण्णि अ तीसे जोअणसए अबाहाए सव्वबाहिरए

चंदमंडले प०।।७०।।

'जंबुद्दीवे' इत्यादि जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य कियदबाधया सर्वबाह्यं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं? स्वाम्याह-गौतम! पञ्चचत्वारिंशद्योजनसहस्राणि त्रीणि च योजनशतानि त्रिंशदधिकानि अबाधया सर्वबाह्यं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तम्।।७०।।

(७१) जम्बुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइअं अबाहाए बाहिराणंतरे चंदमंडले पण्णत्ते?, गो०! पणयालीसं जोअणसहस्साइं दोण्णि अ तेणउए जोअणसए पणतीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता तिण्णि चुण्णिआभाए अबाहाए बाहिराणंतरे चंदमंडले पण्णत्ते।।७१।।

'जंबूद्वीवे' इत्यादि जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य कियदबाधया बाह्यानन्तरं द्वितीयमित्यर्थश्चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं? स्वाम्याह-गौतम! पञ्चचत्वारिंशद्योजनसहस्राणि द्वे च योजन शते त्रिनवत्यधिके पञ्चत्रिंशतं चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकमेकषष्टिभागं च सप्तधा छित्वा तस्य त्रीन् चूर्णिका भागान् ४५२९३, ३५/६१ ३/७ अबाधया बाह्यानन्तरं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तम्।।७१।।

(७२) जम्बुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइआए अबाहाए बाहिरतच्चे चंदमंडले पं०?, गो०! पणयालीसं जोअणसहस्साइं दोण्णि अ सत्तावण्णे जोअणसए णव य एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता तिण्णि चुण्णिआभाए अबाहाए बाहिरतच्चे चंदमंडले पं०?, एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे चंदे तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणंतरं मंडलं संकममाणे २ छत्तीसं २ जोअणाइं पणवीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चुण्णिआभाए एगमेगे मंडले अबाहाए वुड्ढिं णिवड्ढेमाणे २सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।७२।।

'जंबूद्दीवे' इत्यादि **जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य कियदबाधया बाह्यं तृतीयं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चचत्वारिंशद्योजनसहस्राणि द्वे च योजनशते सप्तपञ्चाशदधिके नव चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकमेकषष्टिभागं सप्तधा छित्वा तस्य षट् चूर्णिका भागान् ४५२५७ ९/६१, ६/७ अबाधया बाह्यतृतीयं चन्द्रमण्डलं प्रज्ञप्तम्। 'एवं खल्वि'** त्यादि **एवमुक्तनीत्या खलु** निश्चितमेतेनोपायेन **प्रविशंश्चन्द्रस्तदनन्तरात्तदनन्तरं** मण्डलान्मण्डलं **सङ्क्रामन् सङ्क्रामन् [१]षट्पञ्चाशद्योजनानि पञ्चविंशति चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकं चैकषष्टिभागं सप्तधा छित्वा तस्य चतुरश्चूर्णिका भागानेकैकस्मिन्मण्डलेऽबाधावृद्धिं निर्वेष्टयन् निर्वेष्टयन्**-हापयन् हापयन् **सर्वाभ्यन्तरमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।** विशेषतो विष्कम्भादिभावना **चन्द्रप्रज्ञप्तिटीकातोऽवसेया** विस्तरभयान्नेहोच्यत इति।।७२।।

सम्प्रति मण्डलायामादि पृच्छति-

(७३) सव्वब्भंतरे णं भंते! चंदमंडले केवइअं आयाम-विक्खम्भेणं केवइअं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?, गो०! णवणउइं जोअणसहस्साइं छच्चचत्ताले जोअणसए आयाम-विक्खम्भेणं तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइं पण्णरस जोअणसहस्साइं अउणाणउतिं च जोअणाइं किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं प०।।७३।।

'सव्वब्भंतरेण मित्यादि **सर्वाभ्यन्तरं भदन्त! चन्द्रमण्डलं कियदायाम विष्कम्भेन कियत्परिक्षेपेण प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! नवनवतिं योजनसहस्राणि षट् च योजनशतानि चत्वारिंशदधिकानि** ९९६४० तथाहि सर्वाभ्यन्तरं हि मण्डलं चन्द्रमसः एकतोऽपि जम्बूद्वीपेऽशीत्यधिकं योजनशतमवगाह्य स्थितमपरतोऽपि ततोऽशीत्यधिकशतं द्वाभ्यां गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि षष्ट्यधिकानि ३६० जम्बूद्वीपविष्कम्भाद्योजन

---

१. अत्र सूत्र - वृत्त्योः पाठान्तरं केनापि कारणेन सम्भाव्यते।

लक्षप्रमाणादपनीयन्ते। ततः शेषाणि नवनवति सहस्राणि षट्शतानि चत्वारिंशदधिकानि तिष्ठन्ति, एतावत्सर्वाभ्यन्तरमण्डलस्यायामविष्कम्भपरिमाणं तथा **त्रीणि योजनशत सहस्राणि पञ्चदशयोजनसहस्राणि एकोननवत्यधिकानि परिक्षेपेणै**तच्च परिरयपरिमाणं सूर्यसत्कसर्वाभ्यन्तरमण्डलपरिरयपरिमाणमिव भावनीयम्।।७३।।

(७४) अब्भंतराणंतरे सा चेव पुच्छा, गो०! णवणउइं जोअणसहस्साइं सत्त य बारसुत्तरे जोअणसए एगावण्णं च एगट्ठिभागे जोअणस्स एगट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगावण्णं च एगसट्ठिभागे जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगं चुण्णिआभागं आयाम-विक्खम्भेणं तिण्णि अ जोयणसयसहस्साइं पंनरससहस्साइं तिण्णि अ एगूणवीसे जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण।।७४।।

'अब्भंतराणंतरे चेव पुच्छति' अभ्यन्तरानन्तरेऽपि चन्द्रमण्डले प्रमाणमाश्रित्य पृच्छा कार्या' प्रभुराह-**गौतम! नवनवतियोजनसहस्राणि सप्त च योजनशतानि द्वादशोत्तराणि एकपञ्चाशतं चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकमेकषष्टिभागं च सप्तधा छित्वा तस्यैकचूर्णिकाभागं** ९९७१२ ५१/६१ १/७ **आयामविष्कम्भेन** तथाह्येकतोऽपि सर्वाभ्यन्तरानन्तरं द्वितीयं मण्डलं सर्वाभ्यन्तरमण्डलगतान् षट्पञ्चाशत्सङ्ख्यानेकषष्टि भागानापान्तराले च पञ्चत्रिंशतं योजनानि त्रिंशतमेकषष्टिभागान् योजनस्यैकस्य चैकषष्टिभागस्य सप्तधा छिन्नम्य सत्कान् चतुरो भागान् विमुच्य स्थितमपरतोऽपि ततो द्वासप्ततियोजनान्येकपञ्चाशदेकषष्टिभागा योजनस्यैकस्यैकषष्टिभागस्य सप्तधा छिन्नस्य सत्क एको भागः पूर्वमण्डलविष्कम्भपरिमाणादस्य मण्डलस्य विष्कम्भे वर्द्धते ततो यथोक्तमस्य विष्कम्भपरिमाणं भवति। तथा **त्रीणि योजनशतसहस्राणि पञ्चदश च योजनसहस्राणि त्रीणि च योजनशतानि एकोनविंशत्यधिकानि किञ्चिद्विशेषाधिकानि** ३१५३१९ **परिक्षेपेण**। तथाहि-पूर्वस्मान्मण्डलादस्य मण्डलस्य विष्कम्भे द्वासप्ततिर्योजनानि

एकपञ्चाशदेकषष्टिभागा योजनस्यैकस्य चैकषष्टिभागस्य सप्तधा छिन्नस्यैको भाग इति वर्द्धते द्वासप्ततिर्योजनादीनां च परिरयो द्वे योजनशते त्रिंशदधिके भवतस्ततस्ते यदा पूर्वमण्डलेऽधिके प्रक्षिप्यते तदा यथोक्तद्वितीयमण्डलपरिरय परिमाणं भवतीति।।७४।।

(७५) अब्भंतरतच्चे णं [1]जाव पं० ?, गो० ! णवणउइं जोअणसहस्साइं [2]सत्त य पंचासीए जोअणसए इगतालीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता दोण्णि अ चुण्णिआभाए आयाम-विक्खम्भेणं तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइं पण्णरस जोअणसहस्साइं पंच य इगुणापण्णे जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं, एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे चंदे जाव संकममाणे २ बावत्तरिं २ जोअणाइं एगावण्णं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगं च चुण्णिआभागं एगमेगे मंडले विक्खंभवुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ दो दो तीसाइं जोअणसयाइं परिरयवुड्ढिं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।७५।।

'अब्भिंतरतच्चे णं जाव पणत्ते' इह यावत्करणात् 'अब्भंतरतच्चे णं भंते चंदमंडले केवइयं आयामविक्खंभेणं केवइयं परिक्खेवेण' मिति दृश्यं स्पष्टं च स्वाम्याह-**गौतम! नवनवतियोजनसहस्राणि सप्तयोजनशतानि पञ्चाशीत्यधिकानि एकचत्वारिंशतं चैकषष्टिभागान् योजनस्य एकं चैकषष्टिभागं सप्तधा छित्वा तस्य द्वौ सप्तभागौ** ९९७८५ ४१/६१ २/७ **आयामविष्कम्भेन** तथा **त्रीणियोजनशतसहस्राणि पञ्चदश -सहस्राणि पञ्च च योजनशतानि एकोनपञ्चाशदधिकानि किञ्चिद्विशेषाधिकानि** ३१५५४९ **परिक्षेपेण 'एवं खल्वि'** त्यादि, एवमुक्तनीत्या खलु निश्चितमेतेनोपायेन **निष्क्रामंश्चन्द्रः 'जाव संकममाणे'** त्ति तदनन्तरान्मण्डलात्तदनन्तरं मण्डलं सङ्क्रामन् **द्वासप्ततिं २ योजनानि एकपञ्चाशतं चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकं चैकषष्टिभागं**

१. द्र. ७।७३।। २. सत्त - अकखब

सप्तधा छित्वा तस्यैकं चूर्णिकाभागमेकैकस्मिन्मण्डले विष्कम्भवृद्धिमभिवर्द्धयन् २ द्वे द्वे योजनशते त्रिंशदधिके परिरयवद्धिमभिवर्द्धयन् २ सर्वबाह्यमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति। इह यद्यपि मण्डले मण्डले परिरयवृद्धिर्योजनशतद्वयं त्रिंशदधिकमुक्तं तथापि किञ्चित्समधिकमिति द्रष्टव्यं यदुक्तं ज्योतिष्करण्डे-"चंदस्स वि नायव्वा परिरयवुड्ढी उ मंडले नियमा दो चेव जोयण सया तीसा खलु होंति साहिया" इति।।७५।।

(७६) सव्वबाहिरए णं भंते! चंदमंडले केवइअं आयाम-विक्खम्भेणं केवइअं परिक्खेवेणं पण्णत्ते? गो०! एगं जोयणसयसहस्सं छच्चसट्ठे जोअणसए आयाम-विक्खम्भेणं तिण्णि अ जोयणसयसहस्साइं अट्ठारस सहस्साइं तिण्णि अ पण्णरसुत्तरे जोअणसए परिक्खेवेणं।।७६।।

सव्वबाहिरएणं भंते चंद मंडले' इत्यादि सर्वबाह्यं भदन्त! चन्द्रमण्डलं कियदायाम-विष्कम्भेन कियत् परिक्षेपेण प्रज्ञप्तं? स्वाम्याह-गौतम! एकं योजनशतसहस्रं षट्योजनशतानि षष्ट्यधिकानि अष्टभिरेकषष्टिभागैर्न्यूनानीत्यवसेयमायामविष्कम्भेन तथा त्रीणि योजनशतसहस्राण्यष्टादश च सहस्राणि त्रीणि च योजनशतानि पञ्चदशोत्तराणि किञ्चिदूनानीति ज्ञेयं ३१८३१५ परिक्षेपेणैतस्य भावना प्राग्वत्कार्या।।७६।।

(७७) बाहिराणंतरे णं पुच्छा, गो०! एगं जोअणसहस्सं पञ्च सत्तासीए जोअणसए णव य एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता छ चुण्णिआभाए आयाम-विक्खम्भेणं तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइं अट्ठारस सहस्साइं पंचासीइं च जोअणाइं परिक्खेवेणं।।७७।।

'बाहिराणंतरे इत्यादि, बाह्यानन्तरेऽपि चन्द्रमण्डले आयामाद्याश्रित्य पृच्छा कार्या स्वाम्याह गौतम! एकं योजनशतसहस्रं पञ्च च योजनशतानि सप्ताशीत्यधिकानि नव

चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकमेकषष्टिभागं च सप्तधा छित्वा तस्य षट् चूर्णिका भागान् आयामविष्कम्भेन त्रीणि योजनशतसहस्राणि अष्टादशयोजनसहस्राणि पञ्चाशीतिं च योजनानि ३१८०८५ परिक्षेपेण।।७७।।

(७८) बाहिरतच्चे णं भंते! चंदमण्डले० जाव पं० ? गो० ! एगं जोअणसयसहस्सं पंच य चउदसुत्तरे जोअणसए एगूणवीसं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता पंच चुण्णिआभाए आयाम-विक्खम्भेणं तिणि अ जोअणसयसहस्साइं सत्तरस सहस्साइं अट्ठ य पणपण्णे जोअणसए परिक्खेवेणं, एवं खलु एएणं उवाएणं पविसमाणे चंदे जाव संकममाणे २ बावत्तरिं २ जोअणाइं एगावण्णं च एगट्ठिभाए जोअणस्स एगट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगं चुण्णिआभागं एगमेगे मण्डले विक्खम्भवुड्ढिं णिव्वुड्ढेमाणे २ दो दो तीसाइं जोअणसयाइं परिरयवुड्ढिं णिवुड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ६।।७८।।

'बाहिरतच्चे ण' मित्यादि प्रश्नसूत्रं प्राग्वत् स्वाम्याह-गौतम! एकं योजनशतसहस्रं पञ्च च योजन शतानि चतुर्दशोत्तराणि एकोनविंशतिमेकषष्टिभागान् योजनस्यैकमेक-षष्टिभागं च सप्तधा छित्वा तस्य पञ्चचूर्णिकाभागानायामविष्कम्भेन तथा त्रीणियोजनशतसहस्राणि सप्तदश च सहस्राण्यष्टौ च योजनशतानि पञ्चपञ्चादशधिकानि परिक्षेपेण 'एवं खल्वि' त्यादि एवं प्रागुक्तरीत्या खलु निश्चितमेतेनोपायेन प्रविशंश्चन्द्रो यावत्सङ्क्रामन् द्वासप्तति योजनानि एकं पञ्चाशतं चैकषष्टिभागान् योजनस्यैकमेकषष्टिभागं च सप्तधा छित्वा तस्यैकं चूर्णिकाभागमेकैकस्मिन्मण्डले विष्कम्भवृद्धिं निर्वेष्टयन्निर्वेष्टयन् हापयन् हायपन् द्वे द्वे योजनशते त्रिंशदधिके किञ्चित्समधिके परिरयवृद्धिं निर्वेष्टयन् २ हापयन् २ सर्वाभ्यन्तरमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।।७८।।

सम्प्रति प्रतिमण्डले२ चन्द्रस्य मुहूर्त्तगति प्रमाणमाह –

(७९)जया णं भंते! चंदे सव्वब्भंतरमण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गोअमा! पंच जोअणसहस्साइं तेवत्तरिं च जोअणाइं सत्तत्तरिं चोआले भागसए गच्छइ, मण्डलं तेरसहिं सहस्सेहिं सत्तहि अ पणवीसेहिं सएहिं छेत्ता, तया णं इहगयस्स मणूसस्स सीआलीसाए जोअणसहस्सेहिं दोहि अ तेवट्ठेहिं जोअणएहिं एगवीसाए अ सट्ठिभाएहिं जोअणस्स चंदे चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ।।७९।।

'जयाणं भंते' इत्यादि यदाणमित्यलङ्कारे भदन्त! **चन्द्रः सर्वाभ्यन्तरं मण्डलमुप-सङ्क्रम्य चारं चरति। तदैकैकेन मुहूर्त्तेन कियत्क्षेत्रं गच्छति?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्च योजन सहस्राणि त्रिसप्ततिं च योजनानि योजनस्य च सप्तसप्ततिं भागशतानि चतुश्चत्वारिंशदधिकानि गच्छति** ५०७३ भा० ७७४४/१३७२५ मण्डलं-मण्डलपरिक्षेपं त्रयोदशभिः सहस्रैः सप्तभिः शतैः पञ्चविंशत्यधिकैश्छित्वा-विभज्यात्र चैवं भावना-इहैकोऽपि चन्द्रमा एकमर्द्धमण्डलमेकेनाहोरात्रेणैकेनमुहूर्त्तेनैकैस्य च मुहूर्त्तस्य द्वाभ्यां शताभ्यामेकविंशत्यधिकाभ्यां प्रविभक्तस्य सत्कैः साद्धैरेकादशभागैर्भ्रमणेनापूरयति द्वितीयोऽपि द्वितीयमर्द्धमण्डलमेतावाता कालेनापूरयति। ततः प्रतिचन्द्रमर्द्धमण्डलकालगणने एकस्य मण्डलस्य कालो द्वावहोरात्रौ द्वौ मुहूर्त्तौ एकस्य मुहूर्त्तस्य द्वाभ्यां शताभ्यामेकविंशत्यधिकाभ्यां प्रविभक्तस्य सत्कास्त्रयोविंशतिभागाः स्थापना २, २, २३/२२१ अहोरात्रे च त्रिंशन्मुहूर्त्ता इति सर्वमुहूर्त्तसङ्ख्यायं द्वाषष्टिर्मुहूर्त्ताः एत एकविंशत्यधिकशतद्वयभागाकरणार्थमेकविंशत्यधिकाभ्यां द्वाभ्यां शताभ्यां गुण्यन्ते गुणयित्वा चोपरितनास्त्रयोविंशतिभागास्तत्र प्रक्षिप्यन्ते ततो जातानि त्रयोदशसहस्राणि सप्तशतानि पञ्चविंशत्यधिकानि १३७२५ सर्वाभ्यन्तरस्य चन्द्रमण्डलस्य परिरयपरिमाणं त्रीणि लक्षाणि

पञ्चदश सहस्राणि नवाशीत्यधिकानि ३१५०८९ एतद्द्वाभ्यामेकविंशत्यधिकाभ्यां शताभ्यां गुण्यते जाताः षट्को नवकः षट्कस्त्रिकश्चतुष्कः षट्कः षट्को नवकः ६९६३४६६९ तत एतेषां त्रयोदशभिः सहस्रैः सप्तभिः शतैः पञ्चविंशत्यधिकैर्भागो ह्रियते हृते च भागे लब्धानि पञ्चयोजनसहस्राणि त्रिसप्तत्यधिकानि अंशाश्च सप्तसप्ततिशतानि चतुश्चत्वारिंशदधिकानि ५०७३ ७७४४/१३७२५ एतत्सर्वाभ्यन्तरे मण्डले प्रतिमुहूर्त्तं गतिपरिमाणमेवं द्वितीयादिमण्डलेष्वपि भावना भावनीया।। अथ गहनताभयान्नेहोक्तेति **'तया ण'** मित्यादि, तदा णमिति पूर्ववदिहगतस्य मनुष्यस्यात्रापि जातावेकवचनं ततोऽयमर्थः, इहगतानां भरतक्षेत्रगतानां मनुष्याणां **सप्तचत्वारिंशता योजनसहस्रैर्द्वाभ्यां योजनशताभ्यां त्रिषष्ट्यधिकाभ्यामेकविंशत्या च षष्टिभागैर्योजनस्य चन्द्रश्चक्षुस्पर्शं 'हव्वं'** ति शीघ्रमागच्छति। इहोपपत्तिः प्राग्वद्भोद्धव्या।।७९।।

(८०) जया णं भंते! चंदे अब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ जाव केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गो० ! पंच जोअणसहस्साइं सत्ततरिं च जोअणाइं छत्तीसं च चोअत्तरे भागसए गच्छइ, मंडलं तेरसहिं सहस्सेहिं जाव छेत्ता, जया णं भंते! चंदे अब्भंतरतच्चं मण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ? गो० ! पंच जोअणसहस्साइं असीइं च जोअणाइं तेरस य भागसहस्साइं तिण्णि अ एगूणवीसे भागसए गच्छइ मण्डलं तेरसहिं [1]जाव छेत्ता।।८०।।

'जया ण' मित्यादि यदा भदन्त! **चन्द्रोऽभ्यन्तरानन्तरमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति 'जाव केवइयं खेत्तं गच्छति'** इहयावत्करणात् 'तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेण' मित्यादि दृश्यं, तदैकेन मुहूर्त्तेन कियत्क्षेत्रं गच्छति? स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चयोजनसहस्राणि सप्त सप्ततिं च योजनानि योजनस्य च षट्त्रिंशद्भागशतानि चतुःसप्तत्यधिकानि गच्छति**

१. केषुचित् सूत्रेषु चन्द्रस्य चक्षुः स्पर्शस्य प्रतिपत्ति नैर्व दृश्यते। इति पृ.V ५६५ टि.४।।

५०७७ ३६७४/१३७२५ 'मंडलं तेरसहि' मित्यादि प्राग्वत् ।।८०।।

(८१) जया णं भंते! चंदे अब्भिंतरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ? गो०! पंच जोअणसहस्साइं असीइं च जोअणसयाइं तेरस य भागसहस्साइं तिण्णि य एगुणतीसे भागसए गच्छइ मंडलं तेरसहिं जाव छेत्ता । एवं खलु एएणं उवाएणं णिक्खममाणे चंदे तयाणंतराओ जाव संकममाणे २ तिण्णि २ जोअणाइं छण्णउइं च पंचावण्णे भागसए एगमेगे मण्डले मुहुत्तगइं अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिरं मण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।८१।।

'जया ण' मित्यादि, यदा भदन्त! चन्द्रोऽभ्यन्तरतृतीयं मण्डलमुपङ्क्रम्य चारं चरति तदैकेन मुहूर्त्तेन कियत्क्षेत्रं गच्छति? स्वाम्याह-गौतम! पञ्चयोजनसहस्राण्यशीति-योजनान्येकस्य च योजनस्य त्रयोदशभागसहस्राणि त्रीणि च भागशतान्येकोनत्रिंशदधिकानि गच्छति ५०८० १३३२९/१३७२५ 'मंडलं तेरसहिं जाव छेत्ता' इति प्राग्वत् 'एव' मित्यादि एवं पूर्वोक्तनीत्या खलु निश्चितमेतेनोपायेन निष्क्रामंश्चन्द्रस्तदन्तराद्यावत्सङ्क्रामन् सङ्क्रामंस्त्रीणि त्रीणि योजनानि योजनस्य षण्णवतिं च भागशतानि पञ्चपञ्चाशदधिकानि ९६५५ एकैकस्मिन्मण्डले मुहूर्त्तगतिमभिवर्द्धयन्नभिवर्द्धयन् सर्वबाह्यमण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति।।८१।।

(८२) जया णं भंते! चंदे सव्वबाहिरं मण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गो०! पंच जोअणसहस्साइं एगं च पणवीसं जोअणसयं अउणत्तरिं च णउए भागसए गच्छइ मण्डलं तेरसहिं भागसहस्सेहिं सत्तहि अ जाव छेत्ता, तया णं इहगयस्स मणूसस्स एक्कतीसाए जोअणसहस्सेहिं अट्ठहि अ एगत्तीसेहिं जोअणसएहिं चंदे चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ।।८२।।

'जया णं भंते' इत्यादि, यदा भदन्त! चन्द्रः सर्वबाह्यमण्डलमुपङ्क्रम्य चारं चरति तदैकेकस्मिन् मुहूर्त्ते कियत्क्षेत्रं गच्छति? स्वाम्याह-गौतम! पञ्च योजन सहस्राणि एकं च योजन शतं पञ्चविंशत्यधिकमेकोनसप्तति च भागशतानि नवत्यधिकानि गच्छति ५१२५ ६९९०/१३७२५ 'मंडलं तेरसहि मित्यादि पूर्ववत् 'तदा ण' मित्यादि तदा इहगतस्य मनुष्यस्येह जातावेकचचनं भवेदिहगतानां भरतक्षेत्रगतानां मनुष्याणामेकत्रिंशतायोजन -सहस्रैरष्टभिश्च योजनशतैरेकत्रिंशदधिकैश्चन्द्रश्चक्षुःस्पर्शं हव्यमागच्छति।।८२।।

(८३) जया णं भंते! बाहिराणंतरं पुच्छा, गोअमा! पंच जोअणसहस्साइं एक्कं च एक्कवीसुत्तरं जोअणसयं एक्कारस य सट्ठे भागसहस्से गच्छइ मण्डलं तेरसहिं जाव छेत्ता।।८३।।

'जया णं भंते' इत्यादिप्रश्नसूत्रं प्राग्वद्विविच्य वाच्यं। स्वाम्याह गौतम! पञ्चयोजनसहस्राणि एकं च योजन शतमेकविंशत्युत्तरं योजनस्यैकादश च भागसहस्राणि षष्ट्यधिकानि गच्छति ५१२१ भा० ११०६० 'मंडलं जाव तेरसहिं छेत्ता' इति पूर्ववत्।।८३।।

(८४) जया णं भंते! बाहिरतच्चं पुच्छा, गोअमा! पंच जोअणसहस्साइं एगं च अट्ठारसुत्तरं जोअणसयं चोद्दस य पंचुत्तरे भागसए गच्छइ मंडलं तेरसहिं सहस्सेहिं सत्तहिं पणवीसेहिं सएहिं छेत्ता, एवं खलु एएणं उवाएणं जाव संकममाणे २ तिण्णि २ जोअणाइं छण्णउतिं च पंचावण्णे भागसए एगमेगे मण्डले मुहुत्तगइं णिवड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतरं मण्डलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।।८४।।

जया णं भंते बाहिरतच्चं पुच्छा इति प्रश्नसूत्रं प्राग्वदायोज्यमुत्तरं स्वाम्याह-गौतम! पञ्चयोजनसहस्राण्येकं च योजनशतमष्टादशोत्तरं योजनस्य चतुर्दशभागशतानि

पञ्चोत्तराणि गच्छति ५११८ भा० १४०५ **'मंडलं तेरसहि'** मित्यादि प्राग्वत् **'एवं खल्वनेनोपायेन यावत्सङ्क्रम्यश्चन्द्र स्त्रीणि योजनानि** त्रयोदशभिः सहस्रैः पञ्चविंशत्यधिकैः सप्तभिः शतैश्च प्रविभक्तस्य **योजनस्य सत्कानि षण्णवति भागशतानि पञ्चपञ्चा -शदधिकानि एकैकस्मिन्मण्डले मुहूर्त्तगतिं निर्वेष्टयन्** २ हापयन् **सर्वाभ्यन्तरं मण्डलमुपङ्क्रम्य चारं चरति**।। ८४।।

इत्युक्तं चन्द्रमण्डलचारस्वरूपम्।। सम्प्रति नक्षत्रमण्डलस्वरूपं प्ररूपयन्नाह-

(८५) कइ णं भंते! णक्खत्तमण्डला पं०?, गोअमा! अट्ठ णक्खत्तमण्डला पण्णत्ता१।।८५।।

'कति णं भंते' इत्यादि कति भदन्त! **नक्षत्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि**? स्वाम्याह **गौतम! अष्टौ नक्षत्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि** ।।८५।।

एतानि च क्व कियन्ति सन्तीति पृच्छन्नाह-

(८६) जम्बुद्दीवे दीवे केवइअं ओगाहित्ता केवइआ णक्खत्तमंडला पण्णत्ता?, गोअमा! जम्बुद्दीवे दीवे असीअं जोअणसयं ओगाहेत्ता एत्थ णं दो णक्खत्तमंडला पण्णत्ता।।८६।।

'जंबुदीवे' इत्यादि जम्बूद्वीपे **कियदवगाह्य कियन्ति नक्षत्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि**? स्वाम्याह **गौतम! जम्बूद्वीपे द्वीपेऽशीत्यधिकयोजनशतमवगाह्यत्रान्तरे द्वे नक्षत्रमण्डले प्रज्ञप्ते।।८६।।**

(८७) लवणे णं समुद्दे केवइअं ओगाहेत्ता केवइअं णक्खत्तमंडला पण्णत्ता?, गो०! लवणे णं समुद्दे तिण्णि तीसे जोअणसए ओगाहित्ता एत्थ णं छ णक्खत्तमंडला पण्णत्ता, एवामेव सपुव्ववावरेणं जम्बुद्दीवे दीवे लवणसमुद्दे अट्ठ णक्खत्तमंडला

भवंतीतिमक्खायं[१] २।।८७।।

'लवणेण' मित्यादि लवणे णमिति प्राग्वत् **भदन्त! समुद्रे कियदवगाह्य कियन्ति नक्षत्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि?** प्रभुराह-**गौतम! लवणे समुद्रे त्रीणियोजनशतानि त्रिंशदधिकान्यवगाह्यात्रान्तरे षट् नक्षत्रमण्डलानि प्रज्ञप्तानि, एवमेव सपूर्वापरेण** पूर्वापरमण्डलमीलनेन **जम्बूद्वीपे लवणे समुद्रेऽष्टौ नक्षत्रमण्डलानि भवन्तीत्याख्यातानि** मयान्यै श्चार्हद्भि:।।८७।।

(८८) सव्वब्भंतराओ णं भंते! णक्खत्तमंडलाओ केवइअं अबाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमंडले पण्णत्ते?, गोअमा! पंचदसुत्तरे जोअणसए अबाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमंडले पण्णत्ते।।८८।।

'सव्वब्भंतराओ णं भंते इत्यादि सर्वाभ्यन्तराद् भदन्त! **नक्षत्रमण्डलात्कियदबाधया कियदपान्तरालं** मुक्त्वा **सर्वबाह्यं नक्षत्रमण्डलं प्रज्ञप्तं?** प्रभुराह-**गौतम! पञ्चयोजनशतानि दशोत्तराणि अबाधया सर्वबाह्यं नक्षत्रमण्डलं प्रज्ञप्तम्।।८८।।**

अथ नक्षत्र मण्डलानां परस्परमन्तरमभिधित्सुराह-

(८९) णक्खत्तमंडलस्स णं भंते! णक्खत्तमंडलस्स एस णं केवइअं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?, गोअमा! दो जोअणाइं णक्खत्तमंडलस्स य णक्खत्तमंडलस्स अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ३।।८९।।

'नक्खत्तमंडलस्स ण' मित्यादि **नक्षत्रमण्डलस्य भदन्त! नक्षत्रमण्डलस्यैतत् कियदबाधयान्तरं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! द्वे योजने नक्षत्रमण्डलस्य २ अबाधयान्तरं प्रज्ञप्तम्।।८९।।**

---

१. ०क्खाया - अकखत्रिबस।

अथ नक्षत्रमण्डलस्य प्रमाणं पृच्छन्नाह–

(९०) णक्खत्तमंडले णं भंते! केवइअं आयाम-विक्खम्भेणं केवइअं परिक्खेवेणं केवइअं बाहल्लेणं पण्णत्ते?, गो०! गाउअं आयाम-विक्खम्भेणं, तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं अद्धगाउअं बाहल्लेणं पण्णत्ते ४।।९०।।

'नक्खत्तमंडले ण' मित्यादि, नक्षत्रमण्डलं **भदन्त! कियदायाम विष्कम्भेन कियत् परिक्षेपेण कियद्बाहल्येन प्रज्ञप्तं?** प्रभुराह-**गौतम! गव्यूतमायामविष्कम्भेन तदेव गव्यूतं त्रिगुणं सविशेषं** किञ्चिदधिकं **परिक्षेपेण-परिरयेणार्द्धं गव्यूतं बाहल्येन।।९०।।**

अधुना मेरो र्नक्षत्रमण्डलस्यापान्तरं प्रश्यन्निदमाह–

(९१) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइअं अबाहाए सव्वब्भंतरे णक्खत्तमंडले पण्णत्ते?, गोअमा! चोयालीसं जोअणसहस्साइं अट्ठ य वीसे जोअणसए अबाहाए सव्वब्भंतरे णक्खत्तमंडले पण्णत्ते।

'जंबूद्दीवे णं' मित्यादि, जम्बूद्वीपे **भदन्त! द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य कियदबाधया कियदपान्तरालं मुक्त्वेत्यर्थः, सर्वाभ्यन्तरनक्षत्रमण्डलं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! चतुश्चत्वारिंशद्योजनसहस्राणि अष्टौ च योजनशतानि विंशतिरधिकानि ४४८२० अबाधया सर्वाभ्यन्तरं नक्षत्रमण्डलं प्रज्ञप्तम्।।९१।।**

(९२) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइअं अबाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमंडले पण्णत्ते?, गोअमा! पणयालीसं जोअणसहस्साइं तिण्णि अ तीसे जोअणसए अबाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमंडले पण्णत्ते।।९२।।

जंबूद्दीवे णं' मित्यादि, **जम्बूद्वीपे भदन्त! द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य कियदबाधया** कियदपान्तरालं मुक्त्वेत्यर्थः, **सर्वाभ्यन्तरनक्षत्रमण्डलं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम!**

पञ्चचत्वारिंशद्योजनसहस्राणि त्रीणि च योजनशतानि त्रिंशदधिकानि ४५३३०अबाधया सर्वबाह्यं नक्षत्रमण्डलं प्रज्ञप्तम्।।९२।।

(९३) सव्वब्भंतरे णं भंते! णक्खत्तमंडले केवइअं आयाम-विक्खंभेणं केवइअं परिक्खेवेणं पं०?, गो०! णवणउतिं जोअणसहस्साइं छच्चचत्ताले जोअणसए आयाम-विक्खंभेणं तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइं पण्णरस जोअणसहस्साइं एगूणणवतिं च जोअणाइं किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ते।।९३।।

'सव्वब्भंतरेण' मित्यादि, सर्वाभ्यन्तरं भदन्त! नक्षत्रमण्डलं कियदायामविष्कम्भेन कियत् परिक्षेपेण प्रज्ञप्तं? प्रभुराह-गौतम! नवनवति योजनसहस्राणि षट् च योजन शतानि चत्वारिंशदधिकानि ९९६४० आयामविष्कम्भेन तथा त्रीणि योजनशतसहस्राणि पञ्चदश च सहस्राणि एकोननवति च योजनानि ३१५०८९ किञ्चिद्विशेषाधिकानि परिक्षेपेण प्रज्ञप्तम्।।९३।।

(९४) सव्वबाहिरए णं भंते! णक्खत्तमंडले केवइअं आयाम-विक्खंभेणं केवइअं परिक्खेवेणं पण्णत्ते?, गोअमा! एगं जोअणसयसहस्सं छच्च सट्ठे जोअणसए आयाम-विक्खंभेणं तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइं अट्ठारस य सहस्साइं तिण्णि अ पण्णरसुत्तरे जोअणसए परिक्खेवेणं।।९४।।

सव्वबाहिरए ण' मित्यादि, सर्वबाह्यं भदन्त! नक्षत्रमण्डलं कियदायामविष्कम्भेन कियत्परिक्षेपेणं प्रज्ञप्तं? प्रभुराह-गौतम! एकं योजनशतसहस्रं षट् योजनशतानि षष्ट्यधिकानि आयाम-विष्कम्भेन तथा त्रीणि योजनशतसहस्राणि अष्टादश च सहस्राणि त्रीणि च योजनशतानि पञ्चदशोत्तराणि परिक्षेपेण।।९४।।

अथ मण्डले मण्डले प्रतिमुहूर्त्तं नक्षत्राणां गतिप्रमाणं प्रश्नयन्नाह–

(९५) जया णं भंते! णक्खत्ते सव्वब्भंतरमंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइअं खेत्तं गच्छइ?, गोअमा! पंच जोअणसहस्साइं दोण्णि य पण्णट्ठे जोअणसए अट्ठारस य भागसहस्से दोण्णि अ तेवट्ठे भागसए गच्छइ मंडलं एक्कवीसाए भागसहस्सेहिं णवहि अ सट्ठेहिं सएहिं छेत्ता।।९५।।

'जयाण भंते' इत्यादि यदा णमिति वाक्यालङ्कारे भदन्त! नक्षत्रं सर्वाभ्यन्तरं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदैकेन मुहूर्त्तेन कियत्क्षेत्रं गच्छति? स्वाम्याह-गौतम! पञ्च योजनसहस्राणि द्वे च योजनशते पञ्चषष्ट्यधिके योजनस्याष्टादश च भागसहस्राणि द्वे च भागशते त्रिषष्ट्यधिके ५२६५ १८२६३/२१९६० मण्डलमेकविंशत्या भागसहस्रैर्नवभिश्च शतैः षष्ट्यधिकैश्छित्त्वा'।।९५।।

(९६) जया णं भंते! णक्खत्ते सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं oqgfGSebkeAleFDebKefbieGl F?, ieSeoeel HBe peeDeCenenmmeeFbefeeCCe De [1]एगूणवीसे जोअणसए सोलस य भागसहस्सेहिं तिण्णि अ पणट्ठे भागसए गच्छइ, मंडलं एगवीसाए भागसहस्सेहिं णवहि अ सट्ठेहिं सएहिं छेत्ता।।९६।।

जया णं भंते' इत्यादि यदा णमिति प्राग्वत् भदन्त! नक्षत्रं सर्वबाह्यं मण्डलमुपसङ्क्रम्य चारं चरति तदेकैकेन मुहूर्त्तेन कियत्क्षेत्रं गच्छति? प्रभुराह-गौतम! पञ्चयोजनसहस्राणि त्रीणि च योजनशतान्येकोनपञ्चाशदधिकानि योजनस्य षोडश च भाग सहस्राणि]त्रीणि च भागशतानि पञ्चषष्ट्यधिकानि गच्छति ५३४९ १६३६५/२१९६० मण्डलमेकविंशत्या भागसहस्रैर्नवभिश्च शतैः षष्ट्यधिकैश्छित्त्वा।।९६।।

सम्प्रति नक्षत्रमण्डलानां चन्द्रमण्डलेष्ववतारं दर्शयन्नाह-

(९७) एते णं भंते! अट्ठ णक्खत्तमंडला कतिहिं चंदमंडलेहिं समोअरंति?, गोअमा! अट्ठहिं

१. अउणापण्णे - अकखत्रिबस पुवृ.हीवृ.।।

चंदमंडलेहिं समोअरंति, तंजहा–पढमे चंदमंडले ततिए छट्ठे सत्तमे अट्ठमे दसमे इक्कारसमे पण्णरसमे चंदमंडले।।९७।।

'एते णं भंते' इत्यादि, एतानि भदन्त! **अष्टौ नक्षत्रमण्डलानि 'कइहिं चंदमंडलेहिं'** ति प्राकृतत्वात्सप्तम्यर्थे तृतीया **ततः कतिषु चन्द्रमण्डलेषु समवतरन्ति?** प्रभुराह **गौतम! 'अट्ठहिं'** ति **अष्टासु चन्द्रमण्डलेषु समवतरन्ति तद्यथा-प्रथमे चन्द्रमण्डले तृतीये चन्द्रमण्डले** एवं **षष्टे सप्तमेऽष्टमे नवमे दशमे एकादशे पञ्चदशे चन्द्रमण्डले** इति। अत्र हि प्रथमे चन्द्रमण्डले द्वादश नक्षत्राणि तद्यथा-अभिजित् १ श्रवणो २ धनिष्ठा ३ शतभिषक् ४ पूर्वभाद्रपदा ५ उत्तरभद्रपदा ६ रेवती ७ अश्विनी ८ भरणी ९ पूर्वाफाल्गुनी १० उत्तराफाल्गुनी ११ स्वातिश्च तृतीये चन्द्रमण्डले पुनर्वसुमघे षष्टे चन्द्रमण्डले कृत्तिका सप्तमे चन्द्रमण्डले रोहिणी चित्रा चाष्टमे चन्द्रमण्डले विशाखा दशमेऽनुराधा एकादशचन्द्रमण्डले ज्येष्ठा पञ्चदशस्य चन्द्रमण्डलस्य बहिर्मृगशिर आर्द्रा पुष्योऽश्लेषा मूलो हस्तश्च पूर्वाषाढोत्तराषाढयोर्द्वे द्वे तारेऽभ्यन्तरतो द्वे द्वे बाह्ये इति।।९७।।

अथ चन्द्रसूर्यनक्षत्राणि मुहूर्त्तेन कतिमण्डलभागशतानि गच्छन्तीति क्रमेण निवेदयति-

(९८) एगमेगेणं भंते! मुहुत्तेणं चंदे केवइआइं भागसयाइं गच्छइ?, गो०! जं जं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तस्स २ मंडलपरिक्खेवस्स [१]सत्तरस अट्ठसट्ठे भागसए गच्छइ, मंडलं सयसहस्सेणं अट्ठाणउइए अ सएहिं छेत्ता।।९८।।

'एगमेगेणं भंते' इत्यादि, **एकैकेन भदन्त! मुहूर्त्तेन चन्द्रः कियन्ति भागशतानि गच्छति?** स्वाम्याह-**गौतम! यद्यन्मण्डलमुपसङ्क्रम्य चन्द्रश्चारं चरति तस्य तस्य मण्डलस्य** सम्बन्धिनः **परिक्षेपस्य** परिधेः **सप्तदशभागशतान्यष्टषष्ट्यधिकानि गच्छति मण्डलं**-मण्डलपरिक्षेपमेकेन **शतसहस्रेणाष्टानवत्या च शतैश्छित्त्वा**-विभज्य, इयमत्र

१. सत्तरस अट्ठट्ठे - V। सत्तरसट्ठट्ठे - अब। सत्तरट्ठसट्ठे - स।।

भावना-इह प्रथमतश्चन्द्रमण्डलकालो निरूपणीयस्तदनन्तरं तदनुसारेण मुहूर्त्तगतिपरिमाणं भावनीयं। तत्र मण्डलकालनिरूपणार्थमिद त्रैराशिकं-यदि सप्तदशभिः शतैरष्टषष्ट्यधिकैः सकलयुगवर्त्तिभिरर्द्धमण्डलैरष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि रात्रिंदिवानां लभ्यन्ते ततो द्वाभ्यामर्द्धमण्डलाभ्यामेकेन मण्डलेनेति भावः, कति रात्रिंदिवानि लभ्यन्ते राशित्रयस्थापना १७६८-१८३०-२, अत्रान्त्येन राशिना द्विकलक्षणेन मध्यराशेर्गुणनं जातानि षट्त्रिंशच्छतानि षष्ट्यधिकानि ३६६० तेषामाद्येन राशिना भागहरणं लब्धे द्वे रात्रिंदिवे शेषं तिष्ठति चतुर्विंशत्यधिकं शतं १२४ तत एकस्मिन् रात्रिंदिवे त्रिंशन्मुहूर्त्ता इति तस्य त्रिंशता गुणने जातानि सप्तत्रिंशच्छतानि विंशत्यधिकानि ३७२०तेषां सप्तदशभिः शतैरष्टषष्ट्यधिकैर्भागे हृते लब्धौ द्वौ मुहूर्त्तौ ततः शेषच्छेद्यच्छदेकराश्योरष्टकेनापवर्त्तना जातश्छेदराशिस्त्रयोविंशतिः छेदकराशिर्द्वेशते एकविंशत्यधिके, आगतं-मुहूर्त्तस्यैकविंशत्यधिकशतद्वयभागास्त्रयोविंशति २, २, २३/२२१ एतावता कालेन द्वेऽर्द्धमण्डले परिपूर्णे चरति किमुक्तं भवति एतावता कालेन परिपूर्णमेकं मण्डलं चन्द्रश्चरति तदेवं मण्डलकालपरिज्ञानं कृतं।। साम्प्रतमेतदनुसारेण मुहूर्त्तगतिपरिमाणं चिन्त्यते तत्र ये द्वे रात्रिंदिवे ते मुहूर्त्तकरणार्थं त्रिंशता गुण्येते जाताः षष्टिर्मुहूर्त्ता ६० तत उपरितनौ द्वौ मुहूर्त्तौ प्रक्षिप्तौ जाता द्वाषष्टिरेषा सवर्णनार्थं द्वाभ्यां शताभ्यामेकविंशत्यधिकाभ्यां गुण्यते गुणयित्वा चोपरितनास्त्रयोविंशतिः प्रक्षिप्यते जातानि त्रयोदशसहस्राणि सप्तशतानि पञ्चविंशत्यधिकानि १३७२५ एतदेकमण्डलकालगतमुहूर्त्तसत्कैकविंशत्यधिकशतद्वयभागानां परिमाणं ततस्त्रैराशिककर्मावसरो यदि त्रयोदशभिः सहस्रैः सप्तभिः शतैः पञ्चविंशत्यधिकैरेकविंशत्यधिकशतद्वयभागानां मण्डलभागा एकशतसहस्रमष्टानवतिशतानि लभ्यन्ते तत एकेन मुहूर्त्तेन किं लभामहे? राशित्रयस्थापना-१३७२५-१०९८००-१ इहाद्यो राशिर्मुहूर्त्तगतैकविंशत्यधिकशतद्वयभागरूपस्ततः सवर्णनार्थमन्त्यराशिरेकलक्षणो द्वाभ्यां

शताभ्यामेकविंशत्यधिकाभ्यां गुण्यते जाते द्वे शते एकविंशत्यधिके २२१ ताभ्यां मध्यो राशि र्गुण्यते जाते द्वे कोट्यौ द्विचत्वारिंशल्लक्षाः पञ्चषष्टिसहस्राण्यष्टौ शतानि २४२६५८०० तेषां त्रयोदशभिः सहस्रैःसप्तभिः शतैः पञ्चविंशत्यधिकैर्भागो ह्रियते लब्धानि सप्तदशशतानि अष्टषष्ट्यधिकानि १७६८ एतावतो भागान् यत्र तत्र वा मण्डले चन्द्रो मुहूर्त्तेन गच्छति।।९८।।

(९९) एगमेगेणं भंते! मुहुत्तेणं सूरिए केवइआइं भागसयाइं गच्छइ?, गोअमा! जं जं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तस्स २ मंडलपरिक्खेवस्स अट्ठारसतीसे भागसए गच्छइ, मंडलं सयसहस्सेहिं अट्ठाणउतीए अ सएहिं छेत्ता।।९९।।

'एगमेगेण' मित्यादि **एकैकेन भदन्त! मुहूर्त्तेन सूर्यः कियन्ति भागशतानि गच्छति?** भगवानाह-**गौतम! यद्यन्मण्डलमुपसङ्क्रम्य सूर्यश्चारं चरति तस्य तस्य** सम्बन्धिनः **परिक्षेपस्य**-परिधेरष्टादशभागशतानि त्रिंशदधिकानि **गच्छति मण्डलं** परिक्षेपमेकोन**शतसहस्रेणाष्टानवत्या च शतैश्छित्वा,** कथमेतदवसीयते? त्रैराशिकबला-त्तथाहि-षष्ट्या मुहूर्त्तैरेकं शतसहस्रमष्टानवति शतानि मण्डलं भागानां लभ्यन्ते तत एकेन मुहूर्त्तेन कति भागान् लभामहे? राशित्रयस्थापना ६२-१०९८०००-१ अत्रान्त्येन राशिना एककलक्षणेन मध्यराशेर्गुणने जातः स तावानेवैकेन गुणितं तदेव भवतीति वचनात्ततस्तस्याद्येन राशिना]द्वा षष्टिलक्षणेन भागो ह्रियते लब्धान्यष्टादशतानि त्रिंशदधिकानि १८३० एतावतो भागान् मण्डलस्य सूर्य एकैकेन मुहूर्त्तेन गच्छति।।९९।।

(१००) एगमेगेणं भंते! मुहुत्तेणं णक्खत्ते केवइआइं भागसयाइं गच्छइ?, गो०! जं जं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तस्स तस्स मंडलपरिक्खेवस्स अट्ठारस पणतीसे भागसए गच्छइ मंडलं सयसहस्सेणं अट्ठाणउईए अ सएहिं छेत्ता।।१००।।

'एगमेगेण' मित्यादि, **एकैकेन भदन्त! मुहूर्त्तेन नक्षत्रं कियन्ति भागशतानि**

गच्छति? यद्यन्मण्डलमुपसङ्क्रम्य नक्षत्रं चारं चरति तस्य तस्य मण्डलस्य सम्बन्धिनः **परिक्षेपस्य** परिधेरष्टादशभागशतानि **पञ्चत्रिंशदधिकानि गच्छति मण्डलं शतसहस्रेणाष्टानवत्या च शतैश्छित्वा।** इहापि प्रथमतो मण्डलकालो निरूपणीयस्ततस्तदनुसारेण मुहूर्त्तगतिपरिमाणभावना तत्र मण्डलकालप्रमाणचिन्तायामिदं त्रैराशिकं यद्यष्टादशभिः शतैः पञ्चत्रिंशदधिकैः सकलयुगभाविभिरर्द्धमण्डलैरष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि रात्रिंदिवानां लभ्यते ततो द्वाभ्यामर्द्धमण्डलाभ्यामेकैकेन परिपूर्णेन मण्डलेनेति भावः किं लभामहे राशित्रयस्थापना १८३५-१८३०-२ अत्रान्त्येन राशिना मध्यराशेर्गुणनं जातानि षट्त्रिंशच्छतानि षष्ट्यधिकानि ३६६० ततः आद्येन राशिना १८३५ भागहरणं लब्धमेकं रात्रिंदिव १ शेषाणि तिष्ठन्त्यष्टादशतानि पञ्चविंशत्यधिकानि १८२५ ततो मुहूर्त्तानयनार्थमेतानि त्रिंशता गुण्यन्ते जातानि चतुः पञ्चाशत्सहस्राणि सप्तशतानि पञ्चाशदधिकानि ५४७५० तेषामष्टादशभिः शतैः पञ्चत्रिंशदधिकैर्भागे हृते लब्धा एकोनत्रिंशन्मुहूर्त्ताः २९ ततः शेषच्छेद्यछेदकराश्योः पञ्चकेनापवर्त्तना जात उपरितनो राशिस्त्रीणि शतानि सप्तोत्तराणि ३०७ छेदकराशिस्त्रीणि शतानि सप्तषष्ट्यधिकानि ३६७ तत आगतमेकं रात्रिंदिवमेकस्य च रात्रिंदिवस्यैकोनत्रिंशन्मुहूर्त्ता एकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तषष्ट्यधिकं त्रिंशतभागानां त्रीणि शतानि सप्तोत्तराणि १-२९-३०७/३६७ इदानीमेतदनुसारेण मुहूर्त्तगतिपरिमाणं चिन्त्यते तत्र रात्रिंदिवे त्रिंशन्मुहूर्त्ता ३० तेषूपरितना एकोनत्रिंशन्मुहूर्त्ताः प्रक्षिप्यन्ते जाता एकोनषष्टिर्मुहूर्त्तानां ततः सवर्णनार्थं त्रिभिः शतैः सप्तषष्ट्यधिकेर्गुण्यते गुणयित्वा चोपरितनानि त्रीणि शतानि सप्तोत्तराणि क्षिप्यन्ते जातान्येकविंशतिसहस्राणि नवशतानि षष्ट्यधिकानि २१९६० ततस्त्रैराशिकं यदि मुहूर्त्तगतसप्तषष्ट्यधिकत्रिंशतभागानामेकविंशत्या सहस्रैर्नवभिः शतैः षष्ट्यधिकैरेकं शतसहस्रमष्टानवति शतानि मण्डलभागानां लभ्यन्ते तत एकेन मुहूर्त्तेन किं लभामहे

राशित्रयस्थापना-२१९६०-१०९८००-१ अत्राद्यो राशिर्मुहूर्त्तगतसप्तषष्ट्यधिकं त्रिंशतभागरूपस्ततोऽन्त्योऽपि राशिस्त्रिभिः शतैः षष्ट्यधिकैर्गुण्यते जातानि त्रीण्येव शतानि सप्तषष्ट्यधिकानि ३६७ तैंमध्यो राशिर्गुण्यते जाताश्चतस्रः कोट्यो द्वे लक्षे षण्णवति सहस्राणि षट्शतानि ४०२९ ६६०० एतेषामाद्येन राशिना एकविंशतिसहस्राणि नवशतानि षष्ट्यधिकानीति एवं रूपेण भागो ह्रियते लब्धान्यष्टादशशतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि १८३५ एतावतो भागो नक्षत्रं प्रतिमुहूर्त्तं गच्छति। तदेवं यतश्चन्द्रो यत्र तत्र वा मण्डले एकैकेन मुहूर्त्तेन मण्डलपरिक्षेपस्य सप्तदशशतानि अष्टषष्ट्यधिकानि भागानां गच्छति सूर्योऽष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि नक्षत्रमष्टादशशतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि ततश्चन्द्रेभ्यः शीघ्रगतयः सूर्या इत्यादि अग्रे भावयिष्यते। तदेवमुक्तो रविप्रभृतीनां चारविचारः।।१००।।

सम्प्रति भङ्ग्यन्तरेण पुनः सूर्यवक्तव्यतां प्रतिपादयिषुरिदमाह-

(१०१) जंम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सूरिआ उदीणपाईणमुग्गच्छ पाईणदाहिणमागच्छंति १ पाइणदाहिणमुग्गच्छ दाहिणपडीणमागच्छंति २ दाहिणपडीणमुग्गच्छ पडीणउदीण-मागच्छंति ३ पडीणउदीणमुग्गच्छ [1]उदीणपाईमागच्छंति ४?, हंता गोअमा! जहा पंचमसए पढमे उद्देसे [2]जाव णेवत्थि उस्सप्पिणी अवट्ठिए णं तत्थ काले पं० समणाउसो!, इच्चेसा जम्बुद्दीवपण्णत्ती सूरपण्णत्ती वत्थुसमासेणं सम्मत्ता भवइ।।१०१।।

'जंबुद्दीवे णं भंते सूरिया' इत्यादि प्रश्नसूत्रं व्यक्तं निर्वचनसूत्रं तु **'गोयमा! जहा पंचमसए पढमे उद्देसए'** त्ति **भगवत्याः** पञ्चमशते प्रथमोद्देशके यथोक्तं तथात्रापि ज्ञेयं तच्चैवं **"जंबुद्दीवे दीवे सूरिया उदीण पाईणमुगच्छ जाव उदीणपाईणमागच्छंति"** एतदपि सुबोधं

---

१. उदीयिपादीण० अब। अग्रेऽपि।। २. द्र. भग. ५। ३-१० ।।

नवरं **'सूरिय'** त्ति द्वौ सूर्यौ जंबूद्वीपे द्वयोरेव भावात् **'उदीणपाईणं'** त्ति उदगेवोदीचीनं प्रागेव प्राचीनमुदीचीनं च तदुदीच्या आसन्नत्वात्प्राचीनं च तत्प्राच्याः प्रत्यासन्नत्वादुदीचीनप्राचीनं दिगन्तरं क्षेत्रदिगपेक्षया पूर्वोत्तरदिगित्यर्थः 'उग्गच्छ' त्ति उद्गत्य क्रमेण तत्रोद्गमनं कृत्वेत्यर्थः 'पाईण दाहिणं' त्ति प्राचीनदक्षिणं दिगन्तरं पूर्वदक्षिणमित्यर्थः 'आगच्छन्ति' त्ति आगच्छतः क्रमेणैवास्तं यात इत्यर्थः इह चोद्गमनमस्तमयनं च द्रष्टृलोकविवक्षया वावसेयं तथाहि-येषामदृश्यौ सन्तौ दृश्यौ तौ स्यातां ते तयोरुद्गमनं व्यवहरन्ति येषां तु दृश्यौ सन्तावदृश्यौ स्तस्ते तयोरस्तमयं व्यवहरन्तीत्यनियतावुदयास्तमयावाह च **"जह जह समए समए पुरओ संचरइ भक्खरो गयणे तह तह इओ वि नियमा जाइए रयणी य भावत्थो।।१।।"** एवं च सति **"नराण उदयअत्थमणाइं होंति नियया सइ देसभेए कस्सइ किंची तव दिस्सए नियमा।।२।। सइ चेव य निद्दिट्ठो भद्दमुहूत्तो कामेण सव्वेसिं केसिंचीदाणिं पि य विसयपमाणे रवि जेसिं।।३।।"** इत्यादि, अनेन च सूत्रेण सूर्यस्य चतसृषु दिक्षु गतिरुक्ता ततश्च ये मन्यन्ते सूर्यः पश्चिमसमुद्रं प्रविश्य पातालेन गत्वा पुनः पूर्वसमुद्रे उदेतीत्यादि तन्मतमपास्तमिति एतच्च **भगवतीवृत्त्यनुसारेण** व्याख्यानमस्यैव सूत्रस्य **चन्द्रप्रज्ञप्तिवृत्त्यनु**सारेण व्याख्यानं लिख्यते जम्बूद्वीपे द्वीपे सूर्यौ यथायोगं मण्डले परिभ्रम्य भ्रमन्तौ मेरोरूदक्प्राच्यामुत्तरपूर्वस्यां दिशि उद्गच्छतस्तत्र चोद्गत्य प्राग् दक्षिणस्यां दक्षिणपूर्वस्यामागच्छतस्ततो भरतादिक्षेत्रापेक्षया प्राक् दक्षिणस्यां दक्षिणपूर्वस्यामुद्गत्य दक्षिणापाच्यां दक्षिणापरस्यामागच्छतस्तत्रापि च दक्षिणापरस्यामपरविदेहक्षेत्रापेक्षया उद्गत्याप्राच्युदीयमपरोत्तरस्यामागच्छतस्तत्रापि चापरोत्तरस्यामैरावतादिक्षेत्रापेक्षया उद्गत्योदक प्राच्यामुत्तरपूर्वस्यामागच्छतः। एवं तावत्सामान्यतो द्वयोरपि सूर्ययोरुदयविधिरुपदर्शितो विशेषतो पुनरयं यदैकः सूर्यः प्राक्दक्षिणस्यामुद्गच्छति तदापरोऽपरोत्तरस्यां दिशि समुद्गच्छति दक्षिणपूर्वोद्गतश्च सूर्यो भरतादीनि क्षेत्राणि मेरुदक्षिणदिग्वर्त्तीनि मण्डलपरिभ्रम्या परिभ्रमन्

प्रकाशयति। अपरोऽपरोत्तरस्यामुद्गतः संस्तत ऊर्ध्वं मण्डलपरिभ्रम्या परिभ्रमन्नैरावतादीनि क्षेत्राणि मेरोरुत्तरदिग् भावीनि प्रकाशयति भारतश्च सूर्यो दक्षिणापरस्यामागतः सन्नपरविदेहक्षेत्रापेक्षया उदयमासादयति। ऐरावतःसूर्यः पुनरुत्तरपूर्वस्यामागतः पूर्वविदेहापेक्षया समुद्गच्छति। ततो दक्षिणापरस्यामुद्गतः संस्तत ऊर्ध्वं मण्डलपरिभ्रम्या परिभ्रमन्नपरविदेहान् प्रकाशयति उत्तरपूर्वस्यामुद्गतस्तु तत ऊर्ध्वं मण्डलगत्या चरन् पूर्वविदेहानवभासयति। तत एष पूर्वविदेहप्रकाशको भूयो दक्षिणपूर्वस्यां भरतादिक्षेत्रापेक्षया उदयमासादयति, अपरविदेहप्रकाशकस्त्वपरोत्तरस्यामिति **'जावत्थि उस्सप्पिणी'** त्यादि इह यावत्करणाद्भगवत्याः **पञ्चमशतप्रथमोद्देशक**सत्कं सूत्रवृन्दं सूचितं तच्चैवं **"जयाणं भंते जंबूद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे दिवसे भवति तदा णं उत्तरड्ढे वि दिवसे भवति जया णं उत्तरड्ढे दिवसे भवति तदाणं जंबूद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं राती भवति? हंता! गो० जया णं जंबू दाहिणड्ढे दिवसे जाव राती भवति। जया णं भंते जंबुमंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं दिवसे भवति तदा णं पच्चत्थिमेणं वि दिवसे भवति जयाणं पच्चत्थिमेणं दिवसे भवति तदा णं जंबूद्दीवे दिवे मंदरस्स उत्तरदाहिणेणं राती भवति? हंता! गोयमा! जया णं जंबू मंदरपुरत्थिमेणं दिवसे जाव राती भवति जया णं भंते जंबुद्दीवे दाहिणड्ढे उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति तया उत्तरड्ढे वि उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति जयाणं उत्तरड्ढे जाव दिवसे भवति तदाणं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं जहण्णिया दुवालस मुहुत्ता राती भवति? हंता! गो० जया जंबु जाव दुवालस मुहुत्ता राई भवति। जया णं भंते! जंबुमंदरपुरत्थिमपच्चित्थमेणं उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति तदा णं जंबुद्दीवे दीवे उत्तरदाहिणेणं जाव राती भवति जया णं भंते जंबुद्दीवे दाहिणड्ढे अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति तदा णं उत्तरड्ढे अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति जया णं उत्तर० अट्ठारस० भवति तदा णं जंबुद्दीवे**

दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं सातिरेगा दुवालस मुहुत्ता राई भवति? हंता गो०! जया णं जंबु जाव राई भवति। जया णं भंते! जंबूद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं अट्ठारस मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति तया णं पच्चत्थिमेणं अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति, जया णं पच्चत्थिमेणं अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति, तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं साइरेगा दुवालस मुहुत्ता राती भवति एवं एएणं कमेणं उसारेयव्वं सत्तरसमुहुत्ते दिवसे तेरस मुहुत्ता राई सत्तरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साईरेग तेरसमुहुत्ता राती सोलसमुहुत्ते दिवसे चोद्दस मुहुत्ता राती सोलसमुहुत्ताणंतरे दिवसे सातिरेगा चोद्दसमुहुत्ता राती पण्णरस मुहुत्ते दिवसे पण्णरसमुहुत्ता राती पण्णरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगपण्णरसमुहुत्ता राती चोद्दसमुहुत्ते दिवसे सोलस मुहुत्ता राती चोद्दसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगसोलसमुहुत्ता राती भवति तेरसमुहुत्ते दिवसे सत्तरसमुहुत्ता राती तेरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगसत्तरसमुहुत्ता राती जया णं जंबूद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति तया णं उत्तरड्ढेवि जया णं उत्तरड्ढे तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राती भवति? हंता! गोयमा! एयं चेव उच्चारेयव्वं जाव राई भवति। जया णं भंते जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं जहण्णेण दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति तया णं पच्चत्थिमेणं वि जया णं पच्चत्थिमेणं तया णं जंबु० मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राती भवति हंता गो० जाव राई भवति। जया णं भंते जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जति तया णं उत्तरड्ढे वि वासाणं पढमे समए पडिवज्जति जया णं उत्तरड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जति तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम पच्चत्थिमेणं अणंतर पुरक्खडसमयंसि वासाणं पढमे समए पडिवज्जति? हंता गो० जयाणं जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जति तह चेव जाव पडिवज्जति। जया णं भंते जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स

पव्वयस्स पुरत्थिमेणं वासाणं पढमे समए पडिवज्जति तता णं पच्चत्थिमेणं वि वासाणं पढमे समए पडिवज्जति जया णं पच्चत्थिमेणं वासाणं पढमे समए तदा णं जाव मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं अणंतर पच्छाकडे समयंसि वासाणं पढमे समए पडिवण्णे भवति? हंता गोयमा! जयाणं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं एवं चेव उच्चारेयव्वं जाव पडिवण्णे भवति। एवं जहा समएणं अभिलावो भणिओ वासाणं तहा आवलियाए वि भाणियव्वो। आणापाणूएण वि थोवेण वि लवेण वि मुहुत्तेण वि अहोरत्तेण वि पक्खेण वि मासेण वि उडुए वि एएसिं सव्वेसिं जहा समयस्स अभिलावो तहा भाणियव्वो। जया णं भंते जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे हेमंताण पढमे समए पडिवज्जति जहेव वासाणं अभिलावो तहेव हेमंताणं वि गिम्हाण वि भाणियव्वो जाव ऊऊए एवं एए तिण्णि वि। एएसिं तीसं आलावगा भाणियव्वा। जया णं जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे पढमे अयणे पडिवज्जति तथा णं उत्तरड्ढे वि पढमे अयणे पडिवज्जति? जहा समएणं अभिलावो तहेव अयणेण वि भाणियव्वो जाव अणंतरपच्छाकडसमयंसि पढमे अयणे पडिवण्णे भवति जहा अयणेणं अभिलावो तहा संवच्छरेण वि भाणियव्वो। जुएण वि वाससएण वि वाससहस्सेण वि पुव्वंगेण वि पुव्वेण वि तुडियंगेण वि तुडिएण वि १ एवं पुव्वे २ तुडिए २ अडडे २ अववे २ हूहूय २ उप्पले २ पउमे २ णलिणे २ अत्थणिउरे २ अउए २ णउएय २ पउएय २ चलिया २ सीसपहेलिया २ पलिओवमेण वि सागरोवमेण वि भाणियव्वो। जया णं भंते जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे पढ़मा उस्सप्पिणी पडिवज्जति तदा णं उत्तरड्ढे वि पं०? पडिवज्जति। जया उत्तरड्ढे पढमा उस्सप्पिणी पडिवज्जति तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम पच्चत्थिमेणं णेवत्थि उस्सप्पिणी? अवट्ठिएण तत्थ काले पण्णत्ते समणाउसो हंता गो० तं चेव उच्चारेयव्वं जाव समणाउसो जहा उसप्पिणीए आलावओ भणिओ एवं ओसप्पिणीए वि भाणियव्वो।''

अस्या व्याख्या **भगवती**वृत्तेरेव लिख्यते। इह च सूर्यस्य सर्वतो गमनेऽपि प्रतिनियतत्वात्तत्प्रकाशस्य रात्रि दिवसविभागोऽस्तीति तं क्षेत्रभेदेन दर्शयन्नाह-'जया ण' मित्यादि, इह सूर्यद्वयभावादेकदैव दिगद्वये दिवस उक्तः, इह च यद्यपि दक्षिणार्द्धे तथोत्तरार्द्धे इत्युक्तं तथापि दक्षिणभागे उत्तरभागे चेति बोद्धव्यमर्द्धशब्दस्य भागमात्रार्थत्वात् यतो यदि दक्षिणार्द्धे उत्तरार्द्धे च समग्र एव दिवसः स्यात् तदा कथं पूर्वेणापरेण च रात्रिः स्यादिति वक्तुं युज्यते, अर्द्धद्वयग्रहणेन सर्वक्षेत्रस्य गृहीतत्वादतश्च दक्षिणार्द्धादिशब्देन दक्षिणादिभागमात्रमेवावसेयं नत्वर्द्धं यतो यदापि दक्षिणोत्तरयोः सर्वोत्कृष्टो दिवसो भवति तदापि जम्बूद्वीपस्य दशभागत्रयप्रमाणमेव तापक्षेत्रं तस्याः प्रत्येकं स्याद्दशभागद्वयमानं पूर्वपश्चिमयोः प्रत्येकं रात्रिक्षेत्रं स्यात्तथाहि-षष्ट्या मुहूर्त्तैः किल सूर्यो मण्डलं पूरति उत्कृष्टं दिनं चाष्टादशभिर्मुहूर्त्तैरुक्तमष्टादश च षष्टेर्दशभागत्रितयरूपा भवन्ति तथा यदाष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति तदा रात्रिर्द्वादश मुहूर्त्ता भवति द्वादश च षष्टेर्दशभागद्वयरूपा भवन्तीति तत्र च मेरूं प्रति नवयोजनसहस्राणि चत्वारि शतानि षडशीत्यधिकानि नव च दश भागा योजनस्येत्येतत्सर्वोत्कृष्टदिवसे दशभागत्रयरूपं तापक्षेत्रप्रमाणं भवति ९४८६ ९/१० कथं? मन्दरपरिक्षेपस्य किञ्चिन्नयूनत्रयोविंशत्युत्तरषडशताधिकैकत्रिंशद्योजनसहस्रमानस्य ३१६२३ दशभिर्भागे हृते यल्लब्धं तस्य त्रिगुणत्वे एतस्य भावादिति। यथा लवणसमुद्रं प्रति चतुर्णवतियोजनानां सहस्राण्यष्टौ शतान्यष्टषष्ट्यधिकानि चत्वारश्च दशभागा योजनस्यैतदुत्कृष्टदिने तापक्षेत्रप्रमाण भवति ९४८६८ ४/१० कथं? जम्बूद्वीपपरिधेः किञ्चिन्न्यूनाष्टाविंशत्युत्तरशतद्वयाधिकषोडशसहस्रोपेतयोजनलक्षत्रयमानस्य ३१६२२८ दशभिर्भागे हृते यल्लब्धं तस्य त्रिगुणत्वे एतस्य भावादिति। जघन्यरात्रिक्षेत्रपरिमाणं चाप्येवमेव नवरं परिधेर्दश भागो द्विगुणः कार्यस्तत्राद्यं षट्योजनानां सहस्राणि त्रीणि च शतानि चतुर्विंशत्यधिकानि षट् दशभागा योजनस्य ६३२४ ६/१० द्वितीयं तु त्रिषष्टिसहस्राणि द्वे

पञ्च चत्वारिंशदधिके योजनानां शते षट् च दशभागा योजनस्य ६३२४५ ६/१० सर्वलघौ च दिवसे तापक्षेत्रमनन्तरोक्तं रात्रि क्षेत्र तुल्यं रात्रिक्षेत्रं त्वनन्तरोक्ततापक्षेत्रतुल्यमित्यायामस्तु तापक्षेत्रं जम्बूद्वीपमध्ये पञ्चचत्वारिंशद्योजनानां सहस्राणि लवणे त्रयस्त्रिंशत्सहस्राणि त्रीणि शतानि त्रयस्त्रिंशदधिकानि त्रिभागश्च योजनस्य ३३३३३ १/३ उभयमीलने त्वष्टसप्ततिसहस्राणि त्रीणि शतानि त्रयस्त्रिंशदधिकानि योजनत्रिभागश्चेति 'उक्कोए अट्ठारस मुहुत्ते दिवसे भवइ' त्ति इह किल सूर्यस्य चतुरशीत्यधिकं मण्डलशतं भवति तत्र किल जम्बूद्वीपमध्ये पञ्चषष्टिर्मण्डलानि भवन्ति, एकोनविंशत्यधिकं च शतं तेषां लवणसमुद्रमध्ये भवति। तत्र च सर्वाभ्यन्तरे मण्डले यदा वर्त्तते सूर्यस्तदाष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति कथं यदा सर्वबाह्ये मण्डले वर्त्ततेऽसौ तदा सर्वजघन्यो द्वादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति ततश्च द्वितीयमण्डलादारभ्य प्रतिमण्डलं द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यां दिनस्य वृद्धावशीत्यधिक शततमं मण्डले षड् मुहूर्त्ता वर्द्धन्त इत्येवमष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति। अत एव द्वादशमुहूर्त्ता रात्रिर्भवति त्रिंशन्मुहूर्त्तत्वादहोरात्रस्य।।

'अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे'त्ति यदा सर्वाभ्यन्तरमण्डलानन्तरे वर्त्तते सूर्यस्तदा मुहूर्त्तैषष्टिभाग-द्वयहीनोऽष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति, स चाष्टादशमुहूर्त्तादिवसादनन्तरोऽष्टादशमुहूर्त्तानन्तर इति व्यपदिष्टः। 'साइरेगा दुवालसमुहुत्ता राइ' त्ति द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्याम्यधिका द्वादशमुहुर्त्ता 'राइ भवइ' त्ति रात्रिप्रमाणं भवतीत्यर्थः। यावता भागेन दिनं हीयते तावता रात्रिर्वर्द्धते त्रिंशन्मुहूर्त्तत्वादहोरात्रस्येति। 'एवं एएणं कमेणं' ति एवमित्युपसंहारे एतेनानन्तरोक्तेन 'जयाणं भंते जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे' इत्यनेनेत्यर्थः 'उसारेयव्वं' ति दिनमानं ह्रस्वीकार्यं तदेव दर्शयति 'सत्तरसे'त्यादि तत्र सर्वाभ्यन्तरमण्डलानन्तरमण्डला दारभ्यैक त्रिंशत्तममण्डलार्द्धे यदा सूर्यस्तदा सप्तदश मुहूर्त्तो दिवसो भवति पूर्वोक्तहानिक्रमेण त्रयोदश मुहूर्त्ता रात्रिरिति 'सत्तरसमुहुत्ताणंतर' त्ति मुहूर्त्तैकषष्टिभागद्वयहीनसप्तदशमुहूर्त्तप्रमाणो

दिवसोऽयं च द्वितीयादारभ्य द्वात्रिंशत्तमण्डलार्द्धे भवत्येवमनन्तरत्वमन्यत्राप्यूह्यं 'साईरेग तेरस मुहुत्ता राइ' त्ति मुहूर्त्तैकषष्टिभागद्वयेन सातिरेकत्वमेवं सर्वत्र 'सोलस मुहुत्ते दिवसे' त्ति द्वितीयादारभ्यैकषष्टितमे मण्डले षोडशमुहूर्त्तो दिवसो भवति 'पन्ननसमुहुत्ते दिवसे' त्ति द्विनवतितममण्डलार्द्धे वर्त्तमाने सूर्ये 'चोद्दस मुहुत्ते दिवसे' त्ति द्वाविंशंत्युत्तर शततमे मंण्डले 'तेरसमुहुत्ते दिवसे' त्ति सार्द्धे द्विपञ्चाशदुत्तरशततमे मण्डले 'बारसमुहुत्तदिवसे' त्ति अशीत्यधिकशततमे मण्डले सर्वबाह्य इत्यर्थः। कालाधिकारादिदमाह-'जया णं भंते जंबूद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ' इत्यादि 'वासाणं' त्ति चतुर्मासप्रमाणवर्षाकालस्य सम्बन्धी प्रथम आद्यः समयः क्षणः प्रतिपद्यते-सम्पद्यते-भवतीत्यर्थः अणंतर पुरेक्खड समयंसि' त्ति अन्तरो निर्व्यवधानो दक्षिणार्द्धे वर्षा प्रथमतापेक्षया स चातीतोऽपि स्यादत आह-पुरस्कृतं पुरोवर्त्ती भविष्यन्नित्यर्थः समयः प्रतीतस्ततः पदत्रयस्य कर्मधारयोऽतस्तत्र 'अणंतरपच्छाकडसमयंसि' त्ति पूर्वापरविदेहवर्षाप्रथमसमयापेक्षया योऽनन्तरः पश्चात्कृतोऽतीतसमयस्तत्र दक्षिणोत्तरयोर्वर्षाकालप्रथमसमयो भवतीति। 'एवं जहा समएण' मित्यादि, आवलिकाभिलापश्चैवं 'जयाणं भंते जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमा आवलिका पडिवज्जइ तया णं उत्तरड्ढे वि जया णं उत्तरड्ढे वासाणं पढमा आवलिया पडिवज्जइ तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं अणंतरपुरेक्खडसमयंसि वासाणं पढमा आवलिया पडिवज्जइ? हंता गोयमे' त्यादि, एवमानप्राणादिपदेष्वपि आवलिकाद्यर्थः पुनरयमावलिकाऽसङ्ख्यातसमयात्मिका, आनप्राणोच्छ्वासनिःश्वासकालः स्तोकः सप्तप्राणप्रमाणो लवस्तु सप्तस्तोकरूपो मुहुर्त्तः पुनः लवसप्तसप्ततिप्रमाणो ऋतुस्तु मासद्वयप्रमाणः 'हेमंतेणं' ति शीतकालस्य 'गिम्हाण व' त्ति उष्णकालस्य 'पढमेऽयणे त्ति दक्षिणायनं श्रावणादित्वात् संवत्सरस्य 'जुएण व' त्ति युगं पञ्च संवत्सरमानं 'पुव्वंगेण व' त्ति पूर्वाङ्गं चतुरशीतिवर्षलक्षाणि' पुव्वेण व' त्ति पूर्वं पूर्वाङ्गमेव चतुरशीतिवर्षलक्षगुणितं, एवं

चतुरशीतिवर्षलक्षगुणितमुत्तरोत्तरसंस्थानं भवति चतुर्णवत्यधिकं चाङ्कशतमन्तिमे स्थाने भवतीति।। 'पढमा उस्सप्पिणी' त्ति अवसर्पयति भावानित्येवंशीला अवसर्पिणीति तस्याः प्रथमो विभागः प्रथमावसर्पिणीति 'उस्सप्पिणी' ति उत्सर्पयति भावानित्येवं शीला उत्सर्पिणीति। **'इच्चेसा जंबुद्दीवपण्णत्तीए'** इत्यादि, इति पूर्वोक्तविधिनैषा **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तौ सूर्यप्रज्ञप्तिर्वस्तुसमासेन** वस्तुसंक्षेपेण **समाप्ता भवति**।।१०१।।

अथ चन्द्रवक्तव्यतामभिधित्सुरिदमाह-

(१०२) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे चंदिमा उदीणपाईणमुग्गच्छ पाईणदाहिणमागच्छंति जहा सूरवत्तव्वया जहा पंचमसयस्स दसमे उद्देसे [1]जाव अवट्ठिए णं तत्थ काले पण्णत्ते समणाउसो!, इच्चेसा जम्बुद्दीवपण्णत्ती चंदपण्णत्ती वत्थुसमासेणं सम्मत्ता भवइ।।१०२।।

'जंबुद्दीवे णं भंते' इत्यादि यावत् **चंदपन्नत्ती समत्ता भवती'** त्यन्तं सुगम् ।।१०२।। अनन्तरं कालस्वरूपमुक्तमिदानीं कालविशेषस्वरूपं निरूपयन्नाह-

(१०३) कति णं भंते! संवच्छरा पण्णत्ता?, गो०! पंच संवच्छरा पं०, तं०– णक्खत्त -संवच्छरे जुगसंवच्छरे पमाणसंवच्छरे लक्खणसंवच्छरे सणिच्छरसंवच्छरे ।।१०३।।

'कइ णं भंते संवच्छरा' इत्यादि, कति भदन्त! संवत्सराः **प्रज्ञप्ताः**? स्वाम्याह- **गौतम! पञ्च संवत्सराः प्रज्ञप्तास्तद्यथा नक्षत्रसंवत्सर** इत्यादि तत्र यावता कालेनाष्टाविंशत्यपि नक्षत्रैः सह क्रमेण योगपरिसमाप्तिस्तावान् कालविशेषो द्वादशभिर्गुणितो नक्षत्रसंवत्सरः, उक्तं च-**"नक्खत्त चंद जोगो बारसगुणिओ उ नक्खत्तो"** अत्र पुनरेको निखिलनक्षत्रपर्याययोग एको नक्षत्रमासः स च सप्तविंशत्यहोरात्रा एकविंशति च

१. द्र. भग - ५। २६०।।

सप्तषष्टिभागा अहोरात्रस्यैष राशिर्यदा पञ्चाशच्च सप्तषष्टिभागा अहोरात्रस्यैतावत्प्रामणो नक्षत्रसंवत्सरो १, युगं पञ्चवर्षात्मकं तत्पूरकः संवत्सरो **युगसंवत्सरो** २, युगस्य प्रमाण हेतुः संवत्सरः **प्रमाणसंवत्सरः** ३, लक्षणेन यथावस्थितेनोपेतः संवत्सरो **लक्षणसंवत्सरः** ४, शनैश्चरनिष्पादितः संवत्सरः **शनैश्चरसंवत्सर'** ५,।।१०३।।

तदेवं पञ्चापि संवत्सरान्नामतोऽभिधाय सम्प्रत्येषामेव पञ्चानां संवत्सराणां यथाक्रमं भेदान् स्वरूपं च प्रतिपादयन्नाह-

(१०४) णक्खत्तसंवच्छरे णं भंते! कइविहे पण्णत्ते?, गोअमा! दुवालसविहे पं०, तं०–सावणे भद्दवए आसोए जाव आसाढे, जं वा [1]विहप्फइ महग्गहे दुवालसेहिं संव्वच्छरेहिं सव्वणक्खत्तमंडलं समाणेइ सेत्तं णक्खत्तसंवच्छरे।।१०४।।

नक्खत्तसंवच्छरेण' मित्यादि, **नक्षत्रसंवत्सरो** णमिति वाक्यालङ्कारे **भदन्त! कतिविधः** कतिप्रकारः **प्रज्ञप्तः**? स्वाम्याह-**गौतम! द्वादशविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा श्रावणो भाद्रपद आश्वयुजो यावदाषाढो** यावत्करणात्कार्त्तिकादिपरिग्रहः इहैकः समस्तनक्षत्रयोगपर्यायोद्वादशभि र्गुणितो नक्षत्रसंवत्सरस्ततो ये नक्षत्रसंवत्सरस्य पुरका द्वादश समस्तनक्षत्रयोगपर्यायाः श्रावणभाद्रपदादिनामानस्तेऽप्यवयवे समुदायोपचारान्नक्षत्रसंवत्सरा स्ततः श्रावणादिभेदा द्वादशविधो नक्षत्रसंवत्सरः, **'जं वे'** त्या दि वाशद्वः पक्षान्तरसूचने, अथ यावत्सर्वं **समस्तं नक्षत्रमण्डलं बृहस्पतिमहाग्रहो योगमधिकृत्य द्वादशभिः संवत्सरैः समानयति**-परिसमापयति। **एष नक्षत्रसंवत्सरः** किमुक्तं भवति? यावता कालेन **बृहस्पति** नाम **महाग्रहो** योगमधिकृत्याभिजिदादीन्यष्टाविंशतिमपि नक्षत्राणि परिसमापयति तावान् कालविशेषो द्वादशवर्ष (मास) प्रमाणो नक्षत्रसंवत्सरः। सेत्तमित्यादि स्पष्टम्।१।।१०४।।

(१०५) जुगसंवच्छरे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोअमा! पंचविहे पं०, तंजहा–चंदे

१. वहस्सई - अकखबस।।

चंदे अभिवड्ढिए चंदे अभिवड्ढिए चेव।।१०५।।

'जुगसंवच्छरे' इत्यादि युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरो णमिति प्राग्वत् **कतिविधः प्रज्ञप्तः?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-चान्द्र १ श्चांद्रो २ ऽभिवर्द्धित ३ श्चांद्रो ४ भिवर्द्धित** ५ श्चैवेति, उक्तं च-**ज्योतिष्करण्डे-''चंदो चंदो अभिवड्ढिओ च चंदो अभिवड्ढिओ चेव पंचसहियं जुगमिणं दिट्ठं लोक्कदंसीहिं।।१।। पढम बिइयाओ चंदा तइयं अभिवड्ढियं वियाणाहि चंदं चेव चउत्थं पंचममभिवड्ढियं जाण।।२।।**" तत्र द्वादश पूर्णमासीपरावर्त्ता यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयान्ति तावान् कालविशेषश्चान्द्रःसंवत्सरः, उक्तं च **'पुण्णिम परियट्टा पुण बारस संवच्छरो हवइ चंदो।'** एकश्च पूर्णमासी परावर्त्ते एकश्चान्द्रो मासस्तस्मिंश्चान्द्रे मासेऽहोरात्रपरिमाणचिन्तायामेकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्यैतद् द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुष्पंचाशदधिकानि रात्रिंदिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रिंदिवस्यैवं परिमाणश्चान्द्रसंवत्सरः। तथा यस्मिन् संवत्सरेऽधिकमाससम्भवेन त्रयोदश चन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः, उक्तं च **"तेरसयं चंदमासा एसो अभिवड्ढिओ उ नायव्वो।।"** एकस्मिंश्चन्द्रमासेऽहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्यैतच्चानन्तरमेवोक्तं तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुणितो जातानि त्रीण्यहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्यैतावदहोरात्रप्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमास सम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीत्युच्यते। इह युगं चन्द्रचन्द्राभिवर्द्धितचन्द्राभिवर्द्धितरूपपञ्चसंवत्सरात्मकं सूर्यसंवत्सरापेक्षया परिभाव्यमानम न्यूनातिरिक्तानि पञ्चवर्षाणि भवन्ति। सूर्यमासश्च सार्द्धत्रिंशदहोरात्रप्रमाणश्चन्द्रमासः एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च षष्टिभागा दिनस्य ततो गणितपरिभावनया सूर्यसंवत्सरसत्कत्रिंशन्मासातिक्रमे एकश्चन्द्रमासोऽधिको लभ्यते स च यथा प्राप्यते तथा

पूर्वाचार्यप्रदर्शितेयं करणगाथा-**"चंदस्स जो विसेसो आइच्चस्स हविज्ज मासस्स। तीसइ गुणिओ संतो हवइ हु अहिमासगो एक्को।।"** अस्या अक्षरगमनिका- आदित्यसंवत्सरसम्बन्धिनो मासस्य मध्याच्चन्द्रस्य चन्द्रमासस्य यो भवति विश्लेषः इह विश्लेषकृते सति यदवशिष्यते तदप्युपचाराद्विश्लेषः, स त्रिंशता गुणितः सन् भवत्येकोऽधिकमासस्तत्र सूर्यमासपरिमाणात्सार्द्धत्रिंशदहोरात्ररूपाच्चन्द्रमासपरिमाणमेकोन त्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्येत्येवं रूपं शोध्यते ततः स्थितं पश्चाद्दिनमेकमेकेन द्वाषष्टिभागेन न्यूनं तच्च दिनं त्रिंशता गुण्यते जातानि त्रिंशद्दिनानि एकश्च द्वाषष्टिभागस्त्रिंशता गुणितो जातास्त्रिंशद्द्वाषष्टिभागास्ते त्रिंशद्दिनेभ्यः शोध्यन्ते ततः स्थितानि शेषाणि एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्यैतावत्परिमाणश्चान्द्रोमास इति भवति सूर्यवंवत्सरसत्कत्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तं च **"सट्ठीए अइआए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धंमि। बावीसेपव्वसए हवइ य बीओ जुगंतंमि।।१।।"** अस्या अक्षरगमनिका एतस्मिन् युगेऽनन्तरोदितस्वरूपे पर्वणां-पक्षाणां षष्टावतीतायां षष्टि संख्येषु पक्षेष्वतिक्रान्तेष्वित्यर्थः। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वाविंशत्यधिके पर्वशतेऽतिक्रान्ते युगस्यान्ते-युगपर्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीये संवत्सरेऽधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगेऽभिवर्द्धितसंवत्सरौ।।१०५।।

सम्प्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्दिदिक्षुः प्रतिवर्ष पर्वसंख्यां प्रश्नयन्निदमाह-

(१०६) पढमस्स णं भंते! चंदसंवच्छरस्स कइ पव्वा पण्णत्ता?, गो० चोव्वीसं पव्वा पण्णत्ता।।१०६।।

(१०७) बितिअस्स णं भंते! चन्दसंवच्छरस्स कइ पव्वा पण्णत्ता?, गो०! चउव्वीसं पव्वा पण्णत्ता।।१०७।।

(१०८) एवं पुच्छा ततिअस्स, गो० ! छव्वीसं पव्वा प०।।१०८।।

(१०९) चउत्थस्स चन्दसंवच्छरस्स चोव्वीसं पव्वा प०।।१०९।।

(११०) पंचमस्स णं अहिवड्ढिअस्स छव्वीसं पव्वा य पण्णत्ता, एवामेव सपुव्वावरेणं पंचसंवच्छरिए जुए एगे चउव्वीसे पव्वसए पण्णत्ते, सेत्तं जुगसंवच्छरे।।११०।।

'पढमस्स णं भंते चंदसंवच्छरस्से' त्यादि, प्रथमस्य णमिति वाक्यालङ्कृतौ चान्द्रसंवत्सरस्य कतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि? स्वाम्याह-**गौतम! चतुर्विंशति पर्वाणि प्रज्ञप्तानि** द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सर एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणी ततः सर्वसंख्या चान्द्रे संवत्सरे चतुर्विंशति पर्वाणि भवन्ति। एवं द्वितीयादिसंवत्सरसूत्राण्यपि व्याख्यातानि केवलं द्वितीयस्य चतुर्थस्य च चान्द्रसंवत्सरस्य प्रत्येकं चतुर्विंशतिः पर्वणि तृतीयपञ्चमयोरभिवर्द्धित संवत्सरयोस्तु षड्विंशतिः पर्वाणि तयोस्त्रयोदशमासात्मकत्वात्। तत एवमेवोक्तप्रकारेण **'सपुव्वावरेणं'** ति पूर्वापरगणितमीलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे एकं पर्वशतं चतुर्विंशत्यधिकं प्रज्ञप्तं। **'सेत्तं जुगसंवत्सरे** इति निगमनवाक्यमिह पर्वविषयो भूयान् विचारोऽस्ति। स च **चन्द्रसूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिभ्यामेवावगन्तव्यो** ग्रन्थगौरवभयान्न लिख्यते।।११०।।

साम्प्रतं प्रमाणसंवत्सरमाह-

(१११) पमाणसंवच्छरे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोअमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–णक्खत्ते चंदे उऊ आइच्चे अभिवड्ढिए, से त्तं पमाणसंवच्छरे।।१११।।

'पमाण संवच्छरेण' मित्यादि **प्रमाणसंवत्सरो** णमिति वाक्यालङ्कारे **भदन्त! कतिविधः प्रज्ञप्तः**? स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा 'नक्खत्ते'** इत्यादि **नक्षत्र संवत्सरः १, चन्द्रसंवत्सरः २, ऋतुसंवत्सरः ३, आदित्यसंवत्सरः ४, अभिवर्द्धित संवत्सरः ५, से त्तं जुग संवच्छरे** 'इति निगमनं। तत्र नक्षत्रचन्द्राभिवर्द्धितसंवत्सराणां स्वरूपं

प्रागेवोक्तमिदानीं ऋतुसंवत्सरादित्यसंवत्सरयोः स्वरूपमुच्यते, तत्र द्वे घटिके एको मुहूर्त्तस्त्रिंशन्मुहूर्त्तोऽहोरात्रः पञ्चदशपरिपूर्णअहोरात्राः पक्षः द्वौ पक्षौ मासो द्वादशमासाः संवत्सरो यस्मिन्संवत्सरे त्रीणि शतानि षष्ट्यधिकानि परिपूर्णान्यहोरात्राणां भवन्ति एष ऋतुसंवत्सरः, ऋतवो लोके प्रसिद्धा वसंतादयः तत्प्रधानः संवत्सरः ऋतुसंवत्सरोऽस्य चापरमपि नामद्वयमस्ति तद्यथा-कर्मसंवत्सरः सवनसंवत्सरश्च तत्र कर्म लौकिको वयवहारस्तत्प्रधानः संवत्सरः कर्मसंवत्सरो लोको हि प्रायः सर्वोऽप्यनेनैव संवत्सरेण व्यवहरति तथा चैतद्गतमासमधिकृत्यान्य -त्रोक्तं " **कम्मोभिसंसयाए मासो ववहारकारगो लोए सेसाओ संसयाए ववहारे दुक्करा धित्तुं।।१।।**" तथा सवनं कर्मसु प्रेरणं 'सू प्रेरणे' इति वचनात्, तत्प्रधानः संवत्सरः सवनसंवत्सरः इत्यस्यनाम तथा चोक्तं " **बे नालिया मुहुत्ते सट्ठी उण नालिया अहोरत्ते पन्नरस अहोरत्ता पक्खो तीसं दिण मासो।।१।। संवच्छरा उ बारसमासा पक्खा य ते चउव्वीसं तिन्ने व सया सट्ठा हवंति राइंदियाणं।।२।। एसो उ कमो भणिओ नियमा संवच्छरस्स कम्मस्स कम्मो त्ति सावाणो त्ति य उउ इति एतस्स नामाणि।।३।।**" तथा यावता कालेन षडपि प्रावृडादयो ऋतवः परिपूर्णप्रवृत्ता भवन्ति तावान् कालविशेष आदित्यसंवत्सरः, उक्तं च "**छप्पिउ उउ परियट्टा एसो संवच्छरो उ आइच्चो**" तत्र यद्यपि लोके षष्ट्यहोरात्रप्रमाणः प्रावृडादिकः ऋतुः प्रसिद्धस्तथापि परमार्थतः स एकषष्ट्यहोरात्रप्रमाणो वेदितव्यस्तथैवोत्तरकालमव्यभिचारदर्शनात् अत एवास्मिन् संवत्सरे त्रीणि शतानि षट्षष्ट्यधिकानि रात्रिदिवसानां भवन्ति तथा चान्यत्रापि पंचसु संवत्सरेषु यथोक्तमेव रात्रिंदिवानां परिमाणमुक्तं " **तिन्नि अहोरत्त सया छावट्ठा भक्खरो हवइ मासो तिन्नि सया पुण सट्ठा कम्मो संवच्छरो होइ।।१।। तिन्नि अहोरत्तसया चउपन्ना नियमसो हवइ चंदो भागा य बारसेव या बावट्ठि कऐण छेएण।।२।। तिन्नि अहोरत्तसया सत्तावीसा च होंति नक्खत्ते एक्कावन्न भागा सत्तट्ठिकएण छेएण।।३।।**

तिन्नि अहोरत्तसया तेसीई चेव होइ अभिवड्ढे चोयालीसं भागा बावट्ठिकएण छेएण।।४।।" एताश्चतस्रोऽपि गाथाः सुगमाः। सम्प्रति विनेयजनानुग्रहाय संवत्सरसंख्यातो माससंख्या प्रदर्श्यते तत्र सूर्यसंवत्सरस्य परिमाणं त्रीणि शतानि षट्षष्ट्यधिकानि रात्रिंदिवानां द्वादशभिश्च मासैः संवत्सरस्तत्रयाणां शतानां षट्षष्ट्यधिकानां द्वादशभिर्भागे हृते लब्धास्त्रिंशत् ३० शेषाणि तिष्ठन्ति षट् तेऽर्द्धं क्रियन्ते जाता द्वादश ततो लब्धमेकदिवसस्यार्द्धमेतावत्परिमाणः सूर्यमासस्तथा कर्मसंवत्सरस्य परिमाणं त्रीण्यहोरात्रशतानि चतुष्पञ्चाशदधिकानि द्वादश च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य तत्र त्रयाणां शतानां चतुःपञ्चाशदधिकानां द्वादशभिर्भागे हृते लब्धा एकोनत्रिंशदहोरात्राः शेषस्तिष्ठन्ति षट् अहोरात्रास्तेऽपि तत्र प्रक्षिप्यन्ते जातानि चतुरशीत्यधिकानि तेषां द्वादशभिर्भागे हृते लब्धा एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वाषष्टिभागकरणार्थं द्वाषष्ट्या गुण्यन्ते जातानि त्रीणि शतानि द्वासप्तत्यधिकानि ३७२ येऽपि च द्वादश द्वाषष्टिभागा उपरितनास्तेऽपि तत्र प्रक्षिप्यन्ते जातानि चतुरशीत्यधिकानि तेषां द्वादशभिर्भागे हृते लब्धा द्वात्रिंशद् द्वाषष्टिभागा एतावच्चन्द्रमासपरिमाणं तथा नक्षत्र संवत्सरस्य परिमाणं त्रीणि शतानि सप्तविंशत्यधिकानि रात्रिंदिवानामेकस्य च रात्रिंदिवस्यैकपञ्चाशत्सप्तषष्टिभागास्तत्र त्रयाणां शतानां सप्तविंशत्यधिकानां द्वादशभिर्भागो ह्रियते लब्धाः सप्तविंशतिरहोरात्राः शेषास्त्रयस्तिष्ठन्ति ततस्तेऽपि सप्तषष्टिभागास्तत्र त्रयभागकरणार्थं सप्तषष्ट्या गुण्यन्ते जाते द्वेशते एकोत्तरे २०१ येऽपि चोपरितना एक पञ्चाशत्सप्तषष्टिभागास्तेऽपि तत्र प्रक्षिप्यन्ते जाते द्वेशते द्विपञ्चाशदिधके २५२ तेषां द्वादशभिर्भागे हृते लब्धा एकविंशतिः सप्तषष्टिभागाः एतावन्नक्षत्रमासपरिमाणं तथाऽभिवर्द्धितसंवत्सरस्य परिमाणं त्रीणि रात्रिंदिवशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रिंदिवस्य तत्र त्रयाणां शतानां त्र्यशीत्यधिकानां द्वादशभिर्भागो ह्रियते लब्धा एकत्रिंशदहोरात्रा शेषास्तिष्ठन्त्यहोरात्रा एकादश

ते चतुर्विंशत्युत्तरशतभागकरणार्थं चतुर्विंशत्युत्तरशतेन १२४ गुण्यन्ते जातानि त्रयोदशशतानि चतु:षष्ट्यधिकानि १३६४ येऽपि चोपरितनाश्चतुश्चत्वारिंशद् द्वाषष्टिभागास्तेऽपि चतुर्विंशत्युत्तरशतभागकरणार्थं द्वाभ्यां गुण्यन्ते जाता अष्टाशीति: सोऽनन्तरराशौ प्रक्षिप्यते जातानि चतुर्दशशतानि द्विपञ्चाशदधिकानि १४५२ तेषां द्वादशभिर्भागो ह्रियते लब्धमेकविंशत्युत्तरशतं चतुर्विंशत्युत्तरशतभागानामेतावद्भिवर्द्धित मासपरिमाणं तथा चोक्तं **"आइच्चो खलु मासो तीसं च अद्धं च सावणो तीसं चंदो एगुणतीसं बिसट्ठीभागा य बत्तीसा।।१।। नक्खत्तो खलुमासो सत्तावीसं भवे अहोरत्ता अंसा य एक्कवीसा सत्तट्ठि कएण छेएण।।२।। अभिवड्ढिओ च मासो एक्कत्तीसं भवे अहोरत्ता भागा सयमेगवीसं चउवीस सएण छेएण।।३।।"** सम्प्रति एतैरेव पञ्चभि:संवत्सरे: प्रागुक्तस्वरूपं युगं पञ्चसंवत्सरात्मकं मासानधिकृत्य प्रमीयते तत्र युगं प्रागुदितस्वरूपं यदि सूर्यमासैर्विभज्यते तत: षष्टि: सूर्यमास युगं भवति तथाहि-सूर्यमासे सार्द्धत्रिंशदहोरात्रा युगे चाहोरात्राणामष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि भवन्ति। कथमेतदवसीयते इत्युच्यते इह युगे त्रयश्चन्द्रसंवत्सरा द्वौ चाभिवर्द्धितसंवत्सरौ एकैकस्मिंश्चन्द्रसंवत्सरे ऽहोरात्राणां त्रीणि शतानि चतु:पञ्चाशदधिकानि भवन्ति द्वादश च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य ३५४ १२/६२ तत एतत्त्रिभिर्गुण्यते जातान्यहोरात्राणां दशशतानि द्वाषष्ट्यधिकानि १०६२ षट्त्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य ३६/६२ द्वेऽभिवर्द्धितेऽभिवर्द्धितसंवत्सरे चैकैकस्मिन्नहोरात्राणां त्रीणि शतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य ३८३४४/६२ एतद् द्वाभ्यां गुण्यते जातानि सप्तशतानि षट्षष्ट्यधिकानि ७६६ अष्टाशीतिश्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य ८८/६२ प्राक्तना षट्त्रिंशद् द्वाषष्टिभागा अष्टाशीतौ प्रक्षिप्यन्ते जातं चतुर्विंशत्यधिकं शतं १२४ तस्य द्वाषष्ट्या भागे हृते लब्धौ द्वावहोरात्रौ तौ पूर्वेष्वहोरात्रेषु प्रक्षिप्येते तत: सर्वसङ्कलनया जातानि अहोरात्राणामष्टादश

शतानि त्रिंशदधिकानि १८३० तत्रैतेषामष्टादशशतानां त्रिंशदधिकानां सार्द्धत्रिंशदहोरात्रैर्भागो हर्त्तव्यस्तत्र छेदराशिना सांशत्वाद्भाग: पातयितुं न शक्यते ततो मासद्वयकरणार्थं सार्द्धा त्रिंशदहोरात्रा द्वाभ्यां गुण्यन्ते जाता एकषष्टिस्तया भागो ह्रियते लब्धानि त्रिंशन्मासद्वयानि ३० तेषां द्वाभ्यां गुणने लब्धा: षष्टिर्मासास्तथा तदेव युगं यदि कर्ममासैर्विभज्यते तत एकषष्टि: कर्ममासा भवन्ति तथाहि-ऋतुमासस्त्रिंशदहोरात्रप्रमाणस्ततोऽष्टादशानां शतानां त्रिंशदधिकानां त्रिंशता भागे हृते एक षष्टि र्लभ्यत इति तथा यदि चन्द्रमासैस्तदेव युगं विभज्यते तदा द्वाषष्टिश्चन्द्रमासा भवन्ति तथाहि तत्रैकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वाषष्टिभागकरणार्थं द्वाषष्टिभिर्गुण्यन्ते जातानि सप्तदशशतान्यष्टानवत्यधिकानि १७९८ ततो द्वात्रिंशदुपरितना द्वाषष्टिभागास्तत्र प्रक्षिप्यन्ते जातान्यष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि १८३० येऽपि च युगेऽहोरात्रा अष्टादशतानि त्रिंशदधिकानि तेऽपि द्वाषष्ट्या गुण्यन्ते जाता एका लक्षा त्रयोदशसहस्राणि चत्वारि शतानि षष्ट्यधिकानि ११३४६० एतेषामष्टादशशतैस्त्रिंशदधिकैश्चन्द्रमाससत्कद्वाषष्टिभागरूपै र्भागो ह्रियते लब्धा द्वाषष्टिश्चन्द्रमासास्तथा यदि तदेव युगं नक्षत्रमासे परिगण्यते तदास्मिन् युगे सप्तषष्टिनक्षत्रमासा भवन्ति। तथाहि नक्षत्रमासपरिमाणं सप्तविंशतिरहोरात्रा एकविंशति: सप्तषष्टिभागा अहोरात्रस्य तत्र सप्तविंशतिरहोरात्रा: सप्तषष्टिभागकरणार्थं सप्तषष्ट्या गुण्यन्ते जातान्यष्टादशशतानि नवोत्तराणि १८०९ तत उपरितना एकविंशति: सप्तषष्टिभागास्तत्र प्रक्षिप्यन्ते जातान्यष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि १८३० युगस्यापि सम्बन्धिनस्त्रिंशदधिका अष्टादशशतप्रमाणा अहोरात्रा: सप्तषष्ट्या गुण्यंते जाता एका लक्षा द्वाविंशतिसहस्राणि षट्शतानि दशोत्तराणि १२२६१० एतेषामष्टादशशतैस्त्रिंशदधिकैर्नक्षत्रमाससत्कसप्त षष्टिभागरूपैर्भागो ह्रियते लब्धा: सप्तषष्टिभागा ६७ तथा यदि युगमभिवर्द्धितमासै: परिगण्यते तदाभिवर्द्धितमासा युगे भवन्ति सप्तपञ्चाशत्सप्त रात्रिंदिवानि एकादश मुहूर्त्ता एकस्य मुहूर्त्तस्य द्वाषष्टिभागास्त्रयोविंशतिस्तथाह्यभिवर्द्धितमासपरिमाणमेकत्रिंशदहोरात्रा एकविंशत्युत्तरशतं

भागानामहोरात्रस्य तत एकत्रिंशदहोरात्राश्चतुर्विंशत्युत्तरशतभागकरणार्थं चतुर्विंशत्युत्तरेण शतेन गुण्यन्ते जातान्यष्टात्रिंशच्छतानि चतुश्चत्वारिंशदधिकानि ३८४४ तत उपरितनमेकविंशत्युत्तरशतभागानां तत्र प्रक्षिप्यन्ते जातान्येकोनचत्वारिंशच्छातानि पञ्चषष्ट्यधिकानि ३९६५ यानि च युगे अहोरात्राणमष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि १८३० तानि चतुर्विंशत्युत्तरेण शतेन गुण्यन्ते जाते द्वे लक्षे षड्विंशति सहस्राणि नवशतानि विंशत्यधिकानि २२६९२० तत एतेषामेकोनचत्वारिंशच्छतैः पञ्चषष्ट्यधिकैरभिवर्द्धित माससत्क चतुर्विंशत्युत्तरशतभागरूपैर्भागो ह्रियते लब्धाः सप्तपञ्चाशन्मासाः शेषास्तिष्ठन्ति नवशतानि पञ्चदशोत्तराणि ९१५ तेषामहोरात्रानयनाय चतुर्विंशत्युत्तरशतेन भागो ह्रियते लब्धानि सप्तरात्रिंदिवानि शेषासतिष्ठन्ति चतुर्विंशत्युत्तरशतभागाः सप्तचत्वारिंशत्तत्र चतुर्भि-भागैरेकस्य च भागस्य चतुर्भिस्त्रिंशद्भागैर्मुहूर्त्तो भवति तथाहि एकस्मिन्नहोरात्रे त्रिंशन्मुहूर्त्ता अहोरात्रे च चतुर्विंशत्युत्तरशतं भागानां कल्पितमास्ते ततस्तस्य चतुर्विंशत्युत्तरशतस्य त्रिंशता भागे हृते लब्धाश्चत्वारो भागा एकस्य च भागस्य सत्काश्चत्वारस्त्रिंशद्भागैरेकादशमुहूर्त्ता लब्धाः शेषस्तिष्ठत्येको भागः एकस्य च भागस्य सत्का षोडश त्रिंशद्भागाः किमुक्तं भवति? षट्चत्वारिंशतत्रिंशद्भागा एकस्य च भागस्य सत्काः शेषास्तिष्ठन्ति ते च किल मुहूर्त्तस्य चतुर्विंशत्युत्तरशतभागरूपास्ततः षट्चत्वारिंशत श्चतुर्विंशत्युत्तरशतस्य च द्विकेनापवर्त्तना क्रियते मुहूर्त्तस्य द्वाषष्टिभागास्त्रयोविंशतिः। उक्तं चैतदन्यत्रापि **"तत्थ पडिमिज्जमाणे पंचहिं माणेहिं पुव्वगणिएहिं मासेहिं विभज्जंत जइ मास होंति ते वोच्छं।।"** अत्र 'तत्थे' तत्र युगे' पंचहिं माणेहि' ति पञ्चभिर्मानैर्मान संवत्सरैः प्रमाणसंवत्सरैरादित्यचन्द्रादिभिरित्यर्थः पूर्वगणितैः प्राक् प्रतिसङ्ख्यातस्वरूपैः प्रतिमीयमाने-प्रतिगण्यमाने मासैः सूर्यादिमासैः शेषं सुगमं **"आइच्चेण उ सट्ठी मासा उउणो उ होंति एगट्ठी। चंदेण उ बावट्ठी सत्तट्ठी होंति नक्खत्ते।।१।।"**

सम्प्रति लक्षणसंवत्सरमाह -

(११२) लक्खणसंवच्छरे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते? गोअमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा-

''समयं नक्खत्ता जोगं [१]जोएंति समयं उऊ परिणामंति।
णच्चुण्ह णाइसीओ बहूदओ होइ णक्खत्तो।।१।।
ससि [२]समग्गपुण्णमासिं जोएंती विसमचारिणक्खत्ता।
कडुओ बहुदओ [३]वा तमाहु संवच्छरं चंदं।।२।।
विसमं पचालिणो परिणमंति अणुइसु दिंति पुप्फफलं।
वासं न सम्म वासइ तमाहु संवच्छरं कम्मं।।३।।
पुढविदगाणं तु रसं पुप्फफलाणं च देइ आइच्चो।
अप्पेणवि वासेणं सम्मं निप्फज्जए [४]सस्सं।।४।।
आइच्चतेअतविआ खणलवदिवसा उऊ परिणमन्ति।
[५]पूरेइ अ णिण्णथले तमाहु अभिवद्धिअं जाण।।५।।११२।।

'लक्खणसंवच्छरेणं भंते' इत्यादि, लक्षणसंवत्सरो भदन्त! **कतिविधः प्रज्ञप्तः?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चविधः प्रज्ञप्तस्तच्च** पञ्चविधत्वं प्रागुक्तमेव द्रष्टव्यं तद्यथा नक्षत्रसंवत्सरः १, चन्द्रसंवत्सरः २, ऋतुसंवत्सरः ३, आदित्य संवत्सरः ४, अभिवर्द्धित संवत्सरः ५, किमुक्तं भवति न केवलमेते नक्षत्रादिसंवत्सरा यथोक्तरात्रिंदिवसपरिमाणा भवन्ति किन्तु तेभ्यः पृथग्भूता अन्येऽपि वक्ष्यमाणलक्षणोपेतास्ततो लक्षणोपपन्नः संवत्सरः पृथक् पञ्चविधो भवतीति तत्र प्रथमतो नक्षत्र-संवत्सरलक्षणमाह **'समगं नक्खत्ता जोगं जाएंति समगं ऊऊपरिणमंति,**

१. जोएतिं - अकब।। २. समयं - अब। समग - खत्रिपमु। सगल - ठाणं - ५। २१३। २।। ३. या - अखब।। ४. सासं - V। ५. पूरिंति य णिण्णतले - अब। स्थानाङ्गे ५। २१३ 'पूरेति रेणुथलयाइं' इति पाठो लभ्यते, किन्तु सूर्यप्र - चन्द्र प्रज्ञप्त्योः १०। १२९ 'पूरेति णिण्णथलए' इति पाठो दृश्यते। वृत्तिकृता मलयगिरिणापि 'निम्नस्था - नानि स्थलानि च जलेन पूरयति' इति व्याख्यातमिस्त इति V पृ ५६८. टि. ११।।

नच्चुण्ह नाति शीतो बहुउदओ होइ नक्खत्तो'।।१।। यस्मिन् संवत्सरे समकमेवैककालमेव ऋतुभिः सहेति गम्यते नक्षत्राणि उत्तराषाढाप्रभृतीनि योगं युञ्जन्ति चन्द्रेण सह योगं युञ्जन्ति सन्ति तां पौर्णमासीं परिसमापयन्ति, इयमत्र भावना यस्मिन् संवत्सरे नक्षत्रैर्मासससदृशनामकैस्तस्य तस्य ऋतोः पर्यन्तवर्ती मासः परिसमाप्यते तेषु च तां तां पौर्णमासी परिसमापयत्सु तया तया पौर्णमास्या सह ऋतवोऽपि निदाघादिकाः परिसमाप्तिमुपयान्ति यथा उत्तराषाढानक्षत्रे आषाढीं पौर्णमासीं परिसमापयति तथाऽऽषाढपौर्णमास्या सह निदाघोऽपि ऋतुपरिसमाप्तिमुपैति स नक्षत्रसंवत्सरो नक्षत्रानुरोधेन तस्य तथा तथा परिणममानत्वात्, एतेन च लक्षणद्वयमभिहितं द्रष्टव्यं तथा न विद्यतेऽतिशयेनोष्णमुष्णरूपपरितापो यस्मिन् स नात्युष्णस्तथा न विद्यतेऽतिशयेन शीतं यत्र स नातिशीतो बहूदकं यत्र स बहूदकः एवं रूपैः पञ्चभिः समग्रै र्लक्षणैरुपेतो नक्षत्रसंवत्सरः। सम्प्रति चन्द्रसंवत्सरलक्षणमाह-**ससिसमग्गपुण्णमासिं जोएंति विसमचारि नक्खत्ता कडओ बहुउदओ व तमाहु संवच्छरं चंदं**।।२।। यस्मिन् संवत्सरे नक्षत्राणि विषमचारीणि मासविसदृशनामानीत्यर्थः शशिना समकं योगमुपागतानि तां तां पौर्णमासीं युञ्जन्ति परिसमापयन्ति यश्च कडुकशीतातपरोगादिदोषबहुलतया परिणामदारुणो बहूदकश्च तमाहुर्महर्षयः संवत्सरंचान्द्रं चन्द्रसम्बन्धिनं चन्द्रानुरोधतस्तत्र मासानां परिसमाप्तिभावान्नाम सदृशनामकनक्षत्रानुरोधतः। सम्प्रति कर्मसंवत्सरलक्षणमाह **'विसमं पचालिणो परिणमति अणइसु दिंति पुप्फफलं वासंन स म्म वासइ तमाहु संवच्छरं कम्मं** 'यस्मिन् संवत्सरे वनस्पतयो विषमं विषमकालं प्रचालिनः। परिणमन्ति तथाऽनृतुष्वपि स्वस्वऋत्वभावेऽपि पुष्पं फलं च ददति-प्रयच्छन्ति तथा वर्षपानीयं न सम्यक् यस्मिन् संवत्सरे मेघो वर्षति तमाहुर्महर्षयः 'संवच्छरं कम्मं' कर्मसंवत्सरमित्यर्थः। अधुना सूर्यसंवत्सर लक्षणमाह-**'पुढविदगाणं च रसं पुप्फफलाणं च देइ आइच्चो। अप्पेण वि वासेणं सम्मं निप्फज्जए सस्सं**।। पृथिव्या उदकस्य तथा पुष्पाणां फलानां च रसमादित्यः आदित्यसंवत्सरो ददति। तथाऽल्पेनापि

स्तोकेनापि वर्षेण वृष्ट्या सस्यं निष्पद्यतेऽन्तर्भूतण्यर्थत्वात् सस्यं निष्पादयति, किमुक्तं भवति? पृथिवी तथाविधोदकसम्पर्कादतीव सरसा भवन्ति, उदकमपि परिणामसमुन्दररसोपेतं परिणमते पुष्पाणां च मधूकादिसम्बन्धिनां फलानां च चूतफलादीनां रसः प्रचुरः सम्भवति स्तोकेनापि वर्षेण धान्यं सर्वत्र सम्यग् निष्पद्यते तमादित्यसंवत्सरं पूर्वर्षय उपदिशन्ति। अथाभिवर्द्धितसंवत्सरलक्षणमाह - **'आइच्च तेयतविया खणलवा दिवसा, उऊ परिणमंति पुरेइ निन्नथलए तमाहु अभिवड्ढिअं जाण।।१।।** यस्मिन् संवत्सरे क्षणलवदिवसा ऋतव आदित्यतेजसा कृत्वाऽतीवतप्ताः परिणमन्ते। यश्च सर्वाण्यपि निम्नस्थानानि स्थलानि च जलेन पूरयति तं संवत्सरं जानीहि यथा तं संवत्सरमभिवर्द्धितमाहुः पूर्वर्षय इति। तदेवं लक्षणसंवत्सर उक्तः।।११२।।

सम्प्रति शनैश्चरसंवत्सरमाह-

(११३) सणिच्छरसंवच्छरे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोअमा! अट्ठावीसइविहे पण्णत्ते, तंजहा–

अभिई सवणे धणिट्ठा सयभिसया दो अ होंति भद्दवया।
रेवइ अस्सिणि भरणी कत्तिअ तह रोहिणी चेव।।१।।

[1]जाव उत्तराओ आसाढाओ जं वा सणिच्चरे महग्गहे तीसाए संवच्छरेहिं सव्वं णक्खत्तमण्डलं समाणेइ सेत्तं सणिच्छरसंवच्छरे।

'सणिच्छरसंवच्छरेणं भंते' इत्यादि, शनैश्चरसंवत्सरो भदन्त! **कतिविधः प्रज्ञप्तः?** स्वाम्याह-**गौतम! शनैश्चर संवत्सरोऽष्टाविंशतिविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा 'अभिई'** त्यादि अभिजिच्छनैश्चरसंवत्सरः श्रवणशनैश्चरसंवत्सर एवं यावदुत्तराषाढ़ा उत्तराषाढाशनैश्चर संवत्सरस्तत्र यस्मिन् संवत्सरेऽभिजिता नक्षत्रेण सह शनैश्चरो योगमुपादत्ते

१. द्र. ७।१२८।।

सोऽभिजिच्छनैश्चरसंवत्सरः श्रवणेन सह यस्मिन् संवत्सरे शनैश्चरो योगमुपादत्ते स श्रवण शनैश्चर संवत्सरः एवं सर्वत्र भावनीयं 'जं चे' त्यादि वा शब्दः प्रकारान्तरद्योतने यत्सर्वं समस्तं नक्षत्रमण्डलं शनैश्चरो महाग्रहस्त्रिंशता संवत्सरैः समानयति एतावान् कालविशेषस्त्रिंशद्वर्षप्रमाणः शनैश्चरसंवत्सरः सेत्तमित्यादि निगमनवाक्यं कण्ठ्यमेतच्च संवत्सरव्याख्यानं **चन्द्रसूर्यप्रज्ञप्ति टीका**द्यनुसारेण प्रायो लिखितम्।।११३।।

अधुना कालाधिकारादेव तद्विशेषभूतमासपक्षदिवसादीनां सङ्ख्यानामानि च पृच्छन्निदमाह–

(११४) एगमेगस्स णं भंते! संवच्छरस्स कइ मासा पण्णत्ता?, गोअमा! दुवालस मासा पण्णत्ता, तेसि णं दुविहा णामधेज्जा पं० तं०–लोइआ लोउत्तरिआ य, तत्थ लोइआ णामा इमे, तं०–सावणे भद्दवए [1]जाव आसाढे, लोउत्तरिआ णामा इमे, तंजहा–

[2]अभिणंदिए पइट्ठे अ, विजए पीइवद्धणे।
सेअंसे य सिवे चेव, सिसिरे अ हेमवं।।१।।
णवमे वसंतमासे, दसमे कुसुमसंभवे।
एक्कारसे निदाहे अ, [3]वणविरोहे अ बारसे।।२।।११४।।

'एगमेगस्से त्यादि, **एकैकस्य भदन्त! संवत्सरस्य कति मासाः प्रज्ञप्ताः**? स्वाम्याह- **गौतम! द्वादशमासाः प्रज्ञप्तास्तेषां च द्वादशानां मासानां** द्विविधानि **नामधेयानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा लौकिकानि लोकोत्तराणि च। तत्र** लौकिकलोकोत्तराणां मध्ये **लौकिकान्यमूनि- तद्यथा-श्रावणो भाद्रपदो यावदाषाढो लोकोत्तराणि नामान्यमूनि तद्यथा प्रथमः**

१. द्र. ७।१०४।। २. अभिणादिए - अकखत्रिबस पुवृ. हीवृ.। °क्वचिदभिनंदन इति पठ्यते - पुवृ.। सूर्य प्र. वृत्तौ तु अभिनन्दित स्थाने अभिनन्दः शावृ.। चन्द्र प्रज्ञप्त्यादौ तु 'अहिणंदिए' त्ति पाठस्तत्राभिनन्दिन इति (हीवृ.)। इति V पृ. ५६९ टि. ५।। ३. सू. प्र. वृत्तौ तु वणविरोह स्थाने वनविरोधि (शावृ)।।

श्रावणरूपो मासोऽभिनन्दितः क्वचिदभिनन्दन इति पठ्यते१, द्वितीयः **प्रतीष्ठः** २, तृतीयो **विजयः** ३, चतुर्थः **प्रीतिवर्द्धनः** ४, पञ्चमः **श्रेयांसः** ५ षष्टः **शिवः** ६ सप्तमः **शिशिरः** ७ अष्टमो **हैमवान्** ८ नवमो **वसन्तमासः** ९ दशमः **कुसुमसम्भवः** १० **एकादशो निदाघः** ११ **द्वादशो वनविरोधः** १२ **इति**।।११४।।

(११५) एगमेगस्स णं भंते! मासस्स कति पक्खा पण्णत्ता?, गोअमा! दो पक्खा पण्णत्ता, तं०–बहुलपक्खे अ सुक्कपक्खे अ।।११५।।

'एगमेगस्स णं भंते मासस्से' त्यादि प्रश्नवाक्यं व्यक्तं। स्वाम्याह-**गौतम! द्वौ पक्षौ प्रज्ञप्तौ तद्यथा' बहुलपक्खे य'** त्ति प्रथमो **बहुलपक्षस्तत्र** योऽन्धकारबहुलःपक्षः स बहुलपक्षः कृष्णपक्षः इत्यर्थः **'सुक्किलपक्खेय'** त्ति द्वितीयस्तु शुक्लपक्षो ज्योत्सनाधवलिततया यः शुक्लः पक्षः स शुक्लपक्षश्चकारौ समुच्चयार्थौ।।११५।।

(११६) एगमेगस्स णं भंते! पक्खस्स कइ दिवसा पण्णत्ता?, गोअमा! पण्णरस दिवसा पण्णत्ता, तं०–पडिवादिवसे बितिआदिवसे जाव पण्णरसीदिवसे।।११६।।

'एगमेगस्से' त्यादि, **एकैकस्य** णं कारो वाक्यालङ्कारे **भदन्त! पक्षस्य कति दिवसाः प्रज्ञप्ताः?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चदशदिवसाः प्रज्ञप्ता** वक्ष्यमाणक्रमयुक्तास्तमेव क्रममाह **'तं जहे'** त्यादि, तद्यथा **प्रतिपत्प्रथमो दिवसो द्वितीया** द्वितीयो **दिवसः** एवं च **यावत्पञ्चदशी** पञ्चदशो **दिवसः**।।११६।।

(११७) एतेसि णं भंते! पण्णरसण्हं दिवसाणं कइ णामधेज्जा पण्णत्ता?, गोअमा! पण्णरस नामधेज्जा पण्णत्ता, तं०–

पुव्वंगे सिद्धमणोरमे अ [१]तत्तो मणोहरे चेव।

---

१. मणोरहे - अकखबमु.।।

जसभद्दे अ जसधरे छट्ठे सव्वकामसमिद्धे अ।।१।।
इंदमुद्धाभिसित्ते अ सोमणस धणंजए अ बोद्धव्वे।।
अत्थसिद्धे अभिजाए अच्चसणे सयंजए चेव।।२।।

अग्गिवेसे उवसमे दिवसाणं होंति णामधेज्जा।।११७।।

'**एतेसि ण**' मित्यादि, **एतेषां** णमिति पूर्ववत्, **भदन्त! पञ्चदशानां दिवसानां कति नामधेयानि प्रज्ञप्तानि?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चदशनामधेयानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा**-प्रथमः प्रतिपल्लक्षणः **पूर्वाङ्गनामा** द्वितीयः **सिद्धमनोरमस्तृतीयो मनोहरः** चतुर्थो **यशोभद्रः** पञ्चमो **यशोधरः** षष्टः **सर्वकामसमृद्धः** सप्तमः **इन्द्रमुर्द्धाभिषिक्तः** अष्टमः **सौमनसो** नवमो **धनञ्जयो** दशमोऽर्थसिद्धः एकादशोऽभिजातो द्वादशोऽत्यशनस्त्रयोदशः **शतञ्जयश्चतुर्दशो** ऽग्निवेशः पञ्चदश **उपशमः**, एतानि **दिवसानां** क्रमेण **नामधेयानि**।।११७।।

(११८) एतेसि णं भंते! पण्णरसण्हं दिवसाणं कति तिही पण्णत्ता?, गो०! पण्णरस तिही पण्णत्ता, तं०–

नंदे भद्दे जए तुच्छे पुण्णे पक्खस्स पंचमी।
पुणरवि णंदे भद्दे जए तुच्छे पुण्णे पक्खस्स दसमी।

पुणरवि णंदे भद्दे जए तुच्छे पुण्णे पक्खस्स पण्णरसी, एवं ते तिगुणा तिहीओ सव्वेसिं दिवसाणंति।।११८।।

'**एतेसि ण**' मित्यादि, **एतेषां भदन्त! पञ्चदशानां दिवसानां कति तिथयः प्रज्ञप्ताः?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चदश तिथयः प्रज्ञप्तास्तद्यथा**-प्रथमा **नन्दा** १ द्वितीया **भद्रा** २ तृतीया **जया** ३चतुर्थी **तुच्छा** ४ पञ्चमी **पूर्णा** ततः **पुनरपि षष्टि** तिथि **र्नन्दा** सप्तमी **भद्रा** अष्टमी **जया** नवमी **तुच्छा दशमी पक्षस्य पूर्णा** ततः **पुनरप्येकादशी** तिथि**र्नन्दा** द्वादशी **भद्रा**

त्रयोदशी **जया** चतुर्दशी **तुच्छा पक्षस्य पञ्चदशी पूर्णा एवमुक्तरीत्या एते** इति स्त्रीत्वेऽपि प्राप्ते पुंस्त्वनिर्देशः प्राकृतत्वादेता अनन्तरोदितास्तिथयो नन्दाद्या नन्दादीन्यनन्तरोदितानि **तिथि** नामानीत्यर्थस्त्रिगुणास्त्रिगुणितानीति भावः **सर्वेषां** पक्षान्तवर्त्तिनां **दिवसानां** सर्वासां पक्षान्तवर्त्तिनीनां दिवसतिथीनामित्यर्थः।

(११९) एगमेगस्स णं भंते! पक्खस्स कइ राईओ पण्णत्ताओ?, गोअमा! पण्णरस राईओ पण्णत्ताओ, तं०–पडिवाराई जाव पण्णरसीराई।।११९।।

'एगमेगस्से' त्यादि **एकैकस्य भदन्त! पक्षस्य कति रात्रयः प्रज्ञप्ताः?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चदशरात्रयःप्रज्ञप्तास्तद्यथा प्रतिपत्सम्बन्धिनी** प्रथमा **रात्रि** र्द्वितयदिवस सम्बन्धिनी द्वितीया रात्रिरेवं **यावत्पञ्चदश**दिवससम्बन्धिनी **पञ्चदशीरात्रि**रेतच्च कर्ममासा पेक्षया द्रष्टव्यं तथैव पक्षे २ परिपूर्णानां पञ्चदशानामहोरात्राणां सम्भवात् ।।११९।।

(१२०) एआसि णं भंते! पण्णरसण्हं राईणं कइ णामधेज्जा पण्णत्ता?, गो०! पण्णरस नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा–

[1]उत्तमा य सुणक्खत्ता, एलावच्चा जसोहरा।
सोमणसा चेव तहा, सिरिसंभूआ य बोद्धव्वा।।१।।
विजया वेजयन्ति जयंति अपराजिआ य इच्छा य।
[2]समाहारा चेव तहा तेआ य तहेव [3]अईतेआ।।२।।

देवाणंदा णिरई रयणीणं णामधिज्जाइं।।१२०।।

'एयासि ण' मित्यादि, **एतासां भदन्त! पच्चदशानां रात्रीणां कति नामधेयानि प्रज्ञप्तानि?** स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चदश नामधेयानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा** प्रथमा प्रतिपत्सम्बन्धिनी रात्री**रूत्तमा** नामा द्वितीया **सुनक्षत्रा** तृतीया **एलापत्या** चतुर्थी **यशोधरा**

१. उत्तरमा - अब।। २. महाहारा - अब।। ३. अभितेया - अब।।

पञ्चमी **सौमनसी** षष्टी **श्रीसम्भूता** सप्तमी **विजया** अष्टमी **वैजयन्ती** नवमी **जयन्ती** दशम्यपराजिता एकादशी **इच्छा** द्वादशी **समाहारा** त्रयोदशी **तेजाश्चतुदर्शी अतितेजा:** पञ्चदशी **देवानंदा निरति** वा पञ्चदश्या हि नामद्वयं। यदुक्तं **दशाश्रुतस्कन्धाष्टमाध्ययने** श्रीमद्वर्द्धमानस्वामिमुक्तिकल्याणकाधिकारे 'देवाणंदा णाम सा रयणी निरति 'त्ति पव्वुच्चइ']कल्पसूत्रे इति।।१२०।।

एतानि क्रमेण रजनीनां नामधेयानि-

(१२१) एयासि णं भंते! पण्णरसण्हं राईणं कइ तिही पं०?, गो०! पण्णरस तिही पं०, तं०-उग्गवई भोगवई जसवई सव्वसिद्धा सुहणामा, पुणरवि उग्गवई भोगवई जसवई सव्वसिद्धा सुहणामा, पुणरवि उग्गवई भोगवई जसवई [१]सव्वसिद्धा सुहणामा, एवं तिगुणा एते तिहीओ सव्वेसिं राईणं।।१२१।।

'एयासि णं भंते 'इत्यादि **एतासां भदन्त पञ्चदशानां रात्रीणां कति तिथय: प्रज्ञप्ता:**? स्वाम्याह-**गौतम! पञ्चदश प्रज्ञप्तास्तद्यथा प्रथमा उग्रवती** १ द्वितीया **भोगवती** २ तृतीया **यशोमत्ती** ३ चतुर्थी **सर्वार्थसिद्धा** ४ पञ्चमी **शुभनामा** ५ तत: **पुनरपि** षष्टी **उग्रवती** ६ सप्तमी **भोगवती** ७ अष्टमी **यशोमती** ८ नवमी **सर्वार्थसिद्धि** ९ दशमी **शुभनामा** १० तत: पुनरप्येकादशी **उग्रवती** ११ द्वादशी **भोगवती** १२ त्रयोदशी **यशोमती** १३ चतुर्दशी **सर्वार्थसिद्धा** १४ पञ्चदशमी **शुभनामा** १५ **सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तेस्तु** सर्वार्थसिद्धा स्थाने सर्वसिद्धेति दृश्यते। **एवमेतास्त्रिगुणास्तिथय** एवमेतानि त्रिगुणानि तिथिनामानीत्यर्थ:। **सर्वासां रात्रिणां** रात्रितिथीनां वाचकानीतिशेष: ननु दिवसेभ्यस्तिथीनां क: प्रतिविशेषो येनैता: प्राक् पार्थक्येनापृच्छयन्त? उच्यते इह सूर्यनिष्पादिता अहोरात्राश्चन्द्रनिष्पादितास्तिथय स्तत्र चन्द्रमसा तिथयो निष्पाद्यन्ते वृद्धिहानिभ्यां तथा चोक्तं **"तं रययकुमुयसरिसप्पभस्स**

---

१. सव्वट्ठसिद्धा - अकखत्रिबस पुवृ.। एवमग्रेऽपि।।

चंदस्स राइसुभगस्स लोए तिहि त्ति नियतं। भण्णइ वुड्ढिहाणीए।" तत्र वृद्धिहानी चन्द्रमण्डलस्य **"सत्तावण्णं मासा सत्त य राइंदियाइं अभिवड्ढे एक्करस य मुहुत्ता बिसट्ठी भागो तेवीसं"।।१२१।।**

अथ मुहूर्त्तवक्तव्यतामाह-

(१२२) एगमेगस्स णं भंते! अहोरत्तस्स कइ मुहुत्ता पण्णत्ता?, गोअमा! [१]तीसं मुहुत्ता पं०, तं०–

रुद्दे सेए मित्ते वाउ [२]सुपीए तहेव [३]अभिचंदे।
माहिंद [४]बलव [५]पण्ह बहुसच्चे चेव ईसाणे।।१।।
[६]तट्ठे अ भाविअप्पा वेसमणे [७]वारुणे अ आणंदे।
विजए अ [८]वीससेणे पायावच्चे उवसमे अ।।२।।
गंधव्व अग्गिवेसे सयवसहे आयवं य अममे अ।
अणवं भोमे [९]रिसहे [१०]सव्वट्ठे रक्खसे चेव।।३।।

'एगमेगस्से' त्यादि **एकैकस्य भदन्त! अहोरात्रस्य कति मुहूर्त्ताः प्रज्ञप्ताः?** स्वाम्याह-**गौतम! त्रिंशन्मुहूर्त्ताः प्रज्ञप्ताः**। तानेव नामतः प्राह-**तद्यथा 'रोद्दे'** इत्यादि गाथा त्रयं तत्र प्रथमो मुहूर्त्तो **रूद्रो** द्वितीयः **श्रेयान्** तृतीयो **मित्रश्चतुर्थो वायुः** पञ्चमः **सुपीतः** षष्ठोऽभिचन्द्रः सप्तमो **माहेन्द्रोऽष्टमो बलवान्** नवमः **पक्ष्मः** क्वचिद्बुहोति दृश्यते दशमो **बहुसत्यः** एकादश **ईशानो** द्वादशस्त्वष्टा त्रयोदशो **भावितात्मा** चतुर्दशो **वैश्रमणः**

१. मुहुत्ता मुहुत्तग्गेणं - समवायाङ्गे - ३०। ३।। २. अभिणंदे - अकखब। ३. बलवं० अकत्रिबस। पलंबे - सम. ३०। ३।। ४. पण्ह - अब। V। सुवीर-मु पक्ष्मः चं.प्र.वृ. १०। ८४। अतः परं समवायाङ्गे ३०। ३ नाम्नां व्यत्ययो भेदश्च दृश्यते - सच्चे आणंदे विजए विससेणे वायावच्चे उवसमे ईसाणे तिट्ठे भावियप्पा वेसमणे वरूणे सत्तरिसमे गंधव्वे अग्गिवेसायणे आतवं आवधं तट्ठवे भूमहे रिसभे सव्वट्ठसिद्धे रक्खसे। इति V. पृ. ५७०-७१ टि. १३।। ५. तत्थे - कख। सट्ठे - त्रि। स्रष्टा - हीवृ. चं. प्र. वृ. १०। १३।। ६. अपरः चंप्रवृ १०। ८४।। ७. विजयसेनः चं. प्र. वृ १०। ८४।। ८. वहसे - मु.।। ९. सत्यवान्- चं. प्र. वृ. १०. ज्योतिः शास्त्रेषु गरादिस्थाने गरं स्त्रीविलोचन स्थाने तैतलमिति - हीवृ.।।

पञ्चदशो **वारूण**: षोडश **आनन्द**: सप्तदशो **विजयोऽष्टादशो विश्वसेन**: एकोनविंशतितम: **प्राज्ञापत्यो** विंशतितम **उपशम**: एकविंशतितमो **गन्धर्वो** द्वाविंशतितमोऽग्निवैश्यस्त्रयोविंशतितम: **शतवृषभश्चतुर्विंशतितम आतपवान्** पञ्चविंशतितमोऽमम: षड्विंशतितम: **ऋणवान्** सप्तविंशतितमो **भौमोऽष्टाविंशतितम ऋषभ**: एकोन त्रिंशत्तम: **सर्वार्थसिद्धस्त्रिंशत्तमो राक्षस**:।। अथ करणस्वरूपं पिपृच्छिषुरिदमाह –

(१२३) कति णं भंते! करणा पण्णत्ता?, गोअमा! एक्कारस करणा पण्णत्ता, तंजहा–बवं बालवं कोलवं थीविलोअणं [1]गराइ [2]वणिज्जं विट्ठी सउणी चउप्पयं नागं किंत्थुग्घं।

'कति णं भंते' इत्यादि **कति** भदन्त! **करणानि प्रज्ञप्तानि?** स्वाम्याह-**गौतम! एकादशकरणानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-बव** १ **बालव** २ **कौलव** ३ **स्त्रीविलोचनं** ४ **गरादि** ५ **वाणिज्यं** ६ **विष्टि**: ७ **शकुनि**: ८ **चतुष्पदं** ९ **नाग** १० **किंस्तुघ्नम्** ११।।१२३।।

अथैषां चरस्थिरविभागं पृच्छन्नाह–

(१२४) एतेसि णं भंते! एक्कारसण्हं करणाणं कति करणा चरा कति करणा थिरा पण्णत्ता? गो०! सत्त करणा चरा चत्तारि करणा थिरा पण्णत्ता, तंजहा–बवं बालवं कोलवं थिविलोअणं गरादि वणिजं विट्ठी, एते णं सत्त करणा चरा, चत्तारि करणा थिरा पं०, तं०–सउणी चउप्पयं णागं किंत्थुग्घं, एते णं चत्तारि करणा थिरा पण्णत्ता।।१२४।।

'एतेसि ण' मित्यादि, **तेषां** भदन्त! **एकादशानां करणानां** मध्ये **कति करणानि**

---

१. ज्योति: शास्त्रेषु गरादिस्थाने गरं स्त्रीविलोचन स्थाने तैतलमिति - हीवृ.।। २. वणिजं - V। वाणिज्जं - त्रि।। १०। ८४।।

चराणि कति करणानि स्थिराणि प्रज्ञप्तानि? स्वाम्याह–गौतम! सप्तकरणानि चराणि चत्वारि करणानि स्थिराणि प्रज्ञप्तानि तद्यथा बवं १बालवं २ कौलवं ३ स्त्रीविलोचनं ४ गरादि ५ वणिजं ६ विष्टिः ७ एतानि सप्तकरणानि चराणि चत्वारि करणानि स्थिराणि प्रज्ञप्तानि तद्यथा शकुनिः १ चतुष्पदं २ नागं ३ किंस्तुघ्नं ४ एतानि चत्वारि करणानि स्थिराणि।।१२४।।

(१२५) एते णं भंते! चरा थिरा वा कया भवन्ति?, गोअमा! सुक्कपक्खस्स [1]पडिवाए राओ बवे करणे भवइ, बितियाए दिवा बालवे करणे भवइ, राओ कोलवे करणे भवइ, ततिआए दिवा थीविलोअणं करणं भवइ, राओ गराइ करणं भवइ, चउत्थीए दिवा वणिजं राओ विट्ठी, पंचमीए दिवा बवं राओ बलवं, छट्ठीए दिवा कोलवं राओ थीविलोअणं, सत्तमीए दिवा गराइ राओ वणिज्जं, अट्ठमीए दिवा विट्ठी राओ बवं, नवमीए दिवा बालवं राओ कोलवं, दसमीए दिवा थीविलोअणं राओ गराइं, एक्कारसीए दिवा वणिज्जं राओ विट्ठी बारसीए दिवा बवं राओ बालवं, तेरसीए दिवा कोलवं राओ थीविलोअणं, चउद्दसीए दिवा गराइं करणं राओ वणिज्जं, पुण्णिमाए दिवा विट्ठीकरणं राओ बवं करणं भवइ, बहुलपक्खस्स पडिवाए दिवा बालवं राओ कोलवं, बितिआए दिवा थीविलोअणं राओ गरादि, ततिआए दिवा वणिज्जं राओ विट्ठी, चउत्थीए दिवा बवं राओ बालवं, पंचमीए दिवा कोलवं राओ थीविलोअणं, छट्ठीए दिवा गराइं राओ वणिज्जं, सत्तमीए दिवा विट्ठी राओ बवं, अट्ठमीए दिवा बालवं राओ कोलवं, णवमीए दिवा थीविलोअणं राओ गराइं, दसमीए दिवा वणिज्जं राओ विट्ठी, एक्कारसीए दिवा बवं राओ बालवं, बारसीए दिवा कोलवं राओ थीविलोअणं तेरसीए दिवा गराइं राओ वणिज्जं, चउद्दसीए दिवा विट्ठी राओ सउणी, अमावसाए

१. पडिवदे - अब। पडिवए-कखस।।

दिवा चउप्पयं राओ णागं सुक्कपक्खस्स पडिवए दिवा किंत्थुग्घं करणं भवइ।।१२५।।

'एतेण' मित्यादि, एतानि करणानि चराणि स्थिराणि वा कदा भवन्ति? स्वाम्याह–गौतम! शुक्लपक्षस्य प्रतिपदि रात्रौ बवकरणं भवति द्वितीयायां दिवा दिने बालवकरणं भवति रात्रौ कौलवकरणं भवति तृतीयायां दिने स्त्रीविलोचनं रात्रौ गरादि करणं चतुर्थ्यां दिवा वाणिज्यं रात्रौ विष्टिः पञ्चम्यां दिवा बवं रात्रौ बालवं षष्ट्यां दिवा कौलवं रात्रौ स्त्रीविलोचनं सप्तम्यां दिवा गरादि रात्रौ वाणिज्यं अष्टम्यां दिवा विष्टिः रात्रौ बवं नवम्यां दिवा बालवं रात्रौ कौलवं दशम्यां दिवा स्त्रीविलोचनं रात्रौ गरादिः एकादश्यां दिवा वाणिज्यं रात्रौ विष्टिः द्वादश्यां दिवा बलं रात्रौ बालवं त्रयोदश्यां दिवा कौलवं रात्रौ स्त्रीविलोचनं चतुर्दश्यां दिवा गरादि करणं रात्रौ वाणिज्यं पूर्णिमायां दिवा विष्टिकरणं रात्रौ बव करणं भवति। 'बहुल पक्खस्से' त्यादि बहुलपक्षस्य कृष्णपक्षस्य प्रतिपदि दिवा बालवं रात्रौ कौलवं द्वितीयायां दिवा स्त्रीविलोचनं रात्रौ गरादिस्तृतीयायां दिवा वाणिज्यं रात्रौ विष्टिश्चतुर्थ्यां दिवा बलं रात्रौ बालवं पञ्चभ्यां दिवा कौलवं रात्रौ स्त्रीविलोचनं षष्ट्यां दिवा गरादि रात्रौ वाणिज्यं सप्तम्यां दिवा विष्टिःरात्रौ बवमष्टम्यां दिवा बालवं रात्रौ कौलवं नवम्यां दिवा स्त्रीविलोचनं रात्रौ गरादिः दशम्यां दिवा वाणिज्यं रात्रौ विष्टिरेकादश्यां दिवा बवं रात्रौ बालवं द्वादश्यां दिवा कौलवं रात्रौ स्त्रीविलोचनं त्रयोदश्यां दिवा गरादि रात्रौ वाणिज्यं चतुर्दश्यां दिवा विष्टिः रात्रौ शकुनिरमावस्यां दिवा चतुष्पदं रात्रौ नागं शुक्लपक्षस्य प्रतिपदि दिवा किस्तुघ्नं करणं भवति।।१२५।।

कलाधिकारादेव संवत्सरादीनामादि निर्णयार्थं प्रश्नमाह-

(१२६) किमाइआ णं भंते! संवच्छरा किमाइआ अयणा किमाइआ उऊ किमाइआ

मासा किमाइआ पक्खा किमाइआ अहोरत्ता किमाइआ मुहुत्ता किमाइआ करणा किमाइआ नक्खत्ता पण्णत्ता?, गोअमा! चंदाइआ संवच्छरा, दक्खिणाइया अयणा, पाउसाइआ उऊ, सावणाइआ मासा, बहुलाइआ पक्खा, दिवसाइआ अहोरत्ता, रोद्दाइआ मुहुत्ता, [1]बालवाइआ करणा, अभिजिआइआ णक्खत्ता पण्णत्ता समणाउसो!।।१२६।।

'किमाइया णं भंते संवच्छरा' इत्यादि, किमादिर्येषां ते किमादिका भदन्त! संवत्सराः किमादिकान्ययनानि संवत्सरेऽयनद्वयसम्भवात् किमादिका ऋतवः किमादिका मासाः किमादिकाः पक्षाः किमादिकाश्चाहोरात्राः किमादिका मुहूर्त्ताः किमादिकानि करणानि किमादिकानि नक्षत्राणि प्रज्ञप्तानि? स्वाम्याह-गौतम! चन्द्रादिकाः संवत्सराः पञ्चानामपि संवत्सराणां मध्ये चान्द्रस्यादि भूतत्वात्, एतच्च प्रागेवोक्तं दक्षिणादिकान्ययनानि प्रावृडादिका ऋतवः श्रवणादिका मासाः बहुलादिकाः पक्षाः दिवसादिका अहोरात्रा रुद्रादिकाः मुहूर्त्ता बवादीनि करणानि अभिजिदादीनि नक्षत्राणि प्रज्ञप्तानि। हे श्रमण! हे आयुष्मन्!।।१२६।।

अधुना युगेऽयनादि संख्यां प्रश्यन्निदमाह-

(१२७) पंचसंवच्छरिए णं भंते! जुगे केवइआ अयणा? केवइआ उऊ? एवं मासा पक्खा अहोरत्ता केवइआ मुहुत्ता पण्णत्ता?, गो०! पंचसंवच्छरिए णं जुगे दस अयणा, तीसं उऊ, सट्ठी मासा, एगे वीसुत्तरे पक्खसए, अट्ठारसतीसा अहोरत्तसया, चउप्पण्णं मुहुत्तसहस्सा णव सया पण्णत्ता-

जोगा १ देवय २ तारग्ग ३ गोत्त ४ संठाण ५ चंदरविजोगा ६।
कुल ७ पुण्णिम अवमंसा य ८ सण्णिवाए ९ अ णेता य १०।।१।।१२७।।

---

१. बालवाइआ - मु. V। बवा °- अबकखस।।

'पंच संवच्छरिए ण' मित्यादि, **पञ्चसांवत्सरिके** पञ्चसंवत्सरात्मके णमित्यलङ्कृतौ **भदन्त! युगे कति अयनानि कियन्त ऋतवः एवं कियन्तो मासाः** कियन्तः **पक्षाः** कियन्तोऽहोरात्राः **कियन्तो मुहूर्त्ताः प्रज्ञप्ताः?** स्वाम्याह **गौतम! पञ्चसंवत्सरात्मिकयुगे दश अयनानि त्रिंशदृतवः षष्टि मासाः एकं विंशत्युत्तरं पक्षशतं १२० एतच्च सूर्यसंवत्सरापेक्षया द्रष्टव्यं 'अट्ठारस तीसा अहोरत्तसय'** त्ति अष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि १८३० अहोरात्राः कथमति चेदुच्यते तथाहि-युगे त्रयश्चन्द्रसंवत्सरा द्वौ चाभिवर्द्धितसंवत्सरौ चन्द्रसंवत्सरे चैकस्मिन्नहोरात्राणां त्रीणि शतानि चतुष्पञ्चाशदधिकानि द्वादश च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य ३५४ १२/६२ तत एतत्त्रिभिर्गुण्यते जातान्यहोरात्राणां दशशतानि द्वाषष्ट्यधिकानि १०६२ षट्त्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य ३६/६२ अभिवर्द्धित संवत्सरे चैकस्मिन्नहोरात्राणां त्रीणिशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषटिभागा अहोरात्रस्य ३८३ ४४/६२ एतद् द्वाभ्यां गुण्यते जातान्यहोत्राणां सप्तशतानि षट्षष्टयधिकानि ७६६ अष्टाशीतिश्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य ८८/६२ प्राक्तनाश्च षट्त्रिंशद् द्वाषष्टिभागा अष्टाशीतौ प्रक्षिप्यन्ते जातं चतुर्विंशत्यधिकं शतं १२४ तस्य द्वाषष्ट्या भागे हृते लब्धौ द्वावहोरात्रौ तौ पूर्वोक्तेष्वहोरात्रेषु मध्ये प्रक्षिप्येते ततः सर्व सङ्कलनया जाता अहोरात्रा अष्टादशशतानि त्रिंशदधिकानि १८३० एतावन्तो युगेऽहोरात्रा इति। **चउप्पण्णं मुहुत्तसहस्सा नव य सय'** त्ति युगे चतुष्पञ्चाशत् सहस्राणि नव च शतानि मुहूर्त्ताः प्रज्ञप्तास्तथाहि एकैकस्मिन्नहोरात्रे त्रिंशन् मुहूर्त्ता इत्यष्टादशतानि त्रिंशदधिकानि अहोरात्राणां त्रिंशता गुण्यन्ते जातानि चतुःपञ्चाशत्सहस्राणि नवशतानि ५४९०० एतावन्तो युगे मुहूर्त्ता इति।।

अथ नक्षत्राणां योगादिस्वरूपाभिघायिकां द्वारगाथामाह–

'जोगे' इत्यादि योगो नक्षत्राणां चन्द्रेण सह यथा भवति तथा वक्तव्यः १, **'देवय'** त्ति

नक्षत्राणां देवता: २, **'तारग्गं'** ति ताराग्रं नक्षत्राणां तारापरिमाणं ३, **'गोत्त'** त्ति नक्षत्राणां गोत्राणि ४, **'संठाण'** त्ति नक्षत्राणां संस्थानानि ५, **'चंदरविजोगे'** त्ति केषां नक्षत्राणां चन्द्रेण सूर्येण च सह कियत्कालं योग: ६ **'कुल'** त्ति नक्षत्राणां कुलानि उपलक्षणत्वादुपकुलानि कुलोपकुलानि च ७ **'पुण्णिम'** त्ति पूर्णिमा ८, **अमावस'** त्ति अमावस्या ९ **'संनिवाय'** त्ति अमावस्या पौर्णमासीसन्निपात: १०, **'नेता य'** त्ति नेता वक्तव्यो यथा कति नक्षत्राणि स्वयमस्तं गमनेनाहोरात्रसमाप्त्या कं मासं नयन्तीति ११ शुद्धात्पौरूषीप्रकाशिका छायापि वक्ष्यते १२ इति द्वारगाथार्थ:।।१२७।।

अथ सूत्रकृदेव द्वाराणि विवृण्वान् पूर्वं नक्षत्रसंख्यां पृच्छति -

(१२८) कति णं भंते! णक्खत्ता पं०?, गो०! अट्ठावीसं णक्खत्ता पं०, तं०–अभिई १ सवणो २ धणिट्ठा ३ सयभिसया ४ पुव्वभद्दवया ५ उत्तरभद्दवया ६ रेवई ७ अस्सिणी ८ भरणी ९ कत्तिआ १० रोहिणी ११ मिअसिर १२ अद्दा १३ पुणव्वसू १४ [1]पूसो १५ अस्सेसा १६ मघा १७ पुव्वफग्गुणि १८ उत्तरफग्गुणि १९ हत्थो २० चित्ता २१ साई २२ विसाहा २३ अणुराहा २४ जिट्ठा २५ मूलं २६ पुव्वासाढा २७ उत्तरासाढा २८।।१२८।।

'कति णं भंते' इत्यादि कति णमिति प्राग्वद्भदन्त! **नक्षत्राणि प्रज्ञप्तानि?** स्वाम्याह- **गौतम! अष्टाविंशाति र्नक्षत्राणि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-'अभिइसवणो'** इत्यादि सर्वं कण्ठ्यं, ननु सर्वाण्यपि नक्षत्राण्यभिजिदादीनि उत्तराषाढान्तानि प्रज्ञप्तानि कस्मादिति चेदुच्यते इह सर्वेषामपि सुषमासुषमादिरूपाणां कालविशेषाणामादिर्युगं **"एएओ सुसुमसुसुमादओ अद्धाविसेसा जुगाइणा सह पवत्तंते जुगंतेण सह समप्पंतीति" श्रीपादलिप्तसूरिवचनप्रमाणाद्युगस्य** चादि: प्रवर्त्तते श्रावणे मासे बहुलपक्षे प्रतिपदि

---

१. पुस्सो - अकखत्रिबस।।

बालवकरणेऽभिजिन्नक्षत्रे चन्द्रेण सह योगमुपगच्छति तथा चोक्तं ज्योतिष्करण्डके **"सावण बहुल पडिवए बालवकरणे अभीइनक्खत्ते सव्वत्थ पढमसमए जुगस्स आइं वियाणाहि।"** अत्र सर्वत्र चेति भरते ऐरवते महाविदेहे च शेषं सुगमं तत इत्थं सर्वेषामपि कालविशेषणामादौ चन्द्रयोगमधिकृत्याभिजिन्नक्षत्रस्य प्रवर्त्तमानत्वा -दभिजिदादीनि नक्षत्राणि प्रज्ञप्तानि।।१२८।।

सम्प्रति योगद्वारमधिकृत्याह –

(१२९) एतेसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं कयरे णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स दाहिणेणं जोअं जोएंति? कयरे णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स उत्तरेणं जोअं जोएंति? कयरे णक्खत्ता जे णं चंदस्स दाहिणेणवि उत्तरेणवि पमद्दंपि जोगं जोएंति? कयरे णक्खत्ता जे णं चंदस्स दाहिणेणंपि पमद्दंपि जोअं जोएंति? कयरे णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स पमद्दं जोअं जोएंति?, गो०! एतेसि णं अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं तत्थ जे ते णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स दाहिणेणं जोअं जोएंति तेणं छ, तंजहा–

[1]संठाण १ अद्द २ पुस्सो ३ ऽसिलेस ४ हत्थो ५ तहेव मूलो अ ६।
बाहिरओ बाहिरमंडलस्स छप्पेते णक्खत्ता।।१।।

[2]तत्थ णं जे ते णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स उत्तरेणं जोगं जोएंति ते णं बारस, तं०–अभिई सवणो धणिट्ठा सयभिसया पुव्वभद्दवया उत्तरभद्दवया रेवइ अस्सिणी भरणी पुव्वफग्गुणी उत्तरफग्गुणी साई, तत्थ णं जे ते नक्खत्ता जे णं सया चंदस्स दाहिणेणावि उत्तरेणावि पमद्दंपि जोगं जोएंति ते णं सत्त, तंजहा-कत्तिआ रोहिणी पुणव्वसू मघा चित्ता विसाहा अणुराहा, तत्थ णं जे ते णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स

१. मृगशिरः - सू. प्र. वृ. पत्र १३८।। २. समवायांगे ९। ६ अस्मिन् प्रकरणे नव नक्षत्राणामुल्लेखो विद्यते - अभीजियाइया नव नक्खत्ता चंदस्स उत्तरेण जोगं जोएंति तं जहा - अभीजि सवणोधणिट्ठा सयभिसया पुव्वाभद्दवया उत्तरापोट्ठवया रेवई अस्सिणी भरणी। इति V पृ. ५७३ टि. ५।।

दाहिणओवि पमद्दंपि जोगं जोएंति, ताओ णं दुवे आसाढाओ सव्वबाहिरए मंडले जोगं जोइंसु वा ३, तत्थ णं जे ते णक्खत्ते जे णं सया चंदस्स पमद्दं जोएइ सा णं एगा जेट्ठा।।१२९।।

'एतेसि ण' मित्यादि, **एतेषां भदन्त! अष्टाविंशतेर्नक्षत्राणां कतराणि नक्षत्राणि यानि** णमिति वाक्यालङ्कारे सदा सर्वकालं **चन्द्रस्य दक्षिणेन** दक्षिणस्यां दिशि व्यवस्थितानि **योगं युञ्जन्ति**-कुर्वन्ति तथा **कतराणि नक्षत्राणि यानि सदा चन्द्रस्योत्तरेणोत्तरस्यां** दिशि स्थितानि **योगं युञ्जन्ति** तथा **कतराणि नक्षत्राणि यानि चन्द्रस्य दक्षिणस्यामपि** दिशि स्थितान्युत्तरस्यामपि दिशि स्थितिानि **योगं युञ्जन्ति** प्रमर्दमपि प्रमर्दरूपमपि **योगं युञ्जन्ति** तथा **कतराणि नक्षत्राणि** यानि सदा **चन्द्रस्य दक्षिणस्यामपि** दिशि व्यवस्थितानि **योगं युञ्जन्ति** प्रमर्दमपि प्रमर्दरूपमपि **योगं युञ्जन्ति** तथा कतरन्नक्षत्रं **यत्** सदा **चन्द्रस्य प्रमर्दं** प्रमर्दनरूपं योगं युनक्ति? एवं गौतमेन पृष्टे स्वाम्याह **गौतम! 'एतेसिण'**मित्यादि एतेषामनन्तरोक्तानामष्टाविंशतेर्नक्षत्राणां मध्ये तत्र **'जे ते नक्खत्ता'** इह जे नक्खत्ता इति वक्तव्ये जे ते भणितं तद्भाषाक्रमार्थमेवमुत्तरत्रापि दिशि व्यवस्थितानि **योगं युञ्जन्ति**-कुर्वन्ति **तानि षट् तद्यथा 'संठाणे'** त्यादि **संठाण** त्ति मृगशिरः१ **आर्द्रा** २ **पुष्यो** ३ **अश्लेषा** ४ **हस्तः** ५ **तथैव मूलश्च** ६ **'बाहिरओ' बाहिरमंडलस्य छप्पेए नक्खत्ता** 'इति एतानि षडपि नक्षत्राणि **बाह्यमण्डलस्य** पञ्चदशस्य चन्द्रमण्डलस्य बहिश्चारं चरन्तीत्यर्थस्तथा चोक्तं करणविभावनायां **"पन्नरसमस्स चंदमंडलस्स बाहिरओ मगसिर अद्दा पुस्सो असिलेसा हत्थ मूलो य"** इति ततः सदैव दक्षिणदिग्व्यवस्थितान्येवैतानि चन्द्रेण सह योगं युञ्जन्ति-उपपद्यन्ते नान्यथेति **'तत्थ ण'** मित्यादि तत्र तेषामष्टाविंशतेर्नक्षत्राणां मध्ये **यानि नक्षत्राणि सदा** सर्वकालं **चन्द्रस्योत्तरेणोत्तरस्यां** दिशि व्यवस्थितानि **योगं कुर्वन्ति तानि द्वादश तद्यथा-अभिजित् १ श्रवणो २ धनिष्ठा ३ शतभिषक् ४ पूर्वभद्रपदा ५ उत्तरभद्रपदा ६**

रेवती ७ अश्विनी ८ भरणी ९ पूर्वाफाल्गुनी १० उत्तराफाल्गुनी ११ स्वातिः १२ एतानि हि द्वादशापि नक्षत्राणि सर्वाभ्यन्तरे चन्द्रमण्डले चारं चरन्ति यदा चैतैः सह चन्द्रस्य योगस्तदा स्वभावाच्चन्द्रः शेषेष्वेव मण्डलेषु वर्त्तेत, ततः सदैव तान्युत्तरदिग्व्यवस्थितान्येव चन्द्रेण सह योगमुपयान्तीति तथा **'तत्थ ण'** मित्यादि तत्र तेषामष्टाविंशतेर्नक्षत्राणां **यानि नक्षत्राणि सदा चन्द्रस्य दक्षिणेनापि** दक्षिणस्यामपि दिशि व्यवस्थितानि योग युञ्जन्त्युत्तरेणाप्युत्तरस्यामपि दिशि व्यवस्थितानि **योगं युञ्जन्ति। प्रमर्दमपि** प्रमदरूपमपि **योगं युञ्जन्ति तानि सप्त तद्यथा कृतिका १ रोहिणी २ पुनर्वसुः ३ मघा ४ चित्रा ५ विशाखा ६ अनुराधा ७** केचित्पुनर्ज्येष्ठानक्षत्रमपि दक्षिणोत्तरप्रमर्दयोगि तथा चोक्तं **लोकश्रियां "पुण्णवसु रोहिणिचित्ता महजेट्ठणुराह कत्तियविसहो चंदस्सउभयजोगीति।"** अत्र 'उभयजोगीति' व्याख्यानयता टीकाकृतोक्तं-"एतानि नक्षत्राण्युभययोगीनि चन्द्रस्य दक्षिणेनोत्तरेण च युञ्ज्यते कदाचिद्भेदमप्युपयान्तीति तच्च वक्ष्यमाणज्येष्ठासूत्रेण सह विरोधीति न प्रमाणं तथा **'तत्थ ण'** मित्यादि तत्र तेषामष्टाविंशतेर्नक्षत्राणां मध्ये **ये नक्षत्रे सदा चन्द्रस्य दक्षिणेनापि** दक्षिणस्यामपि दिशि व्यवस्थिते योगं **युङ्क्तः प्रमर्दमपि** प्रमर्दरूपमपि योगं **युङ्क्तस्ते द्वे आषाढे** पूर्वाषाढोत्तराषाढारूपे ते हि प्रत्येकं चतुस्तारे तथा च पुरो वक्ष्यति **'पुव्वासाढे** चउत्तारे पण्णत्ते' इति तत्र द्वे द्वे तारे **सर्वबाह्यस्य** पञ्चदशस्य मण्डलस्याभ्यन्तरतो द्वे द्वे बहिस्ततो ये द्वे द्वे तारेऽभ्यन्तरतस्तयोर्मध्येन चन्द्रो गच्छतीति तदपेक्षया प्रमर्दयोगं युङ्क्त इत्युच्येत ये तु द्वे द्वे तारे बहिस्ते चन्द्रस्य पञ्चदशेऽपि मण्डले चारं चरतः सदा दक्षिणदिग्व्यवस्थिते ततस्तदपेक्षया दक्षिणेन योगं युङ्क्त इत्युक्तं। सम्प्रति एतयोरेव प्रमर्दयोगभावार्थं किञ्चिदाह-**'ता उण'** मित्यादि ते च पूर्वाषाढोत्तराषाढानक्षत्रे चन्द्रेण सह योगमयुङ्क्तं युङ्क्त योक्ष्यते च सदा सर्वबाह्ये मण्डले व्यवस्थिते ततो यदा पूर्वाषाढोत्तराषाढाभ्यां सह चन्द्रो योगमुपैति सदा

नियमतोऽभ्यन्तरतारकाणां मध्येन गच्छतीति तदपेक्षाया प्रमर्दमपि योगं युङ्क्त इत्युक्तं तथा **'तत्थ ण'** मित्यादि **तत्र** तेषामष्टाविंशतेर्नक्षत्राणां मध्ये या सदा चन्द्रस्य **प्रमर्दं** प्रमर्दरूपं **योगं युनक्ति सा एका ज्येष्ठा**।।१२९।।

अधुना द्वितीयद्वारमाश्रित्याह –

(१३०) एतेसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिई णक्खत्ते किंदेवयाए पण्णत्ते?, गो०! बह्मदेवया पण्णत्ते, सवणे णक्खत्ते विण्हुदेवयाए पण्णत्ते, धणिट्ठा णक्खत्ते वसुदेवयाए पण्णत्तो, एएणं कमेणं णेअव्वा अणुपरिवाडीए इमाओ देवयाओ–बह्मा विण्हु वसू वरुणे अए [1]अभिवड्ढी पूसे आसे जमे अग्गी पयावई सोमे रुद्दे अदिती बहस्सई सप्पे पिउ भगे अज्जम सविआ तट्ठा वाऊ इंदग्गी मित्तो इंदे निरई आऊ विस्सा य,।

बह्मा विण्हू अ वसू वरुणे अय विद्धि पूस आस जमे।
अग्गि पयावइ सोमे रुद्दे अदिती वहस्सई सप्पे।।१।।
पिउ भगअज्जमसविआ तट्ठा वाऊ तहेव इंदग्गी।
मित्ते इंदे निरुई आऊ विस्सा य बोद्धव्वे।।२।।

एवं णक्खत्ताणं एतए परिवाडी णेअव्वा जाव उत्तरासाढा किंदेवया पण्णत्ता?, गोअमा! विस्सदेवया पण्णत्ता।।१३०।।

'एतेसि णं भंते' इत्यादि, एतेषां भदन्त! **अष्टाविंशतिर्नक्षत्राणां मध्येऽभिजिन्नक्षत्रं किं देवताकं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! ब्रह्मदेवताकं ब्रह्माभिधदेवताकं प्रज्ञप्तं। श्रवणनक्षत्रं विष्णुदेवताकं प्रज्ञप्तं धनिष्ठानक्षत्रं वसुदेवताकं प्रज्ञप्तं 'एतेण'** मित्यादि,

१. विविद्ध - अकखब। अभिवुड्ढी - त्रि। अभिवृद्धिः ज्योतिः शास्त्रे तु अस्याहिर्बुध्नानामेति - हीवृ.।।

एतेनाभिजिदा -दिनक्षत्राणां **क्रमेण नेतव्याऽनुपरिपाट्या देवतास्ता** एव नामतः प्रतिपादयति **'बह्मे'** त्यादि अभिजिन्नक्षत्रस्याधिदेवता **ब्रह्मा** १, श्रवणस्य **विष्णुः** २, धनिष्ठाया **वसुः** ३, शतभिषजो **वरुणः** ४, पूर्वभाद्रपदाया **अजः** ५, उत्तरभद्रपदाया **अभिवृद्धिः** क्वचिद्विवृद्धि र्ग्रन्थान्तरेऽहिर्बुध्नः ६, रेवत्या **पूषा** ७, अश्विन्या **अश्वः** ८, भरण्या **यमः** ९, कृत्रिकानक्षत्र**स्याग्निः** १०, रोहिणीनक्षत्रस्य **प्रजापतिः** ११, मृगशिरो नक्षत्रस्य **सोमः** १२, आर्द्राया **रूद्रः** १३, पुनर्वसुनक्षत्र**स्यादितिः** १४, पुष्पनक्षत्रस्य **बृहस्पतिः** १५, अश्लेषानक्षत्रस्य **सर्पः** १६, मघानक्षत्रस्य **पितृनामकः** १७, पूर्वफाल्गुनी नक्षत्रस्य **भगनामकः** १८, उत्तरफाल्गुनीनक्षत्र**स्यार्यमा** १९, हस्तनक्षत्रस्य **सविता** २०, चित्रा नक्षत्रस्य **त्वष्टा** २१, स्वाति नक्षत्र**स्यवायुः** २२, विशाखानक्षत्र**स्येन्द्राग्नि** २३, अनुराधा नक्षत्रस्य **मित्रः** २४, ज्येष्ठानक्षत्र**स्येन्द्रः** २५, मूलनक्षत्रस्य **निर्ऋति** २६, पूर्वाषाढा नक्षत्र**स्यापः** २७, उत्तरापाढानक्षत्रस्य **विश्वक्** ग्रन्थान्तरे विश्वः २८,।।

'एया' इत्यादि एता नक्षत्राणामधिपतिदेवता **एतया परिपाट्या ज्ञातव्या यावदुत्तराषाढा नक्षत्रं किं देवताकं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह-**गौतम! विश्वग्देवताकं** विश्वदेवताकं वा **प्रज्ञप्त**मिह यावत्करणादनुक्तनक्षत्राणामपि प्रश्नोत्तरसूत्रघटना यथौचित्यं वाच्यम्।।१३०।।

अथ तृतीयद्वारं विवरीषुरिदमाह–

(१३१) एतेसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिईणक्खत्ते कतितारे पण्णत्ते?, गोअमा! तितारे पं०, एवं णेअव्वा जस्स [१]जइआओ ताराओ, इमं च तं तारग्गं–

तिगतिगपंचेगसयं दुगदुगबत्तीसगं तिग तिगं च।
छप्पंचगतिगएक्कगपंचगतिग छक्कगं चेव।।१।।

१. जत्तियाओ - अकखत्रिबस।।

सत्तगदुगदुग पंचग एक्केक्कग पंच चउतिगं चेव।
एक्कारसग चउक्कं चउक्कगं चेव तारग्गं।।२।।

'एतेसि णं भंते' इत्यादि एतेषां भदन्त! **अष्टविंशतेर्नक्षत्राणामभिजिन्नक्षत्रं कति तारं प्रज्ञप्तं?** स्वाम्याह **गौतम! त्रितारं प्रज्ञप्तं 'एव'** मित्यादि, एवं वक्ष्यमाण नीत्या **यस्य यावत्यस्तारा** तस्य तावत्यो वाच्या इत्यर्थः। **'इमं च तारग्गं'** ति इदं च तत्ताराग्रं ताराप्रमाणं तदेव गाथाभ्यां दर्शयति **तिग तिगपञ्चेगसयं दुगदुग बत्तीसगं तिग तिगं च छप्पंचग तिग एक्कग पंचग तिग छच्चगं चेव।।१।। सत्तग दुग दुग पंचग एक्केकग पंच चउ तिगं चेव। एक्कारसग चउक्कं चउक्कगं चेव तारग्गं।।२।।** व्या० अभिजिन्नक्षत्रं त्रितारं श्रवणनक्षत्रं त्रितारं धनिष्ठानक्षत्रं पञ्चतारं शतभिषग् नक्षत्रं शततारं पूर्वभद्रपदानक्षत्रं द्वितारमुत्तरभद्रपदानक्षत्रं द्वितारं रेवतीनक्षत्रं द्वात्रिंशत्तारमश्विनीनक्षत्रं त्रितारं भरणी नक्षत्रं त्रितारं कृत्तिकानक्षत्रं षट्तारं रोहिणीनक्षत्रं पञ्चतारं मृगशिरोनक्षत्रं त्रितारमार्द्रानक्षत्रमेकतारं पुनर्वसुनक्षत्रं पञ्चतारं पुष्यनक्षत्रं त्रितारमश्लेषानक्षत्रं षट्तारं मघानक्षत्रं पञ्चतारमनुराधानक्षत्रं चतुस्तारं ज्येष्ठानक्षत्रं त्रितारं मूलनक्षत्रमेकादशतारं पूर्वाषाढानक्षत्रं चतुस्तारमुत्तराषाढानक्षत्रं चतुस्तारमिति गाथा द्वयार्थः।।१३१।।

सम्प्रति गोत्राभिधसूर्यद्वारमाश्रित्य प्रश्नयति–

(१३२) एतेसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं [1]अभिई णक्खत्ते किंगोत्ते पं०?, गो०! मोग्गलायणसगोत्ते, गाधा–

मोग्गल्लायण १ संखायणे २ अ तह [2]अग्गभाव ३ कण्णिल्ले ४।
तत्तो अ जाउकण्णे ५ धणंजए ६ चेव बोद्धव्वे।।१।।

---

१. अभीयाइ - अब। अभई आदी - कख।। २. अत्तभाव - अखबस।अग्गताव - त्रि हीवृ.। सू. प्र. चं. प्र. हस्तलिखितादर्शेषु उद्धृतासु ज. प्र. गाथासु 'अग्गभाव' इति पदं दृश्यते।। इति पृ. ५७४ टि. ७.।।

पुस्सायणे ७ अ [1]अस्सायणे अ ८ भग्गवेसे ९ अ अग्गिवेसे १० अ।
गोअम ११ भारद्दाए १२ लोहिच्चे १३ चेव वासिट्ठे १४।।२।।
ओमज्जायण १५ [2]मंडव्वायणे १६ अ पिंगायणे १७ अ गोवल्ले १८।
कासव १९ कोसिय २० दब्भा २१ य चामरच्छाय २२सुंगा य २३।।३।।
गोवल्लायण २४ तेगिच्छायणे २५ अ कच्चायणे २६ हवइ मूले।
तत्तो अ वज्झिआयण २७ वग्घावच्चे अ गोत्ताइं २८।।४।।१३२।।

'एतेसि ण' मित्यादि, इहनक्षत्राणां न स्वरूपगोत्रसम्भवो यत इदं गोत्रस्वरूपं लोके प्रसिद्धं प्रकाशकाद्यपुरुषाभिधानस्तदपत्यसन्तानो गोत्रं यथा गर्गस्यापत्यं सन्तानो गर्गाभिधानो गोत्रमिति। न चैवं स्वरूपं नक्षत्राणां गोत्रं सम्भवति तेषामौपपातिकत्वात्, तत इत्थं गोत्रसम्भवो द्रष्टव्यो यस्मिन् नक्षत्रे शुभैरशुभैर्वा ग्रहैः समानं यस्य गोत्रस्य यथाक्रमं शुभमशुभं वा भवति तत्तस्य गोत्रं। ततः प्रश्नोपपत्तिः **एतेषां भदन्त! अष्टाविंशतेर्नक्षत्राणां** मध्येऽभिजिन्नक्षत्रं **किं गोत्रं?** स्वाम्याह-**गौतम! मौद्गल्यायनसगोत्रमेवं** नक्षत्राणां गोत्रसङ्ग्रहिका गाथा **'मोग्गाल्लायणे'** त्यादि इमाश्चतस्रोऽपि गाथाः पाठसिद्धाः।।१३२।।

अथ संस्थानाभिधपञ्चमद्वारमधिकृत्याह-

(१३३) एतेसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिईणक्खत्ते किंसठिंए पण्णत्ते?, गोअमा! गोसीसावलिसंठिए पं०, गाहा–

गोसीसावलि १ काहार २ सउणि ३ पुप्फोवयार ४ वावी य ५-६।
णावा ७ आसक्खंधरा ८ भग ९ [3]छुरघरए १० अ सगडुद्धी ११।।१।।
मिगसीसावलि १२ रुहिरबिंदु १३ तुल्ल १४ वद्धमाणग १५ पडागा १६।

---

१. अस्सासयणी - अखब।। २. मणुव्वायणे - अकखब।। ३. छुरधारा - त्रि। ज्योतिष्करण्डकवृत्तौ-क्षुरधारा-पाठः इति पुप्रे० पार्श्वभागे पत्र-५००A।।

पागारे १७ पलिअंके १८-१९ हत्थे २० मुहफुल्लए २१ चेव।।२।।
खीलग २२ दामणि २३ एगावली २४ अ गयदंत २५ [1]विच्छुयअले य २६।
गयविक्कमे २७ अ तत्तो सीहनिसीही अ २८ संठाणा।।३।।१३३।।

'एएसि णं भंते' इत्यादि, एतेषामनन्तरोक्तानां भदन्त! **अष्टाविंशतिर्नक्षत्राणां** मध्येऽभिजिन्नक्षत्रं **किंसंस्थितं** कस्येव संस्थितं संस्थानं यस्य तत्किंसंस्थितं **प्रज्ञप्तं**? स्वाम्याह-**गौतम! गोशीर्षावलिसंस्थितं प्रज्ञप्तं**। गो: शीर्षं गोशीर्षं तस्यावली तत्पुद्गलानां दीर्घरूपा श्रेणिस्तत्समं संस्थितं यस्य तत्तथा **'गाह'** त्ति नक्षत्रसंस्थानसङ्ग्राहिकाश्चेमा गाथा- **'गोसीसावलिकाहारे'** इत्यादि गाथात्रयं भाव्यते अभिजिन्नक्षत्रं **गोशीर्षावलि**संस्थितं श्रवणनक्षत्रं **कासार**संस्थानं धनिष्ठानक्षत्रं **'सउणि'** त्ति शकुनिपञ्जरसंस्थानं शतभिषक्नक्षत्रं **पुष्पोपचार**संस्थानं **'वावी'** ति पूर्वभद्रपदा नक्षत्र**मर्द्धवापी**संस्थितमुत्तरभद्रपदानक्षत्र**मप्यर्द्धवापी**संस्थानं रेवतीनक्षत्रं **नौसंस्थान**मश्विनीनक्षत्र**मश्वस्कन्धसंस्थानं** भरणीनक्षत्रं **भगसंस्थानं** कृत्तिकानक्षत्रं **क्षुरगृहकसंस्थानं** रोहिणीनक्षत्रं **शकटोद्धिसंस्थानं** मृगशीरो नक्षत्रं **मृगशीर्ष**संस्थानमार्द्रानक्षत्रं **रुधिरबिन्दु**संस्थानं पुनर्वसुनक्षत्रं **तुला**संस्थानं पुष्यनक्षत्रं **वर्द्धमानक**संस्थानमश्लेषानक्षत्रं **पताका**संस्थानं मघनक्षत्रं **हस्त**संस्थानं **'मुहफुल्लय'** त्ति चित्रानक्षत्रं **मुखमण्डनसुवर्णपुष्प**संस्थानं स्वातिनक्षत्रं **कीलक**संस्थानं विशाखानक्षत्रं **दामनी**संस्थानमिह दामनी पशुबन्धनमनुराधानक्षत्र**मेकावलि**संस्थानं ज्येष्ठा नक्षत्रं **गजदन्त**संस्थानं **'बिच्छुयअले'** त्ति मूलनक्षत्रं **वृश्चिकलाङ्गुल**संस्थानं पूर्वाषाढानक्षत्रं **गजविक्रमसंस्थान**मुत्तराषाढानक्षत्रं **सिंहनिषीदनसंस्थानमिति**।।१३३।।

सम्प्रति षष्टद्वारमधिकृत्य पृच्छति–

---

१. विच्छुलगुल-त्रि।।। च.प्र.-सू.प्रज्ञप्त्योरादर्शेषु विच्छुय नंगोल संठिते, विच्छुलंगोल० इति पाठद्वयं लभ्यते, प्रस्तुत सूत्रस्य एकस्मिन्नादर्शे विच्छुलंगल इति पाठो दृश्यते किन्तु ताडपत्रीयादि प्राचीनादर्शेषु 'विच्छअयले' इति पाठो दृश्यते तेनासौ मूले स्वीकृत:, 'अल' शद्वस्यार्थावबोधाय द्रष्टव्य: पाइयसद्दमहाण्णवो। "इति V पृ. ५७५ . टि.४।।

(१३४) एतेसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिईणक्खत्ते कतिमुहुत्ते चंदेण सद्धिं जोगं जोएइ?, गोअमा! णव मुहुत्ते सत्तावीसं च सत्तट्ठिभाए मुहुत्तस्स चंदेण सद्धिं जोगं जोएइ, एवं इमाहिं गाहाहिं अणुगंतव्वं–

अभिइस्स चंदजोगो सत्तट्ठिखंडिओ अहोरत्तो।
ते हुंति णव मुहुत्ता सत्तावीसं कलाओ य।।१।।
सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेस साइ जेट्ठा य।
एते छण्णक्खत्ता पण्णरसमुहुत्तसंजोगा।।२।।
तिण्णेव उत्तराइं पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य।
एए छण्णक्खत्ता पणयालमुहुत्तसंजोगा।।३।।
अवसेसा णक्खत्ता पण्णरसवि हुंति तीसइमुहुत्ता।
चंदंमि एस जोगो णक्खत्ताणं मुणेअव्वो।।४।।१३४।।

'एतेसि णं भंते' इत्यादि, एतेषां भदन्त! **अष्टाविंशतेर्नक्षत्राणां मध्येऽभिजिन् नक्षत्रं कतिमुहूर्त्तान् चन्द्रेण सार्द्धं युनक्ति?** स्वाम्याह-**गौतम! 'नव मुहुत्त' त्ति सप्तविंशति च सप्तषष्टिर्भागान् मुहूर्त्तस्य चन्द्रेण सार्द्धं योगं युनक्ति**। एतच्च कथमवसेयमिति चेदुच्यते- इहाभिजिन्नक्षत्रं सप्तषष्टि खण्डीकृतस्याहोरात्रस्यैकविंशतिभागान् मुहूर्त्तस्य चन्द्रेण सार्द्धं योगमुपैति ते चेकविंशतिरपि भागा मुहूर्त्तगतभागकरणार्थं त्रिंशता गुण्यन्ते जातानि षट् शतानि त्रिंशदधिकानि ६३० तथा चैतावान् कालमधिकृत्य सीमाविस्तारोऽभिजिन्नक्षत्रस्या न्यत्राप्युक्त:–**"छच्चेव सया तीसा भागाणं अभीइ सीमविक्खंभो दिट्ठो सव्वडहरगो सव्वेहिं अणंत नाणीहिं।।१।।"** तेषां सप्तषष्ट्या भागो ह्रियते लब्धा नवमुहूर्त्ता एकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तविंशति: सप्तषष्टि भागा: ९ २७/६७ अथ लाघवार्थं चन्द्रेण सह नक्षत्रयोगपरिमाणं गाथाभि र्निवेदयन्निदमाह-

'एवं इमाहिं गाहाहिं अणुगंतव्व' त्ति एवमिमाभि र्वक्ष्यमाणाभि र्गाथाभिरनुगन्तव्यमनुसरणीयं ज्ञेयमित्यर्थ:नक्षत्राणां मुहूर्त्तादिपरिमाणमिति शेष:।

''अभीइस्स चंदजोगो सत्तट्ठीखंडीओ अहोरत्तो ते होंति णव मुहुत्ता सत्तावीसं कलाओ य।।'' इयं च गाथा भावितार्था **'सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेसासाइ जिट्ठा य। एए छ नक्खत्ता पन्नरस मुहुत्तसंजोगा।।'** शतभिषक् भरणी आर्द्रा अश्लेषा स्वाति र्ज्येष्टा एतानि षट् नक्षत्राणि चन्द्रेण सह पञ्च दश मुहूर्त्त संयोगानि भवन्ति षण्णां मध्ये तेषां नक्षत्राणां प्रत्येकं चन्द्रेण सह योग: पञ्चदश मुहूर्त्तान् यावदिति तथाह्येतेषां प्रत्येकं सप्तषष्टिखण्डीकृतस्याहोरात्रस्य सत्कान् त्रयस्त्रिंशद्भागानेकस्य सप्तषष्टिभागस्यार्द्धं च यावच्चन्द्रेण सह योगस्ततो मुहूर्त्तगतसप्तषष्टि र्भागकरणार्थं त्रयस्त्रिंशता गुण्यते जातानि नव शतानि नवत्यधिकानि ९९० यदपि चार्द्धं तदपि त्रिंशता गुणयित्वा द्विकेन भज्यते लब्धा: पञ्चदशभागा: १५ सर्वसङ्कलनया जातं भागानां पञ्चोत्तरसहस्रं १००५ एतस्य सप्तषष्ट्या भागे कृते लब्धा: पञ्चदश मुहूर्त्ता इति।

'तिन्नेव उत्तराओ पुणव्वसु रोहिणी विसाहा य। एए छन्नक्खत्ता पणयाल मुहुत्तसंजोगा।।१।।' तिस्र उत्तरास्तद्यथा-उत्तरभद्रपदा-उत्तराफाल्गुनी-उत्तराषाढा तथा पुनर्वसु: रोहिणी विशाखा एतानि षट् नक्षत्राणि चन्द्रेण सह पञ्च चत्वारिंशन्मुहूर्त्तसंयोगानि भवन्ति षण्णां मध्ये तेषां नक्षत्राणां प्रत्येकं चन्द्रेण सह योग: पञ्चचत्वारिंशन्मुहूर्त्तान् यावद्भवतीत्यर्थस्तथाह्येतेषां प्रत्येकं सप्तषष्टिखण्डी कृतस्याहोरात्रस्य सत्कानां भागानां शतमेकस्य च भागस्यार्द्धं यावच्चन्द्रेण सह योगस्तत्रैषां भागानां मुहूर्त्तगतभागकरणार्थं शतं प्रथमतस्त्रिंशता गुण्यते जातानि त्रीणि सहस्राणि ३००० यद्यप्येकमर्द्धं तदपि त्रिंशता गुणयित्वा द्वाभ्यां विभज्यते लब्धा: पञ्चदशभागस्ते पूर्वराशौ प्रक्षिप्यन्ते जात: पूर्वराशिस्त्रीणि सहस्राणि पञ्चदशोत्तराणि ३०१५ एतेषां सप्तषष्ट्या भागो ह्रियते लब्धा: पञ्चचत्वारिंशन् मुहूर्त्ता:

'अवसेसा नक्खत्ता पणरस वि हुंति तीसइ मुहुत्ता। चंदंमि एस जोगो नक्खत्ताणां मुणेयव्वो।।'' अवशेषाण्युक्तव्यतिरिक्तानि श्रवणधनिष्ठा पूर्वभद्रपदा रेवती अश्विनी कृत्तिका मृगशिर: पुष्यो मघा पूर्वभद्रपदा]फाल्गुनी हस्त चित्रा मूलानुराधा पूर्वाषाढा रूपाणि पञ्चदशापि नक्षत्राणि प्रत्येकं चन्द्रेण सहयोगमधिकृत्य त्रिंशन्मुहूर्त्तान् यावदेतेषां प्रत्येकं चन्द्रेण सह योगो भवतीत्यर्थ: एवमेव चन्द्रे चन्द्रविषये योगो नक्षत्राणां ज्ञातव्य:। इत्युक्ता चन्द्रेण सह नक्षत्राणां योग वक्तव्यता।। १३४।।

सम्प्रति सूर्येण सह तेषां तामेवाह–

(१३५) एतेसि णं भंते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिईणक्खत्ते कति अहोरत्ते सूरेण सद्धिं जोगं जोएइ?, गो० ! चत्तारि अहोरत्ते छच्च मुहुत्ते सूरेण सद्धिं जोगं जोएइ, एवं इमाहिं गाहाहिं णेअव्वं–

अभिई छच्च मुहुत्ते चत्तारि अ केवले अहोरत्ते।
सूरेण समं गच्छइ एत्तो सेसाणं वोच्छामि।।१।।
सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेस साइ जेट्ठा य।
वच्चंति मुहुत्ते [1]इक्कवीस छच्चेवऽहोरत्ते।।२।।
तिण्णेव उत्तराइं पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य।
वच्चंति मुहुत्ते तिण्णि चेव वीसं अहोरत्ते।।३।।
अवसेसा णक्खत्ता पण्णरसवि सूरसहगया जंति।
बारस चेव मुहुत्ते तेरस य समे अहोरत्ते।।४।।१३५।।

'एतेसि णं भंते' इत्यादि एतेषां भदन्त! अष्टविंशतेर्नक्षत्राणामभिजिन्नक्षत्रं कति

---

१. इक्कवीसाइ छच्च अहोरत्ते -अब।

अहोरात्रान् सूर्येण सार्द्धं योगं युनक्ति ? स्वाम्याह-गौतम ! चतुरोऽहोरात्रान् षट् च मुहूर्त्तान् सूर्येण सार्द्धं योगं युनक्ति। अथ लाघवार्थं सूर्येण सह नक्षत्रयोगपरिमाणं गाथाभिर्दर्शयन्निदमाह–

'एवं इमाहिं गाहाहिं णेयव्वं' ति स्पष्टं **"अभिइ छच्च मुहुत्ते चत्तारि य केवले अहोरत्ते सूरेण समं गच्छति एत्तो सेसाणं वुच्छामि।।१।।"** अभिजिन् नक्षत्रं सूर्येण समं गच्छति चत्वारः केवलान् परिपूर्णानहोरात्रान् षट् च मुहूर्त्तान् यावत् कथमेतदवसीयते इति चेदुच्यते इह पूर्वाचार्यप्रदर्शितमेतद्विषयमिदं करणं **"जं रिक्खं जावइए वच्चइ चंदेण भाग सत्तट्ठी पणभागे राइंदियस्स सूरेण तावइए'।"** अस्या अक्षरगमनिका यत् ऋक्षं नक्षत्रं यावतो रात्रिंदिवस्यहोरात्रस्य सम्बन्धिनः सप्तषष्टिभागान् चन्द्रेण सह योगं व्रजति तन्नक्षत्रं रात्रिंदिवस्य पञ्चभागान् तावतः सूर्येण समं व्रजति तत्रभिजिदेकविंशतिसप्तषष्टिभागान् चन्द्रेणसमं वर्त्तते। तत एतावन्तः पञ्चभागानहोरात्रस्य सूर्येण समं वर्तमानमवसेयमेकविंशतेश्च पञ्चभिर्भागे हृते लब्धाश्चत्वारोऽहोरात्रा एकः पञ्चमो भागोऽवतिष्टते स मुहूर्त्तानयनाय त्रिंशता गुण्यते जातास्त्रिंशत्तस्याः पञ्चभिभागे हृते लब्धाः षट्मुहूर्त्ता इति। ऊर्ध्वं शेषणामपि नक्षत्राणां सूर्येण समं योगान् कालपरिमाणमधिकृत्य वक्ष्याम्येतदेव दर्शयति-**"सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेसाइ जिट्ठा य। वच्चंति मुहुत्ते इक्कवीस छच्चेवाहोरत्ते।।"** शतभिषक् भरण्यार्द्राऽश्लेषा स्वातिर्ज्येष्ठा चेत्येतानि षड्नक्षत्राणि प्रत्येकं सूर्येण समं व्रजन्ति षडेवाहोरात्रानेकविंशतिं च मुहूर्त्तान् तथाह्येतानि नक्षत्राणि प्रत्येकं चन्द्रेण समं सार्द्धांस्त्रयस्त्रिंशत्सङ्ख्याकान् सप्तषष्टिभागानहोरात्रस्य व्रजन्त्यपार्द्धक्षेत्रत्वादेतेषां तत एतावतः पञ्चभागानहोरात्रस्य सूर्येण योगः प्रत्येतव्यः प्रागुक्तकरणप्रामाण्यानुसरणात् त्रयस्त्रिंशतश्च पञ्चभिर्भागे हृते लब्धाः षडहोरात्राः पश्चादवतिष्ठन्ते सार्द्धास्त्रयः पञ्चभागास्ते च संवर्णनायां जाताः सप्त ते मुहूर्त्तानयनाय त्रिंशता गुण्यते जाते द्वे शते दशोत्तरे २१० एते च मुहूर्त्तार्द्धगते ततः परिपूर्णमुहूर्त्तानयनाय दशभिर्भागो ह्रियते लब्धा एकविंशतिर्मुहूर्त्तास्तथा

'तिन्नि च उत्तराओ पुणवसु रोहिणी विसाहा य वच्चंति मुहूत्ते तिण्णि चेव वीसं चहोरत्ते।।' तिस्र उत्तरा: पुनर्वसु रोहिणी विशाखा चैतानि षट्नक्षत्राणि सूर्येण सहेति गम्यं व्रजन्ति त्रीन् मुहूर्त्तान् विंशतिं चाहोरात्रांस्तथाह्येतानि षडपि नक्षत्राणि प्रत्येकं चन्द्रेण समं सप्तषष्टिभागानां शतमेकस्य च सप्तषष्टिभागस्यार्द्धं व्रजन्ति तत एतावन्त: पञ्च भागानहोरात्रस्य सूर्येण समं व्रजनमवसेयं शतस्य च पञ्चभि र्भागे हृते लब्धा विंशतिरहोरात्रा: यदपि चैकस्य पञ्चभागस्यार्द्धमुद्धरति तदपि त्रिंशता गुण्यते जातास्त्रिंशत्तस्य दशभि र्भागे हृते लब्धास्त्रयो मुहूर्त्ता इति। तथा **'अवसेसा नक्खत्ता पण्णरस वि सूरसहगया जंति बारस चेव मुहुत्ता तेरस य समे अहोरत्ते।।'** अवशेषाणि श्रवणधनिष्ठादीनि नक्षत्राणि पञ्चदशापि सूर्येण सह गतानि यान्ति त्रयोदशसमान् परिपूर्णानहोरात्रान् द्वादश च मुहूर्त्तान् यावत्, तथाह्यमूनि परिपूर्णानि सप्तषष्टिभागान् चन्द्रेण समं व्रजति तत: सूर्येण सहितानि पञ्चभागानप्यहोरात्रस्य सप्तषष्टिसंख्यान् गच्छति। सप्तषष्टेश्च पञ्चभिर्भागे हृते लब्धास्त्रयोदशाहोरात्रा: शेषौ च द्वौ भागौ तिष्ठतस्तौ त्रिंशता गुण्येते जाता: षष्टिस्तस्या: पञ्चभिर्भागे हृते लब्धा: द्वादश मुहूर्त्ता इति।।१३५।।

इदानीं सप्तमद्वारमाश्रित्य प्रश्नयति –

(१३६) कति णं भंते! कुला कति [१]उवकुला कति कुलोवकुला पण्णत्ता?, गो०! बारस कुला बारस उवकुला चत्तारि कुलोवकुला पण्णत्ता, बारस कुला, तंजहा–धणिट्ठाकुलं १ उत्तरभद्दवयाकुलं २ अस्सिणीकुलं ३ कत्तियाकुलं ४ मिगसिरकुलं ५ पुस्सो कुलं ६ मघाकुलं ७ उत्तरफग्गुणीकुलं ८ चित्ताकुलं ९

---

१. अवकुला- अखब-एपमग्रेऽयि।।

विसाहाकुलं १० मूलो कुलं ११ उत्तरासाढाकुलं १२।

मासाणं परिणामा होंति कुला उवकुला उ हेट्ठिमगा।
होंति पुण कुलोवकुला [1]अभीइसय अद्द अणुराहा।।१।।

बारस उवकुला तं०–सवणो उवकुलं १ पुव्वभद्दवया उवकुलं २ [2]रेवई उवकुलं ३भरणी उवकुलं ४ रोहिणी उवकुलं ५ पुणव्वसू उवकुलं ६ अस्सेसा उवकुलं ७ पुव्वफग्गुणी उवकुलं ८ हत्था उवकुलं ९ साई उवकुलं १० जेट्ठा उवकुलं ११ पुव्वासाढा उवकुलं १२। चत्तारि कुलोवकुला, तंजहा–अभिई कुलोवकुला, सयभिसया कुलोवकुला, अद्दा कुलोवकुला अणुराहा कुलोवकुला।।१३६।।

'कति णं भंते कुला' इत्यादि **कति भदन्त! कुलानि कत्युपकुलानि कति कुलोपकुलानि प्रज्ञप्तानि?** स्वाम्याह-**गौतम! द्वादश कुलानि द्वादशोपकुलानि चत्वारि कुलोपकुलानि प्रज्ञप्तानि।** सूत्रे पुंस्त्वनिर्देश प्राकृत्वात् अथ किं कुलादीनां लक्षणमुच्यते? इह यैर्नक्षत्रैः प्रायः सदा मासानां समाप्तय उपजायन्ते माससदृशनामानि च तानि नक्षत्राणि कुलानि प्रसिद्धानि तद्यथा श्राविष्टो मासः प्रायः श्रविष्टया धनिष्ठापरपर्यायया परिसमाप्तिमुपैति भाद्रपद उत्तरभाद्रपदया, अश्वयुकश्विन्या इति धनिष्ठादीनि प्रायो मासपरिसमापकानि माससदृशनामानि कुलानि तेषामेव कुलानामधस्तनानि यानि नक्षत्राणि श्रवणादीनि तान्युपकुलानि कुलानां समीपमुपकुलं तत्र वर्त्तन्ते यानि नक्षत्राणि तान्युपचारादुपकुलानि यानि च कुलानामुपकुलानां चाधस्तनानि तानि कुलोपकुलानि अभिजिदादीनि चत्वारि नक्षत्राणि।। सम्प्रति कुलानि नामतो निर्देशति **बारस कुला तंजहा-धनिष्ठा कुल**मित्यादि व्यक्तं **धनिष्ठा १ उत्तरभद्रपदा २ अश्विनी ३ कृत्तिका ४ मृगशिरः ५ पुष्यो ६ मघा ७ उत्तराफाल्गुनी**

---

१. अभिभीसय-मु.।। २. रेवती भरणी य रोहिणी य, पुणव्वसू य अस्सेसा। पुव्वा फग्गुणी य हत्थो य, साती य जेट्ठा य-अकखबस।।

८ **चित्रा** ९ **विशाखा** १० **मूल** ११ **उत्तरापाढा** १२ एतानि द्वादश नक्षत्राणि कुलान्यभिधीयते इति भावः। अथ कुलोपकुलयोः स्वरूपं कुलोपकुलनामानि च गाथया निवेदयति **'मासाणां परिणामा होंति कुलाओ हेट्ठिमगा होंति पुण कुलोवकुला अभिईसय अद्द अणुराहा'** अत्र मासाणं परिणामं त्ति मासानां परिसमापकानि क्वचित् **'मासाण सपरिणामा'** इति पाठस्तत्र मासानां सदृग्नामानीति व्याख्येयं **'सय'** त्ति शतभिषक् शेषं सुगमम्। अथोपकुलानि कुलोपकुलानि च नामतः प्रतिपादयति **'बारस उवकुला तं०-सवणो उवकुल'** मित्यादि सुबोधं **श्रवणं** १ **पूर्वभाद्रपदा** २ **रेवती** ३ **भरणी** ४ **रोहिणी** ५ **पुनर्वसुः** ६ **अश्लेषा** ७ **पूर्वाफाल्गुनी** ८ **हस्तः** ९ **स्वाति** १० **ज्येष्ठा** ११ **पूर्वाषाढा** १२ एतानि द्वादश नक्षत्राण्युपकुलान्युच्यन्ते इति भावस्तथा **'चत्तारिईकुलोवकुला तं जहा-अभिइं कुलोवकुले'** इत्यादि स्पष्टमभिजित् १ **शतभिषक्** २ **आर्द्रा** ३ **अनुराधा** ४ एतानि चत्वारि नक्षत्राणि कुलोपकुलानि भण्यन्त इत्यर्थः।। १३६।।

साम्प्रतमष्टमनवमद्वारेऽधिकृत्य पृच्छति–

(१३७) कति णं भंते! पुण्णिमाओ कति अमावासाओ पण्णत्ताओ?, गोअमा! बारस पुण्णिमाओ बारस अमावासाओ पं०, तं०–सावित्ती, [१]पोट्ठवई, आसोई, कत्तिगी, मग्गसिरी, पोसी, माही, फग्गुणी, चेत्ती, वइसाही, जेट्ठामूली, आसाढी।

'कति णं भंते पुण्णिमाओ' इत्यादि **कति भदन्त! पूर्णिमाः कति अमावस्याः प्रज्ञप्ताः?** स्वाम्याह-**गौतम द्वादश पूर्णिमा द्वादशामावस्याः प्रज्ञप्तास्तद्यथा श्रविष्टी प्रौष्टपदी'** त्यादि ततः श्रविष्टा धनिष्टा तस्यां भवा **श्राविष्टी** श्रावणमासभाविनी **प्रौष्टपदा**-उत्तरभद्रपदा तस्यां भवा प्रौष्टपदी भाद्रपदमासभाविनी **अश्वयुजि** भवा आश्वयुजी अश्वयुग्मासभाविनी एवं मासक्रमेण तत्तन्नामानुरूपनक्षत्रयोगाच्छेषा अपि वक्तव्याः ।।१३७।।

१. पोट्ठवदा- अब । पोट्ठवया- क ख स।

सम्प्रति यैर्नक्षत्रैरेकैका पौर्णमासी परिसमाप्यते तानि पिपृच्छिषुराह-

(१३८) साविट्ठि णं भंते! पुण्णिमासिं कति णक्खत्ता जोगं जोएंति?, गो०! तिण्णि णक्खत्ता जोगं जोएंति, तं०–अभिई, सवणो, धणिट्ठा।।१३८।।

'साविट्ठी ण' मित्यादि, **श्रविष्टा** णमिति वाक्यालङ्कारे **भदन्त! पौर्णमासीं कति नक्षत्राणि युञ्जन्ति कति नक्षत्राणि चन्द्रेण सह संयुज्य परिसमापयन्ति?** स्वाम्याह **गौतम! त्रीणि नक्षत्राणि युञ्जन्ति** चन्द्रेण सह यथायोगं संयुज्य परिसमापयन्ति **तद्यथा-अभिजिच्छ्रवणो धनिष्ठा च,** इह श्रवणधनिष्ठारूपे द्वे एव नक्षत्रे श्राविष्टीं पौर्णमासीं परिसमापयत: केवलमभिजिन्नक्षत्रं श्रवणेन सह सम्बद्धमिति। तदपि परिसमापयतीत्युक्तमिह विशेषभावनाऽमावस्यापौर्णमासीविषयचन्द्रयोगपरिच्छेदककरणादिभणनविधिना **चन्द्रसूर्यप्रज्ञप्टिटीकाभ्यामभ्यूह्या** विस्तरभयान्न लिखितेति।।१३८।।

(१३९) पोट्ठवइण्णं भंते! पुण्णिमासिं कति णक्खत्ता जोगं जोएंति?, गो०! तिण्णि णक्खत्ता जोगं जोएंति, तं०–सयमिभया पुव्वभद्दवया उत्तरभद्दवया, अस्सोइण्णिं भंते! पुण्णिमं कति णक्खत्ता जोगं जोएंति?।।१३९।।

'पोट्ठवदी ण' मित्यादि प्रौष्टपदा भाद्रपदा णमिति प्राग्वत् **भदन्त! पूर्णिमां कति नक्षत्राणि युञ्जन्ति कति नक्षत्राणि** यथायोगं चन्द्रेण सह संयुज्य परिसमापयन्तीत्यर्थ: एवं सर्वत्रापि युञ्जन्तीत्येतस्य पदस्य भावना कर्त्तव्या स्वाम्याह-**गौतम! त्रीणि नक्षत्राणि युञ्जन्ति तद्यथा शतभिषक् पूर्वभद्रपदोत्तरभद्रपदा च** तत्र प्रथमां प्रौष्टपदीं पौर्णमासीमुत्तरभद्रपदानक्षत्रं सप्तविंशतौ मुहूर्त्तेषु एकस्य च मुहूर्त्तस्य चतुर्दशसु द्वाषष्टिभागेषु चतु:षष्टौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिसमाप्तिं नयति द्वितीयां प्रौष्टपदीं पौर्णमासीं पूर्वभद्रपदानक्षत्रमष्टमुहूर्त्तेषु शेषेषु एकस्य च मुहूर्नस्यैकचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य नक्षत्रमष्टमुहूर्त्तेषु शेषेषु एकस्य च

मुहूर्त्तस्यैकचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकपञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिणमयति चतुर्थीं प्रौष्टपदीं पौर्णमासीमुत्तरभद्रपदानक्षत्रं चत्वारिंशतिमुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चतुर्विंशतौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिणमयति पञ्चमीं प्रौष्टपदीं पौर्णमासीं पूर्वभाद्रपदानक्षत्रमेकत्रिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टि भागस्यैकादशसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिणमयति।।१३९।।

(१४०) अस्सोइण्णं भंते! पुण्णिमं कति णक्खत्ता जोगं जोएंति?, गोअमा! दो जोएंति तं०–रेवई अस्सिणणी अ, कत्तिइण्णं दो–भरणी कत्तिआ य, मग्गसिरिण्णं दो–रोहिणी मग्गसिरं च, पोसिणं तिण्णि–अद्दा पुणव्वसू पुस्सो, माघिण्णं दो–अस्सेसा मघा य, फग्गुणिं णं दो–पुव्वाफग्गुणी य उत्तराफग्गुणी य, चेत्तिण्णं दो–हत्थो चित्ता य, विसाहिण्णं दो–साई विसाहा य, जेट्ठमूलिण्णं तिण्णि–अणुराहा जेट्ठा मूलो, आसाढिण्णं दो–पुव्वासाढा उत्तरासाढा।।१४०।।

'आसोइ ण' मित्यादि, **आश्वयुजा** ण मिति वाक्यालङ्कारे **भदन्त! पौर्णमासीं कति नक्षत्राणि युञ्जन्ति?** स्वाम्याह **गौतम! द्वे नक्षत्रे युङ्क्तस्तद्यथा रेवत्यश्वीनी च।** इहोत्तरभद्रपदा नक्षत्रमपि काञ्चिदाश्वयुजीं पौर्णमासीं परिसमापयति परं तत् प्रौष्टपदीमधिपौर्णमासीं परिसमापयति तत्रैव लोके तस्य प्राधान्यं तन्नाम्ना तस्याः पौर्णमास्या अभिधानात् अतस्तदिह न विवक्षितमित्यदोषस्तथाहि प्रथमामाश्वयुजीं पौर्णमासीं रेवतीनक्षत्रं सप्तदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षट्त्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु तृतीयामाश्वयुजीं पौर्णमासीमुत्तरभद्रपदानक्षत्रं चतुर्दशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकस्मिन् द्वाषष्टिभागे एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सप्तत्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु चतुर्थीमाश्वयुजीं पौर्णमासीं रेवतीनक्षत्रं चतुर्षु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य

त्रयस्त्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य दशसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिसमापयतीति।।

'कत्तिकिण्णं दोन्नि' कार्त्तिकीं पौर्णमासीं **द्वे नक्षत्रे** युङ्क्तस्तद्यथा **भरणी कृत्तिका च।** इहाप्यश्विनीनक्षत्रमपि काञ्चित्कार्त्तिकीं पौर्णमासीं परिसमापयति परं तदाश्वयुज्यां पौर्णमास्यां प्रधानमितीह तन्न विवक्षितं तत्र प्रथमां कीर्तिकीं पौर्णमासीं कृत्तिकानक्षत्रमेकस्य च मुहूर्त्तस्य चतुर्षु भागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य द्वाषष्टौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु द्वितीयां कार्तिकीं पौर्णमासीं कृत्तिकानक्षत्रं षड्विंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकत्रिंशतिद्वाषष्टिभागेषु एकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकोनपञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु तृतीयां कार्त्तिकीं पौर्णमासीमश्विनीनक्षत्रं सप्तसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्याष्टापञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षट्त्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु चतुर्थीं कीर्त्तिकीं पौर्णमासीं कृत्तिकानक्षत्रं षोडशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्याष्टादशसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षड्विंशतौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु पंचमीं कार्त्तिकीं पौर्णमासीं भरणीनक्षत्रं नवसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य द्वाषष्टिभागस्य नवसु सप्तषष्टिषु भागेषु शेषेषु परिसमापयति।।

'मग्गसीरीण' मित्यादि, मार्गशीर्षां पौर्णमासी **द्वे नक्षत्रे** युङ्क्तस्तद्यथा **रोहिणी-मृगशिरश्च** तत्र प्रथमां मार्गशीर्षां पौर्णमासी मृगशिरोऽष्टमुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सम्बन्धिनो द्वाषष्टिभागस्य सत्केष्वेकषष्टौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु द्वितीयां मार्गशीर्षीं पौर्णमासीं रोहिणीनक्षत्रं पञ्चसु मुहूर्त्तेषु एकस्य च मुहूर्त्तस्य षड्विंशतो द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्याष्टाचत्वारिंशति सप्तषष्टिशेषेषु तृतीयां मार्गशीर्षीं पौर्णमासीं रोहिणीनक्षत्रमेकत्रिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रिपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु चतुर्थीं मार्गशीर्षीं पौर्णमासीं

मृगशिरोनक्षत्रं द्वाविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रयोदशसु द्वाष्टिभागेष्वेकस्य द्वाषष्टिभागस्यैकविंशतौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु पञ्चमीं मार्गशीर्षीं पौर्णमासीं रोहिणीनक्षत्रमष्टादशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य चत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्याष्टसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिणमयति।।

'पोसि ण' मित्यादि पौषीं णमिति वाक्यालङ्कारे पौर्णमासीं **त्रीणि नक्षत्राणि** युञ्जन्ति। तद्यथा-**आर्द्रा पुनर्वसुः पुष्यश्च** तत्र प्रथमां पौषीं पौर्णमासीं पुनर्वसुनक्षत्रं द्वयोः मुहूर्त्तयोरेकस्य च मुहूर्त्तस्य षट्पञ्चाशति द्वाषष्टिभागेषु एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षष्टौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु द्वितीयां पौषीं पौर्णमासीं त्रिंशतिमुहूर्त्तेषु एकस्य च मुहूर्त्तस्यैकविंशतौ द्वाषष्टिभागेस्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सप्तचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेषु शेषेषु तृतीयां पौषीं पौर्णमासीमधिकमासादर्वाक्तनीमार्द्रानक्षत्रं दशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्याष्टाचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चतुस्त्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु अधिकमासभाविनीं पुनस्तामेव तृतीयां पौर्णमासीं पुष्यनक्षत्रमेकोनेविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रिचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रयस्त्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु चतुर्थीं पौर्णमासीं पुनर्वसुनक्षत्रं षोडशमुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्याष्टसु द्वाषष्टिभागेषु एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य विंशतौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु पञ्चमीं पौषीं पौर्णमासीं पुनर्वसुनक्षत्रं द्विचत्वारिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चत्रिंशतिद्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सप्तसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिसमाप्तिं नयति।।

'माही ण' मित्यादि माघीं णमिति वाक्यालङ्कारे पौर्णमासीं **द्वे नक्षत्रे** युङ्क्तस्तद्यथा-**अश्लेषा मघा च** चशद्वात्कञ्चिन्माघीं मघानक्षत्रमेकादशसु मुहूर्त्तेषु एकस्य च मुहूर्त्तस्यैकपञ्चाशतिं द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकोनषष्टौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, द्वितीयां माघीं पौर्णमासीमश्लेषानक्षत्रमष्टसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षोडशसु द्वाषष्टिभागेषु

एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षट्चत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, तृतीयां माघीं पौर्णमासीं पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रमष्टाविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तष्याष्टात्रिंशति द्वाषष्टिभागेषु एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य द्वात्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, चतुर्थीं माघीं पौर्णमासीं मघानक्षत्रं पञ्चविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रिषु द्वाष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाष्टिभागस्यैकोनविंशतौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, पञ्चमीं माघीं पौर्णमासीं पुष्यनक्षत्रं षट्सु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षट्सु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिसमापयतीति।।

'फाग्गुणी ण' मित्यादि, फाल्गुनी णमिति वाक्यालङ्कारे पौर्णमासीं **द्वे नक्षत्रे** युङ्क्तस्तद्यथा **पूर्वाफाल्गुन्युत्तराफाल्गुनी च** तत्र प्रथमां फाल्गुनीं पौर्णमासीमुत्तराफाल्गुनीनक्षत्रं विंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षट्चत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्याष्टापञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, द्वितीयां फाल्गुनीं पौर्णमासीं पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रं द्वयोर्मुहूर्त्तयोरेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकादशसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, तृतीयां फाल्गुनीं पौर्णमासीमुत्तराफाल्गुनीनक्षत्रं सप्तसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रयस्त्रिंशति द्वाषष्टिभागेषु एकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकत्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, चतुर्थीं फाल्गुनीं नक्षत्रं त्रयस्त्रिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य द्वाषष्टौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्याष्टादशसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, पञ्चमीं फाल्गुनीं पौर्णमासीं पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रं पञ्चदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चविंशतौ द्वाषष्टिसंख्येषु भागेषु एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिसमापयतीति।।

'चेत्तीण' मित्यादि चैत्रीं पौर्णमासीं **द्वे नक्षत्रे** युङ्क्तस्तद्यथा **हस्तश्चित्रा च** तत्र प्रथमां चैत्रीं पौर्णमासीं चित्रा-नक्षत्रं चतुर्दशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सप्तपञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, द्वितीयां चैत्रीं पौर्णमासीं

हस्तनक्षत्रमेकादशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षट्षु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चतुश्चत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषषु, तृतीयां चैत्रीं पौर्णमासीं चित्रानक्षत्रमेकस्मिन्मुहूर्त्ते एकस्य च मुहूर्त्तस्याष्टाविंशतौ द्वाषष्टिभागेषु एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, चतुर्थीं चैत्रीं पौर्णमासीं चित्रानक्षत्रं सप्तविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सप्तदशसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, पञ्चमीं चैत्रीं पौर्णमासीं हस्तनक्षत्रं चतुर्विंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य विंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चतुर्षु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिणमयतीति।।

'वइसाही ण' मित्यादि वैशाखीं पौर्णमासीं णमिति वाक्यालङ्कारे **द्वे नक्षत्रे** युङ्क्तस्तद्यथा **स्वातिर्विशाखा** च चशद्वादनुराधा चेदं हि अनुराधानक्षत्रं विशाखातः परं विशाखा चास्यां पौर्णमास्यां प्रधाना ततः परस्यामेव पौर्णमास्यां तत्साक्षादुपात्तं नेहेति तत्र प्रथमां वैशाखीं पौर्णमासीं विशाखानक्षत्रमष्टसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षट्त्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षट्पञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, द्वितीयां वैशाखीं पौर्णमासीं विशाखानक्षत्रं पञ्चविंशतिं मुहूर्त्तेष्वेकस्य चैकस्मिन् द्वाषष्टिभागे एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रिचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, तृत्तीयां वैशाखीं पौर्णमासीमनुराधानक्षत्रं पञ्चविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रयोविंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षट्पञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, द्वितीयां वैशाखीं पौर्णमासीं विशाखानक्षत्रं पञ्चविंशतिं मुहूर्त्तेष्वेकस्य चैकस्मिन् द्वाषष्टिभागे एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रिचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, तृतीयां वैशाखीं पौर्णमासीमनुराधानक्षत्रं पञ्चविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रयोविंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकोनत्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, चतुर्थीं वैशाखीं पौर्णमासीं विशाखानक्षत्रमेकविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चाशति द्वाषष्टिभागष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षोडशसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, पञ्चमीं वैशाखीं

पौर्णमासीं स्वार्तिर्नक्षत्रं त्रिषु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चदशसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रिषु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिणमयति।।

'जेट्ठामूली ण' मित्यादि ज्येष्ठामूला णमिति वाक्यालङ्कारे पौर्णमासीं **त्रीणि नक्षत्राणि** युञ्जन्ति तद्यथा-**अनुराधा ज्येष्ठा मूलं च**। तत्र प्रथमां ज्येष्ठामूलां पौर्णमासीं मूलनक्षत्रं सप्तदशसु मुहूर्त्तेषु एकस्य च मुहूर्त्तस्यैकत्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, द्वितीयां ज्येष्ठामौलीं पौर्णमासीं ज्येष्ठानक्षत्रं त्रयोदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चाशति द्वाष्टिभागेषु एकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सप्तषष्टिभागेषु सप्तषष्टिशेषेषु, तृतीयां ज्येष्ठामौलीं पौर्णमासीं मूलनक्षत्रं चतुर्षु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्याष्टादशसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्याष्टाविंशतौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, चतुर्थीं ज्येष्टामौलीं पौर्णमासीं ज्येष्ठानक्षत्रमेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चदशसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, पञ्चमीं ज्येष्टामौलीं पौर्णमासीमनुराधानक्षत्रं द्वादशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य दशसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य द्वयोः सप्तषष्टिभागयोः परिसमाप्तिमुपन-यतीति।।

'आसाढी ण' मित्यादि आषाढी णमिति वाक्यालङ्कारे पौर्णमासीं **द्वे नक्षत्रे** युङ्क्तस्तद्यथा **पूर्वाषाढोत्तराषाढा** च तत्र प्रथमाषाढीं पौर्णमासीमुत्तराषाढा नक्षत्रं षड्विंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षड्विंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चतुष्पञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, द्वितीयामाषाढीं पौर्णमासीं पूर्वाषाढानक्षत्रं सप्तसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रिपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, तृतीयामाषाढीं पौर्णमासीमुत्तराषाढानक्षत्रं त्रयोदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रिपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टि भागस्यैकचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, तृतीयामाषाढीं पौर्णमासीमुत्तराषाढानक्षत्रं त्रयोदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य त्रयोदशसुद्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च

द्वाषष्टिभागस्य सप्तविंशतौ सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु, चतुर्थींमाषाढीं पौर्णमासीमुत्तराषाढानक्षत्रमेकोनचत्वारिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य चत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चतुर्दशसु सप्तषष्टिभागेषु शेषेषु परिसमापयति, पञ्चमीमाषाढीं पौर्णमासीमुत्तराषाढानक्षत्रं परिसमाप्नुवत् परिसमापयति 'किमुक्तं भवति? एकत्र पञ्चमी आषाढ़पौर्णमासी परिसमाप्तिमेति। अन्यत्र चन्द्रयोगमधिकृत्योत्तराषाढा - नक्षत्रमितीह सूत्रकृत एवंशैली यन्नक्षत्रं पौर्णमासीमावस्यां वा परिसमापयति तद्यावच्छेषे परिसमापयति तावत्तस्य शेषं कथयति ततस्तदनुरोधेनास्माभिरप्यत्र तथैवोक्तं तदेवं यानि नक्षत्राणि यां पौर्णमासीं युञ्जन्ति तान्युक्तानि।।१४०।।

सम्प्रति गतार्थमपि मन्दमतिविबोधार्थं कुलादियोजनमाह–

(१४१) सावित्ति्रण्णं भंते! पुण्णिमं किं कुलं जोएइ उवकुलं जोएइ कुलोवकुलं जोएइ?, गो०! कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ कुलोवकुलं वा जोएइ, कुलं जोएमाणे धणिट्ठा णक्खत्ते जोएइ उवकुलं जोएमाणे सवणे णक्खत्ते जोएइ कुलोवकुलं जोएमाणे अभिई णक्खत्ते जोएइ, सावित्ति्रण्णं पुण्णिमासिं णं कुलं वा जोएइ जाव कुलोवकुलं वा जोएइ, कुलेण वा जुत्ता उवकुलेण वा जुता कुलोवकुलेण वा जुत्ता सावित्ति्र पुण्णिमा जुत्तत्ति वत्तव्वं सिआ।।१४१।।

'सावत्ति्र णं भंते' इत्यादि श्राविष्टीं भदन्त! **पौर्णमासीं किं कुलं युनक्ति? उपकुलं युनक्ति? कुलोपकुलं वा युनक्ति?** स्वाम्याह-**'कुलं वे'** त्यादि **कुलं वा युनक्ति** वाशब्दः समुच्चये ततः कुलमपि युनक्तीत्यर्थः, एवमुपकुलमपि **कुलोपकुलमपि** तत्र **कुलं युञ्जत् धनिष्ठा नक्षत्रं युनक्ति** तस्यैव कुलप्रसिद्ध्या प्रसिद्धस्य सतः श्राविष्ट्यां पौर्णमास्यां भावात् **उपकुलं युञ्जत्श्रवणनक्षत्रं युनक्ति कुलोपकुलं युञ्जदभिजिन्नक्षत्रं युनक्ति,** तद्धि तृतीयायां श्राविष्ट्यां पौर्णमास्यां द्वादशसु मुहूर्त्तेषु किञ्चित्समधिकेषु चन्द्रेण सह योगमुपैति ततः

श्रवणेन सहचरत्वात् स्वयमपि तस्याः पौर्णमास्याः पर्यन्तवर्त्तित्वात्तदपि हि तां परिसमापयतीति विवक्षितत्वाद्युनक्तीत्युक्तं।

'साविट्ठी ण' मित्यादि तत एवं त्रिभिरपि कुलादिभिः श्राविष्ट्याः पौर्णमास्या योजनास्ति ततः **श्राविष्टीं पौर्णमासीं कुलं वा युनक्ति उपकुलं वा युनक्ति कुलोपकुलं वा युनक्ति** इति वक्तव्यं स्यादिति स्वशिष्येभ्यः प्रतिपादनं कुर्याद्यदिवा **कुलेन वा युक्ता** सती श्राविष्टा पौर्णमासी **उपकुलेन वा युक्ता कुलोपकुलेन वा युक्तेति वक्तव्यं स्यात्।।१४१।।**

सम्प्रति उपसंहारमाह–

(१४२) पोट्ठवदिण्णं भंते! पुण्णिमं किं कुलं जोएइ ३ पुच्छा, गो०! कुलं वा उवकुलं वा कुलोवकुलं वा जोएइ कुलं जोएमाणे उत्तरभद्दवया णक्खत्ते जोएइ उ० पुव्वभद्दवया० कुलोव० सयभिसया० णक्खत्ते जोएइ, पोट्ठवइण्णं पुण्णिमं कुलं वा जोएइ जाव कुलोवकुलं वा जोएइ कुलेण वा जुत्ता जाव कुलोवकुलेण वा जुत्ता पोट्ठवई पुण्णमासी जुत्तत्ति वत्तव्वं सिआ।।१४२।।

(१४३) अस्सोइण्णं भंते! पुच्छा, गोयमा! कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ, णोलब्भइ कुलोवकुलं। कुलं जोएमाणे अस्सिणी णक्खत्ते जोएइ उवकुलं जोएमाणे रेवई णक्खत्ते जोएइ। अस्सोइण्णं पुण्णिमं कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ। कुलेण वा जुत्ता उवकुलेण वा जुत्ता अस्सोइ पुण्णिमा जुत्तत्ति वत्तव्वं सिआ।।१४३।।

(१४४) कत्तिइण्णं भंते! पुण्णिमं किं कुलं पुच्छा, गोयमा! कुलं वा जोएइ उवकुलं वा जोएइ, णो कुलोवकुलं जोएइ। कुलं जोएमाणे कत्तिया णक्खत्ते जोएइ उवकुलं जोएमाणे भरणी णक्खत्ते जोएइ कत्तिइण्णं जाव वत्तव्वं।।१४४।।

(१४५) मग्गसिरिण्णं भंते! पुण्णिमं किं कुलं तं चेव दो जोएइ, णो भवइ कुलोवकुलं।

कुलं जोएमाणे मग्गसिरणक्खत्ते जोएइ उवकुलं जोएमाणे रोहिणी णक्खत्ते जोएइ मग्गसिरिण्णं जाव वत्तव्वं सिआ।।१४५।।

'पोट्ठवदि णं भंते पुण्णिमं' इत्यादीनि चत्वारि सूत्राणि सुनिगमनानि सुगमान्येवातो न व्याख्यातानि।।१४२-१४५।।

(१४६) एवं सेसियाओवि जाव आसाढिं पोसिं जेट्ठामूलिं च कुलं वा उवकुलं वा कुलोवकुलं वा सेसिया णं कुलं वा उवकुलं वा कुलोवकुलं ण भण्णइ।।१४६।।

'एवं सेसिआओ वि जाव आसाढि' त्ति एवमुक्तप्रकारेण शेषा अपि पौर्णमास्य: पौष्यादयो वक्तव्या **यावदाषाढी** पौर्णमासी। अत्र यो विशेषस्तमाह **'पोसीजेट्ठामूलीं** चेत्यादि पौषीं ज्येष्टामौलीं च पौर्णमासीं **कुलमुपकुलं कुलोपकुलं वा युनक्ति शेषाणां कुलमुपकुलं वा** युनक्तीति वाच्यं **कुलोपकुलं तु न भण्यते**।।१४६।।

इत्युक्ता पूर्णिमावक्तव्यता सम्प्रत्यमावस्यावक्ताव्यतामाह–

(१४७) साविट्ठिण्णं भंते! अमावसं कइ णक्खत्ता जोएंति?, गो०! दो णक्खत्ता जोएंति, तं जहा–अस्सेसा य महा य।।१४७।।

'साविट्ठि णं भंते' इत्यादि **श्राविष्टां** णमिति वाक्यालङ्कारे **भदन्त! अमावस्यां कति नक्षत्राणि युञ्जन्ति कति** नक्षत्राणि यथायोगं चन्द्रेण सह संयुज्य श्राविष्टीममावस्यां परिसमापयन्ति? तत्र मासपरिसमापकेन श्रविष्टानक्षत्रेणोपलिक्षतोऽयं तु श्रावणो मास: साप्युपचाराच्छ्रविष्टा तत्र भवा श्राविष्टी किमुक्तं भवति? श्रविष्टानक्षत्रपरिसमाप्यमान श्रावणमासभाविनीति 'एवं सर्वत्रापि वाक्यार्थो भवनीय: स्वाम्याह-**गौतम! 'दो नक्खत्ता'** इत्यादि द्वे नक्षत्रे युङ्क्तस्थद्यथा **अश्लेषा मघा च**। इह व्यवहारनयमते यस्मिन्नक्षत्रे पौर्णमासी भवति तत आरभ्यार्वाक्तने पञ्चदशे नक्षत्रेऽमावस्या भवति यस्मिंश्च नक्षत्रेऽमावस्या तत

आरभ्य परतः पञ्चदशे नक्षत्रे पौर्णमासी तत्र श्राविष्टा पौर्णमासी किल श्रवणे धनिष्ठायां योक्ता ततोऽमावस्यायामप्यस्यां श्राविष्ट्यामश्लेषामघाश्चोक्ताः लोके च तिथिगणितानुसारतो गतायामप्यमावस्यायां वर्त्तमानायामपि प्रतिपदि यस्मिन्नहोरात्रे प्रथमतोऽमावस्याऽभूत स सकलोऽप्यहोरात्रोऽमावस्येति व्यवह्रियते ततो मघानक्षत्रमप्येवं व्यवहारतोऽमावस्यायां प्राप्यते इति न कश्चिद्विरोधः परमार्थतः पुनरिमामवस्यां श्राविष्टीमिमानि त्रीणि नक्षत्राणि परिसमापयन्ति तद्यथा पुनर्वसुः पुष्योऽश्लेषा चात्रापि विशेषभावना **चन्द्रसूर्यप्रज्ञप्तिटीकाभ्याम** वसेया।।१४७।।

(१४८) पोट्ठवईण्णं भंते! अमावसं कइ णक्खत्ता जोएंति?, गो०! दो णक्खत्ता जोएंति, तं जहा–पुव्वाफग्गुणी, [१]उत्तराफग्गुणी य।।१४८।।

'पोट्ठवई ण' मित्यादि प्रौष्टपदीं **भाद्रपदीममावस्यां कति नक्षत्राणि युञ्जन्ति?** स्वाम्याह-**गौतम! द्वे नक्षत्रे** युङ्क्तस्तद्यथा **पूर्वाफाल्गुन्युत्तराफाल्गुनी** चेदमपि व्यवहारत उच्यते परमार्थतः पुनस्त्रीणि नक्षत्राणि प्रौष्टपदीमवास्यां परिसमापयन्ति तद्यथा मघा पूर्वाफाल्गुन्युत्तराफाल्गुनीं च तत्र प्रथमां प्रौष्टपदीममावास्यां पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रं चतुर्षु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षड्विंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य द्वयोः सप्तषष्टिभागयोः ४/२६/२ अतिक्रान्तयोर्द्वितीयां प्रौष्टपदीममावास्यां पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रं सप्तसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकषष्टौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चदशसु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ७/६१/१५ तृतीयां प्रौष्टपदीममावास्यां मघानक्षत्रमेकादशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य चतुस्त्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्याष्टाविंशतौ सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ११/३४/२८ चतुर्थीं प्रौष्टपदीममावास्यां पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्र

१.उत्तर भद्दवया (अ): उत्तराफग्गुणी उत्तराभद्दवया (ब): "वृत्तित्रयेऽपि परमार्थतः पुनःत्रीणि नक्षत्राणि मघादीनि इति तात्पर्यार्थं स्वीकृतमस्ति, किन्तु उत्तरभद्दवया इति पाठो नास्ति तत्रोल्लिखतः एष वाचनाभेद एव सम्भाव्यते लिपिदोषो वा । इति V पृ. ५७७. टि. ४।

मेकविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य द्वादशसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य द्विचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु २१/१७/४२ पञ्चमीं प्रौष्टपदीममावास्यां मघानक्षत्रं चतुर्विंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चपञ्चाशति सप्तषष्टिभागेष्वतिक्रान्तेषु २४/४७/५५ परिसमापयति ।।१४८।।

(१४९) अस्सोइण्णं भंते! दो-हत्थे चित्ता य। कत्तिइण्णं दो-साई विसाहा य। मग्गसिरिण्णं तिण्णि-अणुराहा जेट्ठामूलो य। पोसिण्णं दो पुव्वासाढा उत्तरासाढा। माहिण्णं तिण्णि-अभिई सवणो धणिट्ठा। फग्गुणिण्णं तिण्णि-सयभिसया पुव्वाभद्दवया उत्तराभद्दवया चेत्तिण्णं दो-रेवई अस्सीणी य। वइसाहिण्णं दो-भरणी कत्तिया य। जेट्ठामूलिण्णं दो-रोहिणी मग्गसिरं च। आसाढिण्णं तिण्णि-अद्दा पुणव्वसू पुस्सो।।१७१।।

'अस्सोई ण' मित्यादि, अत्रापि द्वे नक्षत्रे युङ्क्स्तद्यथा **हस्तचित्रा चेति**, एतदपि व्यवहारतो निश्चयतस्त्वाश्वयुजीममावास्यां त्रीणि नक्षत्राणि परिसमापयन्ति तद्यथा- उत्तराफाल्गुनी हस्तचित्रा च तत्र प्रथमामाश्वयुजीममावास्यां हस्तनक्षत्रं पञ्चविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकत्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रिषु सप्तषष्टिभागेषु २५/३१/३ गतेषु द्वितीयामाश्वयुजीममावास्यामुत्तराफाल्गुनीनक्षत्रं चतुश्चत्वारिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य चतुर्षु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षोडशसु सप्तषष्टिभागेषु ४४/४/१६ गतेषु तृतीयामाश्वयुजीममावास्यामुत्तराफाल्गुनीनक्षत्रं सप्तदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकोनचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकोनत्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु १७/३९/२९ गतेषु पञ्चमीमाश्वयुजीममावास्यामुत्तराफाल्गुनीनक्षत्रं त्रिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य द्विपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चतु:पञ्चाशति

सप्तषष्टिभागेषु ३०/५२/५४ गतेषु परिसमापयति।।

'कत्तियं णं' मित्यादि कार्त्तिकीममावास्यां **द्वे** नक्षत्रे परिसमापयतस्तद्यथा **स्वातिर्विशाखा** चैतदपि व्यवहारनयमतेन निश्चयतः पुनस्त्रीणि नक्षत्राणि कार्त्तिकीममावास्यां परिसमापयन्ति तद्यथा स्वातिर्विशाखा चित्रा चेति तत्र प्रथमां कार्त्तिकीममावास्यां विशाखानक्षत्रं षोडशसु मुहूर्त्तेषु एकस्य च मुहूर्त्तस्य षट्त्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चतुर्षु सप्तषष्टिभागेषु १६/३६/४ गतेषु, द्वितीयां कार्त्तिकीममावास्यां स्वातिनक्षत्रं पञ्चसु मुहूर्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य द्वाविंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाष्टिभागस्य सप्तदशषु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ५/२२/१७ तृतीयां कर्तिकीममावास्यां चित्रानक्षत्रमष्टसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य चतुश्चत्वारिंशद् द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु ८/४४/३० गतेषु, चतुर्थीं कार्त्तिकीममावास्यां विशाखानक्षत्रं त्रयोदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य द्वाविंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य चतुश्चत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु १३/२२/४४ गतेषु, पञ्चमीं कार्त्तिकीममावास्यां चित्रानक्षत्रमेकविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तपञ्चाशतिद्वाषष्टि भागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सप्तपञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु २१/५७/५७ गतेषु समाप्तिमुपनयति।।

'मग्गसिरिणं तिण्णिं त्ति अत्र सूत्रालापक एवं 'मग्गसिरिणं भंते अमावसं कति णक्खत्ता जोएंति? गोयमा! तिण्णि नक्खत्ता जोएंति। तं अणुराहा जेट्ठामूलो' एवमन्यत्रापि यत्र विस्तरभयान्न समस्तालापकलिखनं तत्र सम्पूर्णालापकः सर्वत्रैवमुन्नेयः सुगमं मार्गशीर्षीममावास्यां णमिति पूर्ववत् **त्रीणि** नक्षत्राणि परिसमापयन्ति तद्यथा-**अनुराधा ज्येष्ठा मूलं चे**ति, एतदपि व्यवहारनयमतेन निश्चयतः पुनरिमानि त्रीणि नक्षत्राणि मार्गशीर्षीममावास्यां परिसमापयन्ति तद्यथा विशाखाऽनुराधा ज्येष्ठा च तत्र प्रथमां मार्गशीर्षीममावास्यां ज्येष्टानक्षत्रं सप्तसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य एकचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य

पञ्चसु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ७/४१/५, द्वितीयां मार्गशीर्षीममावास्यामनुराधानक्षत्र मेकादशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य]चतुर्दश द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्याष्टादशसु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ११/१४/१८, तृतीयां मार्गशीर्षीममावस्यां विशाखानक्षत्रमेकोनत्रिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकोनपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकत्रिंशति सप्तषष्टिभागेष्वतिक्रान्तेषु २९/४९/३१, चतुर्थीं मार्गशीर्षीममावास्यामनुराधानक्षत्रं चतुर्विंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तविंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु २४/२७/४५, पञ्चमीं मार्गशीर्षीममावास्यां विशाखानक्षत्रं त्रिचत्वारिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सम्बन्धिनो द्वाषष्टिभागस्याष्टापञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ४३/०/५८परिसमापयति।।

'पोसि णं दो' इत्यादि पौषीममावस्यां द्वे नक्षत्रे परिसमापयतस्तद्यथा-**पूर्वाषाढोत्तराषाढा** चैतदपि व्यवहारत उक्तं निश्चयतः पुनस्त्रीणि नक्षत्राणि परिसमापयन्ति तद्यथा-मूलं पूर्वाषाढोत्तराषाढा च। तथाहि प्रथमां पौषीममावस्यां पूर्वाषाढानक्षत्रमष्टाविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षट् चत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षट्सु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु २८/४६/६, द्वितीयां पौषीममावास्यां पूर्वाषाढानक्षत्रं द्वयोर्मुहूर्त्तयोरेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकोनविंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाष्टिभागस्यैकोनविंशतौ सप्तषष्टिभागेष्वतिक्रान्तेषु २/१९/१९ तृतीयामधिकमासभाविनीं पौषीममावास्यामुत्तराषाढानक्षत्रमेकादशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकोनषष्टौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रयस्त्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ११/५९/३३ चतुर्थीं पौषीममावास्यां पूर्वाषाढानक्षत्रं पञ्चदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षट् पञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षट्चत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु १५/५६/४६ पञ्चमीं पौषीममावास्यां मूलनक्षत्रमेकोनविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकोनषष्टौ सप्तषष्टिभागेष्वतिक्रान्तेषु १९/५/५९

परिसमापयति।।

'माहि ण' मित्यादि, माघीममावास्यां **त्रीणि** नक्षत्राणि परिसमापयन्ति तद्यथा-**अभिजित् श्रवणो धनिष्टा** एतदपि व्यवहारतो निश्चयत: पुनरमूनि त्रीणि नक्षत्राणि माघीममावास्यां परिसमापयन्ति। तद्यथा-उत्तराषाढाऽभिजिच्छ्रवणश्च, तथाहि-प्रथमां माघीममावास्यां श्रवणनक्षत्रं दशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षड्विंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्याष्टसु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु १०/२६/८ द्वितीयां माघीममावास्यामभिजिन्नक्षत्रं त्रिषु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षड्विंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य विंशतौ सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ३/२६/२०, तृतीयां माघीममावास्यां श्रवणनक्षत्रं त्रयोविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकोनचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टि भागस्य पञ्चत्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु २३/३९/३५ चतुर्थीं माघीममावास्यामभिजिन्नक्षत्रं षट्सु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तत्रिंशति द्वाषष्टि भागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सप्तचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेष्वतिक्रान्तेषु ६/३७/४७, पञ्चमीं माघीममावास्यामुत्तराषाढानक्षत्रं पञ्चविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य दशसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षष्टौ सप्तषष्टिभागेषु गतेषु २५/१०/६० परिसमापयति।।

'फग्गुणी ण' मित्यादि फाल्गुनीममावास्यां **द्वे** नक्षत्रे परिसमापयतसतद्यथा **शतभिषक् पूर्वभद्रपदा** चेति प्रथमां फाल्गुनीममावास्यां पूर्वभाद्रपदानक्षत्रं षट्सु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकत्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य नवसु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ६/३१/९ द्वितीयां फाल्गुनीममावास्यां धनिष्ठानक्षत्रं विंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य चतुर्षु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य द्वाविंशतौ सप्तषष्टिभागेषु व्यतिक्रान्तेषु २०/४/२२ तृतीयां फाल्गुनीममावास्यां पूर्वाषाढानक्षत्रं चतुर्दशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य चतुश्चत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षट्त्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु

१४/४४/३६ चतुर्थीं फाल्गुनीममावास्यां शतभिष्क नक्षत्रं त्रिषु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तदशसु द्वाष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकोनपञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ३/१७/४९, पञ्चमीं फाल्गुनीममावास्यां धनिष्ठानक्षत्रं षट्सु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य द्विपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सत्केषु द्वाषष्टौ सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ६/५२/६२ परिणमयति।।

'चेत्ती ण' मित्यादि चैत्रीममावास्यां त्रीणि नक्षत्राणि परिसमापयन्ति। तद्यथा उत्तरभाद्रपदा रेवत्यश्विनी च। तत्र प्रथमां चैत्रीममावास्यामुत्तरभद्रपदानक्षत्रं सप्तत्रिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षट्त्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य दशसु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ३७/३६/१० द्वितीयां चैत्रीममावास्यामुत्तरभद्रपदानक्षत्रमेकादशसु मुहुर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य नवसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रयोविंशतौ सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ११/९/२३ तृतीयां चैत्रीममावास्यां रेवतीनक्षत्रं पञ्चदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकोनपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सप्तत्रिंशति सप्तषष्टिभागेष्वतिक्रान्तेषु १५/४९/३७ चतुर्थीं चैत्रीममावास्यामुत्तरभद्रपदानक्षत्रं त्रयोविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य द्वाविंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु २३/२२/५०, पञ्चमीं चैत्रीममावास्यां पूर्वभाद्रपदानक्षत्रं सप्तविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य मुहूर्त्तस्य सप्तपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रिषष्टौ सप्तषष्टिभागेष्वतिक्रान्तेषु २७/५७/६३ परिसमापयति।।

'वइसाही ण' मित्यादि, वैशाखीममावास्यां **द्वे** नक्षत्रे परिसमापयतस्तद्यथा-**भरणी कृत्तिका चेति।** एतदपि व्यवहारतो निश्चयतः पुनस्त्रीणि नक्षत्राणि वैशाखीममावास्यां परिसमापयन्ति तानि चामूनि तद्यथा-रेवत्यश्विनी भरणी च। तत्र प्रथमां वैशाखीममावास्यामश्विनीनक्षत्रमष्टाविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकचत्वारिंशति

द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्यैकादशसु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु २८/५१/११ द्वितीयां वैशाखीममावास्यामश्विनी नक्षत्रं द्वयो र्मुहूर्त्तयोरेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकोनचत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रयोविंशतौ सप्तषष्टिभागेषु व्यतिक्रान्तेषु २/३९/२३ तृतीयां वैशाखीममावास्यां भरणीनक्षत्रमेकादशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य चतु:पञ्चाशति द्वाषष्टिभागेषु एकस्य च द्वाषष्टिभागस्याष्टात्रिंशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ११/५४/३८ चतुर्थीं वैशाखीममावास्यामश्विनीनक्षत्रं पञ्चदशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तविंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य सत्केषु चतु: षष्टौ: सप्तषष्टिभागेषु गतेषु १५/२७/६४ पञ्चमीं वैशाखीममावास्यां रेवतीनक्षत्रमेकोनविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सम्बन्धिनो द्वाषष्टिभागस्य सत्केषु चतु: षष्टौ सप्तषष्टिभागेषु गतेषु १९/०/६४ परिणमयति।।

'जेट्ठामूला ण' मित्यादि ज्येष्टामूलीममावास्यां **द्वे** नक्षत्रे परिसमापयतस्तद्यथा **रोहिणी मृगशिर**श्चैतदपि व्यवहारतो निश्चयत: पुनरिमे द्वे नक्षत्रे ज्येष्टामूलीममावास्यां परिसमापयतस्तद्यथा रोहिणी कृत्तिका च। तत्र प्रथमां ज्येष्टामूलीममावास्यां रोहिणी नक्षत्रमेकोनविंशतौमुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षट्चत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य द्वादशसु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु १९/४६/१२, द्वितीयां ज्येष्ठामूलीममावास्यां कृत्तिकानक्षत्रं त्रयोविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकोनविंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चविंशतौ सप्तषष्टिभागेष्वतिक्रान्तेषु २३/१९/२५ तृतीयां ज्येष्टामूलीममावास्यां रोहिणीनक्षत्रं द्वात्रिंशति मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्येकोनषष्टौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य द्वाषष्टिभागस्यैकोनचत्वारिंशति सप्तषष्टिभागेषु समतिक्रान्तेषु ३२/५९/३९ चतुर्थीं ज्येष्टामूलीममावास्यां रोहिणीनक्षत्रं षट्सु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य द्वात्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य द्विपञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु ६/३२/५२

पञ्चमीं ज्येष्टामूलीममावास्यां कृत्तिकानक्षत्रं दशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य पञ्चसु द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य पञ्चषष्टौ सप्तषष्टिभागेषु गतेषु १०/५/६५परिसमापयति।।

'आसाढी ण' मित्यादि आषाढी णमिति वाक्यालङ्कारे **त्रीणि** नक्षत्राणि युञ्जन्ति तद्यथा-**आर्द्रापुनर्वसु पुष्यश्चै**तदपि व्यवहारत उक्तं परमार्थतः पुनरमूनि त्रीणि नक्षत्राणि आषाढीममावास्यां परिसमापयन्ति तद्यथा-मृगशिर आर्द्रा पुनर्वसुश्च तत्र प्रथमामाषाढीममावास्यामार्द्रानक्षत्रं द्वादशमुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्यैकपञ्चाशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रयोदशसु सप्तषष्टिभागेषु गतेषु १२/५१/१३ द्वितीयामाषाढीममावास्यां मृगशिरोनक्षत्रं चतुर्दशसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य चतुर्विंशतौ द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य षड्विंशतौ सप्तषष्टिभागेष्वतिक्रान्तेषु १४/२४/२६ तृतीयामाषाढीममावास्यां पुनर्वसुनक्षत्रं नवसु मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य द्वयोर्द्वाष्टिभागयोरेकस्य च द्वाषष्टि भागस्य चत्वारिंशति द्वाषष्टिभागेषु गतेषु ९/२/४०, चतुर्थीमाषाढीममावास्यां मृगशिरो नक्षत्रं सप्तविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तत्रिंशति द्वाषष्टिभागेष्वेकस्य च द्वाषष्टिभागस्य त्रिपञ्चाशति सप्तषष्टिभागेषु गतेषु २७/३७/५३ पञ्चमीमाषाढीममावास्यां पुनर्वसुनक्षत्रं द्वाविंशतौ मुहूर्त्तेष्वेकस्य च मुहूर्त्तस्य षोडशसु द्वाषष्टिभागेषु समतिक्रान्तेषु परिसमापयतीति तदेवं द्वादशानामप्यमावास्यानां चन्द्रयोगोपेतनक्षत्रविधिरुक्तः।। १४९।।

सम्प्रत्येतासामेव कुलादियोजनमाह–

(१५०) साविट्ठिण्णं भंते! अमावसं किं कुलं जोएइ? उवकुलं जोएइ? कुलोवकुलं जोएइ? गोयमा! कुलं वा जोएइ, उवकुलं वा जोएइ, णो लब्भइ कुलोवकुलं। कुलं जोएमाणे महाणक्खत्ते जोएइ, उवकुलं जोएमाणे अस्सेसा णक्खत्ते जोएइ। साविट्ठिण्णं अमावसं कुलं वा जोएइ, उवकुलं वा जोएइ। कुलेण वा जुत्ता उवकुलेण वा जुत्ता

सावित्ती अमावसा जुत्तत्ति।।१५०।।

'सावत्ति ण मित्यादि, **श्राविष्टीं** श्रावणमासभविनीममावास्यां **भदन्त! किं कुलं युनक्ति उपकुलं वा युनक्ति कुलोपकुलं वा युनक्ति?** स्वाम्याह-**गौतम! कुलं** वेत्यादि कुलमपि युनक्ति वाशब्दोऽपि शब्दार्थः उपकुलं वा युनक्ति न लभते योगमधिकृत्य कुलोपकुलं तत्र कुलं कुलसंज्ञं नक्षत्रं श्राविष्टाममावास्यां युञ्जन्मघानक्षत्रं युनक्ति। एतद्व्यवहारत उच्यते व्यवहारतो हि गतायामप्यमावास्यायां वर्त्तमानायामपि च प्रतिपदि योऽहोरात्रो मूलेऽमावास्यायाः सम्बद्धः स सकलोऽप्यहोरात्रोऽमावास्येति व्यवह्रियते तत एव व्यवहारतः श्राविष्ट्यामप्यमावास्यायां मघानक्षत्रसम्भवादुक्तं कुलं युञ्जन्मघानक्षत्रं युनक्तीति परमार्थतः पुनः कुलं युञ्जत्पुष्यनक्षत्रं युनक्तीति प्रतिपत्तव्यं तस्यैव कुलप्रसिद्ध्या प्रसिद्धस्य श्राविष्ट्यामप्यमावास्यायां सम्भवात्। एतच्च प्रागेवोक्तमुत्तरसूत्रमपि व्यवहारनयमधिकृत्य यथायोगं परिभावनीयमिति। उपकुलं युञ्जतोऽश्लेषानक्षत्रं युनक्ति।।

'सावित्ती ण' मित्यादि यत उक्तप्रकारेण द्वाभ्यां कुलोपकुलाभ्यां श्राविष्ट्याममावास्यायां चन्द्रयोगः समस्ति न कुलोपकुलेन ततः श्राविष्टीममावास्यां कुलमप्युपकुलं वा युनक्तीति वक्तव्यं स्याद् यदिवा कुलेन वोपकुलेन वा युक्ता सती श्राविष्ट्यमावास्या युक्तेति वक्तव्यं स्यात्।।१५०।।

सम्प्रत्युपसंहारमाह–

(१५१) पोट्ठवईण्णं भंते! अमावसं तं चेव दो जोएइ, णो लब्भइ कुलोवकुलं।कुलं जोएमाणे उत्तराफग्गुणीणक्खत्ते जोएइ उव० पुव्वाफग्गुणी, पोट्ठवइण्णं अमावसं जाव जुत्तत्ति वत्तव्वं सिआ।।१५१।।

(१५२) मग्गसिरिण्णं तं चेव कुलं मूले णक्खत्ते जोएइ उ० जेट्ठा [1]कुलोवकु० अणुराहा जाव जुत्तत्ति वत्तव्वं सिआ।।१५२।।

(१५३) एवं माहीए फगगुणीए आसाढीए कुलं वा उवकुलं वा कुलोवकुलं वा, अवसेसिआणं कुलं वा उवकुलं वा जोएइ।।१५३।।

'पोट्ठवदि ण' मित्यादिप्रश्नसूत्रं पूर्वसूत्रवज्ज्ञेयं ' **तं चेव** त्ति' तथैवोक्तप्रकारेण शेषमप्यमावास्याजातं नेतव्यं। नवरं **मार्गशीर्षां माघीं फाल्गुनीमाषाढीममावास्यां कुलोपकुलमपि युनक्तीति** वक्तव्यं **शेषास्वमावस्यासु कुलोपकुलं** नास्ति निश्चयतः कुलादियोजना प्रागुक्तचन्द्रयोगमधिकृत्य स्वयं परिभावनीयम्।।१५३।।

अथ पौर्णमास्यमावास्यासन्निपातसंज्ञं दशमद्वारमाश्रित्य प्रश्नमाह–

(१५४) जया णं भंते! सावित्ठी पुण्णिमा भवइ तया णं माही अमावासा भवइ?, जया णं भंते! माहीपुण्णिमा भवइ तया णं सावित्ठी अमावासा भवइ?, हंता! गो०! जया णं सावित्ठी तं चेव वत्तव्वं।।१५४।।

'जया णं भंते' इत्यादि यदा णमिति वाक्यभूषणे भदन्त! **श्राविष्टी** श्रविष्टानक्षत्रयुक्ता **पूर्णिमा भवति तदा णमिति** पूर्ववत्, **माघी** मघानक्षत्रयुक्ता ततोऽर्वाक्तनी **अमावस्या भवति यदा च माघीपूर्णिमा भवति तदा ततः** पाश्चात्यामावास्या **श्राविष्टा भवति?** इति काक्वा प्रश्नः स्वाम्याह- **'गोयमे'** त्यादिप्रश्नसूत्रवदुत्तरसूत्रमपि वक्तव्यं वक्तार्थभावना चैवमिह व्यवहारनयमतेन यस्मिन्नक्षत्रे पूर्णिमा भवति तत आरभ्यार्वाक्तने पञ्चदशे चतुर्दशे वा नक्षत्रे नियमतोऽमावास्या ततो यदा श्रावष्टी-श्रविष्टायुक्ता पूर्णिमा भवति तदा तस्या अर्वाक्तन्यमावास्या माघी-मघानक्षत्रयुक्ता भवति मघानक्षत्रादारभ्य श्रविष्टा नक्षत्रस्य

---

१. कुलावकु० -जे. १, जे. २।।

पञ्चदशत्वात्। एतच्च श्रावणमासमधिकृत्य भावनीयं यदा तु माघी-मघानक्षत्रयुक्ता पूर्णिमा भवति तदा पाश्चात्याऽमावास्या श्राविष्टा-श्रविष्टायुक्ता भवति। मघात आरभ्य पूर्वं श्रविष्टा नक्षत्रस्य पञ्चदशत्वादेतच्च माघमासमधिकृत्य वेदितव्यम्।।१५४।।

(१५५) जया णं भंते! पोट्ठवई पुण्णिमा भवइ तया णं फग्गुणी अमावासा भवइ? जया णं फग्गुणी पुण्णिमा भवइ तया णं पोट्ठवई अमावसा भवइ?, हंता! गोअमा! तं चेव, एवं एतेणं अभिलावेणं इमाओ पुण्णिमाओ अमावासाओ णेअव्वाओ–अस्सिणी पुण्णिमा चेत्ती अमावासा कत्तिगी पुण्णिमा वइसाही अमावासा मग्गासिरी पुण्णिमा जेट्ठामूली अमावासा पोसी पुण्णिमा आसाढी अमावासा।।१५५।।

'जया णं भंते पोट्ठवया' इत्यादिसूत्रं प्राग्वद्व्याख्येयं भावना त्वेवं यदा **प्रौष्टपदी** उत्तरभद्रपदा **युक्ता पूर्णिमा भवति तदा पाश्चात्यामावास्या फाल्गुनी**-उत्तरफाल्गुनी**नक्षत्रयुक्ता भवत्युत्तरभद्रपदात** आरभ्य पूर्वमुत्तरफाल्गुनीनक्षत्रस्य पञ्चदशत्वात्। यत्त्वपान्तरालेऽभिजिन्नक्षत्रं तत्स्तोककालत्वात्प्रायो न व्यवहारपथमवतरति। तथा च **समवायाङ्ग सूत्रं–"जंबुद्दीवे अभिई वज्जेहिं सत्तावीसाए नक्खत्तेहिं संववहारो वट्टइ"** इति, ततः सदपि तन्न गण्यते। इति पञ्चदशमेवोत्तरभद्रपदात आरभ्य पूर्वमुत्तरफाल्गुनीनक्षत्रमित्येतच्च भाद्रपदमासमधिकृत्योक्तमवसेयं। यदा फाल्गुनीनक्षत्रयुक्ता पूर्णिमा भवति तदा पाश्चात्यामावास्या प्रौष्टपदी उत्तरभद्रपदोपेता भवत्युत्तरफाल्गुनीत आरभ्य पूर्वमुत्तरभद्रपदानक्षत्रस्य चतुर्दशत्वादिदं फाल्गुनमासमधिकृत्योक्तं **'एवं एतेणं अभिलावेण'** मित्यादि एवमेतेनानन्तरोदितेनाभिलापेनेमा वक्ष्यमाणाः पूर्णिमा इमाश्चामावास्या ज्ञातव्याः कास्ता इत्याह **'अस्सिणी'** त्यादि व्यक्तमत्र सूत्रालापका एवमुन्नेयाः 'जया णं भंते अस्सिणी पुण्णिमा भवति तया णं चित्ता अमावस्सा भवति जया णं चित्ता पुण्णिमा भवति तया णं अस्सिणी अमावस्सा भवति? हंता गोयमा! तं चेव जया णं भंते कत्तिया पुण्णिमा भवति तया णं वइसाही

अमावस्सा भवति जया णं वइसाही पुण्णिमा भवति तया णं कत्तिया अमावस्सा भवति? हंता गोयमा! तं चेव जया णं भंते कत्तिया पुण्णिमा भवति तया णं वइसाही अमावस्सा भवति जया णं वइसाही पुण्णिमा भवति तया णं कत्तिया अमावसा हवइ? हंता गोयमा तं चेव जया णं भंते मग्गसिरी पुण्णिमा तया णं जेट्ठामूली अमावसा जया णं जेठामूली पुण्णिमा तया णं मग्गसिरी अमावसा हवइ? हंता तं चेव, जया णं भंते पोसी पुण्णिमा तयाणं आसाढी अमावसा जयाणं आसाढी पुण्णिमा तयाणं पोसी अमावसा हंता गोयमा! जयाणं पोसी तं चेव' एतेषामयं भावार्थः, यदा चाश्वयुजी-अश्वयुग्नक्षत्रोपेता पौर्णमासी भवति तदा पाश्चात्यानन्तरामावास्या चैत्री-चित्रानक्षत्रसमन्विता भवत्यश्विन्या आरभ्य पूर्वं चित्रानक्षत्रस्य पञ्चदशत्वादेतच्च व्यवहारनयमधिकृत्योक्तमवसेयं निश्चयत एकस्यामप्यश्वयुग्मासभाविन्याममावास्यायां चित्रानक्षत्रस्यासम्भवादेतच्च प्रागेव दर्शितं यदा य चैत्री-चित्रानक्षत्रोपेता पौर्णमासी जायते तदा ततः पाश्चात्यानन्तरामावास्या आश्वयुजी-अश्वयुग्नक्षत्रोपेता भवति। एतदपि व्यवहारतो निश्चयतस्त्वेकस्यामपि चैत्रमासभाविन्याममावास्यामश्विनीनक्षत्रस्यासम्भवाद् एतच्च सूत्रमश्वयुग् चैत्रमासावधिकृत्य वेदितव्यं, यदा च कार्त्तिकी-कृत्तिकानक्षत्रोपेता पौर्णमासी भवति तदा ततोऽनन्तरा पाश्चात्या अमावस्या [वैशाखी विशाखानक्षत्रोपेता भवति यदा च वैशाखी-विशाखानक्षत्रोपेता पूर्णिमा भवति तदा ततोऽनन्तरा पाश्चात्या अमावास्या] कार्त्तिकी-कृत्तिकानक्षत्रोपेता भवति विशाखातः पूर्वं कृत्तिकायाश्चतुर्दशत्वादेतच्च कार्त्तिकवैशाखमासावधिकृत्योक्त मेवमुत्तरसूत्रद्वयमपि भावनीयम्।।१५५।।

अधुनैकादशद्वादशद्वारे विवरीषुरिदमाह-

(१५६) वासाणं भंते! पढमं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गो०! चत्तारि णक्खत्ता णेंति, तं०–उत्तरासाढा अभिई सवणो धणिट्ठा, उत्तरासाढा चउद्दस अहोरत्ते णेइ, अभिई सत्त अहोरत्ते णेइ, सवणो अट्ठऽहोरत्ते णेइ, धणिट्ठा एगं अहोरत्तं णेइ, तंसि च णं

मासंसि चउरंगुलपोरसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स [1]चरिमदिवसे दो पदा चत्तारि अ अंगुला पोरिसी भवइ।।१५६।।

'वासाण' मित्यादि वर्षाणां-वर्षाकालस्य चतुर्मासकपरिमाणस्य **प्रथमं मासं** श्रावण लक्षणं **कति नक्षत्राणि भदन्त!** स्वयमस्तंगतेनाहोरात्रपरिसामपकतया **नयन्ति**-गमयन्ति? स्वाम्याह-**गौतम! 'चत्तारी'** त्यादि **चत्वारि नक्षत्राणि** स्वयमस्तंगतेनाहोरात्र परिसमापकतया क्रमेण **नयन्ति तद्यथा-उत्तराषाढा अभिजित् श्रवणो धनिष्ठा** च तत्रोत्तराषाढा **प्रथमांश्चतुर्दशाहोरात्रान् स्वयमस्तंगमनेनाहोरात्रपरिसमापकतया नयति तदनन्तरम-भिजिन्नक्षत्रं सप्ताहोरात्रान्नयति** ततः परं **श्रवणनक्षत्रमष्टौ अहोरात्रान् नयत्येवं** च सर्वसकङ्कलनया श्रवणमासस्यैकोनत्रिंशदहोरात्रा गतास्ततः परं श्रवणमासस्य सम्बन्धिनं चरम**मेकमहोरात्रं धनिष्ठा नक्षत्रं** स्वयमस्तंगमनेनाहोरात्रपरिसमापकतया **नयत्येवं** चत्वारि नक्षत्राणि श्रावणं मासं नयन्तीति**'तंसि च ण'** मित्यादि **तस्मिंश्च** श्रावणे **मासे चतुरङ्गुलपौरुष्या** चतुरङ्गुलाधिकपौरुष्या **छायया सूर्योऽनु** प्रतिदिवसं **परावर्त्तते** किमुक्तं भवति? श्रावणमासे प्रथमादहोरात्रादारभ्य प्रतिदिनमन्यान्यमण्डलसङ्क्रान्त्या तथा कथञ्चनापि परावर्त्तते **यथा तस्य** श्रावण**मासस्य पर्यन्ते चतुरङ्गुलाधिका द्विपदा पौरुषी भवति।।** तदेवाह-

'तस्स ण' मित्यादि तस्य श्रावणमासस्य **चरमे दिवसे द्वे पदे चत्वार्यङ्गुलानि पौरुषी भवति।।१५६।।**

(१५७) वासाणं भंते! दोच्चं मासं कइ णक्खत्ता णेंति?, गो०! चत्तारि-धनिट्ठा सयभिसया पुव्वाभद्दवया उत्तराभद्दवया, धणिट्ठा णं चउद्दस अहोरत्ते णेइ, सयभिसया सत्त अहोरत्ते णेइ, पुव्वाभद्दवया अट्ठ अहोरत्ते णेइ, उत्तराभद्दवया एगं, तंसि च णं

१. चरिम दिवसे -V।।

मासंसि अट्ठंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ, तस्स मासस्स चरिमे दिवसे दो पया अट्ठ य अंगुला पोरिसी भवइ।।१५७।।

(१५८) वासाणं भंते! तइयं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गो०! तिण्णि णक्खत्ता णेंति-तंजहा-उत्तराभद्दवया रेवई अस्सिणी, उत्तराभद्दवया चउद्दस राइंदिएहिं णेइ। रेवई पण्णरस। अस्सिणी एगं, तंसिं च णं मासंसि दुवालसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स चरमे दिवसे लेहट्ठाइं तिण्णि पयाइं पोरिसी भवइ।।१५८।।

(१५९) वासाणं भंते! चउत्थं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गो०! तिण्णि-अस्सिणी भरणी कत्तिआ, अस्सिणी चउद्दस, भरणी पन्नरस, कत्तिआ एगं, तंसिं च णं मासंसि सोलसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स चरमे दिवसे तिण्णि पयाइं चत्तारि अंगुलाइं पोरिसी भवइ।।१५९।।

(१६०) हेमंताणं भंते! पढमं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गो०! तिण्णि-कत्तिआ रोहिणी मिगसिरं, कत्तिआ चउद्दस, रोहिणी पण्णरस, मिगसिरं एगं अहोरत्तं णेइ, तंसि च णं मासंसि वीसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि तिण्णि पयाइं अट्ठ य अंगुलाइं पोरिसी भवइ।।१६०।।

(१६१) हेमंताणं भंते! दोच्चं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गोअमा! चत्तारि णक्खत्ता णेंति, तंजहा-मिअसिरं अद्दा पुणव्वसू पुस्सो मिअसिरं चउद्दस राइंदिआइं णेइ, अद्दा अट्ठ णेइ, पुणव्वसू सत्त राइंदिआइं, पुस्सो एगं राइंदिअं णेइ, तया णं चउव्वीसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे

दिवसे तंसि च णं दिवसंसि लेहट्ठाइं चत्तारि पयाइं पोरिसी भवइ।।१६१।।

(१६२) हेमंताणं भंते! तच्चं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गोअमा! तिण्णि–पुस्सो असिलेसा महा, पुस्सो चोद्दस राइंदिआइं णेइ, असिलेसा पण्णरस, महा एक्कं, तया णं वीसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि तिण्णि पयाइं अट्ठगुलाइं पोरिसी भवइ।।१६२।।

(१६३) हेमंताणं भंते! चउत्थं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गोअमा! तिण्णि ण०, तं०–महा पुव्वाफग्गुणी उत्तरफग्गुणी, महा चउद्दस राइंदिआइं णेइ, पुव्वाफग्गुणी पणरस राइंदिआइं णेइ, उत्तराफग्गुणी एगं राइंदिअं णेइ, तया णं सोलसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि तिण्णि पयाइं चत्तारि अंगुलाइं पोरिसी भवइ।।१६३।।

(१६४) गिम्हाणं भंते! पढमं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गोअमा! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तं जहा–उत्तराफग्गुणी हत्थो चित्ता। उत्तराफग्गुणी चउद्दस राइंदिआइं णेइ, हत्थो पण्णरस राइंदिआहं णेइ, चित्ता एगं राइंदिअं णेइ, तया णं दुवालसंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि लेहट्ठाइ तिण्णि पयाइं पोरिसी भवइ।।१६४।।

(१६५) गिम्हाणं भंते! दोच्चं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गोअमा! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तं०–चित्ता साई विसाहा, चित्ता चउद्दस राइंदिआइं णेइ, साई पण्णरस राइंदिआहं णेइ, विसाहा एगं राइंदिअं णेइ, तया णं अट्ठंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि दो पयाइं अट्ठंगुलाइं पोरिसी भवइ।।१६५।।

(१६६) गिम्हाणं भंते! तच्चं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गो०! चत्तारि णक्खत्ता णेंति, तंजहा–विसाहाऽणुराहा जेट्ठा मूलो, विसाहा चउद्दस राइंदिआइं णेइ, अणुराहा अट्ठ राइंदिआइं णेइ जेट्ठा सत्त राइंदिआइं णेइ, मूलो एक्कं राइंदिअं णेइ, तया णं चउरंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि दो पाइं चत्तारि अ अंगुलाइं पोरिसी भवइ।।१६६।।

(१६७) गिम्हाणं भंते! चउत्थं मासं कति णक्खत्ता णेंति?, गोअमा! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तं०–मूलो पुव्वासाढा उत्तरासाढा, मूलो चउद्दस राइंदिआइं णेइ, पुव्वासाढा पण्णरस राइंदिआइं णेइ, उत्तरासाढा एगं राइंदिअं णेइ, तया णं वट्टाए समचउरंससंठाणसंठिआए णग्गोहपरिमण्डलाए सकायमणुरंगिआए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ, तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च णं दिवसंसि लेहट्ठाइं दो पयाइं पोरिसी भवइ। एतेसि णं पुव्ववण्णिआणं पयाणं इमा संगहणी, तं०–

जोगो देवयतारग्गगोत्तसंठाण चन्दरविजोगो।
कुलपुण्णिमअवमंसा णेआ छाया य बोद्धव्वा।।१।।१६७।।

'वासाण' मित्यादि **वर्षाणां** वर्षाकालस्य चतुर्मासप्रमाणस्य **द्वितीयं** भाद्रपदलक्षणं **मासं कति नक्षत्राणि नयन्ति**? अस्य वाक्यस्य भावार्थः प्राग्वद्भावनीयः, स्वाम्याह-**गौतम! चत्वारि नक्षत्राणि नयन्ति** तद्यथा **धनिष्ठा शतभिषक् पूर्वभद्रपदोत्तरभद्रपदा** चेति, तत्र धनिष्ठा तस्मिन् भाद्रपदमासे प्रथमांश्चतुर्दशाहोरात्रान् स्वयमस्तंगमनेनाहोरात्रपरिसमापकतया नयति तदनन्तरं च शतभिषक्नक्षत्रं सप्ताहोरात्रास्ततः परमष्टावहोरात्रान् पूर्वभद्रपदा तदनन्तरमेकमहोरात्रमुत्तरभद्रपदा एवमेनं भाद्रपदमासं चत्वारि नक्षत्राणि नयन्ति **'तंसि च ण'** मित्यादि, **तस्मिंश्च** णमिति वाक्यालङ्कारे **मासे** भाद्रपदेऽष्टाङ्गुलपौरूष्या अष्टाङ्गुलाधिक पौरुष्या **छायया सूर्योऽनु** प्रति-दिवसं **परावर्त्ततेऽत्राप्ययं** भावार्थः, भाद्रपदेमासे

प्रथमादहोरात्रादारभ्य प्रतिदिवसमन्योन्यमण्डलसङ्क्रान्त्या तथा कथमपि परावर्त्तते यथा तस्य भाद्रपदमासस्यान्ते -ऽष्टाङ्गुलिका पौरुषी भवति एतदेवाह-**'तस्स ण'** मित्यादि सुगममेवं शेषमासगतान्यपि सूत्राणि भावनीयानि नवरं **'लेहट्ठाइं तिन्नि पयाइं'** त्ति रेखा पादपर्यन्तवर्त्तिनी सीमा तत्स्थानि त्रीणि पदानि पौरुषी भवति किमुक्तं भवति परिपूर्णानि त्रीणि पदानि पौरुषी भवत्येषा चतुरङ्गुला प्रतिमासं वृद्धिस्तावदवसेया यावत् पौषो मासस्तदनन्तरं प्रतिमासं चतुरङ्गुलहानिर्वक्तव्या सा च तावद्यावदाषाढो मासस्तेनाषाढमासपर्यन्ते द्विपदा पौरुषी भवतीदं च पौरुषीपरिमाणं व्यवहारत उक्तं निश्चयतः सार्द्धैस्त्रिंशताहोरात्रैश्चतुरङ्गुला वृद्धिर्हानिर्वा वेदितव्या तथा च निश्चयतः पौरुषीपरिमाणप्रदर्शनार्थमिमा पूर्वाचार्यप्रदर्शिताः करणगाथाः **"पव्वे पन्नरसगुणे तिहिं सहिए पोरिसीए आणयणे। छलसी य सय विभत्ते जं लद्धं तं वियाणाहि।।१।। जइ होइ विसमलद्धं दक्खिणमयणं ठविज्ज नायव्वं। अह हवइ समं लद्धं नायव्वं उत्तरं अयणं।।२।। अयणगए तिहिरासी चउगुणे पव्वपाय भइयव्वं। जं लद्धमंगुलाणि य खयवुड्ढि पोरिसीए उ।।३।। दक्खिणवुड्ढि दुपया अंगुलाणं तु होइ णायव्वा। उत्तरअयणे हाणि कायव्वा चउहिं पायाहिं।।४।। सावणबहुलपडिवया दुपया पुण पोरिसी धुवा होइ। चत्तारि अंगुलाइं मासेणं वड्ढए तत्ता।।५।। इक्कत्तीसमभागा तिहि पुण अंगुल्लस्स चत्तारि। दक्खिण अयणे वुड्ढि जाव उ चत्तारि उ पयाइं।।६।। उत्तरअयणे हाणि चउहिं पयाहिं जाव दो पाया, एवं तु पोरिसीए वुड्ढिखया हुंति नायव्वा।।७।। वुड्ढि वा हाणि वा जावइआ पोरिसीइ दिट्ठाओ। तत्तो दिवसगएणं जं लद्धं तं खु अयण गयं।।८।।"** एतासां क्रमेण व्याख्या-युगमध्ये यस्मिन् पर्वाणि यस्यां तिथौ पौरुषीपरिमाणं ज्ञातुमिष्यते ततः पूर्वं युगादित आरभ्य यानि पर्वाण्यतिक्रान्तानि तानि ध्रियन्ते धृत्वा च पञ्चदशभिर्गुण्यन्ते गुणयित्वा विवक्षितायास्तिथेर्याः प्रागतिक्रान्तास्तिथयस्ताभिः सहितानि क्रियन्ते कृत्वा च षडशीत्यधिकेन शतेन तेषां भागो

ह्रियते इहैकस्मिन्नयने त्र्यशीत्यधिकमण्डलशतपरिमाणं चन्द्रनिष्पादितानां तिथीनां षडशीत्यधिकं शतं भवति ततस्तेन भागहरणं भागे हृते यल्लब्धं तद्विजानीहि सम्यग्वधारयेत्यर्थस्तत्र यदि लब्धं विषमं भवति यथैककस्त्रिकः पञ्चकः सप्तको नवको वा तदा तत्पर्यन्तवर्त्तिदक्षिणमयनं ज्ञातव्यमथ भवति लब्धं समं तद्यथा-द्विकश्चतुष्कः षट्कोऽष्टको दशको वा तदा तत्पर्यन्तवर्त्ति उत्तरायणमवसेयं तदेवमुक्तो दक्षिणायनोत्तरायणपरिज्ञानोपायः। सम्प्रति षड्शीत्यधिकेन शतेन भागे हृते यच्छेषमवतिष्ठते यदि वा भागसम्भवेन यच्छेषं तिष्ठिति तद्गतविधिमाह–

'अयणगए' इत्यादि, यः पूर्वं भागे हृते भागासम्भवे वा शेषीभूतेऽयनगतस्थितिराशिर्वर्त्तते स चतुर्भिगुण्यते गुणयित्वा च पूर्वपादेन युगमध्ये यानि सर्वसंख्यया पर्वाणि चतुर्विंशत्यधिकशतसङ्ख्यानि तेषां पादेन-चतुर्थांशेनैकत्रिंशतेत्यर्थस्तथा भागे हृते यल्लब्धं तान्यङ्गुलानि चकारादङ्गुलांशाश्च पौरुष्याः क्षयवृद्ध्या ज्ञातव्यानि दक्षिणायने पदध्रुवराशेरुपरि वृद्धौ ज्ञातव्यानि उत्तरायणे पदध्रुवराशेः क्षये ज्ञातव्यानीत्यर्थः। अथैवंभूतस्य गुणाकारस्य भागहारस्य वा कथमुत्पत्तिरुच्यते यदि षडशीत्यधिकेन तिथिशतेन चतुर्विंशतिरङ्गुलानि क्षये वृद्धौ वा प्राप्यन्ते तत एकस्यां तिथौ का वृद्धिः क्षयो वा? राशित्रयस्थापना १८६-२४-१ अत्रान्त्येन राशिनैकलक्षणेन मध्यमो राशिश्चतुर्विंशतिरूपो गुण्यते जातः स तावानेव एकेन गुणितं तदेव भवतीति वचनात् तत आद्येन राशिना षडशीत्यधिकशतरूपेण भागो ह्रियते तत्रोपरितनराशेः स्तोकत्वाद्भागो न लभ्यते ततश्छेद्यच्छदेकराश्योः षट्केनापवर्त्तना जात उपरितनो राशिश्चतुष्करूपोऽधस्तन एकत्रिंशल्लब्धमेकस्यां तिथौ चत्वार एकत्रिंशद्भागाः क्षये वृद्धौ वेति चतुष्को गुणाकार उक्तः एकत्रिंशद्भागहार इतीह यल्लब्धं तान्यङ्गुलानि क्षये वृद्धौ वा ज्ञातव्यानीत्युक्तं तत्र कस्मिन्नयने कियत्प्रमाणा ध्रुवराशेरुपरि वृद्धौ कस्मिन् वायने किंप्रमाणध्रुवराशेः क्षये

इत्येतन्निरूपणार्थमाह–**'दक्खिण वुड्ढी'** इत्यादि, दक्षिणायने द्विपदात् पदद्वयस्योपर्यङ्गुलानां वृद्धिर्ज्ञातव्या उत्तरायणे चतुर्भ्यः पादेभ्यः सकाशादङ्गुलानां हानिस्तत्र युगमध्ये प्रथमे संवत्सरे दक्षिणायने यतो दिवसादारभ्य वृद्धिस्तन्निरूपयति–**'सावणे'** त्यादिगाथाद्वयं युगस्य प्रथमे संवत्सरे श्रावणे मासि बहुलपक्षे प्रतिपदि तिथौ पौरुषी द्विपदा पदद्वयप्रमाणा ध्रुवा भवति ततस्तस्याः प्रतिपद आरभ्य प्रतितिथिक्रमेण तावद्वर्द्धते यावन्मासेन-सूर्यमासेन सार्द्धं त्रिंशदहोरात्रप्रमाणेन चन्द्रमासापेक्षयैकत्रिंशत्तिथिभिरित्यर्थश्चत्वार्यङ्गुलानि वर्द्धन्ते कथमेतदवसीयते यथा मासेन सूर्यमासेन सार्द्धत्रिंशदहोरात्रप्रमाणेनैकत्रिंशत्तिथ्यात्मकेनेत्यत आह **'एक्कत्तीसे'** यत एकस्यां तिथौ चत्वार एकत्रिंशद्भागा वर्द्धन्ते एतच्च प्रागेव भावितं परिपूर्णे तु दक्षिणायने वृद्धिः परिपूर्णानि चत्वारि पदानि ततो मासेन-सूर्यमासेन सार्द्धत्रिंशदहोरात्रप्रमाणेनैकत्रिंशत्तिथ्यात्मकेनेत्युक्तं तदेवमुक्ता वृद्धिः सम्प्रति हानिमाह-**'उत्तरे'** त्यादि, युगस्य प्रथमे संवत्सरे माघमासे बहुलपक्षे सप्तम्या आरभ्य चतुर्भ्यः पादेभ्यः सकाशात्प्रतितिथि एकत्रिंशद्भागचतुष्टयहानिस्तावदवसेया यावदुत्तरायणपर्यन्ते द्वौ पादौ पौरुषीति एष प्रथमसंवत्सरगतो विधिः। द्वितीये संवत्सरे श्रावणे मासि बहुलपक्षे त्रयोदशीमादौ कृत्वा वृद्धिर्माघमासे शुक्लपक्षे चतुर्थीमादि कृत्वा क्षयस्तृतीये संवत्सरे श्रावणे मासि शुक्लेपक्षे दशमी वृद्धेरादि माघमासे बहुलपक्षे प्रतिपद् क्षयस्यादि, चतुर्थे संवत्सरे श्रावणमासे बहुलपक्षे सप्तमी वृद्धेरादिः, माघमासे बहुलपक्षे त्रयोदशी क्षयस्यादिः पञ्चमे संवत्सरे श्रावणे मासे शुक्लपक्षे चतुर्थी वृद्धेरादिः, माघमासे शुक्लपक्षे दशमी क्षयस्यादिरेतच्च करणगाथानुपात्तमपि पूर्वाचार्यप्रदर्शितव्याख्यानादवसितं।। सम्प्रत्युपसंहारमाह-**'एवं चेव'** इत्यादि, एवमुक्तेन प्रकारेण पौरुष्यां पौरुषीविषये वृद्धिक्षयौ यथाक्रमं दक्षिणायनेषूत्तरायणेषु वेदितव्यौ। तदेवमक्षरार्थमधिकृत्य व्याख्याताः करणगाथाः सम्प्रत्यस्य करणस्य भावना क्रियते। कोऽपि पृच्छति युगे आदित आरभ्य पञ्चाशीतितमे पर्वणि पञ्चम्यां तिथौ कति पदा पौरुषी भवति?

तत्र चतुरशीतिर्ध्रियते तस्याश्चाधस्तात्पञ्चम्यां तिथौ पृष्टमिति पञ्च चतुरशीतिश्च पञ्चदशभिर्गुण्यंते जातानि द्वादशशतानि षष्ट्यधिकानि १२६० एतेषु मध्येऽधस्तना: पञ्च प्रक्षिप्यन्ते जातनि द्वादश शतानि पञ्चषष्ट्यधिकानि १२६५ तेषां षडशीत्यधिकेन शतेन भागो ह्रियते लब्धा: षट्, आगतं षडयनान्यतिक्रान्तानि सप्तममयनं वर्त्तते तद्गतं शेषमेकोनपञ्चाशदधिकं शतं तिष्ठति १४९ ततश्चतुर्भिर्गुण्यते जातानि पञ्चशतानि षण्णवत्यधिकानि तेषामेकत्रिंशता भागहरणे लब्धा एकोनविंशति: शेषास्तिष्ठन्ति सप्त तत्र द्वादशाङ्गुलानि पाद इत्येकोनविंशतेर्द्वादशभि: पदं लब्धं शेषाणि तिष्ठन्ति सप्ताङ्गुलानि षष्टं चायनमुत्तरायणं तद्गतं सप्तमं तु दक्षिणायनं वर्त्तते तत: पदमेकं सप्ताङ्गुलानि पदद्वयप्रमाणे ध्रुवराशौ प्रक्षिप्यते जातानि त्रीणि पदानि सप्ताङ्गुलानि ये च सप्तैकत्रिंशद्भागा: शेषीभूता वर्त्तन्ते तान् यवान् कुर्म्मस्तत्राष्टौ यवा अङ्गुले इति ते सप्ताष्टभिर्गुण्यन्ते जाता: षट्पञ्चाशत् ५६ तस्या एकत्रिंशता भागे हृते लब्ध एको यव: शेषास्तिष्ठन्ति यवस्य पञ्चविंशतिरेकत्रिंशद्भागा: आगतं पञ्चाशीतितमे पर्वणि पञ्चम्यां त्रीणि पदानि सप्ताङ्गुलानि एको यव एकस्य च यवस्य पञ्चविंशतिरेकत्रिंशद्भागा: इत्येतावती पौरुषी भवति। तथाऽपर कोऽपि पृच्छति-सप्तनवतितमे पर्वणि पञ्चम्यां तिथौ कति पादा पौरुषी ? तत्र षण्णवतिर्ध्रियते तस्याश्चाधस्तात्पञ्च षण्णवतिश्च पञ्चदशभिर्गुण्यन्ते जातानि चतुर्दशतानि चत्वारिंशदधिकानि १४४० तेषां मध्येऽधस्तना: पञ्च प्रक्षिप्यन्ते जातानि चतुर्दशशतानि पञ्चचत्वारिंशदधिकानि १४४५ तेषां षडशीत्यधिकेन शतेन भागो ह्रियते लब्धानि सप्तायनानि शेषं तिष्ठति त्रिचत्वारिंशदधिक शतं १४३ ततश्चतुर्भि- र्गुण्यते जातानि पञ्चशतानि द्विसप्तत्यधिकानि ५७२ तेषामेकत्रिंशता भागो ह्रियते लब्धान्यष्टादशाङ्गुलानि १८ तेषां मध्ये द्वादशभिरङ्गुलै पदमिति लब्धमेकं पदं षट् अङ्गुलानि उपरि चांशा उद्धरन्ति चतुर्दश १४ ते यवानयनार्थमष्टभिर्गुण्यन्ते जातं द्वादशोत्तर शतं ११२ तस्यैकत्रिंशता भागे हृते लब्धास्त्रयो यवा: शेषास्तिष्ठन्ति यवस्यैकोनविंशतिरेकत्रिंशद्भागा: सप्त

चायनान्यतिक्रान्तान्यष्टमं वर्त्ततेऽष्टमं चायनमुत्तरायणमुत्तरायणे च पदचतुष्टयरूपाद् ध्रुवराशे-र्हानिवक्तव्या तत एकं पदं सप्ताङ्गुलानि त्रयो यवा एकस्य च यवस्यैकोनविंशतिरेकत्रिंशद्भागा इति पदचतुष्टयात्पात्यते शेषं तिष्ठति द्वे पदे पञ्चाङ्गुलानि चत्वारो यवा एकस्य च यवस्य द्वादश एकत्रिंशद्भागाः एतावती युगे आदित आरभ्य सप्तनवतितमे पर्वणि पञ्चम्यां तिथौ पौरूषीति। एवं सर्वत्र भावनीयं।। सम्प्रति पौरुषीपरिमाणतोऽयनगतपरिमाणज्ञापनार्थमियं करणगाथा **'वुड्ढी वे'** त्यादि पौरुष्यां यावती वृद्धिर्हानि वा दृष्टा ततः सकाशाद् दिवसगतेन प्रवर्त्तमानेन वा त्रैराशिककर्मानुसारतो यल्लब्धं तदयनगतमयनस्य तावत्प्रमाणं गतं वेदितव्यमेष करणगाथाक्षरार्थो भावना त्वियं तत्र दक्षिणायने पदद्वयस्योपरि चत्वार्यङ्गुलानि वृद्धौ दृष्टानि ततः कोऽपि पृच्छति-कियद्गतं दक्षिणायनस्य? अत्र त्रैराशिककर्मावतारो यदि चतुर्भिरङ्गुलस्यैकत्रिंशद्भागैरेका तिथिर्लभ्यते ततश्चतुर्भिरङ्गुलैः कति तिथिर्लभामहे? राशित्रय स्थापना ४/१/४ अत्रान्त्यो राशिरङ्गुलरूप एकत्रिंशद्भागकरणार्थमेकत्रिंशता गुण्यते जातं चतुर्विंशत्यधिकं शतं १२४ तेन मध्यो राशिर्गुण्यते जातं तदेव चतुर्विंशत्यधिकं शतं १२४ एकेन गुणितं तदेव भवतीति वचनात्तस्य चतुष्करूपेणादि राशिना भागो ह्रियते लब्धा एकत्रिंशत्तिथयः, आगतं-दक्षिणायने एकत्रिंशत्तमायां तिथौ चतुरङ्गुला पौरुष्या वृद्धिरिति। तथोत्तरायणे पदचतुष्टयादङ्गुलाष्टकं हीनं पौरुष्यामुपलभ्य कोऽपि पृच्छति किं गतमुत्तरायणस्यात्रापि त्रैराशिकं यदि चतुर्भिरङ्गुलस्यै-कत्रिंशद्भागैरेका तिथिर्लभ्यते ततोऽष्टभिरङ्गुलैर्हीनैः कति तिथयो लभ्यन्ते राशित्रयस्थापना ४/१/८ अत्रान्त्योराशिरेकत्रिंशद्भागकरणार्थमेकत्रिंशता गुण्यते जाते द्वे शतेऽष्टाचत्वारिंशदधिके २४८ ताभ्यां मध्यो राशिरेकरूपो गुण्यते जाते ते एव द्वे शतेऽष्टाचत्वारिंशदधिके २४८ तयोराद्येन राशिना चतुष्करूपेण सह भागहरणं लब्धा द्वाषष्टिः, आगतमुत्तरायणी द्वाषष्टितमायां तिथावष्टाङ्गुलानि पौरुष्यां हीनानीति। **'तस्सिं च णं**

मांससि वट्टाए' इत्यादि तस्मिन्नाषाढे मासे प्रकाश्यस्य वस्तुनो वृत्तस्य वृत्तया **समचतुरस्रसंस्थानसंस्थितस्य** समचतुरस्रसंस्थानं स्थिततया **न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानस्य** न्यग्रोधपरिमण्डलस्योपलक्षणमेतत् शेषसंस्थानसंस्थितस्य प्रकाश्यवस्तुनः शेषसंस्थान संस्थितया आषाढे हि मासे प्रायः सर्वस्यापि प्रकाश्यवस्तुनो दिवसस्य चतुर्भागेऽतिक्रान्ते शेषे वा **स्वप्रमाणा** छाया भवति, निश्चयतः पुनराषाढमासस्य चरमे दिवसे तत्रापि सर्वाभ्यन्तरे मण्डले वर्त्तमाने सूर्ये ततो यत्प्रकाश्यं वस्तु यत्संस्थानं भवति तस्य छायापि तथा संस्थानोपजायते तत उक्तं **"वृत्तस्य वृत्तया"** इत्यादि, एतदेवाह **स्वकायमनुरङ्गिन्या** स्वस्य-स्वकीयस्य छायानिबन्धनवस्तुनः काय-शरीरं स्वकायस्तमनुरज्यतेऽनुकारं विदधातीत्येवं शीलानुरङ्गिनी **"द्विषद्रहेत्यादिनाधि नञप्रत्ययः"** तया स्वकायमनुरङ्गिण्या **छायया सूर्योऽनु-**प्रतिदिवसं **परावर्त्तते** एतदुक्तं भवति-आषाढस्य प्रथमादहोरात्रादारभ्य प्रतिदिवसमन्यान्य मण्डलसङ्क्रान्त्या तथाकथञ्चनापि सूर्यः परावर्त्तते तथा सर्वस्यापि प्रकाश्यस्य वस्तुनो दिवसस्य च चतुर्भागेऽतिक्रान्ते शेषे वा स्वानुकारा-स्वप्रमाणा छाया भवतीति शेषं सुगमम् **'एतेसि ण'** मित्यादि एतेषां पूर्ववर्णितानां पदानामियं सङ्ग्रहिणीगाथेति शेषस्तद्यथा **'जोगो देवयतारग्ग गोत्त संठाण चंदरविजोगा। कुल पुण्णिममावस्सा णेता छाया च बोधव्वा'**।। भावितार्था।।१६९।।

इदानीं पुन र्ज्योतिष्कवक्तव्यतामभिधित्सुस्तद्वक्तव्यतासङ्ग्राहकं गाथायुगलमाह-

(१६८) हिट्ठिं ससिपरिवारो मंदरऽबाधा तहेव लोगंते।
धरणितलाओ अबाधा अंतो बाहिं च उड्ढमुहे।।१।।
संठाणं च पमाणं वहंति [१]सीहगई इड्ढिमंता य।
तारंतरऽग्गमहिसी तुडिअ पहु ठिई अ अप्पबहू।।२।।

---

१. सिग्धगइ - ख स।

अत्थि णं भंते! चंदिमसूरिआणं हिट्ठिंपि तारारूवा अणुंपि तुल्लावि [१]समेवि तारारूवा अणुंपि तुल्लावि उप्पिंपि तारारूवा अणुंपि तुल्लावि?, हंता! गो० ! तं चेव उच्चारेअव्वं।।१६८।।

'हिट्ठिं गाहा' 'संठाण गाहा' अनयोरक्षरगमनिका **'हिट्ठि'** त्ति चन्द्रसूर्ययोरधस्तात्ताराणां सद्भावः १ **'ससि परिवारो'** त्ति चन्द्र परिवारः ३ **'मंदरबाह'** त्ति मेरोः कियत्यऽबाधया ज्योतिश्चक्रं चरति ३, **'तहेव लोगं'** त्ति तथैव लोकान्तात्कियदबाधया ज्योतिश्चक्रं चरति ४, **'धरणियलाओ अबाह'** त्ति समभूतलात्कियतीमबाधां मुक्त्वा ज्योतिश्चक्रं चरति ५, **'अंतो बाहिं च उड्ढमहे'** त्ति अन्त र्बहिरूर्ध्वमधश्च वारापेक्षया ६।।१।। **'संठाण'** त्ति संस्थानं ज्योतिष्कविमानानां ७, **'पमाणं** त्ति प्रमाणमेतेषामेव ८, **'वह ति'** चन्द्रादिविमानं कतिदेवसहस्राणि परिवहन्ति ९, **'सीहगइ'** त्ति चन्द्रादीनां मध्ये कः शीघ्रगतिः १०, **'इड्ढिमंता य'** त्ति क एषामेव ऋद्धिमान् ११, **तारंतरं** ति तारकाणामन्योन्यमन्तरं १२, **'अग्गमहिसी य'** त्ति चन्द्रादीनामग्रमहिष्यः १३, **'तुडिय पभु'** त्ति त्रुटिकं देवीवृन्दं तेन सार्द्धं सुधर्मायां सभायां भोगान् भोक्तुं प्रभुः १४, **'ठिति'** त्ति स्थितिरायुश्चन्द्रादीनामेव १५, **'अप्पबहू'** त्ति अल्पबहुत्वममीषामेव१६।।२।। इति द्वारगाथा द्वयार्थः।। अथैतद्गाथोक्तद्वाराणां व्यासार्थं सूत्रकृद्दर्शयति –

'अत्थि णं भंते' इत्यादि, **अस्ति भदन्त! चन्द्रसूर्याणां** सामान्यतो बहुत्वाद्बहुवचनं देवानां **'हिट्ठिं पि'** त्ति क्षेत्रापेक्षयाऽधस्तना अपि **तारारूपास्ता**रारूपविमानाधिष्ठातारो देवा द्युतिविभवलेश्यादिकमपेक्ष्य किञ्चि**दणवो**ऽपि लघवोऽपि हीना अपीत्यर्थः केचित्त्वल्पा अपि तथा **सम**मपि चन्द्रविमानैः सूर्यविमानैश्च क्षेत्रापेक्षया **समश्रेण्या**पि व्यवस्थितास्तारा-रूपादेवाश्चन्द्रसूर्याणां देवानां द्युति-विभवादिकमपेक्ष्य केचि**दणवो**ऽपि के**चित्तुल्या** अपि तथा

---

१. मु. अकखित्रपब। समंपि - V। "जीवा. ३। १०० सू. प्रज्ञप्तावपि (१८। २). समंपि पाठो लभ्यते।।

चन्द्रविमानानां सूर्यविमानानां **चोपरि** अपि ये व्यवस्थितास्तारारूपा देवास्तेऽपि चन्द्रसूर्याणां देवानां द्युतिविभवादिकमपेक्ष्य **केचिदणवोऽपि केचित्तुल्या** अपि? भगवानाह-**'हन्ता गोयमा तं चेव उच्चारेयव्वं'** ति तदेव प्रश्नसूत्रमुच्चरितव्यं यथैव प्रश्नसूत्रं भणितं तथैवोत्तरसूत्रमपि वाच्यमित्यर्थः।।१६८।।

एवमुक्ते भूयः प्रश्नयति-

(१६९) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-अत्थि णं० [1]जहा जहा णं तेसिं देवाणं तवनियमबंभचेरा ऊसिआइं भवंति तहा तहा णं तेसि णं देवाणं एवं पण्णायए तंजहा-अणुत्ते वा तुल्लत्ते वा, जहा जहा णं तेसिं देवाणं तवनियमबंभचेराणि णो ऊसिआइ भवंति तहा तहा णं तेसिं देवाणं णो एवं पण्णायए, तं० अणुत्ते वा तुल्लत्ते वा।।१६९।।

'से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ अत्थिणं चंदमसूरियाण' मित्यादि? भगवानाह-**गौतम! जहा जहा ण'** मित्यादि यथा यथा णमिति वाक्यालङ्कारे **तेषां देवानां** तारारूपविमानधिष्ठातृणां प्राग्भवे **तपोनियमब्रह्मचर्याण्युच्छितान्युत्कटानि भवन्ति** तत्र तपोनमस्कारसहितादि नियमत्वहिंसादि ब्रह्मचर्य बस्तिनिरोधादि उत्सवानीत्युपलक्षणं तेन यथा यथाऽनुत्सृतानीत्यपि द्रष्टव्यमन्यथाऽणुत्वायोगात्, **तथा तथा तेषां देवानां** तस्मिंस्तारारूपविमानाधिष्ठातृ (देव) भवे **एवं प्रज्ञायते तद्यथा-अणुत्वं वा तुल्यत्वं वेति यथा यथा तेषां देवानां** तारारूपविमानाधिष्ठातृणां प्राग्भवे **तपोनियमब्रह्मचर्याणि नोच्छ्रितानि भवन्ति तथा तथा तेषां देवानां नैवं प्रज्ञायते तद्यथा-अणुत्वं वा तुल्यत्वं वेति।** किमुक्तं भवति यैः प्राग्भवे तपोनियमब्रह्मचर्याणि मन्दानि कृतानि ते तारारूपविमानाधिष्ठातृदेवभवमनुप्राप्ताश्चन्द्रसूर्येभ्यो द्युतिविभवादिकमपेक्ष्य हीना भवन्ति

---

१. जह - अब। एवमग्रेऽपि।।

यैस्तु भवान्तरे तपोनियमब्रह्मचर्याण्यत्युत्कटान्यासेवितानि ते तारारूपविमानाधिष्ठातृरूपं देवत्वमनुप्राप्ता द्युतिविभवादिकमपेक्ष्य चन्द्रसूर्यदेवैः सह समाना भवन्ति न चैतदनुपपन्नं दृश्यते हि मनुष्यलोकेऽपि केचिज्जन्मान्तरोपचिततथाविधपुण्यप्राग्भारा राजत्वमप्राप्ता अपि राज्ञा सह तुल्यद्युतिविभवा इति।। १६९।।

अथ परिवारद्वारमाह–

(१७०) एगमेगस्स णं भंते! चंदस्स केवइआ महग्गहा परिवारो केवइआ णक्खत्ता परिवारो केवइया तारागणकोडाकोडीओ पण्णत्ताओ?, गो० अट्ठासीइ महग्गहा परिवारो अट्ठावीसं णक्खत्ता परिवारो छावट्ठिसहस्साइं णव सया पण्णत्तरा तारागणकोडाकोडीओ पण्णत्ता ।।१७०।।

'एणमेगस्स णं भंते' इत्यादि, एकैकस्य भदन्त! **चन्द्रस्य कियन्तो महाग्रहा** अङ्गारकादयः **परिवारः कियन्ति नक्षत्राणि परिवारः कियन्त्यस्तारागणकोटिकोट्यः परिवारभूताः प्रज्ञप्ताः?** स्वाम्याह-**गौतम! अष्टाशीतिर्महाग्रहाः परिवारोऽष्टाविंशति र्नक्षत्राणि परिवारः षट्षष्टिः सहस्राणि नवशतानि पञ्चसप्ततानि पञ्चसप्तत्यधिकानि तारागणकोटिकोटीनां** कोटीकोटीति कोट्या एव संज्ञा, ततस्तारागणकोटीनामिति द्रष्टव्यम्।।१७०।।

अथ तृतीयद्वारमाविर्भावयति –

(१७१) मंदरस्स णं भंते! पव्वयस्स केवइयं अबाहाए जोइसं चारं चरइ?, गो० इक्कारसहिं इक्कवीसेहिं जोअणसएहिं अबाहाए जोइसं चारं चरइ।।१७१।।

'मंदरस्स ण' मित्यादि, मन्दरस्य **भदन्त! पर्वतस्य** जम्बूद्वीपगतस्य सकलतिर्यग्लोकमध्यवर्त्तिनः **कियत्क्षेत्रमबाधया** सर्वतः कृत्वा **ज्योतिषं** ज्योतिश्चक्रं **चारं**

चरति मण्डलगत्या परिभ्रमति? स्वाम्याह-**गौतम! एकादशयोजनशतानि एकविंशान्येकविंशत्यधिकान्यबाधया ज्योतिषं चारं चरति** किमुक्तं भवति? मेरोः सर्वत्र एकादशयोजनशतान्येकविंशत्यधिकानि मुक्त्वा तदनन्तरं चक्रवालतया ज्योतिश्चक्रं चारं चरति।।१७१।।

सम्प्रति सूर्यद्वारमाह-

(१७२) लोगंताओ णं भंते! केवइआए अबाहाए जोइसे पण्णत्ते?, गो० एक्कारस एक्कारसेहिं जोअणसएहिं अबाहाए जोइसे पण्णत्ते।।१७२।।

'लोगंताओ णं भंते' इत्यादि, **लोकान्तादर्वाग्** णमिति वाक्यालङ्कारे **भदन्त! कियत्क्षेत्रमबाधया** कृत्वाऽपान्तरालं कृत्वा **ज्योतिषं प्रज्ञप्तं**? स्वामयाह–**गौतम! एकादश योजनशतान्येकादशोत्तराण्यबाधया** कृत्वा **ज्योतिषं प्रज्ञप्तम्।।१७२।।**

अथ पञ्चमद्वारमभिधत्ते –

(१७३) धरणितलाओ णं भंते!][1]**केवतियं अबाहाए हेट्ठिले तारारूवे चारं चरइ? केवतियं अबाहाए सूरविमाणे चारं चरइ? केवतियं अबाहाए चंदविमाणे चारं चरइ? केवतियं अबाहाए उवरिल्ले तारारूवे चारं चरइ? गो०! सत्ता हिं णउएहिं जोअणसएहिं जोइसे चारं चरइ, एवं सूरविमाणे अट्ठहिं सएहिं, चंदविमाणे अट्ठहिं असीएहिं, उवरिल्ले तारारूवे नवहिं जोअणसएहिं चारं चरइ।।१७३।।**

'धरणिललाओ णं भंते' इत्यादि, इह संक्षिप्तत्वादनुक्तमपि प्रश्नसूत्रं व्याख्यायते **धरणितलात्समभूतलाद्भन्त! कियत्याबाधया ज्योतिषं चारं चरति?** स्वाम्याह-**गौतम!**

१. "आदर्शेषु कोष्ठकवर्ती पाठो नोपलभ्यते। शान्तिचन्द्रीय वृतौ 'धरणि तलाओ णं भंते! उड्ढं उप्पइत्ता केवइयाए अबाहाए हेट्ठिल्ले जोइसे चारं चरइ' एष प्रश्नांशः समुल्लिखितोऽस्ति, शेष प्रश्ना नैव निर्दिष्टाः सन्ति। अस्माभिरसौ पाठो जीवाजीवाभि० ३। १००३ सूत्रा दुद्धृङ्कितोऽस्ति।। "इति V पृ ५८१ टि. २।।

'सत्तहिं नउएहि' मित्यादि **सप्तभिर्योजनैर्नवत्यधिकैर्ज्योतिषं चारं चरति,** एतदुक्तं भवति समभूतलान्नवत्याधिकानि सप्तयोजनशतान्यूर्ध्वं गत्वाऽधस्तनं **ताराविमानं** मण्डलगत्या परिभ्रमणं प्रतिपद्यते **'एवं सूरविमाणे'** त्ति एवमिति समभूतलादेवाष्टाभिर्योजनशतैः **सूर्यविमानं चारं चरति,** समभूतलादेव **चन्द्रविमानमष्टभिर्योजनशतैरशीत्यधिकैश्चारं चरति 'उवरिल्लं' ति सर्वोपरितनं तारारूपं विमानं** समभूतलादेव **नवभिर्योजनशतैश्चारं चरति।।१७३।।**

(१७४) जोइसस्स णं भंते! हेट्ठिल्लाओ तलाओ केवइयं अबाहाए सूरविमाणे चारं चरइ?, गो० दसहिं जोअणेहिं अबाहाए चारं चरइ, एवं चंदविमाणे णउईए जोअणेहिं चारं चरइ, उवरिल्ले तारारूवे दसुत्तरे जोअणसए चारं चरइ, सूरविमाणाओ चंदविमाणे असीईए जोअणेहिं चारं चरइ, सूरविमाणाओ जोअणसए उवरिल्ले तारारूवे चारं चरइ, चंदविमाणाओ [1]वीसाए जोअणेहिं उवरिल्ले तारारूवे चारं चरइ।।१७४।।

'जोइसस्स ण' मित्यादि, **ज्योतिषस्य** 'णमिति वाक्यालङ्कारे **भदन्त! सर्वाधस्तनात्तलात्कियत्क्षेत्रमबाधया कृत्वा सूर्यविमानं चारं चरति?** स्वाम्याह-**गौतम! दशभि र्योजनैरबाधया चारं चरति।** एतदुक्तं भवति, अधस्तनात्ताराविमानाद्दश योजनान्यबाधया कृत्वा सूर्यविमानं चारं चरत्येवं तत एवाधस्तनात्ताराविमानान्नवतिं योजनान्यबाधया कृत्वा चन्द्रविमानं चारं चरति तत एवाधस्तनात्तारारूपाद्दशोत्तरं योजनशतमबाधया कृत्वोपरितनं तारारूपं ज्योतिषं चारं चरति **'सूरविमाणाओ'** इत्यादि, सूर्यविमानादुपर्यशीत्या **योजनैश्चन्द्रविमानं चारं चरति सूर्यविमानादुपरि योजन शते गते उपरितनं तारारूपं** ज्योतिषं **चारं चरति चन्द्रविमानाद्विंशत्या योजनैरुपरितनं तारारूपं**

---

१. वीसं - अब।।

विमानं चारं चरति।।१७४।।

सम्प्रति षष्टं द्वारं प्रतिपादयति–

(१७५) जम्बुद्दीवे णं दीवे अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं कयरे णक्खत्ते सव्वभंतरिल्लं चारं चरइ?, कयरे णक्खत्ते सव्वबाहिरं चारं चरइ?, कयरे सव्वहिट्ठिलं चारं चरइ? कयरे [1]सव्वउवरिल्लं चारं चरइ?, गो०! अभिई णक्खत्ते सव्वब्भंतरं चारं चरइ, मूलो सव्वबाहिरं[2] चारं चरइ, भरणी सव्वहिट्ठिल्लगं साई सव्वुवरिल्लगं चारं चरइ।।१७५।।

'जंबुद्दीवे ण' मित्यादि **जम्बूद्वीपे भदन्त! द्वीपेऽष्टाविंशतेर्नक्षत्राणां** मध्ये **कतरन्नक्षत्रं सर्वाभ्यन्तरं** सर्वेषामन्येषां नक्षत्राणामभ्यन्तरं **चारं** मण्डलगत्या परिभ्रमणं **चरति कतरन्नक्षत्रं सर्वबाह्यं** सर्वेषां नक्षत्राणां बहिर्वर्त्तिनं **चारं चरति** प्रतिपद्यते **कतरन्नक्षत्रं सर्वोपरितनं** सर्वेषां नक्षत्राणामुपरितनं **चारं चरति कतरन्नक्षत्रं सर्वाधस्तनं चारं चरति?** स्वाम्याह-**गौतम! अभिजिन्नक्षत्रं सर्वाभ्यन्तरं चारं चरति मूलः सर्वबाह्यं चारं चरति भरणी सर्वाधस्तनं चारं चरति स्वातिः सर्वोपरितनं चारं चरति।** उक्तं च- 'सव्वब्भिंतरं अभिई मूलो पुण सव्वबाहिरो होइ सव्वोवरिं तु साई भरणी पुण सव्वहेट्ठिमिया।।१।। सप्तमद्वारं विभावयति

(१७६) चंदविमाणे णं भंते! किंसंठिए पण्णत्ते?, गो०! अद्धकविट्ठसंठाणसंठिए सव्वफालिआमए अब्भुग्गयमुसिए एवं [3]सव्वाइं णेअव्वाइं।।१७६।।

'चंद विमाणे ण' मित्यादि, चन्द्रविमानं **भदन्त! किं संस्थितं** किमिव संस्थितं **प्रज्ञप्तं**? स्वाम्याह-**अर्द्धकपित्थसंस्थानसंस्थित**मुत्तानीकृतमर्द्धमात्रं कपित्थं तस्येव यत्संस्थानं तेन संस्थितमर्द्धकपित्थसंस्थानसंस्थितमाह-यदि चन्द्रविमानमुतानीकृतार्द्धमात्रकपित्थफलसंस्थान-

---

१. ०रिल्ले - अब।। २. बाहिरओ - अब।। ३. द्र. जीवा ३। १००८-९।।

संस्थितं तत उदयकालेऽस्तमयकाले वा यदिवा तिर्यग् परिभ्रमत् पौर्णमास्यां कस्मात्तदर्द्धकपित्थफलाकारं नोपलभ्यते कामं शिरस उपरिवर्त्तमानं वर्त्तुलमुपलभ्यते ऽर्द्धकपित्थस्य शिरस उपरि दूरमवस्थापितस्य परभागादर्शनतो वर्त्तुलतया दृश्यमानत्वादुच्यते, इहार्द्धकपित्थफलाकारं चन्द्रविमानं न सामस्त्येन प्रतिपत्तव्यं किन्तु तस्य विमानस्य पीठान्तस्य-पीठस्योपरि चन्द्रदेवस्य ज्योतिश्चक्रराजस्य प्रासादः स च प्रासादस्तथा कथंचनापि व्यवस्थितो यथा पीठेन सह भूयाद्वर्त्तुलाकारो भवति स च दूरभावादेकान्ततः समवृत्ततया जनानां प्रतिभासते ततो न कश्चिद्दोषः न चेदंत्स्वमनीषिकया विजृम्भितं यत एतदेव **जिनभद्रगणिक्षमाश्रमणेन विशेषणवत्यामाक्षेपपुरस्सरमुक्तं "अद्धकविट्ठागार उदयत्थमणंमि कह न दीसंति। ससिसूराण विमाणांतिरिया खित्तठियाणं च।।१।। उत्ताणद्ध कविट्ठागारं पीढं तदुवरि च पासाओ। वट्टालेखेण तउ समवट्टं दूरभावाओ ।।२।।"** तथा **'सव्वफालियामए'** त्ति सर्वं निरवशेषं स्फटिकमयं विशेषमणिमयं **'अब्भुग्गय मूसिए'** इति इत्येकदेशग्रहणात् 'अब्भूग्गय मूसिय पहसिए विविहमणिरयणभत्तिचित्ते' इत्यादि सर्वोऽपि वर्णको वक्तव्यः प्राग्वच्च व्याख्यापनीयः **'एवं सव्वाइं नेयव्वाइं'** त्ति यथा चन्द्रविमानस्वरूपमुक्तमेवं सूर्यविमानताराविमानस्वरूपमपि वाच्यं सर्वेषामपि ज्योतिर्विमानानां प्राय एकरूपत्वात्तथा चोक्तं-**समवायाङ्गे--"केवइयाणं भंते जोइसिया वासा पन्नत्ता गोयमा इमीसे रयणप्पहाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ सत्तनउयाइं जोयणसयाइं उड्ढं उप्पइत्ता दसुत्तरजोयणसय बाहल्ले तिरियमसंखेज्जे जोइसविसए जोइसियाणं देवाणं अंसंखेज्जा जोइसियविमाणवासा पन्नत्ता ते णं जोइसिय विमाणवासा अब्भूग्गयमूसियपहसिया विविह मणिरयणभत्तिचित्ता तं चेव जाव पडिरूवा"** इति।।१७६।।

अष्टमद्वारं व्यनक्ति–

(१७७) चंदविमाणे णं भंते! केवइयं आयाम-विक्खंभेणं केवइयं बाहल्लेणं?, गो०!

छप्पण्णं खलु भाए वित्थिण्णं चंदमंडलं होइ।
अट्ठावीसं भाए बाहल्लं तस्स बोद्धव्वं।।१।।
अडयालीसं भाए वित्थिण्णं सूरमंडलं होइ।
चउवीसं खलु भाए बाहल्लं तस्स बोद्धव्वं।।२।।
दो कोसे अ गहाणं णक्खत्ताणं तु हवइ तस्सद्धं।
तस्सद्धं ताराणं तस्सद्धं चेव बाहल्लं।।३।।१७७।।

'चंदविमाणे णं भंते' इत्यादि, **चन्द्रविमानमुपलक्षणात्सूर्यादिविमानं च कियदायाम-विष्कम्भेनोपलक्षणात्कियद्बाहल्येन प्रज्ञप्तम्**? अस्योत्तरं गाथाभिरेवाह **'छप्पन्नं** गाहा, **षट्पञ्चाशतं भागान्** योजनैकषष्टिभागरूपानिति गम्यं **विस्तीर्णं चन्द्रमण्डलं भवति** तथा**ष्टाविंशतिं भागान् बाहल्यं तस्य** चन्द्रविमानस्य **बोद्धव्यं** विस्तारार्द्धमानत्वा-द्बाहल्यप्रमाणस्याथ सूर्यविमानप्रमाणं दर्शयति- **'अडयालीसं** गाहा, **अष्टाचत्वारिंशद्भागान्** योजनस्यैकषष्टिभागरूपान् **विस्तीर्णं सूर्यमण्डलं भवति चतुर्विंशतिं खलु भागान् बाहल्यं तस्य** सूर्यमण्डलस्य **बोद्धव्यं**। ग्रहादिविमानमाह **'दो कोसा गाहा' - द्वौ क्रोशौ ग्रहाणां** विमानं विस्तीर्णं **नक्षत्राणां** तु विमानं **भवति तस्यार्द्धं** ग्रहविमानादर्द्धप्रमाणं क्रोशमित्यर्थस्**तस्यार्द्धं** क्रोशस्यार्द्धं **ताराणां** विस्तीर्णं **'तस्सद्धं चेव बाहल्लं'** ति, एतेषां ग्राहादिविमानानां बाहल्यप्रमाणं स्वस्वविस्तारादर्द्धप्रमाणं मन्तव्यमित्यर्थः। इह यत्तारविमानमर्द्धक्रोशमायाम-विष्कम्भाभ्यां क्रोशचतुर्थभागमुच्चत्वेनोक्तं तदुत्कृष्ट स्थितिकस्य तारादेवस्य सम्बन्धि द्रष्टव्यं जघन्यस्थितिकस्य तु पञ्चधनुः शतान्यायाविष्कम्भेनार्द्धतृतीयानि धनुःशतानि बाहल्येन।।१७७।।

नवमद्वारं वितन्वन्नाह–

(१७८) [१]चंदविमाणेणं भंते! कति देवसाहस्सीओ परिवहंति?, गोअमा! सोलस देवसाहस्सीओ परिवहंतीत्ति। चंदविमाणस्स णं पुरत्थिमे णं सेयाणं [२]सुभगाणं [३]सप्पभाणं संखतल-विमल-निम्मलदधिघणगोखीरफेणरयय[४]णिगरप्पगासाणं थिरलट्ठ-पउट्ठवट्टपीवरसुसिलिट्ठविसिट्ठ-तिक्खदाढाविडंबिअमुहाणं रत्तुप्पलपत्तमउय-सूमालतालुजीहाणं महुगुलिअपिंगलक्खाणं पीवरवरोरुपडिपुण्णविउलखंधाणं मिउविसयसुहुमलक्खणपसत्थ वरवण्ण केसरसडोवसोहिआणं [५]ऊसिअसुनम्मिय-सुजायअप्फोडिअणंगूलाणं वइरामयणक्खाणं वइरामयदाढाणं [६]वइरामयंदंताणं तवणिज्जजीहाणं तवणिज्जतालुआणं तवणिज्जजोत्तगसुजोइआणं कामगमाणं पीइगमाणं मणोगमाणं [७]मणोरमाणं अमिअगईणं अमिअबलवीरिअ पुरिसक्कारपरक्कमाणं महया अप्फोडिअसीहणायबोलकलकलरवेणं[८] महुरेणं मणहरेणं पूरेंता अंबरं दिसाओ अ सोभयंता चत्तारि देवसाहस्सीओ सीहरूवधारीणं पुरत्थिमिल्लं बाहं [९]वहंति। चंदविमाणस्स णं दाहिणेणं सेआणं सुभगाणं सुप्पभाणं संखतल-विमल-निम्मल-दधिघण-गोखीर-फेण-रययणिगरप्पगासाणं वइरामयकुंभजुअल[१०] सुट्ठिअपीवर-वरवइरसोंडवट्टिअदित्तसुरत्तपउमप्पगासाणं अब्भुण्णयमुहाणं तवणिज्जविसालक ण्णचंचलचलंतविमलुज्जलाणं महुवण्णभिसंतणिद्धपत्तलनिम्मल[११]तिवण्णमणिरयण लोअणाणं अब्भुग्गयमउलमल्लिआधवलसरिससंठिअणिवण्णदढकसिणफालिआम यसुजायदंतमुसलोवसोभिआणं कंचणकोसीपविट्ठदंतग्गविमलमणिरयण[१२]रुइल

---

१. चंद विमाणं भंते! - V।" चन्दविमाणेण मित्यादि चन्द्र विमानं लिङ्ग विभक्त्योश्च व्यत्यय: प्राकृतत्वात् - हीवृ." इति V पृ. ५८२ टि. १।। २. सुमाणं - अकखत्रिबसपुवृ. हीवृ.।। ३. सप्प° खत्रिपुवृ. हीवृ.।। ४. रयणिगर० अब। एवमग्रेऽपि सुप्प°सु.।। ५. सुणिमित्त - अब। सुणिम्मित - खत्रिस सुनामिय-मु.।। ६. वइरामयदंताणं - अकखबत्रिगपुवृ. नास्ति।। ७. मणोरमाणं - पुवृ. नास्ति।। ८. कल° अत्रिब नास्ति।। ९. परिवहंति - V।। १०. °कुंभिजुअय° अब।। ११. निम्मलल(भि) सत्तमणिरयण निम्मलाणं - अब। निम्मलमणि° पुवृ.।। १२. °णभरियपे° अब।।

पेरंतचित्तरूवगविराइआणं तवणिज्जविसालतिलगप्पमुहपरिमण्डिआणं नानामणि रयण[१]मुद्धगेविज्जबद्धगलयवरभूसणाणं वेरुलिअविचित्तदण्डनिम्मल-वइरामयतिक्ख लट्ठअंकुसकुंभजुअलयंतरोठिआणं तवणिज्जसुबद्धकच्छदप्पिअबलुद्धराणं विमलघण मण्डलवइरामयलाला [२]ललियतालाणं णाणामणिरयणघण्टपासगरजतामयबद्ध रज्जुलंबिअघंटाजुअलमहुरसरमणहराणं अल्लीणपमाणजुत्तवट्टिअसुजायलक्खणप सत्थरमणिज्जवालगत्तपरिपुंछणाणं[३]उवचिअपडिपुण्णकुम्म-चलणलहुविक्कमाणं [४]अंकमयणक्खाणं तवणिज्जजीहाणं तवणिज्जतालुआणं तवणिज्जजोत्तगसुजोइआणं कामगमाणं पीइगमाणं मणोगमाणं मणोरमाणं अमिअगईणं अमिअबल-वीरिअ-पुरिसक्कार-परक्कमाणं महयागंभीरगुलुगुलाइतरवेणं महुरेणं मणहरेणं पूरेंता अंबरं दिसाओ अ सोभयंता चत्तारि देवसाहस्सीओ गयरूवधारीणं देवाणं दक्खिणिल्लं बाहं परिवहंति। चंदविमाणस्स णं पच्चत्थिमेणं सेआणं सुभगाणं सुप्पभाणं चलचवलक कुहसालीणं घणनिचिअसुबद्धलक्खणण्णुयईसिआणयवसभोट्ठाणं चंकमिअ ललिअपुलिअ [५]चलचवलगव्विअगईणं सन्नतपासाणं संगतपासाणं सुजायपासाणं पीवरवट्टिअसुसंठिअकडीणं ओलंबपलंबलक्खणपमाणजुत्तरमणिज्जवालगण्डाणं [६]समखुरवालिधाणाणं समलिहिअसिंगतिक्खग्गसंगयाणं तणुसुहुमसुजायणिद्ध लोमच्छविधराणं उवचियमंसलविसालपडिपुण्णखंधपएससुंदराणं [७]वेरुलियभिसंत कडक्खसुणिरिक्खणाणं जुत्तपमाणपहाणलक्खणपसत्थरमणिज्ज [८]गगरगल सोभियाणं घरघरगसुसद्दबद्धकण्णठपरिमण्डिआणं[९] णाणामणिकणगरयणघण्टिआ वेगच्छिग[१०]-सुकयमालिआणं वरघण्टागल-यमालुज्जलसिरिधराणं पउमुप्पलसगल

१. °सुद्ध° अब पुवृ. हीवृ.। क्वचित् 'मुद्ध' त्ति पाठः स चाशुद्धः सम्भाव्यते। २. °तललिय° अब।। ३. उप्पतिय° अत्रिब हीवृ। उपचिता° हीवृ. ५।.।। ४. अंका° अकखत्रिबस। ५. वरवलय° अब।। ६. सुमधुरवालियहाणसमलिय संगमाण - अब।। ७. °कक्खदक्ख सुतिक्खनिरिखाणं अत्रिबपुवृ.।। ८. ०ज्जलंबभंगगंघाउडगलसोभियाणं - अखत्रिबसपुवृ.।। ९. °द्ध कण्ण प °अखत्रिबस कंद्व-मु.।। १०. °वेगच्छग° अकखत्रिबसपुवृ. हीवृ.।।

-सुरभिमालाविभूसिआणं वइरखुराणं[१] विविहविक्खुराणं फालिआमयदंताणं तवणिज्जजीहाणं तवणिज्जतालुआणं तवणिज्जजोत्तगसुजोइआणं कामगमाणं पीइगमाणं मणोगमाणं मणोरमाणं अमिअगईणं अमिअबलवीरिअपुरिसक्कार परक्कमाणं महयागज्जिअगंभीररवेणं महुरेणं मणहरेणं पूरेंता अंबरं दिसाओ अ सोभयंता चत्तारि देवसाहस्सीओ वसहरूवधारीणं देवाणं पच्चत्थिमिल्लं बाहं परिवहंति।।१७८।।

'चंदविमाणेणं भंते' इत्यादि चन्द्रविमानं णमिति वाक्यालङ्कारे भदन्त! **कति देवसहस्राणि परिवहन्ति?** स्वाम्याह-**गौतम! षोडश देवसहस्राणि परिवहन्ति** अथ यादृग्वर्णकोपेतानि पूर्वादिषु दिक्षु प्रत्येकं चत्वारि चत्वारि सिंहरूपधारीणि देवसहस्राणि चन्द्रविमानं परिवहन्ति इति निवेदयति **'चंदविमाणस्स पुरत्थिमेण'** मित्यादि चन्द्रविमानस्य पूर्वस्यां दिशि चत्वारि सहस्राणि सिंहरूपधारिणां देवानां पौरस्त्यां बाहां परिवहन्तीत्युत्तरेण सम्बन्धः किंभूतानां सिंहरूपधारिणां देवानामित्याह - **'सेयाण'** मित्यादि श्वेतानां शुक्लवर्णानां **शुभानां** सौम्याकृतीनां **'सप्पभाणं'** ति सत्प्रभाणां शोभनकान्तीनां प्रागुक्तमेव श्वेतत्वमुपमया स्पष्टयति **'संखतले'**त्यादि शङ्खतलविमलनिर्मलदधिघनगोक्षीरफेनरजतनिकर प्रकाशा नामिति व्यक्तं, प्राग्व्याख्यातार्थं च क्वचित् संखतलेत्यादि यावद् रजनिकरप्रकाशानामिति पाठः सोऽपि सुबोध एव **'थिर लट्ठे'** त्यादि **स्थिरावप्रकम्पौ लष्टौ** मनौज्ञौ **प्रकोष्टौ** कूर्प्परागतनभागौ येषां ते तथा **वृत्ता** वर्त्तुलाः **पीवराः** स्थूलाः **सुश्लिष्टा** अविरला **विशिष्टा** मनोहारा**स्तीक्ष्णा**श्च या **दंष्ट्रा**स्ताभिः कृत्वा **'विडबियं'** ति वृत्तमलङ्कृतं च **मुखं** येषां ते तथा ततः प्राक्पदेन कर्मधारयस्तेषां तथा **'रत्तुप्पले'** त्यादि **रक्तोत्पलपत्रमिव मृदुकेभ्यः सुकुमारे**ऽतिकोमले **तालुजिह्वे** येषां ते तथा तेषा**मङ्गुलिय'** त्ति मधुगुटिका क्षौद्रवर्त्तिरिव

१. वेरक्खुर ° अकब । वेरविविह° सपुवृ.।।

पिङ्गले कपिलेऽक्षिणी येषां ते तथा, तेषां **'पीवररोरूपडिपुण्णविउलखंधाणं'** ति पीवरे मांसले वरे प्रशस्ये ऊरू जंघे येषां ते तथा प्रतिपूर्णो न न्यूनो विपूलो विस्तीर्णः स्कन्धो येषां ते तथा, ततः पदद्वयकर्मधारयस्तेषां ते तथा तेषां **'मिउविसदे'** त्यादि **मृदूयः** सुकुमारा **विशदा** अविमूढाः **सूक्ष्मास्तनवो लक्षणप्रशस्ताः** प्रशस्तलक्षणा **वरवर्णा** याः **केसरसटाः** स्कन्धकेसरजटास्ताभि**रूपशोभिता** ये ते तथा तेषां, तथा **'उसिय'** त्ति उच्छ्रितमूर्ध्वंनीतं **सुनिम्मित्तं** सुष्टु भङ्गुरतया न्यस्तं सुनिर्मितं वा कुण्डलाकृतं **सुजातं** सुद्वणोपेततया, **आस्फोटितं** भूमावास्फालितं **लाङ्गूलं** पुच्छछटा यैस्ते तथा तेषां **'वइरामय नक्खाणं'** त्ति वज्रमयनखानां **'वइरामयदाढाणं'** ति वज्रमयदंष्ट्राणां **'तवणिज्जजीहाणां तवणिज्जतालुयाण'** मिति व्यक्तं नवरं तपनीयमारक्तं स्वर्णं **'तवणिज्जजा ेत्तगसुजोत्तियाणं'** त्ति तपनीयमययोत्रकसुयोत्रितानां **'कामगमाणं** ति कामेनेच्छानुरूपेण गमो गतिर्येषां ते तथा तेषां **'पीइगमाणं** ति प्रीतिहेतुर्गमो येषां ते तथा तेषां **'मणोगमाण'** मनोऽनुकूलं गच्छतीति मनोगमास्तेषा**ममितगतीनाम**मितबलाना**ममितबल वीर्यपुरुषकार पराक्रमाणा**मिति स्पष्टं, किं विशिष्टानि सिंहरूपधारिणां देवानां सहस्राणि? **'महया'** इत्यादि महता गरिष्ठेना**स्फोटितसिहनादबोलकलकलरवेण मधुरेण मनोहरेण पूरयन्त्यम्बर माकाशं दिशश्च** न केवलं पुरयन्त्येव किन्तु **'सोभयंता'** इति शोभयन्ति शोभां प्रापयन्ति **'चत्तारि साहस्सीओ'** इत्यादि प्राग्योजितमेव।।

'चंदविमाणस्स दाहिणेण' मित्यादि चन्द्रविमानस्य दक्षिणेन दक्षिणस्यां दिशि चत्वारि सहस्राणि गजरूपधारिणां देवानां दाक्षिणात्यां बाहां पारिवहन्तीत्यग्रिमेण योगः किं विशिष्टानां गजरूपधारिणां देवानामित्याह **'सेयाण'** मित्यादि विशेषणचतुष्टयं प्राग्वत् **'वइरामयकुंभजुयलसुट्ठियपीवरवइरसोंडवट्टियसुरत्तपउमप्पभासाणं'** ति वज्रमयकुम्भ युगलं येषां ते तथा सुस्थिता सुन्दराकारतया स्थिता पीवरा उपचिता वरा श्रेष्टा वर्त्तिता वृत्ता या

शुण्डा तत्र सुरक्तपद्मवत्प्रभा सा येषां ते तथा ततः पूर्वपदेन कर्मधारयस्तेषां सूत्रे वर्त्तितशब्दस्य परनिपातः प्राकृतत्वादभ्युन्नतमुखानामिति प्रकटं, **'तवणिज्जविसालकण्णचंचलचलंत-विमलुज्जलाणं'** ति तपनीयौ-तपनीयमयौ विशालौ-विस्तीर्णौ चञ्चलौ-अस्थिरौ वलन्तौ-सविलासं दोलायमानौ विमलोज्वलौ बाह्याभ्यन्तरमलरहितौ कर्णौ येषां ते तथा तेषां सूत्रे कर्णशब्दस्यान्तर्निपातः प्राकृतत्वात् **'मधुवण्णभिसंतनिद्धपत्तलनिम्मलमणिरयणलोय णाणं'** ति मधुवर्णे 'भिसंत' ति दीप्यमाने स्निग्धे-सस्नेहे पत्रले-पक्ष्मवती निर्मले च मणिरत्नमये लोचने येषां ते तथा तेषां **'अब्भुग्गयमउलमल्लियाधवलसरिससंठियनिव्वणदढकसिण फालियामयसुजायदंतमुसलोवसोहियाणं'** ति अभ्युद्गता-उन्नत्ता मल्लिकामुकुलवद्विच किलकलिकावद्धवलाः सदृशाः प्रमाणतः समानाः संस्थिताः सम्यग् स्थिता निर्व्रणाः क्षतादिरहिता अत एव दृढाः कठिना-कृत्स्नाः सम्पूर्णाः स्फटिकमयाः सुजाताः सुनिष्पन्ना ये दन्ता एव मुशलास्तैरुपशोभितास्ते तथा तेषां, **'कंचणकोसीपविट्ठदंतग्गविमलमणि रयणनिम्मलरुइलपेरंतचित्तरुयगविराइयाणं'** ति काञ्चनकोशी सुवर्णखोला तत्र प्रविष्टानि दन्ताग्राणि तेषां विमलमणिरत्ने रुचिराः पाठान्तरे वा भरिता ये पर्यन्तास्तेषु चित्राणि-नानाप्रकाराणि यानि रूपकाणि तैर्विराजिता ये ते तथा तेषां, **'तवणिज्जविसाल तिलगपमुहपरिमंडियाणं'** ति तपनीयानि तपनीयमायानि विशालानि तिलकप्रमुखाणि आभरणानीति गम्यं तैः परिमण्डिता ये ते तथा तेषां, **'नानामणिरयणसुद्धगेवेज्ज बद्धगलयवरभूसणाणं'** ति नानामणिरत्नैः शुद्धं निर्मलं पाठान्तरे वा मुग्धं-मनोहरं यद् ग्रैवेयकं ग्रीवाभरणं बद्धं गलके-कण्ठे वरं भूषणं येषां ते तथा तेषां, **'वेरुलियविचित्तदंडनिम्मलवइरामयतिक्खलट्ठअंकुसकुंभजुयलंतरोट्ठियाणं'** ति वैडूर्य विचित्रदण्डनिर्मलं वज्रमयं तीक्ष्णं लष्टं च यदङ्कुशं तत्कुम्भयुगलस्यान्तरे उच्छ्रितमूर्ध्वतया स्थितं येषां ते तेषां, सूत्रे विशेषणव्यत्ययः प्राकृतत्वात् **'तवणिज्जसुबद्ध**

कच्छदप्पिअबलुद्धराणं' ति तपनीया तपनीयमयी सुष्टु बद्धा कक्षा हृदयरज्जु र्येषां ते तथा दर्पितानां मध्ये बलोद्धुराश्च ये ते तथा ततः पदद्वयकर्मधारय स्तेषां **'विमलघण मंडलवइरामयलालाललिततालणनाणामणिरयणघंटापासगरययामयबद्धरज्जुलंबिय -घंटाजुयलमहुरसरमणहराणं'** ति विमला-निर्मला घना-दृढा मण्डला-वृत्ताकारा वज्रमयलालाललिततादना नानामणिरत्नमय्यो घण्टाः पार्श्वगा उभय पार्श्ववर्त्तिनो येषां ते तथा रजतमयी बद्धायास्तु तत्र लम्बितं यद् घण्टायुगलं तस्य यो मधुरस्वरस्तेन मनोहरा ये ते तथा, ततः प्राक्पदेन कर्मधारयस्तेषां, **'अल्लीणपमाणजुत्तवट्टियसुजायलक्खणपसत्थ रमणिज्जवालगत्तपरिपुंछणाणं'** आलिनौ गुणैराश्लिष्टः प्रमाणयुक्तः उचितप्रमाणो वर्त्तितो वृत्तः सुजातो लक्षणप्रशस्तो रमणीयो यो वाल' त्ति बालधिः पुच्छप्रदेशस्तेन गात्रपरिपुंछनं येषां ते तथा, दंशाद्यभावेऽपि यत्ते पुच्छेनाङ्गपरिपुञ्छनमभिहितं तत्तत्स्वरूपमात्रनिरूपणार्थं शोभार्थं चेति **'उवइय पडिपुण्णकुम्मचलणलहुविक्कमाणं** 'उपचिता मांसलाः प्रतिपूर्णा लक्षणतः स्वरूपतश्च कुर्मवत्कच्छपवच्चलना येषां ते तथा, लघुः शीघ्र गतिहेतुर्विक्रमः पराक्रमो येषां ते तथा पदद्वयकर्मधारयस्तेषां, यदिवोपचितप्रतिपूर्णकुर्म्मवलनै र्लघुः शीघ्रो विक्रमो गमनं येषां ते तथा तेषां, **'अंकामयनक्खाणं** अङ्करत्नमयनखानां **तवणिज्ज तालुयाण'** मित्यादि प्राग्वन् नवरं गजवर्णनाधिकारान्महतागम्भीरगुलगुलायितरवेणाम्बरं दिशश्च परिपूरयन्तीत्युक्तम्।। **'चंदविमाणस्स ण'** मित्यादि चन्द्रविमानस्य **पश्चिमां बाहां** परिवहन्तीत्यग्रेतनेन सम्बन्धः किंभूतानां वृषभरूपधारिणां देवानामित्याह-**'सेयाण'** मित्यादि प्राग्वत्, **'चलचवलककुह-सालीणं'** ति चलेभ्योऽपि चपलेन कुकुदेन शालन्ते-शोभन्ते इत्येवं शीलास्ते तथा तेषां **'घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णतइसिंआणतवसभोट्ठाणं'** घनौ निबिडौ निचितौ-पुद्गलोपचयवन्तौ सुबद्धौ-अश्लथौ लक्षणोन्नतौ-उन्नतलक्षणाविषदानतौ वृषभस्येवान्यवृष स्यैवौष्टौ येषां ते तथा तेषां, **चंकमियललिय पुलियचलचवलगव्वियगईणं'**

चङ्क्रमितमितस्तश्चलनं ललितंविलासवद्गतिः पुलितं च गतिविशेषः एवंरूपा चलेभ्योऽपि चपला गर्विता सञ्जातगर्वेव गतिर्येषां ते तथा तेषां, तथा **'सन्नयपासाणं'** सन्नतौ सम्यग्नतौ पार्श्वौ येषां ते तथा तेषां, **संगयपासाणं' ति** लक्षणोपपेततयोचितपार्श्वाणां **'पीवरवट्टिय-सुसंठियकडीणं** ति पीवरा पुष्टा वर्त्तिता वर्त्तुलां सुसंस्थिता सुसंस्थाना पाठान्तरे वा सुसंहिता सुसंबद्धा कटिर्येषां ते तथा तेषां, **'ओलंबपलंबलक्खणपमाणजुत्तरमणिज्जवालगंडीणं'** अवलम्ब्यते दंशादिवारणार्थं ध्रियत इत्यवलम्बं प्रलम्बमायतं लक्षणप्रमाणाभ्यां युक्तं रमणीयं च बालकाण्डं बालसमूहो बालैर्वोपलिक्षतो गण्डो दण्डो बालगण्ड उभयत्रापि पुच्छ इत्यर्थो येषां ते तथा तेषां **'समखुरवालिहाणसमलिहियसिंगग्गाणं'** ति समास्तुल्याः खुराः प्रतीता वालधानानि च पुच्छा येषां ते तथा समानि लिखितानि शस्त्रेणापनीतबाह्यत्वक्कानीव शृङ्गाग्राणि येषां ते तथा ततः पदद्वयकर्मधारयस्तेषां, पाठान्तरे 'समखुरवालिहाण समलिहितसिंगतिक्खग्ग संगयाणं' ति पाठस्तत्र समखुरवालिधान-समलिखित तीक्ष्णाग्रशृङ्गसङ्गतानामिति व्याख्येयं तीक्ष्णाग्रशृङ्गस्य परनिपातः प्राकृतत्वात्, **'तणुसुहुमसुजायनिद्धलोमछविधराणं'** ति व्यक्तं, **'उवचिय-मंसलविसालपडिपुण्णखंधप्पएससुंदराणं'** ति उपचितः सञ्जातोपचयोऽत एव मांसलो विशालो विस्तीर्णः प्रतिपूर्णो लक्षणस्वरूपाभ्यां सम्पन्नो यः स्कन्धप्रदेशस्तेन सुन्दरा ये ते तथा तेषां, **'विरुलियभिसंतकक्खदक्खसुनिरिक्खणाणं** 'वैडूर्यवद्भिसंत' त्ति दीप्यमानं कक्षे अपाङ्गदर्शनदक्षं सुष्टुनिरीक्षणं येषां ते तथा तेषां, **'जुत्तप्पमाणपहाण लक्खणपसत्थरमणिज्जलंबभंगगंधाउडगलगसोभियाणं'** युक्तप्रमाण-उचितप्रमाणः प्रधानलक्षणैः प्रशस्तो रमणीयो लम्बो दीर्घो भङ्गस्तरङ्गस्तत्सदृशो गन्धाकुलः सुरभिगन्धिरेवंविधो यो गलको गलकंबलस्तेन शोभिता ये ते तथा, **'घुग्घरगसुसद्द बद्धकण्णपरिमंडियाणं'** सुशब्दा मधुरस्वरा घुर्घुरकाः प्रतीतास्ते बद्धा यत्र एवं विधौ यौ कर्णौ पाठान्तरे वा ईदग् यः कण्ठस्ताभ्यां तेन वा परिमण्डिता ये ते तथा तेषां, पदव्यत्यय आर्षत्वात्,

'नानामणिकणगरयणघंटियावेगच्छगसुकयमालियाणं 'नानामणिकनकरत्नमय्यो घण्टिका: क्षुद्रघण्टास्ताभि: सुकृतं सुनिर्मितं यद्वैकक्षकमुत्तरीयं तन्मालितं धारितं यैस्ते तथा तेषां पदव्यत्यास: प्राकृतत्वात् **'वरघंटागलगमालुज्जलसिरिधराणं'** वरघण्टा: प्रधानघण्टा गलकमाला: कण्ठभूषणानि ताभिरुज्वलां श्रियं धरन्तीति ये ते तथा तेषां **'पउमुप्पलसगलसुरभिमालाविभूसियाणं'** पद्मोत्पलसकलसुरभिमालाविभूसितानामिति व्यक्तं **'वइरखुरविविहखुराण'** मित्यादि सूत्रसिद्धम्।।१७८।।

(१७९) चंदविमाणस्स णं उत्तरेणं सेआणं सुभगाणं सुप्पभाणं [१]तरमल्लिहायणाणं हरिमेलमउलमल्लिअच्छाणं चंचुच्चिअललिअपुलिअचलचवलचंचलगईणं लंघण वग्गणधावणधोरणतिवइजइणसिक्खिअगईणं [२]ललंतलामगललायवरभूसणाणं सन्नयपासाणं संगयपासाणं सुजायपासाणं पीवरवट्टिअसुसंठिअकडीणं ओलम्ब पलंबलक्खणपमाणजुत्तरमणिज्जवालपुच्छाणं तणुसुहुमसुजायणि द्धलोमच्छविहराणं मिउविसयसुहुमलक्खणपसत्थ[३]वित्थिण्णकेसरवालिहराणं [४]ललंतथासगाललाड वरभूसणाणं [५]मुहमण्डगओचूलगचामरथासगपरिमण्डिअ कडीणं तवणिज्जखुराणं तवणिज्जजीहाणं तवणिज्जतालुआणं तवणिज्जजोत्तगसुजोइआणं कामगमाणं जाव मणोरमाणं अमिअगईणं अमिअबलवीरिअपुरिसक्कार-परक्कमाणं महयाहयहे सिअकिलकिलाइअरवेणं मणहरेणं पूरेंता अंबरं दिसाओ अ सोभयंता चत्तारि देवसाहस्सीओ हयरूवधारीणं देवाणं उत्तरिल्लं बाहं परिवहंतित्ति। गाहा–

सोलसदेवसहस्सा हवंति चंदेसु चेव सूरेसु।
अट्ठेव सहस्साइं एक्केक्कंमी गहविमाणे।।१।।
चत्तारि सहस्साइं णक्खत्तंमि अ [६]हवंति इक्किके।
दो चेव सहस्साइं तारारूवेक्कमेक्कंमि।।२।।

१. वर° अकत्रि बस हीवृ.।। २. °लासगललाम° अकखत्रिबपुवृ. हीवृ.।। ३. °विच्छिण्ण° प.मु. शावृ.।। ४. °लामग° अकखत्रिबस पुवृ. हीवृ.।। ५. मुहभंडग° पुवृ.।। ६. वहंति - अखत्रिब हीवृ.।।

एवं सूरविमाणाणं जाव तारारूवविमाणाणं, णवरं एस देवसंघाएत्ति।।१७९।।

'चंदविमाणस्स णं उत्तरेण' मित्यादि, अत्र च सम्बन्धयोजना प्राग्वत् किंविशिष्टानां सिंहरूपधारिणां देवानामित्याह-**'सेयाणं सुभाणं'** ति प्राग्वत् **'तरमल्लिहायणाणे'** तरो वेगो बलं वा तथा **"मल मल्लि धारणे"** ततश्च तरोर्मल्ली तरोर्धारको वेगादि धारको हायनः संवत्सरो येषां ते तरोमल्लीहायना यौवनवन्त इत्यर्थस्तेषां **'हरिमेलामउलमल्लियच्छाणं'** हरिमेला वनस्पतिविशेषस्तस्य मुकुलं कुड्मलं मल्लिका च विचकिलस्तद्वदक्षिणी येषां ते तथा तेषां शुक्लाक्षाणामित्यर्थः **'चंचुच्चियललियपुलियचलचवलचंचलगईणं** 'चंचुच्चियं' ति प्राकृतत्वेन चञ्चुरितं कुटिलगमनमथवा चञ्चुः शुकचञ्चुस्तद्वद्व्यक्ततयेत्यर्थः, उच्चितमुच्चताकरणं पादस्योच्चितं वोत्पाटनं पादस्यैव चच्चितं तच्च ललितं च विलासवद्गतिः पुलितं च गतिविशेषः प्रसिद्ध एव एवंरूपा या चलानामस्थिराणां सतां चपलेभ्यः सकाशाच्चंचलाऽतीवचटुलेत्यर्थो गतिर्येषां ते तथा तेषां, **'लंघणवग्गणधावणधोरण तिवईजइणसिक्खियगईणं'** लङ्घनं गर्त्तादेरतिक्रमणं वल्गनमुत्कूर्दनं धावनं शीघ्रमृजुगमनं धोरणं गतिचातुर्यं त्रिपदी भूमौ पदत्रयन्यासो जयिनी च गमनान्तरजयवती जविनी वा वेगवती शिक्षितेव शिक्षिताऽभ्यस्ता गतिर्यैस्ते तथा तेषां, **'ललंतलासगललामवरभूसणाणं'** ललन्ति दोलायमानानि लासकानि दीप्यमानानि ललामानि रम्याणि ललामादीनि वा तिलकादीनि वरभूषणानि येषां ते तथा तेषां, **'संणयपासाण'** मित्यादि प्रागिव व्याख्येत **'ओलंव पलंबलक्खणपमाणजुत्तरमणिज्जबालपुच्छाणं'** अवलम्बयते ध्रियत इत्यवलम्बः प्रलम्बो दीर्घो लक्षणप्रमाणयुक्तो रमणीयवालश्च पुच्छो येषां ते तथा तेषां तनु सुक्ष्मसुजात स्निग्धलोमच्छविधराणमिति सुबोधं **'मिउविसदसुहुमलक्खणपसत्थविकिण्णकेसर वालिहराणां'** मृदुः कोमला विशदा-निर्मला सूक्ष्मा-तन्वी''लक्खणपसत्थ' त्ति प्रशस्तलक्षणा विकीर्णा इतस्ततो विप्रसृताया केसरपालिः केसरा एव पालिशद्वश्च शोभावाची, यथा

कपोलपालीत्यादौ स्कन्धकेशपङ्क्तिर्वा तां धरतीति ये ते तथा तेषां, तथा **'ललंत लामयललाडवरभूसणाणं'** ललन्ति विलसन्ति 'लामय' त्ति प्राकृतत्वाद्रम्यकाणि ललाटवर -भूषणानि येषां ते तथा तेषां **मुहमंडगओचूलचामरथासगपरिमंडियकडीणं'** मुखभाण्डकं मुखाभरणमवचूलाः प्रलम्बमानगुच्छाश्चामराणि प्रतीतानि स्थासकाश्चादर्शाकारास्तैः परिमण्डिता कटिर्येषां ते तथा तेषां **'तवणिज्जखुराणं'** ति तपनीयमयखुराणां **'तवणिज्जजीहाण'** मित्यादि प्राग्वत्।।

इदं चन्द्रविमानवाहकदेवस्वरूपमुक्तमत्र चेयं भावना-इह चन्द्रादीनां विमानानि जगत्स्वाभाव्यान्निरालम्बनान्येव वहन्त्यवतिष्ठन्ते केवलं ये आभियोगिका देवास्ते तथाविध - नामकर्मोदयवशात्समानजातीयानां हीनजातीयानां वा देवानां निजस्फातिविशेषदर्शनार्थमात्मानं बहुमन्यमानाः प्रमोदभृतः सततवहनशीलेषु विमानेष्वधः स्थित्वा स्थित्वा केचित्सिहंरूपाणि केचिद्गजरूपाणि केचिदृषभरूपाणि केचित्तुरगरूपाणि कृत्वा तानि विमानानि वहन्ति, न चैतदनुपपन्नं तथाहियथेह कोऽपि तथाविधाभियोग्यनामकर्मोपभोगभोगी दासोऽन्येषां समानजातीयानां हीनजातीयानां वा पूर्वपरिचितानामेवमहं नायकस्यास्य सुप्रसिद्धस्य सम्मत इति निजस्फातिविशेषप्रदर्शनार्थं सर्वमपि स्वोचितं कर्म नायकसमक्षं प्रमुदितः करोति तथाऽऽभियोगिका अपि देवास्तथाविधाभियोग्यनामकर्मोपभोगभाजः समानजातीयानां हीनजातीयानां वा देवानामेवं वयं समृद्धा यत्सकललोकप्रसिद्धानां चन्द्रादीनां विमानानि वहाम इत्येवं निजस्फातिविशेषप्रदर्शनार्थमात्मानं बहुमन्यमाना उक्तप्रकारेण चन्द्रादिविमानानि वहन्तीति।।

'गाह' त्ति चन्द्रादिविमानवाहकदेवसङ्ख्याप्रतिपादिके इमे गाथे ज्ञेये इत्यर्थः। **'सोलसदेवसहस्सा** गाहा' व्याख्या-**षोडश देवसहस्राणि भवन्ति चन्द्रेषु**-चन्द्रविमानेषु **सूरेषु**-सूर्यविमानेषु च चन्द्रसूर्यविमान वाहकानां हि प्रत्येकं चतसृषु दिक्षु चतुर्णां देवसहस्राणां

सद्भावात्सर्वमीलने षोडशसहस्राणि भवन्तीति **अष्टैव सहस्राणि एकैकस्मिन् ग्रहविमाने** ग्रहविमानस्य हि प्रत्येकं चतसृषु दिक्षु द्वयोर्देवसहस्रयोस्तद्वहनप्रवृत्तत्वात्तथा **चत्वारि सहस्राण्येकस्मिन्नक्षत्रे**-नक्षत्रविमाने नक्षत्रविमानवाहकदेवानां प्रत्येकं चतसृषु दिक्षु सहस्रस्य सहस्रस्य सद्भावात् **द्वे एवं सहस्रे तारारूपे** ताराविमाने **एकैकस्मिंस्ताराविमानवाहकानां** हि प्रत्येकं चतसृषु दिक्षु पञ्चशत्याः पञ्चशत्याः सद्भावादिति गाथाद्वयार्थः। **एवं सुरविमाणाणं जाव तारारूवविमाणाणं** ति एवमिति यथा चन्द्रविमानवाहकदेवानां येन क्रमेण सिंहादिरूपधारिणां वक्तव्यतोक्ता तथा सूर्यविमानवाहकदेवानां यावत्तारारूपविमान वाहकदेवानां यावत्करणाद्ग्रहनक्षत्रविमानवाहकदेवानामपि सिंहादिरूपधारिणां वक्तव्यतेत्यर्थः **'णवरि एस देवसंघाए'** त्ति नवरि केवलमेष प्राक्तनगाथोक्तसङ्ख्यास्वरूपो देवसङ्घातो ज्ञेयः।।१७९।।

अथ दशमादीनि द्वाराण्यभिधातुमिदमाह–

(१८०) एतेसि णं भंते! चंदिमसूरिअगहगणनक्खत्ततारारूवाणं कयरे सव्वसिग्घगई? कयरे सव्वसिग्घतराए चेव?, गोअमा! चंदेहिंतो सूरा सव्वसिग्घगई सूरेहिंतो गहा सिग्घगई गहेहिंतो णक्खत्ता सिग्घगई णक्खत्तेहिंतो तारारूवा सिग्घगई, सव्वप्पगई चंदा सव्वसिग्घगई तारारूवा।।१८०।।

'एतेसि ण' मित्यादि, एतेषां **भदन्त! चन्द्रसूर्यनक्षत्रतारारूपाणां** मध्ये **कतरे** कतरेभ्यः **शीघ्रगतयः कतरे** कतरेभ्यः **शीघ्रगतितरा एवं**? स्वाम्याह-**गौतम! चन्द्रेभ्यः सूर्याः शीघ्रगतयः सूर्येभ्यो ग्रहाः शीघ्रगतयो ग्रहेभ्यो नक्षत्राणि शीघ्रगतीनि नक्षत्रेभ्यस्ताराः शीघ्रगतयः सर्वाल्पगतयश्चन्द्राः सर्वेभ्योऽपि शीघ्रगतयः** सर्वशीघ्र गतयस्तारारूपाश्चन्द्रेणाहोरात्रक्रमणीयस्य क्षेत्रस्य सूर्यादिभिर्हीनतरेणाहोरात्रेणाक्रम्यमाण त्वात्, एतच्च सविस्तरं **चन्द्र सूर्यप्रज्ञप्टिटीकाभ्यामवसेयमेवं** च सर्वमन्दगतयश्चन्द्राः

सर्वशीघ्रगतयस्तारा इति।।१८०।।

(१८१) एतेसि णं भंते! चंदिमसूरिअगहगणणक्खतारारूवाणं कयरे सव्वमहिड्ढिआ कयरे सव्वप्पड्ढिआ?, गो०! तारारूवेहिंतो णक्खत्ता महिड्ढिआ णक्खत्तेहिंतो गहा महिड्ढिआ, गहेहिंतो सूरिआ महिड्ढिआ, सुरेहिंतो चंदा महिड्ढिआ, सव्वप्पिड्ढिआ तारारूवा सव्वमहिड्ढिआ चंदा।।१८१।।

'एतेसिण मित्यादि, **एतेषां भदन्त! चन्द्रसूर्यग्रहनक्षत्रतारारूपाणां** मध्ये कतरेकतरेभ्यो **ऽल्पर्द्धिकाः कतरे** कतरेभ्यो **महर्द्धिकाः**? स्वाम्याह-**गौतम! ताराभ्यो नक्षत्राणि महर्द्धिकानि** बृहत्स्थितिकत्वादेवं **नक्षत्रेभ्यो ग्रहा महर्द्धिकाः ग्रहेभ्यः सूर्या महर्द्धिका** एवं **सर्वाल्पर्द्धयस्तारा: सर्वमहर्द्धयश्चन्द्राः**।। १८१।।

सम्प्रति जम्बूद्वीपे ताराणां परस्परमन्तरं प्रतिपादनार्थमाह–

(१८२) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे ताराए अ ताराए अ केवइए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?, गोअमा! दुविहे–वाघाइए अ निव्वाघाइए अ, निव्वाघाइए जहण्णेणं पंचधणुसयाइं, उक्कोसेणं दो गाऊआइं, वाघाइए जहण्णेणं दोण्णि छावट्ठे जोअणसए उक्कोसेणं बारस जोअणसहस्साइं दोण्णि अ बायाले जोअणसए तारारूवस्स य २ अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।।१८२।।

'जंबुद्दीवेणं भंते दीवे' इत्यादि, जम्बूद्वीपे भदन्त! द्वीपे **तारायास्ताराया** एतदन्तरं **कियदबाधया प्रज्ञप्तं**? स्वाम्याह-**गौतम! द्विविधमन्तरं प्रज्ञप्तं**, तद्यथा-व्याघातिमं निर्व्याघातिमं च तत्र व्याहननं व्याघातो पर्वतादिस्खलनं तेन निर्वृत्तं व्याघातिमं **" भावादिम "** इतीमप्रत्ययः, निर्व्याघातिमं व्याघातिमान्निर्गतं स्वाभाविकमित्यर्थः। क्वचित् 'वाघाइए' त्ति पाठस्तत्र व्याघातो यथोक्तस्वरूपोऽस्यास्तीति व्याघातिक **"मतोऽनेकस्वरादि"** ति मत्वर्थीय

इक् प्रत्ययो व्याघातिकान्निर्गतं निर्व्याघातिकमिति तत्र **यन्निर्व्याघातिमं तज्जघन्येन पञ्चधनुःशतान्युत्कर्षतो द्वे गव्यूते**। तत्र **यद्व्याघातिमं तज्जघन्येन द्वे योजनशते षट्षष्ट्यधिके** एतच्च निषधकूटादिकमपेक्ष्य वेदितव्यं, तथाहि निषधपर्वतः स्वभावतोऽत्युच्चैश्चत्वारियोजनशतानि तस्य चोपरि पञ्च योजनशतोच्चानि कूटानि तानि च मूले पञ्चयोजनशतान्यायामविष्कम्भाभ्यां मध्ये त्रीणि योजनशतानि पञ्चसप्तत्यधिका न्युपर्यर्द्धतृतीयानि योजनशतानि तेषां चोपरितनभूभागसमश्रेणिप्रदेशे तथा जगत्स्वाभाव्याच्चाष्टावष्टौ योजनान्युभयतोऽबाधया कृत्वा ताराविमानानि परिभ्रमन्ति ततो जघन्यतो व्याघातिममन्तरं द्वे योजनशते षट्षष्टयधिके भवतः **उत्कर्षतो द्वादश योजनसहस्राणि द्वे योजनशते द्वाचत्वारिंशदधिके** एतच्च मेरुमपेक्ष्य द्रष्टव्यं तथाहि मेरोर्दशयोजनसहस्राणि मेरोश्चोभयतोऽबाधया एकादशयोजनशतान्येकविंशत्यधिकानि ततश्च सर्वसङ्ख्यामीलने द्वादशयोजनसहस्राणि द्वे द्वे योजनशते द्वाचत्वारिंशतो द्वाचत्वारिंशदधिके इति।।१८२।।

(१८३) चंदस्स णं भंते! जोइसिंदस्स जोइसरण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ?, गोअमा! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं०—चंदप्पभा जोसिणाभा अच्चिमाली पभंकरा, तओ णं एगमेगाए देवीए चत्तारि २ देवीसहस्साइं परिवारो पण्णत्तो, पभू णं ताओ एगमेगा देवी अन्नं देवीसहस्सं परिवारो विउव्वित्तए, एवामेव सपुव्वावरेणं सोलस देवीसहस्सा, सेत्तं तुडिए।।१८३।।

'चंदस्स णं भंते' इत्यादि चन्द्रस्य णमिति वाक्यालङ्कारे **भदन्त! ज्योतिषेन्द्रस्य ज्योतिषराजस्य कति** कियत्सङ्ख्याका **अग्रमहिष्यः प्रज्ञप्ताः?** भगवानाह **गौतम! चतस्रोऽग्रमहिष्यः प्रज्ञप्तास्तद्यथा चन्द्रप्रभा 'जोसिणाभ'** त्ति **ज्योत्स्नाभा अर्चिमाली प्रभङ्करा 'ततो णं'** ति प्राकृतत्वात्तासु चतसृष्वग्रमहिषीषु मध्ये **एकैकस्या देव्याश्चत्वारि**

चत्वारि देवीसहस्राणि परिवार: प्रज्ञप्त: किमुक्तं भवति? एकैकाग्रमहिषी चतुर्णां चतुर्णां देवीसहस्राणां पट्टराज्ञी **एकैका** च **सा** इत्थंभूताग्रमहिषीपरिचारणावसरे तथाविधां ज्योतिष्कराजचन्द्रदेवेच्छा -मुपलभ्य **प्रभुरन्या**न्यात्मसमानरूपाणि चत्वारि चत्वारि **देवीसहस्राणि विकुर्वितुमिह** सिद्धांतप्रसिद्धो 'विकुर्व' इति धातुरस्ति यस्य विकुर्वाणा इति प्रयोगस्ततो विकुर्वितुमित्युक्तं स्वाभाविकानि पुनरे**वमेवो**क्तप्रकारेणैव **सपूर्वापरेण** पूर्वापरमीलनेन **षोडशदेवीसहस्राणि** चन्द्रदेवस्य भवन्ति **'से त्तं तुडिए'** तदेतत्त्रुटिकमन्त:पुरमाह च-**जीवाभिगमचूर्णिकृत्** त्रुटिकमन्त: पुरमपदिश्यत इति।।१८३।।

(१८४) पहू णं भंते! चंदे जोइसिंदे जोइसराया चंदवडेंसए विमाणे चंदाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए तुडिएणं सद्धिं महयाहयणट्टगीअवाइअ जाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए?, गोअमा! णो इणट्ठे समट्ठे।।१८४।।

(१८५) से केणट्ठेणं [1]जाव विहरित्तए?, गो०! चंदस्स णं जोइसिंदस्स० चंदवडेंसए विमाणे चंदाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए माणवए चेइअखंभे वइरामएसु गोलवट्टसमुग्गएसु बहूईओ जिणसकहाओ सन्निखित्ताओ चिट्ठंति ताओ णं चंदस्स अण्णेसिं च [2]बहूणं देवाण य देवीण य अच्चणिज्जाओ [3]जाव [4]पज्जुवासणिज्जाओ, से तेणट्ठेणं गोयमा! णो पभू, पभू णं चंदे सभाए सुहम्माए चउहिं सामाणिअसाहस्सीहिं एवं जाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए केवलं परिआरिड्ढीए, णो चेव णं मेहुणवत्तिअं।।१८५।।

(१८६) सूरस्स णं भंते! जोइसिंदस्स जोइसरण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ? गोअमा! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं-सुरप्पभा १, आयवा २, अच्चिमाली

१. द्र. ७। १८४।। २. बहूणं जोइसियाणं देवाणं - V। ३. द्र. जीवा. ३। ४०२।। ४. द्र. जीवा. ३। १०२५।।

३, पभंकरा ४, ताओ णं एगमेगाए देवीए चत्तारि २ देवीसहस्साइं जाव णो चेव णं मेहुणवत्तियं। सव्वेसिं पि गहाइणं चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं-विजया १, वेजयंती २, जयंती ३, अपराजिता ४, सव्वेसिं [1]गहाईणं एआओ अग्गमहिसीओ, [2]छावत्तरस्सवी गहसयस्स एआओ अग्गमहिसीओ वत्तव्वाओ, इमाहि गाहाहिं–

इंगालए १, विआलए २, [3]लोहिअंके ३, सणिच्छरे चेव।
आहुणिए ५, पाहुणिए ६, कणगसणामा च पंचेव ११,।।१।।
सोमे १२, सहिए १३, आसणेय १४, कज्जोवए १५, अ कब्बुरए[4] १६,।
अयकरए १७, दुंदुभए संखसनामेवि तिण्णेव ।।२।।

एवं भाणियव्वं [5]जाव भावकेउस्स अग्गमहिसीओ।।१८६।।

'पभू णं भंते' इत्यादि प्रभुर्भदन्त! चन्द्रो ज्योतिषेन्द्रो ज्योतिषराजश्चन्द्रावतंसके विमाने चन्द्रायां राजधान्यां सभायां सुधर्मायां चन्द्रे सिंहासने त्रुटिकेनान्तःपुरेण सार्द्धं 'महया' इत्यादि प्राग्वत्, दिव्यान् भोगभोगान् भुञ्जानो विहर्त्तुमासितुं? स्वाम्याह-गौतम! नायमर्थः समर्थोऽत्रैव कारणं पृच्छति 'से केणट्ठेण' मित्यादि तदेव भगवानाह-गौतम! चन्द्रस्य ज्योतिषराजस्य चन्द्रावतंसके विमाने सभायां सुधर्मायां माणवके चैत्यस्तम्भे वज्रमयेषु गोलवृत्तसमुद्गकेषु बहूनि जिनसक्थीनि संनिक्षिप्तानि तिष्ठन्ति तानि सूत्रे स्त्रीत्वनिर्देशः प्राकृतत्वात् चन्द्रस्य ज्योतिषेन्द्रस्य ज्योतिषराजस्यान्येषां च बहूनां ज्योतिष्कानां देवानां देवीनां च 'अच्चणिज्जाओ 'जाव पज्जुवासणिज्जाओ' इह यावत्करणाद्वंदणिज्जाओ पूयणिज्जाओ सक्कारणिज्जाओ सम्माणणिज्जाओ कल्लाणं मंगलं

१. गहाणं - अकखबस।। २. छावत्तरस्स वि गहसयस्स एयाओ अग्गमहिसीओ- V नास्ति। अकखपबसपुवृ. शावृ. अस्ति। "हीवृ. अस्मिन् विषये एका टिप्पणि चापि विद्यते। यद्यप्यत्र बहुष्वादर्शेषु अन्यथापि पाठो दृश्यते। परं व्याख्यातपाठस्यैवोपादेयत्वं, जीर्णा दर्शेषु तथैव दृष्टत्वाज्जीवाभिगसङ्गतत्वाच्च।। "इति V पृ. ५८५. टि. ९।। ३. अकखपबशावृ. लोहितक्खे - V। स्था. २। ३२५ तोहितक्खा इति पाठो विद्यते।। ४. कब्बडए - V। कव्वरती-अब। स्था. २। ३२५ कब्बडगा।। ५. द्र. स्था. २। ३२५.।।

देवयं चेइयं' इति ग्राह्यं तत्रार्चनीयानि पुष्पादिभिर्वन्दनीयानि स्तोतव्यानि विशिष्टैः स्तोत्रैः पूजनीयानि वस्त्रादिभिः सत्कारणीयानि आदरप्रतिपत्तिभिः सन्माननीयानि जिनोचितप्रतिपत्तिभिः कल्याणं कल्याणहेतु मङ्गलं-दुरितोपशमहेतुः देवतं परमदेवता चैत्यमिष्टदेवप्रतिमा इत्येवं बुध्या पर्युपासनीयानि 'से तेणट्ठेणं गोयमा! **णो प्रभू चंदे**' इति सुगमं **'पभू णं भंते चंदे सभाए सुहम्माए**' इत्यादि स्पष्टं **केवलं परियारिड्ढीए** त्ति केवलं नवरं परिचारः परिचारणं सस्नेहस्त्रीशब्दश्रवणरूपसंदर्शनादिरूपः स एव ऋद्धिः सम्पत् परिचारर्द्धिस्तया परिचारर्द्ध्या वा कलत्रादि परिजनपरिचारणमात्रेणेत्यर्थः। **'नो चेव णं मेहुणवत्तियं ति न** चैव मैथुनं प्रत्ययं यथा भवत्येवं भोगभोगान् भुञ्जानो विहर्त्तुं प्रभुरित्यर्थः। इह च सुधर्मायां सभायां चन्द्रस्त्रुटिकेन सह भोगान् भुञ्जानो न प्रभुरित्युक्तं। तत्तद्गतमाणवकचैत्यस्तम्भव्यवस्थितगोलवृत्तसमुद्गकान्तवर्त्तिजिनसक्थ्याशातनापरिहारार्थमिति मन्तव्यं **'सूरस्स णं भंते**' इत्यादि, **सूर्यस्य भदन्त! ज्योतिषेन्द्रस्य ज्योतिषराजस्य कत्यग्रमहिष्यः प्रज्ञप्ताः?** स्वाम्याह–**गौतम! चतस्रोऽग्रमहिष्यः प्रज्ञप्तास्तद्यथा सूरप्रभाऽऽतपाऽर्चिमाली प्रभङ्करा 'तत्थ णं एगमेएगाए देवीए**' इत्यादि चन्द्रवत् तावद्वक्तव्यं यावन्नो **चेव णं मेहुणवत्तियं**' नवरं सूर्यावतंसके विमाने सूर्ये सिंहासने इति वक्तव्यं शेषं तथैव।। **'सव्वेसि**' मित्यादि, **सर्वेषामपि ग्रहादीनां चतस्रोऽग्रमहिष्यस्तद्यथा-विजया वैजयन्ती जयन्त्यपराजिता 'छडुत्तरस्स वि' त्ति षट्सप्तत्युत्तरस्यापि ग्रहशतस्यैता** अनन्तरोक्ता **अग्रमहिष्यो वक्तव्याः** एताश्च ग्रहाणामग्रमहिष्य इत्युक्तमतोऽष्टाशीतिग्रहानेव नामग्राहमाह-

"इंगालए वियालए लोहियंके सणिच्चरे चेव।
आहुणिए पाहुणिए कणगसणामावि पंचेव"।।१।।

व्याख्या अङ्गारकः १, विकालगः २, लोहितांकः क्वचिल्लोहिताक्षः शनैश्चरः ४,

आधुनिकः ५, प्राधुनिकः ६ कणगसनामा वि पंचेव' त्ति कनकेन सह समानं नाम तेषां ते कनकसमाननामानस्ते पञ्चैव तद्यथा-कणः ७ कणकः ८ कणकणकः ९ कणवितानकः १०, कणक संतानकः ११, **'सोमे सहिए अस्सासणे य कज्जोवए य कज्जरए अयकर दुंदुभए वि य संखनामा वि तिन्ने व**।।२।। सोमः १२, सहितः १३, अश्वासनः १४, कार्योपगः १५, कर्बुरकः १६, अजकरकः १७, दुन्दुभकः १८, शंखसमान नामानस्त्रयस्तद्यथा शङ्खः १९.शङ्खवर्णाभः २०. शङखनामा२१, **एवं भाणियव्वं जाव भावकेउस्स अग्गमहिसीओ'** इह यावत्करणादवशिष्टग्रहप्रतिपादकं गाथासप्तकं द्रष्टव्यं तच्चेदं- **"तिन्नि व कंसनामा नीलेरूप्पी हवंति चत्तारि भासतिलक पुप्फवन्ने दगवन्ने कायबंधे य"**।।३।। व्या० त्रयः कंसनामानस्तद्यथा कंसः २२, कंसाभः २३ कंसवर्णाभः २४, 'नीले रूप्पे हवंति चत्तारि' त्ति नीले रूप्पे च शद्वे विषयभूते द्विविधनामसम्भवात् सर्वसङ्ख्यया चत्वारस्तद्यथा नीलो २५ नीलावभासः २६ रूप्पी २७ रूप्यावभासः २८ 'भासे' ति नाम द्वयोपलक्षणं तद्यथा भस्मः २१ भस्मराशिः ३० तिलः ३१, तिलपुष्पवर्णकः ३२ दकः ३३, दकवर्णः ३४, कायः ३५, वन्ध्यः ३६, **"इंदग्गि धूमकेउ हरिपिंगलए बुद्धे य सुक्के य। बहसइ राहु अगत्थी माणवग कामफासे य"**।। ४।। व्या० इन्द्राग्निः ३७, धूमकेतुः ३८, हरिः ३९, पिङ्गलः ४०, बुधः ४१, शुक्रः ४२, बृहस्पतिः ४३, राहुः ४४, अगस्तिः ४५ माणवकः ४६ कामस्पर्श ४७, **" धुरए पमुहे वियडे विसंधि कप्पे तहा पयल्ले य। जडयालए य अरूणे अग्गिले काले महाकाले"**।।५।। व्याख्या-धुरः ४८ प्रमुखः ४९, विकटः ५० विसंधिकल्पः ५१, प्रकल्पः ५२, जटालः ५३, अरूणः ५४ अग्निः ५५, कालः ५६, महाकालः ५७, **"सोत्थिय सोवत्थिए वद्धमाणग तहा पलबे य। निच्चलोए निच्चुज्जोए सयंपभे चेव उभासे "**।।६।। व्या०-स्वस्तिकः ५८, सौवस्तिकः ५९, वर्द्धमानकः ६०, प्रलम्बः ६१,

नित्यालोकः ६२, नित्योद्योतः ६३, स्वयंप्रभः ६४, अवभासः ६५, **"सेयंकर खेमंकरे आभंकर पभंकरे य बोधव्वे। अरये विरए तहा असोग तह वीयसोगे य"**।।७।। व्या०- श्रेयसकरः ६६, क्षेमङ्करः ६७, आभङ्करः ६८, प्रभङ्करः ६९, अरजाः ७०, विरजा ७१, अशोकः ७२, वीतशोकः ७३, **"विमल वितत्त विवच्छे विसाले तह सालसुव्वए चेव। अनियट्टी एगजडी य होइ बिजडीय बोधव्वे"**।।८।।' व्या० विमलः ७४, वितप्तः ७५, विवस्त्रः ७६, विशालः ७७, शालः ७८, सुव्रतः ७९, अनिवृत्तिः ८० एकजटी ८१, द्विजटी ८२ **"करकरिए रायग्गल बोधव्वे पुप्फ भावकेउ य। अट्ठासीइगहा खलु नायव्वा आणुपुव्वीए"**।।९।।' करः ८३, करिकः ८४, राजा ८५ अर्गलः ८६, पुष्पकेतुः ८७, भावकेतुः ८८, अष्टाशीतिर्ग्रहाः खलु ज्ञातव्या आनुपूर्व्या अनुक्रमेण। 'इंगालस्स कति अग्गमहिसीओ पं०? गोयमा! चत्तारि, इत्यादि तावद् वाच्यं यावत् 'भावकेउस्स कति अग्गमहिसीओ' इति स्वयमेव सूत्रमुन्नेयम्।।१८६।।

(१८७) चंदविमाणे णं भंते! देवाणं केवइअं कालं ठिई पण्णत्ता ?, गो०! जहण्णेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहिअं।।१८७।।

'चंदविमाणे णं भंते' इत्यादि **चन्द्रविमाने भदन्त! देवानां कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ता?** स्वाम्याह-**गौतम! जघन्येन चतुर्भागमात्रं पल्योपमं** चतुर्भागः पल्योपमस्य चतुर्भागपल्योपममर्द्धभागं पिप्पलीवदत्रापि चिरन्तनव्याकरणे साधुरयं समासो यदि वा चतुर्भागमात्रं पल्योपममिति विशेषणसमासः पल्योपमचतुर्भाग इत्यर्थः। **उत्कर्षतः पल्योपमं** च वर्षशतसहस्राभ्यधिकं नवरं चन्द्रविमाने चन्द्रदेव उत्पद्यते तत्सामानिकात्मरक्षकादयश्च तत्रात्मरक्षकादीनां यथोक्ता जघन्या स्थितिरुत्कृष्टा तु चन्द्रदेवस्य तत्सामानिकादीनां च।।१८७।।

(१८८) चंदविमाणे णं देवीणं जहण्णेणं चउभागपलिओवमं उ० अद्धपलियोवमं

पण्णासाए वाससहस्सेहिमब्भहिअं।।१८८।।

(१८९) सूरविमाणे देवाणं चउब्भागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससहस्समब्भहियं।।१८९।।

(१९०) सूरविमाणे देवीणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं पंचहिं वाससएहिं अब्भहियं।।१९०।।

'चंदविमाणे ण' मित्यादि, चन्द्रविमाने भदन्त! देवीनां कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ता:? स्वाम्याह-गौतम! जघन्येन चतुर्भागपल्योपममुत्कर्षतः पल्योपमार्द्धं पञ्चाशता वर्ष सहस्रैरभ्यधिकमेवं सूर्यादिविमानविषयाण्यपि स्थितिसूत्राणि वाच्यानि। नवरं सूर्यविमाने देवानां जघन्यतश्चतुर्भागपल्योपममुत्कर्षतःपल्योपमं वर्षसहस्राभ्यधिकं देवीनां जघन्यतश्चतुर्भागपल्योपममुत्कर्षतोऽर्द्धपल्योपमं पञ्चभिर्वर्षशतैरभ्यधिकम् ।।१८८-१९०।।

(१९१) गहविमाणे देवाणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं, उक्कोसेणं पलिओवमम्। ग्रहविमाने देवानां जघन्यतश्चतुर्भागपल्योपममुत्कर्षतः परिपूर्णं पल्योपमम्।।१९१।।

(१९२) गहविमाणे देवीणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं, उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं। देवीनां जघन्येन चतुर्भागपल्योपममुत्कर्षतोऽर्द्धपल्योपमम् ।।१९२।।

(१९३) णक्खत्तविमाणे देवाणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं, उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं।

नक्षत्रविमाने देवानां जघन्यतश्चतुर्भागपल्योपममुत्कर्षतोऽर्द्धपल्योपमम् ।।१९३।।

(१९४) णक्खत्तविमाणे देवीणं जहण्णेणं चउब्भागपलिओवमं, उक्कोसेणं साहिअं

चउब्भागपलिओवमं।

देवीनां जघन्यतश्चतुर्भागपल्योपममुत्कर्षतः सातिरेकं चतुर्भागपल्योपमम् ।।१९४।।

(१९५) ताराविमाणे देवाणं जहाण्णेणं अट्ठभागपलिओवमं, उक्कोसेणं चउब्भागपलिओवमं[१]।

ताराविमाने देवानां जघन्येनाष्टभागपल्योपममुत्कर्षतश्चतुर्भागपल्योपमम् ।।१९५।।

(१९६) ताराविमाणे देवीणं जहण्णेणं अट्ठभागपलिओवमं,उक्कोसेणं साइरेगं अट्ठभागपलिओवमं।

देवीनां जघन्यतोऽष्टभागपल्योपममुत्कर्षतः सातिरेकमष्टभागपल्योपममिति ।।१९६।।

(१९७) एतेसि णं भंते! चंदिमसूरिअगहणक्खत्ततारारूवाणं कयरे२हिंतो अप्पा वा बहुआ वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा?, गो० ! चंदिमसूरिआ [२]दुवे तुल्ला सव्वत्थोवा, णक्खत्ता संखेज्जगुणा, गहा संखेज्जगुणा, तारारूवा संखेज्जगुणा।।१९७।।

'एएसि णं भंते' इत्यादि, एतेषां भदन्त! चन्द्रसूर्यग्रहनक्षत्रतारारूपाणां कतरे कतरेभ्योऽल्पाः कतरे कतरेभ्यो बहुका वा कतरे कतरेभ्यस्तुल्या अत्र विभक्तिपरिणामेन तृतीया व्याख्येया कतरेकतरेभ्यो विशेषाधिका वा? स्वाम्याह-गौतम! चन्द्रसूर्या एते द्वयेऽपि परस्परं तुल्याः प्रतिद्वीपं प्रत्तिसमुद्रं चन्द्रसूर्याणां समसङ्ख्यत्वात्, शेषेभ्यो ग्रहादिभ्यः

---

१. अट्ठभाग°J1 - J2, कखत्रिहीवृ.। एतदशुद्धं प्रतिभाति। बहुष्वादर्शेषु प्रज्ञापनायां ४। १९८, जीवा ३। १०३४ तथा दर्शनात्। इति V पृ. ५८६ टि. ९.।। २. दोवि - अकखत्रिबस।

सर्वेभ्योऽपि स्तोकास्तेभ्यो नक्षत्राणि सर्वेभ्योऽपि **सङ्ख्येयगुणानि** अष्टाविंशतिगुणत्वात् तेभ्योऽपि **ग्रहाः संख्येयगुणाः** सातिरेकत्रिगुणत्वात् तेभ्योऽपि **ताराः सङ्ख्येयगुणाः** प्रभूतकोटीकोटीगुणत्वात् **इत्युक्तः** सङ्ग्रहगाथाव्यासार्थः।।१९७।।

सम्प्रति जम्बूद्वीपगतजघन्यादिपदभावितीर्थकरादिसङ्ख्यां बोद्धुकामः प्रश्नयति–

(१९८) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे जहण्णपए वा उक्कोसपए वा केवइआ तित्थयरा सव्वग्गेणं पं०?, गो०! जहण्णपए चत्तारि उक्कोसपए चोत्तीसं तित्थयरा सव्वग्गेणं पण्णत्ता।।१९८।।

'जंबूद्दीवे ण' मित्यादि जम्बूद्वीपे णमिति वाक्यालङ्कृतौ **भदन्त! द्वीपे जघन्यपदे वा** सर्वस्तोकपदे **उत्कर्षपदे वा** सर्वबहुत्वपदे **कियन्तस्तीर्थकराः सर्वाग्रेण सर्वसंख्यया प्रज्ञप्ताः**? स्वाम्याह-**जघन्यपदे** पद्यते गम्यते इति पदं सङ्ख्यास्थानं तच्चानेकधेति जघन्यं सर्वहीनपदं तत्र विहार्ये सति **चत्वारि** द्वात्रिंशद्विजयानामन्यतमेषु चतुर्षु विजयेषु एकैकजिनसद्भावाच्चत्वार इत्युक्तमुत्कृष्टपदे **चतुस्त्रिंशत्तीर्थकराः सर्वाग्रेण प्रज्ञप्ताः** कथमेको जिनो भरते एक ऐरवते द्वात्रिंशद्विजयेषु प्रत्येकमेकैकभावाद् द्वात्रिंशत्सर्वमीलने भवन्ति चतुस्त्रिंशत् तीर्थकरा इति।।१९८।।

(१९९) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे जहण्णपए वा उक्कोसपए वा केवइआ चक्कवट्टी सव्वग्गेणं पं०?, गो०! जहण्णपदे चत्तारि उक्कोसपदे तीसं चक्कवट्टी सव्वग्गेणं पण्णत्ता।।१९९।।

'जंबूद्दीवे णंभंते' इत्यादि, जम्बूद्वीपे भदन्त! **द्वीपे कियन्तो जघन्यपदे उत्कृष्टपदे वा चक्रवर्त्तिनः सर्वाग्रेण प्रज्ञप्ताः**? स्वाम्याह-गौतम! जघन्यपदे चत्वार उत्कृष्टपदे त्रिंशच्चक्रवर्त्तिनः सर्वाग्रेण प्रज्ञप्ताः ।।१९९।।

(२००) बलदेवा तत्तिआ चेव जत्तिआ चक्कवट्टी, वासुदेवावि तत्तिया चेव।।२००।।

बलदेवा अपि जघन्यपदे उत्कृष्टपदे च **तावन्त एव वा यावन्तश्चक्रवर्त्तिन:** एवं **वासुदेवा अपि** जघन्यपदे चत्वार उत्कृष्टपदे त्रिंशदिति। ननु चक्रिणो वासुदेवाश्चोत्कर्ष - तश्चतुस्त्रिंशत् किमिति न भवन्ति? उच्यते-यत्र क्षेत्रे चक्रिणो यदा भवन्ति तदा तत्र वासुदेवा न भवन्तीति निश्चयश्चत्वारश्चक्रिणो वासुदेवाश्च जघन्यतोऽपि भवन्त्येवेत्युक्तं। ततो येषु क्षेत्रेषु चत्वारश्चक्रवर्त्तिनस्तत्र वासुदेवा न भवन्ति येषु च वासुदेवास्तेषु चक्रिणो न भवन्तीत्युकृष्टतोऽपि चक्रिणो वासुदेवाश्च त्रिंशदेवेति।।२००।।

(२०१) जम्बुद्दीवे दीवे केवइया निहिरयणा सव्वग्गेणं पं०?, गो०! तिण्णि छलुत्तरा णिहिरयणसया सव्वग्गेणं पं०।।२०१।।

'जंबुद्दीवे' इत्यादि प्रश्नसूत्रं स्पष्टं नवरं **निहिरयण'** त्ति निधय एव रत्नानि निधिषु वा रत्नान्युत्कृष्टत्वान्निधिरत्नान्युत्तरं भगवानाह-**गौतम! त्रीणि शतानि षडुत्तराणि निधिरत्नानि सर्वाग्रेण प्राप्तानि** कथं भरतैरावतद्वात्रिंशद्विजयेषु प्रत्येकं निधिनवकस्य सद्भावेन तस्य च चतुस्त्रिंशता गुणितस्य सूत्रोक्तसंख्योपेतत्वतमुपपन्नमेव। जम्बूद्वीपे इयन्तो निधय: सदा सत्तामात्रं बिभ्रतीत्यर्थ:।।२०१।।

(२०२) जम्बुद्दीवे २ केवइआ णिहिरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति?, गो०! जहण्णपए छत्तीसं, उक्कोसपए दोण्णि सत्तरा णिहिरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।।२०२।।

'जंबुद्दीवे ण' मित्यादि जम्बूद्वीपे **भदन्त! द्वीपे कियन्ति निधिरत्नशतानि परिभोग्यतया'हव्वं'** शीघ्रमागच्छति। चक्रिण: परिभोग्यानि भवन्तीति भाव:?

स्वाम्याह–**गौतम! जघन्यपदे षट्त्रिंशन्निधयः परिभोग्या भवन्ति।** कथं जघन्यपदे चक्रिचतुष्टस्य जायमानत्वेन तन्निधिनवकस्य च चतुर्गुणितत्वे षट्त्रिंशत्सङ्ख्याकता ज्ञेया, **उत्कर्षपदे द्वे सप्तते सप्तत्युत्तरे निधिरत्नशते परिभोग्यतया हव्वमागच्छतः** कथमुत्कृष्टपदे हि त्रिंशच्चक्रिणो लभ्यन्ते तन्निधिनवकस्य त्रिंशद्गुणने सप्तत्यधिकद्विशतसङ्ख्याकलितत्वं भावनीयमिति। अतोऽन्यानि तु विद्यमानान्यपि निधिरत्नानि चक्रवर्त्तिनां न परिभोगार्हाणीति।।२०२।।

(२०३) जम्बुद्दीवे २ केवइआ पंचिंदिअरयणसया सव्वग्गेणं पण्णत्ता?, गो०! दो दसुत्तरा पंचिंदिअरयणसया सव्वग्गेणं पण्णत्ता।।२०३।।

'जंबुद्दीवे' इत्यादि **जम्बूद्वीपे द्वीपे कियन्ति पञ्चेन्द्रियरत्नशतानि सर्वाग्रेण प्रज्ञप्तानि?** स्वाम्याह-**गौतम! द्वे शते दशोत्तरे पञ्चेन्द्रियरत्नानि सर्वाग्रेण प्रज्ञप्तानि।** उत्कर्षतो हि त्रिंशच्चक्रिणः सम्भवन्ति, एकैकस्य च चक्रिणः सप्त सप्त पञ्चेन्द्रियरत्नानि तानि च त्रिंशद्गुणितानि यथोक्तसङ्ख्यानि स्युरिति।।२०३।।

(२०४) जम्बुद्दीवे २ जहण्णपदे वा उक्कोसपदे वा केवइआ पंचिंदिअरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति?, गो०! जहण्णपए अट्ठावीसं, उक्कोसपए दोण्णि दसुत्तरा पंचिंदिअरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।।२०४।।

'जंबूद्दीवे इत्यादि, जम्बूद्वीपे **जघन्यपदे वोत्कर्षपदे वा कियन्ति पञ्चेन्द्रियरत्नशतानि परिभोग्यतया हव्वमागच्छन्ति?** स्वाम्याह-**गौतम! जघन्यपदेऽष्टाविंशतिरुत्कृष्टपदे द्वे शते दशोत्तरे पञ्चेन्द्रियरत्नानि परिभोग्यतया हव्वमागच्छन्ति।** भावना चक्रवर्त्यनुसारेण प्राग्वत्कार्या।।२०४।।

(२०५) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइआ एगिंदिअरयणसया सव्वग्गेणं पं०?, गो०! दो

दसुत्तरा एगिंदिअरयणसया सव्वग्गेणं पण्णत्ता।।२०५।।

'जंबूद्दीवे ण' मित्यादि, जम्बूद्वीपे भदन्त! द्वीपे कियन्त्येकेन्द्रियरत्नशतानि सर्वाग्रेण प्रज्ञप्तानि? स्वाम्याह-गौतम! द्वे दशोत्तरे एकेन्द्रियरत्नशते सर्वाग्रेण प्रज्ञप्ते।।२०५।।

(२०६) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइआ एगिंदिअरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति? गो०! जहण्णपए अट्ठावीसं, उक्कोसपए दोण्णि दसुत्तरा एगिंदिअरयणसया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।।२०६।।

'जंबुद्दीवे ण' मित्यादि जम्बूद्वीपे भदन्त! द्वीपे कियन्त्येकेन्द्रियरत्नशतानि परिभोग्यतया हव्वमागच्छन्ति? स्वाम्याह-गौतम! जघन्यपदेऽष्टाविंशतिरूत्कर्षपदे द्वे दशोत्तरे एकेन्द्रियरत्नशते परिभोग्यतया हव्वमागच्छत:। इहापि भावना प्राग्वद्विधेया।।२०६।।

सम्प्रति भङ्ग्यन्तरेण जम्बूद्वीपस्यैव प्रमाणादिस्वरूपप्रश्नयन्नाह-

(२०७) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे केवइअं आयाम-विक्खंभेणं केवइअं परिक्खेवेणं केवइअं उव्वेहेणं केवइअं उड्ढं उच्चत्तेणं केवइअं सव्वग्गेणं पं०?, गो०! जम्बुद्दीवे २ एगं जोअणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं तिण्णि जोअणसयसहस्साइं सोलस य सहस्साइं दोण्णि अ सत्तावीसे जोअणसए तिण्णि अ कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस अंगुलाइं अद्धंगुलं च किंचिविसेसाहिअं परिक्खेवेणं पं०, एगं जोअणसहस्सं उव्वेहेणं णवणउतिं जोअणसहस्साइं साइरेगाइं उड्ढं उच्चत्तेणं साइरेगं जोअणसयसहस्सं सव्वग्गेणं पण्णत्तं।।२०७।।

'जंबुद्दीवे ण' मित्यादि, जम्बूद्वीपो भदन्त! द्वीप: कियानायाम-विष्कम्भेन कियान् परिक्षेपेण कियानुद्वेधेन कियानूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन कियान् सर्वाग्रेण प्रज्ञप्त:? स्वाम्याह गौतम!

जम्बूद्वीपो द्वीप एकं योजनशतसहस्रमायामविष्कम्भेन वृत्तत्वादायामेन विस्तारेण च योजनलक्षप्रमाण इत्यर्थस्तथा **त्रीणि योजनशतसहस्राणि षोडश च योजनसहस्राणि द्वे योजन शते सप्तविंशत्यधिके** ३१६२२७ **त्रय: कोशा:** ३ **अष्टाविंशं च धनु:शतं** १२८ **त्रयोदश चाङ्गुलानि** १३ **अर्द्धाङ्गुलं च किञ्चिद्विशेषाधिकं परिक्षेपेण** परिरयेण। एतच्च परिधिपरिमाणं प्राग् सविस्तरं भावितमिति भूयो न भाव्यते। **एकं योजनसहस्रमुद्वेधेन भूम्यवगाढत्वेन नवनवतिं योजनसहस्राण्यूर्ध्वमुच्चत्वेन सातिरेकं योजनशतसहस्रं सर्वाग्रेणैतच्चोद्वेधादिकं** मन्दरापेक्षया द्रष्टव्यं। जम्बूद्वीपमध्यगतस्य मेरोर्जम्बूद्वीपमध्ये एव गणनान्मेरोश्चैतावदुद्वेधादिकं सुप्रतीतमेवेति।।।२०७।।

(२०८) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे किं सासए असासए?, गोअमा! सिअ सासए सिअ असासए।।२०८।।

'जंबुद्दीवे ण' मित्यादि, **जम्बूद्वीपो भदन्त! द्वीप: किं शाश्वत उताशाश्वत:?** स्वाम्याह–**गौतम! स्याच्छाश्वत: स्यादशाश्वत:** कथञ्चिन्नित्य: कथञ्चिदनित्य इत्यर्थ:, स्याच्छब्दो निपात: कथञ्चिदित्येतदर्थवाची।।२०८।।

(२०९) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-सिअ सासए सिअ असासए?, गो०! दव्वट्ठयाए सासए वण्णपज्जवेहिं गंध० रस० फासपज्जवेहिं असासए, से तेणट्ठेणं गो०! एवं वुच्चइ सिअ सासए सिए असासए।।२०९।।

'से केणट्ठेणं भंते' इत्यादि प्रश्नसूत्रं सुगमं स्वाम्याह-**गौतम! द्रव्यार्थतया** द्रव्यास्तिकनयमतेन **शाश्वतो** द्रव्यास्तिकनयो हि द्रव्यमेव तात्त्विकमभिमन्यते न पर्यायान् द्रव्यं वान्वयिपरिणमित्वादन्यथा द्रव्यत्वायोगादन्वयित्वाच्च सकलकालभावीति भवति द्रव्यार्थतया शाश्वतो **वर्णपर्यायैस्तत्तदन्य**समुत्पद्यमानवर्णविशेषरूपैरेवं गन्धपर्यायै रसपर्यायै:

स्पर्शपर्यायैरुपलक्षणमेतत्, तत्तदन्य पुद्गलविचटनोच्चटनैश्चाशाश्वतः किमुक्तं भवति। पर्यायास्तिकनयमतेन पर्यायप्रधानविवक्षायामशाश्वतः पर्यायाणां प्रतिक्षणभावितया कियत्कालभावितया वा विनाशित्वात्। **से एएणट्ठेण**' मित्याद्युपसंहारवाक्यं सुगममिह द्रव्यास्तिकनयवादी स्वमतप्रतिष्ठापनार्थमाह-**"नात्यन्तासत उत्पादो नापि नाशः सतो भवेन्नासतो विद्यते सतः"**।।१।। इति वचनाद्यौ दृश्येते प्रतिवस्तूत्पादविनाशौ तदाविर्भावतिरोभावमात्रं यथा सर्पस्योत्फणविफणत्वे तस्मात्सर्वं वस्तु नित्यमिति, एवं च तन्मतचिन्तायां संशयः किं घटादिवद् द्रव्यार्थतया शाश्वत उत सकलकालमेवं रूप इति।।२०९।।

ततः संशयापनोदार्थं भगवन्तं भूयः पृच्छति –

(२१०) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे कालओ केवच्चिरं होइ?, गोअमा! ण कयावि णासि ण कयावि णत्थि ण कयावि ण भविस्सइ, भुविं च भवइ अ भविस्सइ अधुवे णिइए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे जम्बुद्दीवे दीवे पण्णत्ते।।२१०।।

'जंबुद्दीवे णं भंते दीवे कालओ' इत्यादि जम्बूद्वीपे णमिति प्राग्वत् **'भदन्त'**! परमकल्याण योगिन् **'द्वीपः कियच्चिरं कियन्तं कालं यावद्भवति'** एवंरूपः कियन्तं कालमवतिष्ठत इति? स्वाम्याह-**'गौतम! न कदाचिन्नासीत्** सर्वदैवासीति भावोऽनादित्वात्तथा **न कदाचिन्न भवति** सर्वदैव वर्त्तमानकालचिन्तायां भवतीति भावः सदैव भावात्तथा **न कदाचिन्न भविष्यति** किन्तु भविष्यच्चिन्तायां सर्वदैव भविष्यतीति प्रतिपत्तव्यमपर्यवसितत्वात्, तदेवं कालत्रयचिन्तायां नास्तित्वप्रतिषेधावधाय सम्प्रत्यस्तित्वं प्रतिपादयति **भूविं चेत्यादि अभूच्च भवति च भविष्यति** चेति, एवं त्रिकालावस्थायित्वात्, **ध्रुवो** मेर्वादिवत्, ध्रुवत्वादेव सदैव स्वस्वरूपे **नियतो** नियतत्वादेव च **शाश्वतः** शश्वद्भवनस्वभावः शाश्वतत्वादेव च सततगङ्गासिन्धुप्रवाहप्रवृत्तावपि पद्महृद

इवानेकपुद्गलविचटनेऽपि तावन्मात्रान्यपुद्गलोच्चटनसम्भवादक्षयो न विद्यते क्षयो यथोक्तस्वरूपाकारभ्रंशो यस्य **सोऽक्षयो**ऽक्षयत्वादेवाव्ययोऽव्ययशद्ववाच्यो मनागपि स्वरूपचलनस्य जातुचिदप्यभावात्, अव्ययत्वादेव सदैव स्वप्रमाणेऽवस्थितो मानुषोत्तराद्बहिः समुद्रवत् एवं स्वप्रमाणे सदावस्थानेन चिन्त्यमानो **नित्यो** धर्मास्तिकायादिवत्, **जम्बूद्वीपो द्वीपः प्रज्ञप्तः**।।२१०।।

(२११) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे किं पुढविपरिणामे? [1]आउपरिणामे? जीवपरिणामे? पोग्गलपरिणामे?, गोअमा! पुढविपरिणामेवि आउपरिणामेवि जीवपरिणामेवि पुग्गलपरिणामेवि।।२११।।

'जंबुद्दीवे णं' मित्यादि, जम्बद्वीपे णमिति प्राग्वत्, **भदन्त! द्वीपः किं पृथिवीपरिणामोऽप्परिणामो जीवपरिणामः पुद्गलपरिणाम?** स्वाम्याह-**गौतम! पृथिवीपरिणामोऽप्यप्परिणामोऽपि जीवपरिणामोऽपि पुद्गलपरिणामोऽपि** पृथिव्यप्जीव पुद्गलपरिणामात्मकत्वाज्जम्बूद्वीपस्य।।२११।।

(२१२) जम्बुद्दीवे णं भंते! दीवे सव्वपाणा सव्वजीवा सव्वभूआ सव्वसत्ता पुढविकाइअत्ताए आउकाइअत्ताए तेउकाइअत्ताए वाउकाइअत्ताए वणस्सइकाइअत्ताए उववण्णपुव्वा?, हंता गो०! असइं अदुवा अणंतखुत्तो।।२१२।।

'जंबुद्दीवे णं भंते' इत्यादि जम्बूद्वीपे णमिति प्राग्वत्, **भदन्त!** '**सव्वपाण**' त्ति सर्वेप्राणः श्वासोच्छवासयुक्ताः '**भूय**' त्ति, अभूवन् भवन्ति भविष्यन्ति चेति भूताः '**जीव**' त्ति अजीवन् जीवन्ति जीविष्यन्ति प्राणधारणेनेति जीवाः '**सत्ता**' इति सत्त्वाः सातासातवेदकाः सर्वशद्वस्य प्रत्येकं सम्बन्धः **पृथिवीकायतयाऽप्यकायतया तेजोवायुवनस्पतिकायतया**

१. आउय० अत्रिब। एवमग्रेऽपि।।

वोत्पन्नपूर्वा:? स्वाम्याह-**गौतम! असकृदुत्पन्नापूर्वा अथवाऽनन्तकृत्व:**।।२१२।।

इत्युक्ता जम्बूद्वीपवक्तव्यता। सम्प्रति जम्बूद्वीपशद्वप्रवृत्तिनिमित्तं जिज्ञासिषुरिदमाह-

(२१३) से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जम्बुद्दीवे २?, गो०! जम्बुद्दीवे णं दीवे तत्थ २ देसे तहिं २ बहवे जम्बूरुक्खा जम्बूवणा जम्बूवणसंडा णिच्चं कुसुमिआ [1]जाव [2]पडिममंजरिवडेंसगधरा सिरीए अईव२ उवसोभेमाणा चिट्ठंति, जम्बूए सुदंसणाए अणाढिएणामं देवे महिड्ढीए [3]जाव पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेणं गोअमा! एवं वुच्चइ जम्बुद्दीवे दीवे।।२१३।।

'से केणट्ठेण' मित्यादि अथ **केनार्थेन भदन्त! एवमुच्यते जम्बूद्वीपो द्वीप:**? प्रभुराह-**गौतम! जम्बूद्वीपे द्वीपे तत्र तत्र देशे** तस्यैव देशस्य **तत्र तत्रैकदेशे बहवो जम्बूवृक्षा: बहूनि जम्बूवनानि बहवो जम्बूवनखण्डा नित्यकुसुमिता यावत् प्रतिमञ्जरिवतंसकधरा** यावत्करणात् 'निच्चं लवइया निच्चं थवइया निच्चं गुलुइया निच्चं गोच्छिया निच्चं पणमिया 'इत्यादि पदसमुदायोपादानं व्याख्या सर्वापि प्राग्वत्। **श्रियाऽतीवोपशोभमानास्तिष्ठन्ति। 'जंबूए'** इत्यादि जम्ब्वां च **सुदर्शनाभिधानायामनादृतो नाम देवो महर्द्धिको यावत् पल्योपमस्थितिक: परिवसति तदेतेनार्थेन गौतम्! एवमुच्यते जम्बूद्वीपो द्वीप** इति। अत्रेयं भावना जम्बूद्वीपे हि बहुषु प्रदेशेषु जम्बूवनानि सन्ति। अनादृतदेवावासभूता सुदर्शनाभिधा जम्बूश्च वर्त्तते तेनायं जम्बूयोगाज्जम्बूद्वीप इति व्यपदिश्यते। अथैतज्जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्यध्ययनं भगवता वर्द्धमान स्वामिना कदा कुत्र कथमर्थत: प्रकाशितमित्यावेदयन्नंत्यमङ्गलं प्रादु: करोति-

'तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे' इत्यादि तस्मिन् कालेऽवसर्पिणिचतुर्थारकरूपे तस्मिन् समये मिथिलायां समवसरणावसरेक्वचित् ।।२१३।।

(२१४) तए णं समणे भगवं महावीरे मिहिलाए णयरीए [4]माणिभद्दे चेइए बहूणं

१. द्र. औप० सू.५।। २. पिंडि० अ.मु.। पोंडि० ब।। ३. द्र. १। २४।। ४. माघवदे - अब।।

समणाणं बहूणं समणीणं बहूणं सावयाणं बहूणं साविआणं बहूणं देवाणं बहूणं देवीणं मज्झगए एवमाइक्खइ एवं भासइ एवं पण्णवेइ एवं परूवेइ जम्बूदीवपण्णत्ती णाम अज्जो! अज्झयणे अट्ठं च हेउं च पसिणं च कारणं च [1]वागरणं च भुज्जो २ उवदंसेइ त्तिबेमि।।२१४।।

'ततेणं समणे भगवं महावीरे' इत्यादि पाठस्तत्र तत इति श्री गौतमप्रश्नान्तरं श्रमणो भगवान् महावीरो **'मिथिलायां नगर्यां माणिभद्रे चैत्ये 'बहुणं समणाण'** मित्यादि, स्पष्टं यावद्बहूनां **'देवीनां मध्यगत:'** श्रमणादिदेव्यन्तपर्षन्मध्यस्थित इत्यर्थ:। **'एवमाख्याति'** यथोक्तं कथयति **'भाषते'** वा गणयोगेनार्द्धमागध्या गिरेति **'प्रज्ञापयति'** जम्बूद्वीपगत वर्ष-वर्षधरादिपरिमाणादिनि:शेषविशेषोपदर्शनद्वारेण प्ररूपयति। आदर्शतल इवाभिधेयं श्रोतृहृदये सङ्क्रमयति' **'जंबूद्दीवपन्नत्तिनामअजझयणं'** ति जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिनामाध्यनमधीयत इत्यध्ययनं शास्त्रमित्यर्थ:। केचित् 'जंबुद्दीपपन्नत्तिनाम अज्झयाणे' ति पाठस्तत्र जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिनामाध्ययने किं किंमाख्यातीत्याह-**'अट्ठं च'** त्ति अर्थं जम्बूद्वीपगतवर्ष-वर्षधराद्यभिधेयरूपं प्रयोजनं वा **'हेउं च'** त्ति हेतुं निमित्तं जम्बूद्वीपादिनामनिबन्धनं 'से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ जंबुद्दीवे दीवे' इत्यादिरूपं **'कारणं च'** 'अत्थि णं भंते भारहे वासे तीसे समाए रायाइ वा जुवरायाइ वा 'इत्यादि यावत् 'ववगयरिद्धिसक्काराणं ते मणुया' इत्यादिरूपं **'वागरणं'** त्ति व्याकरणं पृष्टापृष्टार्थकथनरूपं चकार: सर्वत्रापि पुनरर्थे **'भुज्जो भुज्जो उवदंसे'** इति भूयो भूयो विस्मरणशीलश्रोतृणामनुग्रहार्थमुपदर्शयति। अनेकश: प्रदर्शयति इति **ब्रवीमीति** इति: परिसमाप्तौ श्री सुधर्मास्वामी जम्बूनामानं स्वशिष्यं प्रति ब्रूते नेदं स्वमनीषिकयोच्यते किन्तु तीर्थकरगणधरोपदेशेनेति, अनेन च गुरुपारतन्त्र्यमावेदितम्।। इति श्री बृहत्खरतरगच्छावतंस **श्रीजिनहंससूरिशिष्यश्रीपुण्यसागरमहोपाध्यायविरचिता श्री जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्ति:** समाप्ता।

।। इति श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रं समाप्तम्।। ग्रंथाग्रं ०४१४६।।

---

१. करणं च - अब।।

।। अथ प्रशस्तिः।।

श्रीमच्चन्द्रकुले **सुधर्म**गणभृत्पट्टानुपूर्वीभवाः
श्रीउद्द्योतनसूरयः समभवन् ज्ञानक्रियाशालिनः।
ध्यानाराधितनागराट्प्रकटितश्रीसूरिमन्त्रस्फुरन्-
माहात्म्या गुरवस्ततो रुरुचिरे **श्रीवर्द्धमानाभिधाः**।।१।।
श्रीमद्दुर्लभभूमिवल्लभसभाध्यक्षं पुरे पत्तने,
वर्षे पुष्कर दिग्गजाभव सुधा संख्ये (१३४५) सुसङ्ख्यावता।
जित्वा चैत्यनिवासिनः खरतरेत्याख्यां समासादया
मासे, येन **जिनेश्वर** स भवतात्सूरीश्वरः श्रेयसे।।२।।
संवेगरङ्गशाला विनिर्ममे यैः कथानकरसालेति।
अभूवन् **जिनचन्द्राः** सूरिवराः प्रणतकविचन्द्राः।।३।।
गुरुगमनयभङ्गीसङ्गरङ्गन्नवाङ्गीनवविवृत्तिनिधानव्यक्तिविस्फारकीर्त्तिः।
स गुरुरभयदेवः स्तम्भनाधीशपार्श्वप्रकटनपटुरासीच्चक्रवर्त्ती बुधानाम्।।४।।
चामुण्डिकाप्रकटबोधनबद्धकक्षाः, सूत्रोक्तमार्गभणनाच्चरणैकदक्षाः।
चित्ते वसन्तु **जिनवल्लभ**नामधेयाः, सूरीश्वरा भुवनभासुरभागधेयाः।।५।।
येषां रैवत्तकाचले कृततपःश्रीनागदेवाभिध–
श्राद्धाराधितयाऽम्बया किल युगप्राधान्यमाविष्कृतम्।
श्रीजैनेन्द्रमतप्रकाशनपटुप्रागल्भ्यलक्ष्मीजुषस्ते,
स्ते, **श्रीमज्जिनदत्तसूरि**गुरवो यच्छन्तु मे वाच्छितम्।।६।।
तत्पदकमलमरालं ददतं फलमतुलमीप्सितविशालम्।
नरमणिमण्डितभालं **स्तवीमि जिनचन्द्रसुरसालम्**।।७।।

भूभृत्सभामध्यमगच्छद्वादेषु षट्त्रिंशति यं जयश्रीः।
अभूत्स विद्वज्जनवृन्दचक्री तंतस्तुतः **श्रीजिनपत्तिसूरः**।।८।।
श्रीमज्जिनेश्वरगुरुं जितवादियोघं सुरीश्वरं तदनु नौमि **जिनप्रबोधम्**।
श्रीजैनचन्द्रसुगुरुंनुतनिर्विरोधसद्देशनाकृतचतुर्नृपतिप्रबोधम्।।९।।
यत्संस्मृतिप्रवणमानसमानवानामाविर्भवन्ति भुवि सर्वसुखप्रतानाः।
प्रत्यूहसंहतिभुजगवैनतेयं सूरिं **जिनाद्यकुशलं** तमहं भजेयम्।।१०।।
जिनपद्मसूरिराजं जिनलब्धिगुरुं नतोत्तमसमाजम्।
जिनचन्द्रं निर्व्याजं **जिनोदयं** नौमि **जिनराजम्**।।११।।
पट्टे तदीये **जिनभद्रसूरिः** सौ [भाग्य]भाग्यैकनिधिर्दिदीपे।
सूत्रार्थजाम्बूनदसत्परीक्षाकषोपलप्रख्यविशुद्धबुद्धिः।।१२।।
निरुपमप्रतिभाप्रतिभाजनः स **जिनचन्द्रविभुः** शुभशासनः।
तदनु तस्य प्रशस्यगुणोदधि **र्जिनसमुद्रगुरुः** सुपदं दधिः।।१३।।
तदीयपट्टाम्बुजराजहंसाः सुरप्रसादाप्तजनप्रशंसा।
विचक्षणश्रेणिशिरोवतंसाः कृतोल्लसन्मुक्तिरमारिसंसा।।१४।।
यैश्चक्रे प्रथमाङ्गस्य दीपिकार्थप्रदीपिका
ते **जिनहंससूरीन्द्राः** जीयासुर्गुरवो मम।।१५।। युग्मम्।।
तत्पट्टलक्ष्मीतिलकानुकारा बभूवुरुद्दामगुणैरुदाराः।
सूरीश्वरा लब्धनरेन्द्रमानाः **श्रीजैनमाणिक्य**वराभिधानाः।।१६।।
तत्पट्टोदयशैलराजशिखरप्रद्योतनोद्योतिनो
राजन्ते, **जिनचन्द्रसूरिगुरवस्ते** साम्प्रतं भूतले।
यत्प्रौढप्रकटप्रतापमहिमामुद्वीक्ष्य विस्तारिणी,

प्रोन्मादि प्रतिवादिकौशिककुलं त्रस्तं समस्तं क्षणात्।।१७।।
सम्प्राप्य तदादेशं **श्रीमज्जिनहंससूरिशिष्यवरै**:।
श्रीपुण्यसागरमहोपाध्यायैरल्पमतिगम्या।।१८।।
एषा **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ते**र्वृत्तिरादराद्विदधे।
श्रीमत्पार्श्वजिनेश्वरनिजगुरूविशदप्रसादवशात्।।१९।।
श्री **अभयदेवसूरिश्रीमन्मलयगिरिकृत**विविधवृत्ती:।
सम्यग्विचार्य बुध्या विलोक्य चान्यानि शास्त्राणि।।२०।। त्रिभि: कुलकम्।।
वाचक: **पद्मराजाख्योऽत्र** सहायकबन्धु:।
तथा विशुद्धिमेतस्या युक्तायुक्तविवेचक:।।२१।
आलस्यमपास्य निजं प्रथमादर्शे लिलेख सोल्लासम्।
वृत्तिमिमां सन्महिमां विशुद्धधी **र्ज्ञानतिलक**गणि:।।२२।।
मोहावदत्राभिहितं विरुद्धं सत्सम्प्रदायस्य वियोगतो वा।
दयालुचित्तैर्हृदयालुभिस्तान्मात्सर्यमुत्सार्य विशोधनीयम्।।२३।।
श्रीमज्जेसलमेरूदुर्गनगरे श्रीभीमभूमीपतौ
राज्यं शासति, बाणवारिधिरसक्षोणीमिते वत्सरे (१६३५) 47
पुष्यार्के मधुमासि शुक्लदशमीसद्वासरे भासुरे,
टीकेयं विहिता सदैव जयतादाचन्द्रसूर्यं भुवि।।२४।।
त्रयोदश सहस्राणि द्वे शते पञ्चसप्तति:।
प्रायेणास्य ग्रन्थमानं प्रत्यक्षरनिरूपणात्।।२५।।
।। ग्रन्थाग्रं १५ (३) २७५।।शुभं भवतु।।
संवत् १६५२ वर्षे राउलश्रीभीमजीविजयराज्ये युगप्रधानश्रीजिनचन्द्रसूरिसूरीश्वरविजयराज्ये

आचार्यश्रीजिनहंससूरियौवराज्ये श्रीपुण्यसागरमहोपाध्यानामुपदेशेन श्रीऊकेशवंशे श्री शङ्खवालगोत्रे सा० कोचर सन्ताने सा० राजा तत्पुत्र सा० सीरङ्ग तत्पुत्र सा० रतनसी सा० जइतसी तत्पुत्र सा०धिरराज सुश्रावकेण स्वपितृव्यश्रेर्याऽर्थं ज्ञानभक्त्यर्थं च। श्री जेसलमेरुसत्कज्ञानकोशे श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तिप्रतिरेषा। सा वाच्यमाना चिरं नन्दतु।।

इमं पुस्तकं लिखितं संवत् १९८५ वेईशाखमासे कृष्णपक्षे १५ अमावस्या शुक्रवारे समाप्तम्।। लिखितं माहात्माटीकमचन्दनीवासी बिकानेर 'हाल जेसलमेर समाप्तम्।। शुभं भवतु।।

जयशीलमेरु वास्तव्येन वैद्यमनसुखदासात्मजेन व्यासज्येष्टमल्लकाव्यतीर्थेन संशोधिता।।

।। श्री श्री श्री।।